मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाओी देसाओी
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद–१४

साहित्य अकादमी, दिल्लीकी ओरसे सूचित गुजराती आवृत्ति परसे

पहली आवृत्ति ५०००, सन् १९५८

तीन रुपये

फरवरी, १९५८

जीवनलीला

१

मैंने कही पर लिखा ही है कि मेरे भारत-यात्राके वर्णन केवल साहित्य-विलास नही हैं, बल्कि भारत-भक्तिका और पूजाका अेक प्रकार है। भगवानके गुण गाना जिस तरह नवधा भक्तिका अेक प्रकार है, अुसी तरह भारतकी भूमि, अुसके पहाड और पर्वतश्रेणिया, नदिया और सरोवर, गाव और शहर, अुनमे बसे हुअे लोग और अुनका पुरुषार्थ, अुनके आश्रयमें रहनेवाले ग्राम्य पशु-पक्षी और अुनके साथ असहयोग करके आजादीका आनद लेनेवाले वन्य पशु-पक्षी — आदि सबका वर्णन करके अुनका परिचय बढाना भारत-भक्तिका अेक अत्यत आनददायी प्रकार है। यह भक्ति अेकातमें भी की जा सकती है और लोकातमे भी। जब कभी नवयुवकोकी कोअी घुमक्कड टोली मुझसे मिलने आती है और कहती है कि 'आपकी यात्राकी पुस्तकें पढकर हम भारतकी यात्रा करनेके लिअे निकल पडे है' तब मुझे बडा आनन्द होता है, और मै अुनकी ओर अैसी कृतज्ञ-बुद्धिसे देखता हू, मानो वे मुझ पर अुपकार करनेके लिअे ही निकले हो।

मेरे अिन यात्रा-वर्णनोमें से अैसे सब वर्णन, जिनमें मैंने भारतकी नदियोको भक्ति-कुसुमोकी अजलि अर्पित की है, अेकत्र करके 'लोकमाता'* के नामसे गुजराती तथा मराठीमें जनताके सामने बहुत पहले मैंने रख दिये है। महाभारतकारने हमारी नदियोको 'विश्वस्य मातर' कहा है। अिन स्तन्यदायिनी माताओका वर्णन करते हुअे हमारे पूर्वज कभी नही थके। और मेरा अनुभव है कि अिन्ही

---

* हिन्दीमें अिनमे से सिर्फ सात नदियोके वर्णन 'सप्त-सरिता' के नामसे दिल्लीके सस्ता-साहित्य-मडलकी ओरसे प्रकाशित किये गये थे।

नदियोके नये प्रकारके स्तोत्र यदि लोगोके सामने रखे जायें तो अुनका आजके लोग भी प्रेमपूर्वक स्वागत करते है।

अब स्वराज्य सरकारकी ओरसे हालमें स्थापित हुअी 'साहित्य अकादमी' (भारत-भारती-परिषद्) ने सूचना की कि 'लोकमाता' में दूसरे और कुछ प्रवास-वर्णन मिलाकर अेक पुस्तक मै तैयार करू; 'साहित्य अकादमी' हिन्दुस्तानकी प्रमुख भाषाओमें अुसका अनुवाद करवाकर प्रकाशित करेगी।

अिस अनुग्रहको स्वीकार करते समय मैंने सोचा कि अुसमें किसी भी स्थानके यात्रा-वर्णन जोडनेके बदले नदी, प्रपात और सरोवरोके साथ मेल खा सकें अैसे सागर, सागर-सगम और सागर-तटकी विविध लीलाका ही वर्णन यदि दूं, तो पचमहाभूतोमें से अेक अत्यन्त आह्लादक तत्त्वकी लीलाका वर्णन अेक स्थान पर आ जायेगा और अिस नअी पुस्तकमें अेक प्रकारकी अेकरूपता भी रहेगी। यह विचार मित्रोको और 'साहित्य अकादमी' के गुजराती सलाहकारो तथा संचालकोको पसन्द आया। अत: 'लोकमाता' 'जीवनलीला' के रूपमें पाठकोकी सेवा करनेके लिअे निकल पड़ी।

'लोकमाता' में केवल नदियोके ही वर्णन होनेसे अुसके मुख-पृष्ठ पर महाभारतका 'विश्वस्य मातर.' वाला श्लोक ठीक मालूम होता था। अब अुसने व्यापक 'जीवनलीला' का रूप धारण किया है, अत. अिस श्लोकका अुपयोग करनेमें अव्याप्तिका दोष आ जाता है। फिर भी परपराकी रक्षाके लिअे यह श्लोक अिस पुस्तकमें भी भक्तिभावसे रहने दिया है।

'जीवनलीला' की गुजराती आवृत्तिने लोकसेवाकी यात्रा शुरू की और तुरन्त अुसके हिन्दी अनुवादका सवाल खड़ा हुआ। नवजीवन प्रकाशन मदिरने अपनी नीतिके अनुसार हिन्दी आवृत्ति प्रकाशित करनेका भार स्वय अुठाया और मेरी सूचनाके अनुसार अनुवादका काम वर्षोमें मेरे पास रहे हुअे श्री रवीन्द्र केळेकरको सौपा। अुन्होने बडी योग्यता और प्रेमके साथ यह अनुवाद समय पर कर दिया। सारा अनुवाद मैं देख चुका हूं और मुझे अुससे सतोष है।

गुजराती आवृत्तिके लिअे जो टिप्पणिया अध्यापक श्री नगीनदास पारेखने तैयार की थी, अुन्हीका अुपयोग अिस आवृत्तिके लिअे किया गया है। हमारे देशमे जहा सदर्भ-ग्रथोकी कमी है और अच्छे पुस्तकालय भी बहुत कम जगह पर पाये जाते है, विद्यार्थियोके लिअे ही नही, किन्तु सामान्य सस्कार-रसिक पाठकोके लिअे भी टिप्पणिया लाभदायक होती है।

अनुवाद और टिप्पणिया देखकर मेरे अन्तेवासी श्री नरेश मत्रीने अपने ही अुत्साहसे 'जीवनलीला' की सूची बनाकर दी। आजकलके जमानेमें सूचीकी आवश्यकता अनुक्रमणिकासे कम नही मानी जाती। पाठक तो सूची बनानेवालेको धन्यवाद दे ही देंगे, क्योकि अनुक्रमणिका और सूची ग्रथकी दो आखें मानी जाती है।

मेरी अिस किताबके लिअे अिस तरह टिप्पणिया और सूची देनेका अुत्साह दिखाकर नवजीवन प्रकाशन मदिरने विद्यानुरागी पाठकोके धन्यवाद अवश्य ही हासिल किये है।

जब तक मेरी यात्रा चलती है और भक्तियुक्त स्मृति काम देती है, मेरी किताबोका कलेवर बढनेवाला ही है। गुजराती 'जीवनलीला' के प्रकट होनेके बाद जीवनलीलासे सलग्न दसेक मौलिक हिन्दी लेख और तैयार हो गये, जिनको अिस हिन्दी आवृत्तिमे स्थान देकर मेरी 'जीवन'-भक्तिको मैने अद्यतन (up-to-date) बनाया है। अैसे नये लेखोको अनुक्रमणिकामें तारकाकित किया गया है। अब अिस विषयमें ज्यादा लिखनेका अुत्साह नही है, किन्तु भारतके नद-नदी, तालाब-सरोवर, प्रपात और समुद्र-तट, वार्षिक जल-प्रलय और मरुभूमिके मृगजल आदिका विविध वर्णन नये जमानेके नयी प्रतिभावाले अुदीयमान लेखकोकी कलमसे निकले हुअे लेखोमें पढनेकी अिच्छा या लालसा है। प० बनारसीदासजीने हिन्दी लेखकोका ध्यान अिस क्षेत्रकी ओर कबका आकर्षित किया है।

२६–१–'५८   काका कालेलकर
स्वातत्र्यका गणतत्र-दिन

२

वस्तुतः पंचमहाभूतोके संयोगसे ही जीवन अस्तित्वमें आता है। फिर भी हमारे लोगोने केवल पानीको ही जीवन कहा, अिसमें बडा रहस्य छिपा हुआ है। पृथ्वीके आसपास चाहे अुतना वायुमडल घिरा हुआ हो, और अिस 'वातके आवरण' के बिना हम भले अेक क्षण भी जी न सके, फिर भी पृथ्वीका महत्त्व है अुसको घेरकर रहनेवाले अुदावरण (पानीका आवरण) के ही कारण। अुदकमे जो ताजगी है, जो जीवन-तत्त्व है, वह न तो अग्निकी ज्वालामें है, न पवन या आधी-तूफानमे है। पानी जहा वहता है वहा शीतलता प्रदान करता है, रेगिस्तानको भी वह अुपवन वनाता है; और प्राणिमात्र अनेक प्रकारके जीवन-प्रयोग कर सकें अैसी सुविधायें प्रदान करता है। जलका स्वभाव चचल है, तरल है, अूर्मिल है। और अिससे भी विशेष, वत्सल है।

प्रकृतिके निरीक्षणका आनंद अनुभव करते हुअे पहाड, खेत, वादल और अुनके अुत्सवरूप सूर्योदय तथा सूर्यास्तके रग-चमत्कार मैंने देखे है। हरेककी खूवी अलग, हरेककी चमत्कृति अनोखी होती है; फिर भी पानीके प्रवाह या विस्तारमें से जो जीवन-लीला प्रकट होती है अुसके असरके समान दूसरा कोअी प्राकृतिक अनुभव नही है। पहाड चाहे जितना अुत्तुग या गगनभेदी हो, जव तक अुसके विशाल वक्षको चीरकर कोअी बड़ा या छोटा झरना नही कूदता, तव तक अुसकी भव्यता कोरी, सूनी और अलोनी ही मालूम होती है।

सस्कृतमें 'डलयो सावर्ण्यम्' न्यायसे जलको जड भी कहते होगे। किन्तु सच पूछा जाय तो जलको जड कहनेवालेकी वुद्धि ही जड़ होनी चाहिये। जडताका यदि कही अभाव है तो वह जलमें ही है।

पहाडको देखते ही अुसके शिखर तक चढनेका दिल होगा और संभव हुआ तो शिखर तक पैर चलेंगे भी। पानीकी भी यही वात है। मनुष्य जव तक नदीका अुद्गम और मुख नही ढूढता, तव तक अुसे संतोष नही होता। पानीको देखते ही अुसके समीप जानेका दिल होता ही है। वह यदि पेय हो तो प्यास न होते हुअे भी अुसको

चखनेका मन होता है। स्नानसे बाह्य शरीर और पानसे शरीरके अदरका भाग पावन किये बगैर मनुष्यको तृप्ति ही नही होती। अन्य सहूलियत न हो तो वह पानीका आचमन करेगा, अथवा कमसे कम पानीकी दो बूदें आखोकी पलको पर जरूर लगायेगा।

हिमालयके ठडे प्रदेशमे जहा कपडे अुतारना भी मुश्किल है वहा हमारे धर्मनिष्ठ लोग पचस्नानी करते है। पानीमें अुगलिया डुबो-कर अुनसे माथेको छूने पर अेक स्नान पूरा हुआ। दो आखोको छूने पर दूसरे दो स्नान हो गये। फिर वही पानीकी बूदें दो कर्ण-मूलोको लगानेसे पचस्नानी पूरी होती है। पानीके स्पर्शके विना मनुष्यको अैसा नही लगता कि वह पवित्र हो गया है।

मनुष्य जब मर जाता है, तब अुसके शरीरको जिस पृथ्वीसे वह आया अुसीके अुदरमें दफना देनेकी प्रथा सभी जगह है। किन्तु हम लोगोने अिसमें सशोधन किया। शरीरको सडने देनेके बजाय अुसका अग्नि-सस्कार करना हम अधिक श्रेयस्कर मानते हैं। अग्निको हम पावक कहते हैं। पावक यानी पवित्र करनेवाला। कोअी वस्तु चाहे जितनी गदी हो, सडी हुअी हो या अपवित्र हो, अग्नि-सस्कार होने पर वह पावन हो जाती है। अिसीलिअे हम अुपले, लकडिया, चदन, धूप और कपूर जैसे ज्वालाग्राही पदार्थ अेकत्र करके शरीरका अग्नि-सस्कार करते है।

यहा तक तो सब ठीक है, किन्तु जीवननिष्ठ सस्कृतिको अितनेसे सतोष नही हुआ। अग्नि-सस्कारके अतमें जो अस्थिया और भस्म बच जाते है, अुन अवशेषोका जब हम पवित्र जलाशयोमें विसर्जन करते है, तभी हमें परम सतोष होता है।

महात्माजीकी अस्थियो और चिताभस्मको हमने सारे देशमें जहा भी पवित्र जलाशय है वहा पहुचा दिया। हिमालयके अुस पार कैलाशके मार्गमें फैले हुअे मानस-सरोवरमें भी कुछ अवशेष छोड दिये गये। प्रयाग जैसे यज्ञस्थानमें विसर्जित करनेके वाद कुछ अवशेष समुद्र-किनारे भी ले गये, और खास तौर पर ध्यानमें रखनेकी वात तो यह है कि जिस अफ्रीका खडमें गाधीजीने सत्याग्रह जैसे दैवी बलकी खोज की और

अपना जीवन-कार्य शुरू किया, अुस अफ्रीकामें नील नदीके अुद्गमके प्रवाहमें भी अिन अस्थियोका विसर्जन किया और अिस प्रकार पानीकी सर्वोपरि पवित्रताको स्वीकार किया।

अैसे पानीके पवित्र दर्शनका आनद जिनमें छलकता हो, अैसे ही वर्णन अिस सग्रहमें लिये गये है।

सग्रह करते समय मेरी 'स्मरण-यात्रा' में से अेक छोटासा अध्याय सिर अूचा करके पूछने लगा, "क्या आप मुझे अिसमें नही लेगे?" अनवधानके लिअे अुससे माफी मागकर मैंने कहा, "जरूर, जरूर, तेरा भी जीवनलीलामे स्थान होगा।" मानसिक सृष्टि, कल्पना-सृष्टि और मायावी सृष्टि भी अतमे पार्थिव सृष्टिके साथ सृष्टि तो है ही। अत मनुष्यकी आखोको और मृगोकी आखोको जो जलके समान मालूम होता है और जिसका प्रवाह अिन दोनोको अपनी ओर खीचता है, वह भले प्राणवायु तथा अुद्जन-वायुके संयोगसे बना हुआ न हो, फिर भी जीवनलीलामे अुसका स्थान होना ही चाहिये — यो सोचकर छुटपनमें यात्रा करते समय देखा हुआ 'तेरदालका मृगजल' नामक वर्णन भी अिसमें ले लिया गया है।

सहाराके रेगिस्तानके आसपास दोपहरके समय यदि गया होता, तो अुस विराट् रेगिस्तानका और वहाके मृगजलका वर्णन अिसमें जरूर शामिल करता। किन्तु पश्चिम अफ्रीकासे अुत्तरकी ओर जाते हुअे समय और जान बचानेके लिअे सहाराका पूरा रेगिस्तान मैंने पार किया रातके अधेरेमें, और वह भी हवाअी जहाजकी मददसे। पश्चिम अफ्रीकाकी मध्ययुगीन नगरी 'कानो' से चलकर मध्यरात्रिके बाद ट्रिपोली पहुचा तब तक सारे समय टकटकी लगाकर मैंने सहाराको देखा। किन्तु अुस रात अधेरेमें अधेरेसे भिन्न कुछ दिखाअी नही दिया। सहाराका रेगिस्तान पार करने पर भी वहाका मृगजल नही देखा जा सका! जब हवाअी जहाजसे अुतरा, तब अितना ही कह सका.

लिम्पतीव तमोऽङ्गानि वर्षतीवाजनम् नभ.।

हमारे सस्कृत कवियोके नदी-वर्णन और स्तोत्रो पर मै मुग्ध हू। अिन स्तोत्रोमें सबसे अधिक तो भक्ति ही नजर आती है। अुनका

शब्द-लालित्य असाधारण होता है। भाषा-प्रवाह मानो नदीके प्रवाहके साथ होड करता है। कही कही अेकाध शब्दमे या समासमें सुदर वर्णन भी आ जाता है। किन्तु कुल मिलाकर ये स्तोत्र वर्णन नही होते, वल्कि केवल माहात्म्य ही होते है।

आज हमें यथार्थ वर्णनोकी और शब्दचित्रोकी भूख है। अुनके साथ थोडा माहात्म्य और चाहे अुतना काव्य आ जाय तो वह अिष्ट ही होगा। किन्तु वर्णन पढते समय नदी या सरोवरके प्रत्यक्ष दर्शनका थोडा-बहुत सतोष तो मिलना ही चाहिये। वरना जैन पुराणोमें दिये गये नगरियोके वर्णन जैसी बात होगी। ये वर्णन कहीसे अुठाकर किसी भी शहरके साथ जोड दें तो कुछ विगडेगा नही। अक्सर लेखक वर्णनकी दो-चार पक्तिया लिखकर अीमानदारीके साथ कहते है कि अमुक कहानीमें अमुक नगरीका जो वर्णन आता है अुसीको अुठाकर यहा रख दें। अैसे वर्णन न तो यथार्थ चित्रण माने जा सकते है, न माहात्म्य ही माने जा सकते है।

अेक पुराने हिन्दी कविने अेक पहाडी किलेका वर्णन किया है। अुसमें अश्वशालाके साथ गजशालाका भी वर्णन है। भोले कविको सदेह नही हुआ कि महाराष्ट्रके पहाड पर हाथी जायेंगे किस तरह! दूसरे अेक स्थान पर बगीचेके वर्णनमें ठडे मुल्कके और गरम मुल्कके, समुद्र-तटके और पहाड परके सब फल और फूलोके पेड-पौधोको अेकत्र कर दिया गया है! और अिसमें खूबी यह कि अिन तमाम फूलोके अेकसाथ खिलनेमें और फलोके अेकसाथ पकनेमे महीनो या ऋतुओकी कोअी कठिनाअी नही खडी हुअी!

सौभाग्यसे अैसे साहित्य-प्रकार अब बद हो गये है। फिर भी आजके लेखक प्रत्यक्ष परिचयके अभावमे केवल सामान्य वर्णन लिखते है 'आकाशमें तारे चमक रहे थ', 'बगीचेमे तरह तरहके फूल खिले थे', 'जगलमें वृक्ष-लताओकी घनी बस्ती थी।' अैसे सामान्य वर्णन लिखकर ही वे सतोष मानते हैं। लेखक आकाशको और वहाके तारोको पहचानता न हो, अुनके नाम न जानता हो, कौनसे फूल किस ऋतुमे खिलते ह यह न जानता हो, किन जंगलोमें किस तरहके

पेड अुगते है और किस तरहके नही अुगते आदि जानकारी अुसे न हो, तो फिर वह क्या करे? शब्द-वैभवको फैलाकर अनुभव-दारिद्रय छिपानेका वह चाहे जितना प्रयत्न करे, फिर भी दारिद्रय प्रकट हुअे विना नही रहता।

हमारे देशमे अव यात्राके साधन काफी वढ गये है और दिनो-दिन वढते जा रहे है। फोटोग्राफीकी कलाकी अितनी वृद्धि हुअी है कि अव वह ललित-कलाकी कोटिको पहुचनेका प्रयत्न कर रही है। देश-विदेशकी भाषाओके यात्रा-वर्णन पढकर हमारी कल्पना अुद्दीपित हो सकती है, तो अव हम भारतीय भाषाओमें पाया जानेवाला केवल यात्रा-वर्णनका दारिद्रय दूर क्यो न करे?

हमारे प्रिय-पूज्य देशको हम साहित्य द्वारा और दूसरे अनेक प्रकारोसे सजायेगे और नयी पीढीको भारत-भक्तिकी दीक्षा देगे।

देशका मतलव केवल जमीन, पानी और अुसके अूपरका आकाश ही नही है, वल्कि देशमे वसे हुअे मनुष्य भी है। यह जिस तरह हमें जानना चाहिये, अुसी तरह हमारी देशभक्तिमें केवल मानव-प्रेम ही नही वल्कि पशु-पक्षी जैसे हमारे स्वजनोका प्रेम भी शामिल होना चाहिये।

नदी, पहाड, पर्वतश्रेणी और अुसके अुत्तुग शिखरोसे तथा अिन सबके अूपर चमकनेवाले तारोसे परिचय वढाकर हमें भारत-भक्तिमें अपने पूर्वजोके साथ होड चलानी चाहिये। हमारे पूर्वजोकी साधनाके कारण गगाके समान नदिया, हिमालयके समान पहाड़, जगह जगह फैले हुअे हमारे धर्मक्षेत्र, पीपल या वडके समान महावृक्ष, तुलसीके समान पौधे, गायके जैसे जानवर, गरुड या मोरके जैसे पक्षी, गोपीचदन या गेरूके जैसे मिट्टीके प्रकार — सव जिस देशमें भक्ति और आदरके विषय वन गये है, अुस देशमे सस्कारोकी और भावनाओकी समृद्धिको वढाना हमारे जमानेका कर्तव्य है।

दादाभाअी नौरोजी पुण्यतिथि, — काका कालेलकर

वम्वअी, १–६–’५६

सरिता-संस्कृति

जो भूमि केवल वर्षाके पानीसे ही सीची जाती है और जहा वर्षाके आधार पर ही खेती हुआ करती है, अुस भूमिको 'देव-मातृक' कहते है। अिसके विपरीत, जो भूमि अिस प्रकार वर्षा पर आधार नही रखती, बल्कि नदीके पानीसे सीची जाती है और निश्चित फसल देती है, अुसे 'नदी-मातृक' कहते है। भारतवर्षमे जिन लोगोने भूमिके अिस प्रकार दो हिस्से किये, अुन्होने नदीको कितना महत्त्व दिया था, यह हम आसानीसे समझ सकते है। पजाबका नाम ही अुन्होने सप्तसिधु रखा। गगा-यमुनाके बीचके प्रदेशोको अतर्वेदी (दोआब) नाम दिया। सारे भारतवर्षके 'हिन्दुस्तान' और 'दक्खन' जैसे दो हिस्से करनेवाले विन्ध्याचल या सतपुडेका नाम लेनेके बदले हमारे लोग सकल्प बोलते समय 'गोदावर्या दक्षिणे तीरे' या 'रेवाया' अुत्तरे तीरे' अैसे नदीके द्वारा देशके भाग करते है। कुछ विद्वान ब्राह्मण-कुलोने तो अपनी जातिका नाम ही अेक नदीके नाम पर रखा है — सारस्वत। गगाके तट पर रहनेवाले पुरोहित और पडे अपने-आपको गगापुत्र कहनेमें गर्व अनुभव करते है। राजाको राज्यपद देते समय प्रजा जब चार समुद्रोका और सात नदियोका जल लाकर अुससे राजाका अभिषेक करती, तभी मानती थी कि अब राजा राज्य करनेके लिअे अधिकारी हो गया। भगवानकी नित्यकी पूजा करते समय भी भारतवासी भारतकी सभी नदियोको अपने छोटेसे कलशमें आकर बैठनेकी प्रार्थना अवश्य करेगा

गगे! च यमुने! चैव गोदावरि! सरस्वति!।
नर्मदे! सिधु! कावेरि! जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु॥

भारतवासी जब तीर्थयात्राके लिअे जाता है, तब भी अधिकतर वह नदीके ही दर्शन करनेके लिअे जाता है। तीर्थका मतलब है नदीका पैछल या घाट। नदीको देखते ही अुसे अिस बातका होश नही रहता कि जिस नदीमें स्नान करके वह पवित्र होता है अुसे अभिषेककी क्या आवश्यकता है? गगाका ही पानी लेकर गगाको अभिषेक किये बिना अुसकी भक्तिको सतोष नही मिलता। सीताजी जब रामचद्रजीके साथ

वनवासके लिअे निकल पडी, तब वे हर नदीको पार करते समय मनौती मनाती जाती थी कि वनवाससे सही-सलामत वापस लौटने पर हम तुम्हारा अभिषेक करेगे। मनुष्य जब मर जाता है, तब भी अुसे वैतरणी नदीको पार करना पडता है। थोडेमे, जीवन और मृत्यु दोनोमे आर्योका जीवन नदीके साथ जुडा हुआ है।

अुनकी मुख्य नदी तो है गगा। वह केवल पृथ्वी पर ही नही, बल्कि स्वर्गमे भी बहती है और पातालमे भी बहती है। अिसीलिअे वे गंगाको त्रिपथगा कहते है।

पाप धोकर जीवनमे आमूलाग्र परिवर्तन करना हो, तब भी मनुष्य नदीमें जाता है और कमर तक पानीमे खड़ा रहकर सकल्प करता है, तभी अुसको विश्वास होता है कि अब अुसका सकल्प पूरा होनेवाला है। वेदकालके ऋषियोसे लेकर व्यास, वाल्मीकि, शुक, कालिदास, भव-भूति, क्षेमेंद्र, जगन्नाथ तक किसी भी सस्कृत कविको ले लीजिये, नदीको देखते ही अुसकी प्रतिभा पूरे वेगसे बहने लगती है। हमारी किसी भी भाषाकी कविताअें देख लीजिये, अुनमें नदीके स्तोत्र अवश्य मिलेंगे। और हिन्दुस्तानकी भोली जनताके लोकगीतोमें भी आपको नदीके वर्णन कम नही मिलेंगे।

गाय, बैल और घोडे जैसे अुपयोगी पशुओकी जातिया तय करते समय भी हमारे लोगोको नदीका ही स्मरण होता है। अच्छे अच्छे घोडे सिंधुके तट पर पाले जाते थे, अिसलिअे घोडोका नाम ही सैंधव पड गया। महाराष्ट्रके प्रख्यात टट्टू भीमा नदीके किनारे पाले जाते थे, अत वे भीमथडीके टट्टू कहलाये। महाराष्ट्रकी अच्छा दूध देनेवाली और सुदर गायोको अंग्रेज आज भी 'कृष्णावेली ब्रीड' कहते है।

जिस प्रकार ग्राम्य पशुओकी जातिके नाम नदी परसे रखे गये है, अुसी प्रकार कअी नदियोके नाम पशु-पक्षियो परसे रखे गये है। जैसे गो-दा, गो-मती, साबर-मती, हाथ-मती, वाघ-मती, सारस्वती, चर्मण्वती आदि।

महादेवकी पूजाके लिअे प्रतीकके रूपमें जो गोल चिकने पत्थर (बाण) अुपयोगमे लाये जाते है, वे नर्मदाके ही होने चाहिये। नर्मदाका

माहात्म्य अितना अधिक है कि वहाके जितने ककर अुतने सब शकर होते है। और वैष्णवोके शालिग्राम गडकी नदीसे आते है।

तमसा नदी विश्वामित्रकी बहन मानी जाती है, तो कालिन्दी यमुना प्रत्यक्ष कालभगवान यमराजकी बहन है।

प्रत्येक नदीका अर्थ है सस्कृतिका प्रवाह। प्रत्येककी खूबी अलग है। मगर भारतीय सस्कृति विविधतामें से अेकताको अुत्पन्न करती है। अत सभी नदियोको हमने सागर-पत्नी कहा है। समुद्रके अनेक नामोमें अुसका सरित्पति नाम बडे महत्त्वका है। समुद्रका जल अिसी कारण पवित्र माना जाता है कि सब नदिया अपना अपना पवित्र जल सागरको अर्पण करती है। 'सागरे सर्व तीर्थानि'।

जहां दो नदियोका सगम होता है, अुस स्थानको प्रयाग कहकर हम पूजते है। यह पूजा हम केवल अिसीलिअे करते है कि सस्कृतियोका जब मिश्रण या सगम होता है तब अुसे भी हम शुभ-सगम समझना सीखें। स्त्री-पुरुषके बीच जब विवाह होता है तब वह भिन्न-गोत्री ही होना चाहिये, अैसा आग्रह रखकर हमने यही सूचित किया है कि अेक ही अपरिवर्तनशील सस्कृतिमें सडते रहना श्रेयस्कर नही है। भिन्न भिन्न सस्कृतियोके बीच मेलजोल पैदा करनेकी कला हमें आनी ही चाहिये। 'लकाकी कन्या घोघा (सौराष्ट्र) के लडकेके साथ विवाह करती है', तभी अुन दोनोमें जीवनके सब प्रश्नोके प्रति अुदार दृष्टिसे देखनेकी शक्ति आती है। भारतीय सस्कृति पहलेसे ही सगम-सस्कृति रही है। हमारे राजपुत्र दूर दूरकी कन्याओसे विवाह करते थे। केकय देशकी कैकेयी, गाधारकी गाधारी, कामरूपकी चित्रागदा, ठेट दक्षिणकी मीनाक्षी मीनलदेवी, बिलकुल विदेशसे आयी हुअी अुर्वशी और महाश्वेता — अिस तरह कअी मिसालें बताअी जा सकती है। आज भी राजा-महाराजा यथासभव दूर दूरकी कन्याओसे विवाह करते है। हमने नदियोसे ही यह सगम-सस्कृति सीखी है।

अपनी अपनी नदीके प्रति हम सच्चे रहकर चलेंगे, तो अतत समुद्रमें पहुच जायेंगे। वहा कोअी भेदभाव नही रह सकता। सब कुछ अेकाकार, सर्वाकार और निराकार हो जाता है। 'सा काष्ठा सा परा गति'।

नदी-मुखेनैव समुद्रम् आविशेत्

सुवह या शामके समय नदीके किनारे जाकर आरामसे वैठने पर मनमे तरह तरहके विचार आते है। वालूका शुभ्र विशाल पट हमेशा वहीका वही होता है, फिर भी वहाका हरअेक कण पवन या पानीसे स्थानभ्रष्ट होता है। अितनी सारी वालू कहासे आती है और कहा जाती है? वालूके पट पर चलनेसे अुसमे पावोके स्पष्ट या अस्पष्ट निशान वनते हैं। किन्तु घडी दो घडी हवा वहने पर अुनका 'नामोनिशान' भी नही रहता। दो किनारोकी मर्यादामें रहकर नदी वहती है; वह कभी रुकती नही। पानी आता है और जाता है, आता है और जाता है। छुटपनमें मनमे विचार आता था कि 'मध्यरात्रिके समय यह पानी सो जाता होगा और सुवह सवसे पहले जागकर फिरसे वहने लगता होगा। सूरज, चाद और अनगिनत तारे जिस प्रकार विश्राति लेनेके लिअे पश्चिमकी ओर अुतरते है, अुसी प्रकार यह पानी भी रातको सो जाता होगा। विश्रातिकी हरेकको आवश्यकता रहती है।' वादमें देखा, नही, नदीके पानीको विश्रातिकी आवश्यकता नही है। वह तो निरन्तर वहता ही रहता है।

नदीको देखते ही मनमें विचार आता है—यह आती कहासे है और जाती कहा तक है? यह विचार या यह प्रश्न सनातन है। नदीका आदि और अत होना ही चाहिये। नदीको जितनी वार देखते है, अुतनी ही वार यह सवाल मनमें अुठता है। और यह सवाल ज्यो ज्यो पुराना होता जाता है, त्यो त्यो अधिक गभीर, अधिक काव्यमय और अधिक गूढ वनता जाता है। अतमें मनसे रहा नही जाता, पैर रुक नहीं पाते। मन अेकाग्र होकर प्रेरणा देता है और पैर चलने लगते है। आदि और अंत ढूढना—यह सनातन खोज हमें शायद नदीसे ही मिली होगी। अिसीलिअे हम जीवन-प्रवाहको भी नदीकी अुपमा देते आये हैं। अुपनिषद्कार और अन्य भारतीय कवि, मैथ्यू आर्नोल्ड जैसे युरोपियन कवि और रोमा रोला जैसे अुपन्यासकार जीवनको नदीकी ही अुपमा

देते हैं। अिस ससारका प्रथम यात्री है नदी। अिसीलिअे पुराने यात्री लोगोने नदीके अुद्गम, नदीके सगम और नदीके मुखको अत्यत पवित्र स्थान माना है।

जीवनके प्रतीकके समान नदी कहासे आती है और कहा तक जाती है? शून्यमें से आती है और अनतमे समा जाती है। शून्य यानी अत्यल्प, सूक्ष्म किन्तु प्रबल; और अनतके मानी है विशाल और शात। शून्य और अनत, दोनो अेकसे गूढ हैं, दोनो अमर हैं। दोनो अेक ही हैं। शून्यमें से अनत — यह सनातन लीला है। कौशल्या या देवकीके प्रेममें समा जानेके लिअे जिस प्रकार परब्रह्मने बालरूप धारण किया, अुसी प्रकार कारुण्यसे प्रेरित होकर अनत स्वय शून्यरूप धारण करके हमारे सामने खडा रहता है। जैसे जैसे हमारी आकलन-शक्ति बढती है, वैसे वैसे शून्यका विकास होता जाता है और अपना ही विकास-वेग सहन न होनसे वह मर्यादाका अुल्लघन करके या अुसे तोडकर अनत बन जाता है — बिंदुका सिंधु बन जाता है।

मानव-जीवनकी भी यही दशा है। व्यक्तिसे कुटुब, कुटुबसे जाति, जातिसे राष्ट्र, राष्ट्रसे मानव्य और मानव्यसे भूमा विश्व — अिस प्रकार हृदयकी भावनाओका विकास होता जाता है। स्व-भाषाके द्वारा हम प्रथम स्वजनोका हृदय समझ लेते हैं और अतमें सारे विश्वका आकलन कर लेते हैं। गावसे प्रान्त, प्रान्तसे देश और देशसे विश्व, अिस प्रकार हम 'स्व'का विकास करते करते 'सर्व'में समा जाते हैं।

नदीका और जीवनका क्रम समान ही है। नदी स्वधर्म-निष्ठ रहती है और अपनी कूल-मर्यादाकी रक्षा करती है, अिसीलिअे प्रगति करती है। और अतमें नामरूपको त्यागकर समुद्रमें अस्त हो जाती है। अस्त होने पर भी वह स्थगित या नष्ट नही होती, चलती ही रहती है। यह है नदीका क्रम। जीवनका और जीवन्मुक्तिका भी यही क्रम है।

क्या अिस परसे हम जीवनदायी शिक्षाके क्रमके बारेमे बोध लेंगे?

१९२२

अपस्थान*

भिन्न भिन्न अवसरो पर भारतवर्षकी जिन नदियोके दर्शन मैंने किये, अुनमे से कुछ नदियोका यहा स्मरण किया गया है। यहा मेरा अुद्देश भूगोलमें दी जानेवाली जानकारीका सग्रह करनेका नही है, न नदियोका हमारे व्यापार-वाणिज्य पर होनेवाला असर बतानेका यहा प्रयत्न है। यह तो केवल हमारे देशकी लोकमाताओका भक्तिपूर्वक किया हुआ नये प्रकारका अुपस्थान है।

हमारे पूर्वजोकी नदी-भक्ति लोक-विश्रुत है। आज भी वह क्षीण नही हुअी है। यात्रियोकी छोटी-बड़ी नदिया तीर्थस्थानोकी ओर बहकर यही सिद्ध करती है कि वह प्राचीन भक्ति आज भी जैसीकी वैसी जाग्रत है।

भक्त-हृदय भक्तिके अिन अुद्‌गारोका श्रवण करके संतुष्ट हो। युवकोमें लोकमाताओके दर्शन करनेकी और विविध ढगसे अुनका स्तन्यपान करके सस्कृति-पुष्ट होनेकी लगन जाग्रत हो।

*   *   *

हिन्दुस्तानके सभी सुन्दर स्थलोका वर्णन करना मानव-शक्तिके बाहरकी बात है। खुद भगवान व्यास जब भारतकी नदियोके नाम सुनाने बैठे, तब अुनको भी कहना पडा कि जितनी नदिया याद आयी अुन्हीका यहां नाम-सकीर्तन किया गया है। बाकीकी असख्य नदिया रह गयी हैं।

मेरी देखी हुअी नदियोमें से बन सके अुतनी नदियोका स्मरण और वर्णन करके पावन होनेका मेरा सकल्प था। आज जब अिस भक्ति-कुसुमाजलिको देखता हू, तो मनमें विषाद पैदा होता है कि कृतज्ञता व्यक्त हो सके अुतनी नदियोका भी अुपस्थान मैं कर नही सका हू। जिनका वर्णन नही कर सका, अुन्ही नदियोकी सख्या अधिक है। जिस प्रातमें मैं करीब पाव सदी तक रहा, अुस गुजरातकी नदियोका वर्णन भी मैंने नही किया है। नर्मदा और साबरमतीके बारेमें तो अभी अभी कुछ लिख सका हू। ताप्ती या तपतीके बारेमें कुछन ही लिखा। अुसका परिताप मनमें है ही। अिस नदीका अुद्‌गम-स्थान मध्यप्रातमें बैतुलके पास है। बरहानपुर और भुसावल

* मूल गुजराती पुस्तक 'लोकमाता' की प्रस्तावनासे।

होकर वह आगे वढती है। अुसकी मदद लेकर अेक बार मैं सूरतसे हजीरा तक हो आया हू। ताप्तीसे भगवान सूर्यनारायणके प्रेमके वारेमें पूछा जा सकता है और अग्रेजोने व्यापारके बहाने सूरतमें कोठी किस प्रकार डाली और बाजीरावने यही महाराष्ट्रका स्वातत्र्य अग्रेजोको कब सौप दिया, अिसके बारेमें भी पूछा जा सकता है।

गोधरा जाते समय जो छोटी-सी मही नदी मैंने देखी थी, वही खभातसे कावी बदरगाह तक महापक कीचडका विस्तार किस तरह फैला सकती है, यह देखनेका सौभाग्य भी मुझे प्राप्त हुआ है। पूर्वकी महानदी और पश्चिमकी मही नदी, दोनोका कार्य विशेष प्रकारका है। सूर्या, दमणगगा, कोलक, अबिका, विश्वामित्री, कीम आदि अनेक पश्चिम-वाहिनी नदियोका मीठा आतिथ्य मैंने कभी न कभी चखा है। अुन्हें यदि अजलि अर्पण न करू तो मैं कृतघ्न माना जाअूगा। और जिस आजीके किनारे महात्माजीने छुटपनकी शरारतें की थी, वह तो खास तौर पर मेरी अजलिकी अधिकारिणी है। वढवाणकी भोगावोके वारेमें मैंने शायद कही लिखा होगा। किन्तु वह भोगावोकी अपेक्षा राणकदेवीके स्मरणके तौर पर ही होगा।

गुजरातके बाहर नजर घुमाकर दूसरी नदियोका स्मरण करता हू, तब प्रथम याद आता है सबसे बडा ब्रह्मपुत्र। अुसका अुद्गम-स्थान तो हिमालयके अुस पार मानस-सरोवरके प्रदेशमें है। हिमालयके अुत्तरकी ओर बहते हुअे पानीकी अेक अेक बूद अिकट्ठी करके वह हिमालयकी सारी दीवार पार करता है और पहाडो तथा जगलोके अज्ञात प्रदेशोमें बहता हुआ आसामकी ओर अुन्हें छोड देता है। बादमें सदिया, डिब्रुगढ, तेजपुर, गौहाटी, ढुब्री आदि स्थानोको पावन करता हुआ वह बगालमें अुतरता है। और अुसे गगासे मिलना है, अिसी कारण वह कुछ दूरी तक यमुना नाम धारण करते हुअे आगे पद्मा बनता है। 'अितिहासके अुषाकाल' से लेकर जापानियोके अभी अभीके आक्रमण तकका सारा अितिहास ब्रह्मपुत्रको विदित है। किन्तु अिस ताजे अितिहासके कअी प्रकरण तो मणिपुरकी अिम्फाल नदी ही बता सकती है। फिर भी अिस नदीको पूछने पर वह कहेगी कि मुझसे

पूछनेके वदले यह सव आपकी अैरावतीकी सखी छिंदवीनसे ही पूछ लीजिये। और मणिपुरकी ओरसे भागकर आये हुअे लोगोका कुछ अितिहास तो सुर्मा-घाटीकी वराक नदीसे ही पूछना होगा।

मैंने नदिया तो कअी देखी है। किन्तु जिसकी गूढ-गामिता और चिंता-रहित लापरवाही पर मैं सवसे अधिक मुग्ध हुआ हूं, वह है कालीम्पोग तरफकी तीस्ता नदी। कैसा तो अुसका अुन्माद! और कैसा अुसका आत्म-गौरवका भान!

अुत्कलमें मैं अनेक वार हो आया हूं। वहाकी महानदी, काटजुडी और काकपेंया तो है ही। किन्तु वरी-कटकसे वापस लौटते समय खर-स्रोताके किनारे देखा हुआ सूर्योदय और अन्य अवसर पर सुना हुआ अृषिकुल्या नदीका अितिहास तथा अुसके किनारेका सौंदर्य मैं भला कैसे भूल सकता हू? जौगढका अशोकका प्रख्यात शिलालेख देखने गया था, तव मैंने अृषिकुल्याके दर्शन किये थे, और यदि मैं भलता न होअू तो धवलीका हाथीवाला शिलालेख देखने गया था, तव अेक नदीकी दो नदिया वनती हुअी मैंने देखी थी। दो नदियोका संगम देखना अेक वात है। दो नदिया अिकट्ठी होकर अपनी जलराशि वढाती है और सभूय-समुत्थानके सिद्धातके अनुसार वडा व्यापार करती है। यह तो शक्ति वढानेका प्रयास है। किन्तु अेक ही नदी दूरसे आकर जव देखती है कि दोनो ओरके प्रदेशको मेरे जलकी अुतनी ही आवश्यकता है, तव भला वह किसका पक्षपात करे? अपना जल वाटकर जव दो प्रवाहोमें वह वहने लगती है, तव दो वच्चोकी माताके जैसी मालूम होती है। अुसको विशेष भक्तिपूर्वक प्रणाम किये विना रहा नही जा सकता।

क्या आपने काली नदीके सफेद होनेकी वात कभी सुनी है? छुटपनमें कारवारमें मैंने अेक काली नदी देखी थी। वह समुद्रसे मिलती है तव तक काली ही काली रहती है। किन्तु गोवाकी ओर अेक काली नदी है, जो सागरसे मिलनेकी आतुरताके कारण पहाड़की चोटी परसे नीचे अिस तरह कूदती है कि अुसका दूधके समान काव्यमय सफेद प्रपात बन जाता है। अुसका नाम ही दूधसागर पड गया है। अिस दूधसागरका दृश्य अैसा है, मानो किसी लडकीने नहानेके वाद सुखानेके

लिअे अपने बाल फैलाये हो। शरावतीके जोगके प्रपातका वर्णन मैंने तीन बार किया है, तो दूधसागरके गभीर ललित काव्यका मनन मुझे दस बार करना चाहिये था।

हिमालय जाते समय देखी हुअी रामगगाका और हिमालयके अुस पारसे आनेवाली सरयू घाघराका वर्णन तो रह ही गया है। किन्तु लका (सीलोन) में देखी हुअी सीतावाका और अन्य दो तीन गगाओके बारेमे भी मैंने कहा लिखा है? मध्यप्रातमे देखी हुअी धसानके बारेमें मैंने लिखा और वेत्रवतीको छोड दिया, यह भला कैसे चल सकता है? अुज्जयिनी जाते समय देखी हुअी शिप्रा नदीको स्मरणाजलि न दू, तो कालिदास ही मुझे शाप देंगे। मुरादाबादमे देखी हुअी गोमतीका स्मरण करते ही द्वारकाकी गोमतीका स्मरण हो आता है और अिसी न्यायसे सिंधकी सिंधुके साथ मध्यभारतकी नन्ही-सी सिंधुकी भी याद हो आती है।

काठियावाडमे चोरवाडके पास समुद्रसे मिलने जाते जाते बीचमें ही रुक जानेवाली मेगल नदी मैंने देखी नही है। किन्तु अिसी प्रकारकी अेक नदी अड्यार मद्रासके पास मैंने देखी है, जिसकी समुद्रसे बनती नही। अड्यार नदी समुद्रकी ओर हृदय-समृद्धिका खाद या गाद लेकर आती है और समुद्र चिढकर अुसके सामने बालूका अेक बाध खडा कर देता है। खडिताका यह दृश्य अितना करुण है कि अुसका असर बरसो तक मेरे मन पर रहा है।

अिससे तो केरलके 'बैक वॉटर' अच्छे हैं। वहा समुद्रके समानान्तर, किनारे किनारे अेक लबी नदी फैली हुअी है, मानो समुद्रसे कह रही हो कि तुम्हारे खारे पानीके तूफान मै भारतकी भूमि तक पहुचने नही दूगी।

अिसका अेक छोटा-सा नमूना हमें जुहूकी ओर देखनेको मिलता है। जुहूके नारियलवाले प्रदेशके पश्चिममें समुद्र है, और पूर्वकी ओर कभी कभी पानी फैला हुआ दीख पडता है। यही स्थिति यदि हमेशाकी हो जाये और पानी यदि अुत्तर-दक्षिणकी ओर सौ पचास मील तक फैल जाये, तो बबअीके लोगोको केरलके 'बैक वॉटर्स' का कुछ खयाल हो सकेगा। किन्तु केरलके अुस हिस्सेका नृष्टि-सौन्दर्य प्रत्यक्ष देखे बिना ध्यानमें नही आयेगा।

सिंधके कमल-सुदर मचर सरोवरके वारेमें मैंने थोडा-सा लिखा है। किन्तु अुत्कलमें देखे हुअे चिल्का सरोवरके वारेमें लिखना अभी वाकी है। लॉर्ड कर्जनने अेक वार कहा था कि "हिन्दुस्तानमे श्रेष्ठ सौंदर्य-धाम यदि कोअी हो तो वह चिल्का सरोवर ही है।" स्वीडन और नार्वेकी समुद्र-शाखाके चित्र जव जव मैं देखता हू, तव तव मुझे अेक वार देखे हुअे चिल्का सरोवरका स्मरण हुअे बिना नही रहता। अुत्कलके अेक कविने अिस सरोवर पर अेक सुन्दर सुदीर्घ काव्य लिखा है।

* * *

नदियो और सरोवरोके वारेमें लिखनेके वाद जीवन-तर्पण पूरा करनके लिअे मुझे हिन्दुस्तान, ब्रह्मदेश और सीलोनके किनारे किये हुअे विशिष्ट समुद्र-दर्शनोका वर्णन भी लिख डालना चाहिये। कराची, कच्छ और काठियावाडसे लेकर वम्वअी, दाभोळ, कारवार या गोकर्ण तकका समुद्र-तट, अुसके वाद कालिकटसे लेकर रामेश्वरम् और कन्याकुमारी तकका दक्षिणका किनारा, वहासे अूपर पाडिचेरी, मद्रास, मछलीपट्टम्, विजगापट्टम् आदि सूर्योदयका पूर्व किनारा और अतमें गोपालपुर, चादीपुर, कोणार्क और पुरी-जगन्नाथसे लेकर ठेठ हीरावदर तकका दक्षिणाभिमुख समुद्र-तट जव याद आता है, तव कमसे कम पचास-पचहत्तर दृश्य अेक ही साथ नजरके सामने विश्वरूप दर्शनकी तरह अद्भुत ज्वार-भाटा चलाते हैं। सीलोन और रगूनके दृश्य तो अपना व्यक्तित्व रखते ही हैं। दिलमें यह सारा आनद अितना भरा हुआ है कि वाणीके द्वारा अुसे अेकसाथ यदि वहा दू, तो समुद्रसे निकलकर अनेक दिशाओंमें वहनेवाली अेक नयी अलौकिक सरस्वती पैदा हो जायगी। कुछ नही तो दिलको हलका करनेके लिअे ही अिन सव सस्मरणोको गति देनी होगी।

हिन्दुस्तानके पहाड और जगल, रेगिस्तान और मैदान, शहर और गाव, सव प्रतीक्षा कर रहे हैं। गावोका पुरस्कार करनेके हेतु मैं शहरोकी कितनी ही निन्दा क्यो न करू और काम पूरा होनेके पहले ही शहरोसे भागनेकी अिच्छा भी क्यो न करू, फिर भी शहरोका व्यक्तित्व मैं पहचान सकता हू। अुनके प्रति भी मैं प्रेम-भक्तिका भाव रखता हू। क्या भारतके सव शहर मेरे देशवासियोके पुरुषार्थके प्रतीक नही

है? क्या शहरोमे सस्कारिताकी पेढिया हमारे लोगोने स्थापित नही की हैं? क्या हरेक शहरने अपना वायुमडल, अपनी टेक, अपना पुरुषार्थ अखड रूपसे नही चलाया है? शहर यदि गावोके भक्षक या शोषक मिटकर अुनके पोषक बन जाये, तो अुन्हें भी हरेक समाज-हितचिंतकके आशीर्वाद मिले बिना नही रहेंगे।

मेरी दृष्टिसे तो हिन्दुस्तानमें देखे हुअे अनेकानेक स्मशान भी मेरी भक्तिके विषय है। फिर वह चाहे हरिश्चद्र द्वारा रक्षित काशीका स्मशान हो, दिल्लीके आसपासके अनेक राजधानियोके स्मशान हो, या महायुद्धके बाद अभी आसाममें देखे हुअे मृतक हवाअी जहाजोके अवशेष-रूप दो तीन चमकीले स्मशान हो। स्मशान तो स्मशान ही है। अुन्हें देखते ही मनुष्योके तथा राजवशोके, साम्राज्योके और सस्कृतियोके जन्म-मरणके बारेमें गहरे विचार मनमें अुठे बिना नही रह सकते।

जिसमे खुद मुझे जाना है, अुस अेक स्मशानको छोडकर बाकीके सब स्मशानोका वर्णन करनेकी अिच्छा हो आती है। यह यदि सभव न हो तो जिस प्रकार युद्धमें 'काम आये हुअे' अज्ञात वीरोको और श्राद्धके समय अज्ञात सबधियोको अेक सामान्य पिंड या अजलि अर्पण की जाती है, अुसी प्रकार हरिश्चन्द्र, विक्रम, भर्तृहरि और महादेवके अुपासक असख्य योगियोने जिस स्मशानको अपना निवास बनाया, अुस प्रातिनिधिक 'सर्व-सामान्य स्मशान' को अेक अजलि अर्पण करनेकी अिच्छा तो है ही।

क्या यह सब मैं कर सकूगा? मुझे अिसकी चिंता नही है। अैसी बात नही है कि सिर्फ अीश्वर ही अवतार धारण करता है। जिस जिसके मनमें सकल्प अुठते है, अुस अुसको अवतार लेने ही पडते है। यह भी माननेकी आवश्यकता नही है कि अेक ही जीवात्मा अनेक अवतार धारण करता है। अवतार धारण करना पडता है अदम्य सकल्पको। अदम्य सकल्प ही सच्चा विधाता है। सकल्प पैदा हुआ कि अुसमें से सृष्टि अुत्पन्न होगी ही। फिर वह भले ब्रह्मदेवकी पार्थिव सृष्टि हो, साहित्यकी शब्द-सृष्टि हो, या केवल कल्पनाकी चित्र-सृष्टि हो।

अिस सृष्टिके द्वारा जीवन-देवता अपना अनत-विध अुल्लास प्रकट करता ही रहता है।

अनुक्रमणिका

जीवनलीला

अेक विनती

'जीवनलीला' के प्रास्ताविक चार लेखोसे सम्बन्ध रखनेवाले 'अनुबन्ध' की टिप्पणियो तथा 'सूची' के शब्दोके साथ पृ० ५ से पृ० १८ तक की जो पृष्ठसख्या दी गअी है, अुसमें १७ के सिवा प्रत्येक सख्याके साथ अेक-अेक अक और जोड कर पढनेकी कृपा करे ।

'सभूय-समुत्थानका सिद्धान्त' टिप्पणीका पृष्ठ १७ के बजाय १८ पढा जाय ।

१

सखी मार्कण्डी

क्या हरअेक नदी माता ही होती है? नही। मार्कण्डी तो मेरी छुटपनकी सखी है। वह अितनी छोटी है कि मै अुसे अपनी बडी बहन भी नही कह सकता।

बेलगुदीके हमारे खेतमें गूलरके पेडके नीचे दुपहरकी छायामे जाकर बैठू तो मार्कण्डीका मद पवन मुझे जरूर बुलायेगा। मार्कण्डीके किनारे मै कअी बार बैठा हू, और पवनकी लहरोंसे डोलती हुअी घासकी पत्तियोको मैंने घटो तक निहारा है। मार्कण्डीके किनारे असाधारण अद्‌भुत कुछ भी नही है। न कोअी खास किस्मके फूल है, न तरह तरहके रगोकी तितलिया है। सुन्दर पत्थर भी वहा नही है। अपने कलकूजनसे चित्तको बेचैन कर डाले अैसे छोटे-बडे प्रपात भला वहा कहासे हो? वहा है केवल स्निग्ध शाति।

गडरिये बताते है कि मार्कण्डी वैजनाथके पहाडसे आती है। अुसका अुद्‌गम खोजनेकी अिच्छा मुझे कभी नही हुअी। हमारे तालुकेका नकशा हाथमें आ जाय तो भी अुसमे मार्कण्डीकी रेखा मै नही खोजूगा। क्योंकि वैसा करनेसे वह सखी मिटकर नदी बन जायगी! मुझे तो अुसके पानीमें अपने पाव छोडकर बैठना ही पसद है। पानीमें पाव डाला कि फौरन अुसकी कलकल कलकल आवाज शुरू हो जाती है। छुटपनमे हम दोनो कितनी ही बातें किया करते थे। अेक-दूसरेका सहवास ही हमारे आनदके लिअे काफी हो जाता था। मार्कण्डी क्या बता रही है यह जाननेकी परवाह न मुझे थी, न मै जो कुछ बोलता हू अुसका अर्थ समझनेके लिअे वह रुकती थी। हम अेक-दूसरेसे बोल रहे है, अितना ही हम दोनोंके लिअे काफी था। भाअी-बहन जब बरसो बाद मिलते है, तब अेक-दूसरेसे हजारो सवाल पूछा करते है। किन्तु अिन सवालोंके पीछे जिज्ञासा नही होती। वह तो प्रेम व्यक्त करनेका केवल

अेक तरीका होता है। प्रश्न क्या पूछा और अुत्तर क्या मिला, अिस ओर ध्यान दे सके अितना स्वस्थ चित्त भला प्रेम-मिलनके समय कैसे हो?

मार्कण्डीके किनारे किनारे मैं गाता हुआ घूमता और मार्कण्डी अुन गीतोको सुनती जाती। सोलहवें वर्षकी आयुमें शिव-भक्तिके बल पर जिन्होंने यमराजको पीछे ढकेल दिया अुन मार्कण्डेय ऋषिका अुपाख्यान गाते समय मुझे कितना आनद मालूम होता था!

मृकडु ऋषिके कोअी सतान न थी। अुन्होंने तपश्चर्या की और महादेवजीको प्रसन्न किया। महादेवजीने वरदानमें विकल्प रखा।

साधू सुदर शाहणा सुत तया सोळाच वर्षें मिती
जो का मूढ कुरूप तो शतवरी वर्षें असे स्व-स्थिती
या दोहीत जसा मनात रुचला तो म्या तुतें दीधला

(अेक लड़का साधुचरित, खूबसूरत और सयाना होगा। किन्तु अुसकी आयु सिर्फ सोलह सालकी होगी। दूसरा मूढ और बदसूरत होगा। अुसकी आयु सौ सालकी होगी। मगर वह अुम्रभर जैसाका वैसा ही रहेगा। अिन दोनोमें से जो तुम्हे पसद हो, सो मैं दूगा।)

अब अिन दोनोमें से कौनसा पसद करे? ऋषिने धर्मपत्नीसे पूछा। दोनोंने सोचा, बालक भले सोलह वर्ष ही जिये किन्तु वह सद्गुणी हो। वही कुलका अुद्धार करेगा। दोनोंने यही वर माग लिया। मार्कण्डेय अुम्रमें ज्यों ज्यो खिलता गया त्यो त्यो मा-बापके वदन म्लान होते चले। आखिर सोलह वर्ष पूरे हुअे।

युवक मार्कण्डेय पूजामें बैठा है। यमराज अपने पाडे पर बैठकर आये। किन्तु शिवलिगको भेटे हुअे युवा साधुको छूनेकी हिम्मत अुन्हे कैसे हो? हा, ना करते करते अुन्होंने आखिर पाश फेंका। अुधर लिगसे त्रिशूलधारी शिवजी प्रकट हुअे। और अपनी धृष्टताके लिअे यमराजको भला-बुरा बहुत कुछ सुनना पडा। मृत्युजय महादेवजीके दर्शन करनेके बाद मार्कण्डेयको मृत्युका डर कैसे हो सकता है? अुसकी आयुधारा अब तक बह रही है।

आगे जाकर जब मैं कॉलेजमे पढने लगा तब अिम्तहानके बाद हमारी भाअी-बूज होती। फसल काटनेके दिन होते। दो दो दिन खेतमें ही बिताने पडते। तब मार्कण्डी मुझे शकरकद भी खिलाती और अमृत जैसा पानी भी पिलाती। जब यह देखनेके लिअे मैं जाता कि रातको ठडके मारे वह काप तो नही रही हैं, तब अपने आिनेमें वह मुझे मृगनक्षत्र दिखाती।

आज भी जब मैं अपने गाव जाता हू, मार्कण्डीसे बिना मिले नही रहता। किन्तु अब वह पहलेकी भाति मुझसे लाड नही करती। जरा-सा स्मित करके मौन ही धारण करती है। अुसके सुकुमार वदन पर पहलेके जैसा लावण्य नही है। किन्तु अब अुसके स्नेहकी गभीरता बढ गयी है।

अगस्त, १९२८

२

कृष्णाके संस्मरण

१

ग्यारसका दिन था। गाडीमें बैठकर हम माहुली चले। महाराष्ट्रकी राजधानी सातारासे माहुली कुछ दूरी पर है। रास्तेमे दाहिनी तरफ श्री शाहु महाराजके वफादार कुत्तेकी समाधि आती है। रास्ते पर हमारी ही तरह बहुतसे लोग माहुलीकी तरफ गाडिया दौडाते थे। आखिर हम नदीके किनारे पहुचे। वहा अिस पारसे अुस पार तक लोहेकी अेक जजीर अूची तनी हुअी थी। अुसमे रस्सीसे अेक नाव लटकाअी गअी थी, जो मेरी बाल-आखोको बडी ही भव्य मालूम होती थी।

किनारेके छोटे-बडे ककर कितने चिकने, काले काले और ठडे ठडे थे। हाथमे अेकको लेता तो दूसरे पर नजर पडती। वह पहलेसे अच्छा

मालूम होता। अितनेमे तीसरे भीगे हुअे ककर पर कत्थअी रगकी लकीरे दीख पडती और अुसे अुठानेका दिल हो जाता। अुस दिन कृष्णाका मुझे प्रथम दर्शन हुआ। कृष्णामैयाने भी मुझे पहली ही बार पहचाना। मै अुसे पहचान लू अितना वडा तो मै था ही नही। वच्चा माको पहचाने अुसके पहले ही मा अुसे अपना वना लेती है। हम वच्चे नगे होकर खूब नहाये, कूदे, पानी अुछाला, नाव पर चढकर पानीमें छलागे मारी। कडाकेकी भूख लगे अितना कृष्णामें जलविहार किया।

जैसा नदीका यह मेरा पहला ही दर्शन था, वैसा ही नहानेके बाद नमकीन मूगफलीके नाश्तेका स्वाद भी मेरे लिअे पहला ही था। यात्राके अवसर पर मोरपखोकी टोपी पहननेवाले 'वासुदेव' भीख मागने आये थे। मजीरेके साथ अुनका मधुर भजन भी अुस दिन पहली ही बार सुना। कृष्णामैयाके मदिरमे थोडा-सा आराम करनेके वाद हम घर लौटे।

सह्याद्रिके कान्तारमें, महावलेश्वरके पाससे निकलकर सातारा तक दौडनेमे कृष्णाको बहुत देर नही लगती। किन्तु अितनेमें ही वेण्या कृष्णासे मिलने आती है। अिनके यहाके सगमके कारण ही माहुलीको माहात्म्य प्राप्त हुआ है। दो वालिकाअे अेक-दूसरेके कधे पर हाथ रखकर मानो खेलने निकली हो, अैसा यह दृश्य मेरे हृदय पर पिछले पैतीस सालसे अकित रहा है।

कृष्णाका कुटुम्ब काफी वडा है। कअी छोटी-वडी नदिया अुससे आ मिलती है। गोदावरीके साथ साथ कृष्णाको भी हम 'महाराष्ट्र-माता' कह सकते है। जिस समय आजकी मराठी भाषा वोली नही जाती थी, अुस समयका सारा महाराष्ट्र कृष्णाके ही घेरेके अदर आता था।

२

'नरसोबाची वाड़ी' जाते समय नाव पर गाडी चढाकर हमने कृष्णाको पार किया, तव अुसका दूसरी वार दर्शन हुआ। यहा पर अेक ओर अूचा कगार और दूसरी ओर दूर तक फैला हुआ कृष्णाका कछार, और अुसमे अुगे हुअे वैगन, खरबूजे, ककडी और तरबूजके

अमृत-खेत! कृष्णाके किनारेके ये बैंगन जिसने अेकाध बार खा लिये, वह स्वर्गमें भी अुनकी अिच्छा करेगा। दो-दो महीने तक लगातार बैंगन खाने पर भी जी नही भरता, फिर भला अरुचि तो कैसे हो?

३

सागलीके पास, कृष्णाके तट पर मैंने पहली ही बार 'रियासती महाराष्ट्र' का राजवैभव देखा। वे आलीशान और विशाल घाट, सुदर और चमकीले बर्तनोमे भर भर कर पानी ले जाती हुअी महाराष्ट्रकी ललनायें, पानीमे छलाग मारकर किनारे परके लोगोको भिगानेका हौंसला रखनेवाले अखाडेबाज, क्षुद्र घटिकाओकी तालबद्ध आवाजसे अपने आगमनकी सूचना देनेवाले पहाड जैसे हाथी, और कर्र्र् की अेकश्रुति आवाज निकालकर रसपानका न्योता देनेवाले अीखके कोल्हू— यह था मेरा कृष्णामैयाका तीसरा दर्शन।

मुझे तैरना अच्छी तरह नही आता था। फिर भी अेक बडी गागर पानीमे औंधी डालकर अुसके सहारे बह जानेके लिअे मैं अेक बार यहा नदीमें अुतर पडा। किन्तु अेक जगह कीचडमे अैसा फसा कि अेक पैर निकालता तो दूसरा और भी अदर धस जाता। और कीचड भी कैसा? मानो काला काला मक्खन! मुझे लगा कि अब जगम न रहकर अुलटे पेडकी तरह यही स्थावर हो जाअूगा! अुस दिनकी घबराहट भी मैं अब तक नही भूला हू।

४

चिचली स्टेशन पर पीनेके लिअे हमे हमेशा कृष्णाका पानी मिलता था। हमारे अेक परिचित सज्जन वहा स्टेशनमास्टर थे। वे हमें बडे प्रेमसे अेकाध लोटा पानी मगवाकर देते थे। हम चाहे प्यासे हो या न हो पिताजी हम सबको भक्तिपूर्वक पानी पीनेको कहते। कृष्णा महाराष्ट्रकी आराध्य देवी है। अुसकी अेक बूद भी पेटमे जानेसे हम पावन हो जाते हैं। जिसके पेटमें कृष्णाकी अेक बूद भी पहुच चुकी है, वह अपना महाराष्ट्रीयपन कभी भूल नही सकता। श्रीसमर्थ

रामदास और शिवाजी महाराज, शाहु और बाजीराव, घोरपडे और पटवर्धन, नाना फडनवीस और रामशास्त्री प्रभुणे — थोडेमें कहे तो महाराष्ट्रका साधुत्व और वीरत्व, महाराष्ट्रकी न्यायनिष्ठा और राजनीतिज्ञता, धर्म और सदाचार, देशसेवा और विद्यासेवा, स्वतंत्रता और अुदारता, सब कुछ कृष्णाके वत्सल कुटुम्बमे परवरिश पाकर फला-फूला है। देहू और आळदीके जल कृष्णामे ही मिलते है। पंढरपुरकी चंद्रभागा भी भीमा नाम धारण करके कृष्णाको ही मिलती है। 'गंगाका स्नान और तुंगाका पान' अिस कहावतमें जिसके गौरवका स्वीकार किया गया है, वह तुंगभद्रा कर्णाटकके प्राचीन वैभवकी याद करती हुअी कृष्णामे ही लीन होती है। सच कहें तो महाराष्ट्र, कर्णाटक और तेलंगण (आंध्र), अिन तीनो प्रदेशोंका अैक्य साधनेके लिअे ही कृष्णा नदी बहती है। अिन तीनों प्रान्तोंने कृष्णाका दूध पिया है। कृष्णामे पक्षपाती प्रांतीयता नही है।

५

कॉलेजके दिन थे। बडी बडी आशायें लेकर बडे भाअीसे मिलने मैं पूनासे घर गया। किन्तु मेरे पहुंचनेसे पहले ही वे अिहलोक छोड चुके थे। मेरी किस्मतमें कृष्णाके पवित्र जलमे अुनकी अस्थियोंका समर्पण करना ही बदा था। बेलगावसे मैं कूडची गया। मध्याह्नका समय था। रेलके पुलके नीचे कृष्णाकी पूजा की। बडे भाअीकी अस्थिया कृष्णाके अुदरमे अर्पण की। नहाया और पलथी मारकर जीवन-मरण पर सोचने लगा।

कृष्णाके पानीमे कितने ही महाराष्ट्रके वीरों और महाराष्ट्रके शत्रुओंका खून मिला होगा! वर्षाकालकी मस्तीमें कृष्णाने कितने ही किसान और अुनके मवेशियोंको जलसमाधि दी होगी! पर कृष्णाको अिससे क्या? मदोन्मत्त हाथी अुसके जलमें विहार करे और विरक्त साधु अुसके किनारे तपश्चर्या करे, कृष्णाके लिअे दोनों समान है। मेरे भाअीकी अस्थियो और कंकर बनी हुअी पहाडकी अस्थियोंके बीच कृष्णाके मनमे क्या फर्क है? माहुलीमें अपने कबे पर मुझे

खडा करके पानीमें कूदनेके लिअे बढावा देनेवाले बडे भाअीकी अस्थिया मुझे अपने हाथो अुसी कृष्णाके जलमें समर्पण करनी पडी! जीवनकी लीला कैसी अगम्य है!

६

कृष्णाके अुदरमें मेरा दूसरा अेक भाअी भी सोया हुआ है! ब्रह्मचारी अनतबुआ मरढेकर हृदयकी भावनासे मेरे सगे छोटे भाअी थे, और देशसेवाके व्रतमे मेरे बडे भाअी थे। स्वदेशी, राष्ट्रीय शिक्षा और गोसेवा यह त्रिविध कार्य करते करते अुन्होने शरीर छोडा था। मेरे साथ अुन्होने गगोत्री और अमरनाथकी यात्रा की थी। किन्तु कृष्णाके किनारे आकर ही वे अमर हुअे। भक्तिकी धुनमे वे सुध-बुध भूल जाते और कअी जगह ठोकर खाते। अिस बातका मुझे हिमालयकी यात्रामें कअी बार अनुभव हुआ था। मै बार बार अुनको कोसता। किन्तु वे परवाह नही करते। वे तो श्रीसमर्थकी प्रासादिक वाणीकी सात्त्विक मस्तीमे ही रहते। कृष्णाको भी अुन्हे कोसनेकी सूझी होगी। देव-मदिरकी प्रदक्षिणा करते करते वे अूपरसे अेक दहमें गिर पडे और देवलोक सिधारे। जब वाअीके पथरीले पट परसे बहती गगाका स्मरण करता हू, कृष्णामें हर वर्षाकालमे शिरस्नान करते देव-मदिरके शिखरोका दर्शन करता हू, तब कृष्णाके पास मेरा भी यह अेक भाअी हमेशाके लिअे पहुच गया है अिस बातका स्मरण हुअे बिना नही रहता, साथ ही साथ अनतबुवाकी तपोनिष्ठ किन्तु प्रेम-सुकुमार मूर्तिका दर्शन हुअे बिना भी नही रहता।

७

सन् १९२१ का वह साल! भारतवर्षने अेक ही सालके भीतर स्वराज्य सिद्ध करनेका बीडा अुठा लिया है। हिन्दू-मुसलमान अेक हो गये है। तेंतीस करोड देवताओंके समान भारतवासी करोडोकी सख्यामे ही सोचने लगे है। स्वराज्यऋषि लोकमान्य तिलकका स्मरण कायम करनेके लिअे 'तिलक स्वराज्य फड' मे अेक करोड रुपये अिकट्ठे करने है। राष्ट्रसभाके छत्रके नीचे काम करनेवाले सदस्योकी सख्या भी अेक

करोड बनानी है। और पट-वर्धन श्रीकृष्णके सुदर्शनके समान चरखे भी अिस धर्मभूमिमे अुतनी ही सख्यामें चलवा देने है। भारतपुत्र अिस कामके लिअे बेजवाडेमे अिकट्ठे हुअे है। श्री अब्बास साहब, पुणतावेकर, गिदवाणी और मै, अेक साथ बेजवाडा पहुच गये है। अैसे मगल अवसर पर श्री कृष्णाम्बिका का विराट दर्शन करनेका सौभाग्य मिला। वाअीमें जिस कृष्णाके किनारे बैठकर सध्यावदन किया था और न्याय-निष्ठ रामशास्त्री तथा राजकाजपटु नाना फडनवीसकी बातें की थी, अुसी नन्ही कृष्णाको यहा अितनी बडी होते देखकर प्रथम तो विश्वास ही न हुआ। कहा माहुलीकी वह छोटी-सी जजीर और कहा युरोप-अमरीकाको जोडनेवाले केबलके जैसा यहाका वह रस्सा! हजारो-लाखो लोग यहा नहाने आये है। स्थूलकाय आध्र भाअियोमे आज भारतवर्षके तमाम भाअी घुलमिल गये है। 'राष्ट्रीय' हिन्दीका वाक्प्रवाह जहा-तहा सुनाअी देता है। कृष्णामे जिस प्रकार वेण्ण्या, वारणा, कोयना, भीमा, तुगभद्रा आकर मिलती है, अुसी प्रकार गाव गावके लोग ठटके ठट बेजवाडेमें अुभरते है। अैसे अवसर पर सबके साथ रोज कृष्णामे स्नान करनेका लुत्फ मिलता। जिस कृष्णाने जन्मकालका दूध दिया अुसी कृष्णाने स्वराज्यकाक्षी भारतराष्ट्रका गौरवशाली दर्शन कराया। जय कृष्णा! तेरी जय हो! भारतवर्ष अेक हो! स्वतत्र हो!!

जुलाअी, १९२९

३

मुळा-मुठाका संगम

नदिया तो हमारी वहुत देखी हुअी होती है। पर दो नदियोका सगम आसानीसे देखनेको नही मिलता। सगमका काव्य ही अलग है।

जव दो नदिया मिलती है तव अक्सर अुनमे से अेक अपना नाम छोडकर दूसरीमे मिल जाती है। सभी देशोमे अिस नियमका पालन होता हुआ दिखाअी देता हैं। किन्तु जिस प्रकार कलकके विना चद्र नही शोभता, अुसी प्रकार अपवादके विना नियम भी नही चलते। और कअी वार तो नियमकी अपेक्षा अपवाद ही ज्यादा ध्यान खीचते है। अुत्तर अमरीकाकी मिसिसिपी-मिसोरी अपना लवा-चौडा सप्ताक्षरी नाम द्वद्व समाससे धारण करके ससारकी सबसे लवी नदीके तौर पर मशहूर हुअी है। सीता-हरणसे लेकर विजयनगरके स्वातत्र्य-हरण तकके अितिहासको याद करती तुगभद्रा भी तुगा और भद्राके मिलनसे अपना नाम और वडप्पन प्राप्त कर सकी हैं। पूनाको अपनी गोदमें खेलाती मुळामुठा भी मुळा और मुठाके सगमसे वनी है।

सिंहगढकी पश्चिम ओरकी घाटीसे मुठा आती है। खडक-वासला तककी मुडी टेकरिया अुसका रक्षण करती है। खडक-वासलाके वाधने तन्वगी मुठाका अेक सुदीर्घ सरोवर वनाया है। अिस सरोवरके किनारे न तो कोअी पेड है, न मदिर। दिनमे वादल और रातके समय तारे अपने चिंताजनक प्रतिविव अिस सरोवरमें डालते है। यहीकी मुठासे नहरके रूपमे दो जवरदस्त महसूल लिये जाते है, जिनसे पूना और खडकीकी वस्ती जी भरके पानी पीती है। मुठाके किनारे गन्नेकी खेती वढती जा रही है। वसत ऋतुमे जहा देखें वहा अीखके कोल्हू वाग पुकार पुकार कर लोगोको रसपानकी याद दिलाते है। लकड़ी-पुलके नामसे परिचित किन्तु पत्थरके वने हुअे पुलके नीचेसे नदी आगे जाती है और दगडी-पुलके नामसे परिचित किन्तु पत्थरके पक्के वाधको पार करती है।

अिसके बाद ही मुठाका अुसकी बहन मुळासे सगम होता है। लकडी-पुलसे ओंकारेश्वर तक चाहे जितने शव जलते हो, लेकिन सगमके समय अुसका विषाद मुठाके चेहरे पर दिखाअी नही देता।

अितना शात सगम शायद ही और कही होगा। अिसी संगम पर कॅप्टन मॅलेट पेशवाअीकी अतघडीकी राह देखता हुआ पडाव डालकर बैठा था। आज तो सस्कृत भाषाका सशोधन युरोपियन पडितोंके हाथसे वापिस छीन लेनेके लिअे मथनेवाले आर्य पडित भाडारकरजीका सगमाश्रम ही यहा विराजमान है। सस्कृत विद्याके पुनरुद्धारके लिअे सस्थापित पाठशालाका रूपान्तर करके पुराने और नयेका सगम करनेवाला डेक्कन कॉलेज भी अिस सगमके पास ही विराजमान है। यहा गोरे लोगोने नौका-विहारके लिअे नदी पर बाध बाधकर पानी रोका है, और मच्छरोंके विशाल कुलको भी यहा आश्रय दिया है। नजदीककी टेकरी पर गुजरातके अेक लक्ष्मीपुत्रकी अुत्तुग-शिरस्क किन्तु नम्र-नामधेय 'पर्णकुटी' है। मानवकी स्वतत्रताका हरण करनेवाला यरवडाका कैदखाना और प्राणहरपटु लश्करी बारूदखाना भी अिस सगमसे अधिक दूरी पर नही है। न मालूम कितनी विचित्र वस्तुओंका सगम मुळामुठाके किनारे पर होता होगा और होनेवाला होगा! बाधके पासके बड-गार्डनमे लक्षाधीश और भिक्षाधीशोका सगम हर शामको होता है, यह भी अिसीकी अेक मिसाल है।

आखिरी बाध परसे हाश् करके छटकती मुळामुठा यहासे आगे कहा तक जाती है, यह भला कौन बता सकेगा? अिस बातकी जानकारी किसके पास होगी?

महाराष्ट्रकी नदियोमें तीन नदियोंसे मेरी विशेष आत्मीयता है। मार्कण्डी मेरी छुटपनकी सखी, मेरे खेतिहर जीवनकी साक्षी, और मेरी बहन आक्काकी प्रतिनिधि है। कृष्णाके किनारे तो मेरा जन्म ही हुआ। महाबलेश्वरसे लेकर बेजवाडा और मछलीपट्टम तकका अुसका विस्तार अनेक ढगसे मेरे जीवनके साथ बुना हुआ है। और तीसरी है मुळा-मुठा। बचपनमे हम सब भाअी शिक्षाके लिअे पूनामे रहे थे, अुन समयसे मुळा और मुठाका सगम मेरे बाल्यकालका साक्षी रहा है।

कॉलेजके दिनोमे हमने जिन क्रातिकारी विचारोका सेवन किया था अुन्हें भी मुळामुठा जानती है। किन्तु अिन सब सस्मरणोंसे बढ जाते है महात्मा गाधीके साथ व्यतीत किये हुअे अुसके किनारे परके वे दिन! लेडी ठाकरसीकी पर्णकुटी, दिनशा मेहताका निसर्गोपचार भवन और सिंहगढका निवास, सब अेक ही साथ याद आते है।

और आखिर आखिरके दिनोमें अग्रेज सरकारने गाधीजीको जहा गिरफ्तार करके रखा था वह आगाखा महल भी मुळामुठाके किनारे पर ही है। और यही गाधीजीके दो जीवन-साथियोने स्वराज्यके यज्ञमे अपनी अतिम आहुति दी थी। कस्तूरबा और महादेवभाअीने जिसके किनारे शरीर छोडा वह मुळामुठा भारतवासियोंके लिअे, खास करके हम आश्रमवासियोंके लिअे तो तीर्थस्थान है।

और जब आजकी मुळामुठाके बारेमें सोचता हू तब सिंहगढके दामनमे खडक-वासला सरोवरके किनारे जिस राष्ट्र-रक्षा-विद्यालयकी स्थापना हुअी है अुसका स्मरण हुअे बिना नही रहता। अिस सस्थाका नाम युद्ध-महाविद्यालय रखनेके बदले राष्ट्रीय रक्षा-विद्यालय रखा गया, यह बात भी ध्यान खीचे बिना नही रहती। जिस सरोवरके किनारे अिस विद्यालयकी स्थापना हुअी है अुसका नाम भी महाराष्ट्रके अितिहासके अनुरूप ही होना चाहिये। अैसे सरोवरको किसी अग्रेजका नाम न देकर नरवीर तानाजी मालुसरेका नाम देना चाहिये। अपनी जान देकर जब तानाजीने छत्रपति शिवाजीके लिअे कोडाणा गढ जीत दिया तब शिवाजीने कहा 'गड आला पण सिंह गेला — गढ तो जीत लिया किन्तु मैंने अपना शेर खो दिया।' और अुस दिनसे अिस गढका नाम सिंहगढ पडा।

अिस सरोवरको हम या तो तानाजी सरोवर कहें या सिंह सरोवर।

१९२६–२७

सशोधित, १९५६

४

सागर-सरिताका संगम

छुटपनमे भोज और कालिदासकी कहानिया पढनेको मिलती थी। भोज राजा पूछते हैं, "यह नदी अितनी क्यो रोती है?" नदीका पानी पत्थरोको पार करते हुअे आवाज करता होगा। राजाको सूझा, कविके सामने अेक कल्पना फेक दें, अिसलिअे अुसने अूपरका सवाल पूछा। लोककथाओका कालिदास लोकमानसको जचे अैसा ही जवाब देगा न? अुसने कहा, "रोनेका कारण क्यो पूछते है, महाराज? यह बाला पीहरसे ससुराल जा रही है। फिर रोयेगी नही तो क्या करेगी?" अुस समय मेरे मनमे आया, "ससुराल जाना अगर पसन्द नही है तो भला जाती क्यो है?" किसीने जवाब दिया, "लडकीका जीवन ससुराल जानेके लिअे ही है।"

नदी जब अपने पति सागरसे मिलती है तब अुसका सारा स्वरूप बदल जाता है। वहा अुसके प्रवाहको नदी कहना भी मुश्किल हो जाता है। सातारके पास माहुलीके नजदीक कृष्णा और वेण्याका सगम देखा था। पूनामें मुळा और मुठाका। किन्तु सरिता-सागरका सगम तो पहले पहल देखा कारवारमे — अुत्तरकी ओरके सरोके (कॅश्युरीनाके) वनके सिरे पर। हम दो भाअी समुद्र-तटकी वालू पर खेलते खेलते, घूमते-घामते दूर तक चले गये थे। हमेशासे काफी दूर गये और यकायक अेक सुन्दर नदीको समुद्रसे मिलते देखा। दो नदियोंके सगमकी अपेक्षा नदी-समुद्रका सगम अधिक काव्यमय होता है। दो नदियोका सगम गूढ-शात होता हैं। किन्तु जब सागर और सरिता अेक-दूसरेसे मिलते है तब दोनोमे स्पष्ट अुन्माद दिखाअी देता है। अिस अुन्मादका नशा हमे भी अचूक चढता है। नदीका पानी शात आग्रहसे समुद्रकी ओर बहता जाता है, जब कि अपनी मर्यादाको कभी न छोडनेके लिअे विख्यात समुद्रका पानी चद्रमाकी अुत्तेजनाके अनुसार कभी नदीके लिअे रास्ता बना देता है, कभी सामने हो जाता है। नदी और सागरका

जब अेक-दूसरेके खिलाफ सत्याग्रह चलता है, तब कअी तरहके दृश्य देखनेको मिलते हैं। समुद्रकी लहरें जब तिरछी कतराती आती हैं तब पानीका अेक फुहारा अेक छोरसे दूसरे छोर तक दौडता जाता है। कही कही पानी गोल गोल चक्कर काटकर भवर बनाता है। जब सागरका जोश बढने लगता है तब नदीका पानी पीछे हटता जाता है। अैसे अवसर पर दोनो ओरके किनारो परका अुसका थपेडा बडा तेज होता है। नदीकी गतिकी विपरीत दशाको देखकर अुससे फायदा अुठानेवाली स्वार्थी नावें पुरजोशमे अदर घुसती है। अुन्हें मालूम है कि भाग्यके अिस ज्वारके साथ जितना अदर जा सकेंगे अुतना ही पल्ले पडनेवाला है। फिर जब भाटा शुरू होता है और सागरकी लहरें विरोधकी जगह बाहु खोलकर नदीके पानीका स्वागत करती है, तब मतलबी नावोको अपनी त्रिकोनी पगडी बदलते देर नही लगती। पवन चाहे किसी भी दिशामे चलता रहे, जब तक वह प्रत्यक्ष सामने नही होता तब तक अुसमे से कुछ न कुछ मतलब साधनेकी चालाकी अिन वैश्यवृत्तिवाली नावोमें होती ही है। अुनकी पगडीकी यानी पालकी बनावट भी अैसी ही होती है।

हम जिस समय गये थे अुस समय नावे अिसी प्रकार नदीके अदर घुस रही थी। किन्तु समुद्रके अिन पतगोको निहारनेमे हमें कोअी दिलचस्पी नही थी। हम तो सगमके साथ सूर्यास्त कैसा फबता है यह देखनेमें मशगूल थे। सुनहरा रग सब जगह सुन्दर ही होता है। किन्तु हरे रगके साथकी अुसकी बादशाही शोभा कुछ और ही होती है। अूचे अूचे पेडो पर सध्याके सुवर्ण किरण जब आरोहण करते है तब मनमे सदेह अुठता है कि यह मानवी सृष्टि है, या परियोकी दुनिया है? समुद्र अैसी तो भव्य सुन्दरता दिखाने लगा मानो सुवर्ण रसका सरोवर अुमड रहा हो। यह शोभा देखकर हम अघा गये या सच कहें तो जैसे जैसे यह शोभा देखते गये वैसे वैसे हमारा दिल अधिकाधिक बेचैन होता गया। सौंदर्यपानसे हम व्याकुल होते जा रहे थे।

सूर्यास्तके बाद ये रग सौम्य हुअे। हम भी होशमे आये और वापस लौटनेकी बात सोचने लगे। किन्तु पानी अितना आगे बढ गया था कि

वापस लौटना कठिन हो गया। परिणामस्वरूप हम नदीके किनारे किनारे अुलटे चले। यहा पर भी नदीका पानी दोनों ओरसे फूलता जा रहा था—जैसे भैंसेकी पीठ परकी पखाल भरते समय फूलती जाती है। जैसे जैसे हम अुलटे चलते गये वैसे वैसे पानीमे शाति वढती गयी। अधेरा भी बढता जा रहा था। अिस पारसे अुस पार तक आने जानेवाली अेक नन्ही-सी नाव अेक कोनमें पडी थी। और देहातके चद मजदूर लगोटीकी डोरीमे पीछेकी ओर लकडीका अेक चक्र खोसकर अुसमें अपने 'कोयते' लटकाये जा रहे थे। ('कोयता' हसियेके जैसा अेक औजार होता है, जो नारियल छीलनेमें काम आता है या सामान्य तौरसे जिसका कुल्हाडीकी तरह अुपयोग किया जाता है।) अिन लोगोकी पोशाक बस अेक लंगोटी और अेक जाकिट होती है। नदीको पार करते समय जाकिट निकालकर सिर पर ले लिया कि बस। प्रकृतिके बालक! जमीन और पानी अुनके लिअे अेक ही है।

घर ज़ानेकी जल्दी सिर्फ हमे ही नही थी। अैसा मालूम होता था कि अिन देहाती लोगोको भी जल्दी थी। और नदीके किनारे दौडते छोटे छोटे केकडोको भी हमारी ही तरह जल्दी थी। रात पडी और हम जल्दीसे घर लौटे। किन्तु मनमें विचार तो आया कि किसी दिन अिस नदीके किनारे किनारे काफी अूपर तक जाना चाहिये।

प्याज या कॅबेज (पत्तागोभी) हाथमे आने पर फौरन अुसकी सब पत्तिया खोलकर देखनेकी जैसे अिच्छा होती है, वैसे ही नदीको देखने पर अुसके अुद्गमकी ओर चलनेकी अिच्छा मनुष्यको होती ही है। अुद्गमकी खोज सनातन खोज है। गगोत्री, जमनोत्री और महाबलेश्वर या त्र्यबककी खोज अिसी तरह हुअी है।

बचपनकी यह अिच्छा कुछ ही वर्ष पहले वर आअी। श्री शकरराव गुलवाडीजी मुझे अेक सेवाकेंद्र दिखानेके लिअे नदीकी अुलटी दिशामें दूर तक ले गये। अिस प्रतीप-यात्राके समय ही कवि बोरकरकी कविता सुनी थी, अिस बातका भी आनददायी स्मरण है।

१९३४

५

गंगामैया

१

गगा कुछ भी न करती, सिर्फ देवव्रत भीष्मको ही जन्म देती, तो भी आर्यजातिकी माताके तौर पर वह आज प्रख्यात होती। पितामह भीष्मकी टेक, भीष्मकी निःस्पृहता, भीष्मका ब्रह्मचर्य और भीष्मका तत्त्वज्ञान हमेशाके लिअे आर्यजातिका आदरपात्र ध्येय बन चुका है। हम गगाको आर्यसस्कृतिके अैसे आधारस्तभ महापुरुषकी माताके रूपमें पहचानते है।

२

नदीको यदि कोअी अुपमा शोभा देती है, तो वह माताकी ही। नदीके किनारे पर रहनेसे अकालका डर तो रहता ही नही। मेघराजा जब धोखा देते है तब नदीमाता ही हमारी फसल पकाती है। नदीका किनारा यानी शुद्ध और शीतल हवा। नदीके किनारे किनारे घूमने जायें तो प्रकृतिके मातृवात्सल्यके अखड प्रवाहका दर्शन होता है। नदी बडी हो और अुसका प्रवाह धीरगभीर हो, तब तो अुसके किनारे पर रहनेवालोकी शानशौकत अुस नदी पर ही निर्भर करती है। सचमुच नदी जनसमाजकी माता है। नदी-किनारे बसे हुअे शहरकी गली गलीमे घूमते समय अेकाध कोनेसे नदीका दर्शन हो जाय, तो हमे कितना आनद होता है! कहा शहरका वह गदा वायुमडल और कहा नदीका यह प्रसन्न दर्शन! दोनोके बीचका अतर फौरन मालूम हो जाता है। नदी अीश्वर नही है, बल्कि अीश्वरका स्मरण करानेवाली देवता है। यदि गुरुको वदन करना आवश्यक है तो नदीको भी वदन करना अुचित है।

यह तो हुअी सामान्य नदीकी बात। किन्तु गगामैया तो आर्य-जातिकी माता है। आर्योके बडे बडे साम्राज्य अिसी नदीके तट पर स्थापित हुअे है। कुरु-पाचाल देशका अगवगादि देशोंके साथ गगाने

ही सयोग किया है। आज भी हिन्दुस्तानकी आबादी गगाके तट पर सबसे अधिक है।

जब हम गगाका दर्शन करते है तब हमारे ध्यानमे फसलसे लहलहाते सिर्फ खेत ही नही आते, न सिर्फ मालसे लदे जहाज ही आते है, किन्तु वाल्मीकिका काव्य, बुद्ध-महावीरके विहार, अशोक, समुद्रगुप्त या हर्ष जैसे सम्राटोके पराक्रम और तुलसीदास या कबीर जैसे सतजनोके भजन — अिन सबका अेक साथ स्मरण हो आता है। गगाका दर्शन तो शैत्य-पावनत्वका हार्दिक तथा प्रत्यक्ष दर्शन है।

किन्तु गगाके दर्शनका अेक ही प्रकार नही है। गगोत्रीके पासके हिमाच्छादित प्रदेशोमे अिसका खिलाडी कन्यारूप, अुत्तरकाशीकी ओर चीड-देवदारके काव्यमय प्रदेशमे मुग्धारूप, देवप्रयागके पहाडी और सकरे प्रदेशमे चमकीली अलकनदाके साथ अुसकी अठखेलिया, लक्ष्मण-झूलेकी विकराल दंष्ट्रामे से छूटनेके बाद हरद्वारके पास अुसका अनेक धाराओमे स्वच्छद विहार, कानपुरसे सटकर जाता हुआ अुसका अितिहास-प्रसिद्ध प्रवाह, प्रयागके विशाल पट पर हुआ अुसका कालिन्दीके साथका त्रिवेणी सगम — हरेककी शोभा कुछ निराली ही है। अेक दृश्य देखने पर दूसरेकी कल्पना नही हो सकती। हरेकका सौंदर्य अलग, हरेकका भाव अलग, हरेकका वातावरण अलग, हरेकका माहात्म्य अलग।

प्रयागसे गगा अलग ही स्वरूप धारण कर लेती है। गगोत्रीसे लेकर प्रयाग तककी गगा वर्धमान होते हुअे भी अेकरूप मानी जा सकती है। किन्तु प्रयागके पास अुससे यमुना आकर मिलती है। यमुनाका तो पहलेसे ही दोहरा पाट है। वह खेलती है, कूदती है, किन्तु क्रीडा-सक्त नही मालूम होती। गगा शकुतला जैसी तपस्वी कन्या दीखती है। काली यमुना द्रौपदी जैसी मानिनी राजकन्या मालूम होती है। शर्मिष्ठा और देवयानीकी कथा जब हम सुनते है, तब भी प्रयागके पास गगा और यमुनाके बडी कठिनाअीके साथ मिलते हुअे शुक्ल-कृष्ण प्रवाहोका स्मरण हो आता है। हिन्दुस्तानमें अनगिनत नदिया है, अिसलिअे सगमोका भी कोअी पार नही है। अिन सभी

सगमोमे हमारे पुरखोने गगा-यमुनाका यह सगम सबसे अधिक पसन्द किया है, और अिसीलिअे अुसका 'प्रयागराज' जैसा गौरवपूर्ण नाम रखा है। हिन्दुस्तानमें मुसलमानोंके आनेके बाद जिस प्रकार हिन्दुस्तानके अितिहासका रूप बदला, अुसी प्रकार दिल्ली-आगरा और मथुरा-वृदावनके समीपसे आते हुअे यमुनाके प्रवाहके कारण गगाका स्वरूप भी प्रयागके बाद बिलकुल बदल गया है।

प्रयागके बाद गगा कुलवधूकी तरह गभीर और सौभाग्यवती दीखती है। अिसके बाद अुसमें बडी बडी नदिया मिलती जाती है। यमुनाका जल मथुरा-वृदावनसे श्रीकृष्णके सस्मरण अर्पण करता है, जब कि अयोध्या होकर आनेवाली सरयू आदर्श राजा रामचद्रके प्रतापी किन्तु करुण जीवनकी स्मृतिया लाती हैं। दक्षिणकी ओरसे आनेवाली चबल नदी रतिदेवके यज्ञयागकी बातें करती है, जब कि महान कोलाहल करता हुआ शोणभद्र गजग्राहके दारुण द्वद्व-युद्धकी झाकी कराता है। अिस प्रकार हृष्ट-पुष्ट बनी हुअी गगा पाटलीपुत्रके पास मगध साम्राज्य जैसी विस्तीर्ण हो जाती है। फिर भी गडकी अपना अमूल्य कर-भार लाते हुअे हिचकिचाअी नहीं। जनक और अशोककी, बुद्ध और महावीरकी प्राचीन भूमिसे निकलकर आगे बढते समय गगा मानो सोचमे पड जाती है कि अब कहा जाना चाहिये। जब अितनी प्रचड वारिराशि अपने अमोघ वेगसे पूर्वकी ओर बह रही हो, तब अुसे दक्षिणकी ओर मोडना क्या कोअी आसान बात है? फिर भी वह अुस ओर मुड गअी है सही। दो सम्राट् या दो जगद्गुरु जैसे अेकाअेक अेक-दूसरेसे नही मिलते, वैसा ही गगा और ब्रह्मपुत्राका हाल है। ब्रह्मपुत्रा हिमालयके अुस पारका सारा पानी लेकर आसामसे होती हुअी पश्चिमकी ओर आती है और गगा अिस ओरसे पूर्वकी ओर बढती है। अुनकी आमने-सामने भेट कैसे हो? कौन किसके सामने पहले झुके? कौन किसे पहले रास्ता दे? अतमे दोनोने तय किया कि दोनोको दाक्षिण्य धारणकर सरित्पतिके दर्शनके लिअे जाना चाहिये और भक्ति-नम्र होकर, जाते जाते जहा सभव हो, रास्तेमे अेक-दूसरेसे मिल लेना चाहिये।

अिस प्रकार गोआलदोके पास जब गगा और ब्रह्मपुत्राका विशाल जल आकर मिलता है तब मनमे सदेह पैदा होता है कि सागर और क्या होता होगा? विजय प्राप्त करनेके बाद कसी हुअी खडी सेना भी जिस प्रकार अव्यवस्थित हो जाती है और विजयी वीर मनमे आये वैसे जहा तहा घूमते है, अुसी प्रकारका हाल अिसके बाद अिन दो महान नदियोंका होता है। अनेक मुखो द्वारा वे सागरमे जाकर मिलती है। हरेक प्रवाहका नाम अलग अलग है और कुछ प्रवाहोंके तो अेकसे भी अधिक नाम है। गगा और ब्रह्मपुत्रा अेक होकर पद्‌माका नाम धारण करती है। यही आगे जाकर मेघनाके नामसे पुकारी जाती है।

यह अनेकमुखी गगा कहा जाती है? सुदरवनमे वेंतके झुड अुगाने? या सगरपुत्रोकी वासनाको तृप्त कर अुनका अुद्धार करने? आज जाकर आप देखेगे तो यहा पुराने काव्यका कुछ भी शेष नही होगा। जहा देखो वहा सनकी बोरिया बनानेवाली मिले और अैसे ही दूसरे बेहूदे विश्री कल-कारखाने दीख पडेगे। जहासे हिन्दुस्तानी कारीगरीकी असख्य वस्तुअे हिन्दुस्तानी जहाजोंसे लका या जावा द्वीप तक जाती थी, अुसी रास्तेसे अब विलायती और जापानी आगबोटे (स्टीमरे) विदेशी कारखानोमे बना हुआ भद्दा माल हिन्दुस्तानके बाजारोमे भर डालनेके लिअे जाती हुअी दिखाअी देती है। गगामैया पहले ही की तरह हमे अनेक प्रकारकी समृद्धि प्रदान करती जाती है। किन्तु हमारे निर्बल हाथ अुसको अुठा नही सकते!

गगामैया! यह दृश्य देखना तेरी किस्मतमें कब तक बदा है?

फरवरी, १९२६

६

यमुनारानी

हिमालय तो भव्यताका भडार है। जहा तहा भव्यताको विखेर कर भव्यताकी भव्यताको कम करते रहना ही मानो हिमालयका व्यवसाय है। फिर भी अैसे हिमालयमे अेक अैसा स्थान है, जिसकी अूर्जस्विता हिमालयवासियोका भी ध्यान खीचती है। यह है यमराजकी बहनका अुद्‌गम-स्थान।

अूचाअीसे बर्फ पिघलकर अेक बडा प्रपात गिरता है। अिर्दगिर्द गगनचुवी नही, बल्कि गगनभेदी पुराने वृक्ष आडे गिरकर गल जाते है। अुत्तुग पहाड यमदूतोकी तरह रक्षण करनेके लिअे खडे है। कभी पानी जमकर वर्फ वन जाता है, और कभी वर्फ पिघलकर अुसका बर्फके जितना ठडा पानी वन जाता है। अैसे स्थानमे जमीनके अदरसे अेक अद्‌भुत ढगसे अुबलता हुआ पानी अुछलता रहता है। जमीनके भीतरसे अैसी आवाज निकलती है मानो किसी वाष्पयत्रसे क्रोधायमान भाप निकल रही हो। और अुन झरनोंमें सिरसे भी अूची अुडती वूदे अितनी सरदीमें भी मनुष्यको झुलसा देती है। अैसे लोक-चमत्कारी स्थानमें असित ऋषिने यमुनाका मूल स्थान खोज निकाला। अिस स्थानमे शुद्ध जलसे स्नान करना असभव-सा है। ठडे पानीमे नहाये तो हमेशाके लिअे ठडे पड जायेगे और गरम पानीमें नहाये तो वहीके वही आलूकी तरह अुबल कर मर जायगे। अिसीलिअे वहा मिश्र जलके कुड तैयार किये गये है। अेक झरनेके अूपर अेक गुफा है। अुसमे लकडीके पटिये डालकर सो सकते है। हा, रातभर करवट वदलते रहना चाहिये, क्योकि अूपरकी ठड और नीचेकी गरमी, दोनो अेकसी असह्य होती है।

दोनो वहनोमे गगासे यमुना वडी है, प्रौढ है, गभीर है, कृष्ण-भगिनी द्रौपदीके समान कृष्णवर्णा और मानिनी है। गगा तो मानो वेचारी मुग्ध शकुतला ही ठहरी, पर देवाधिदेवने अुसका स्वीकार किया अिसलिअे यमुनाने अपना वडप्पन छोडकर गगाको ही अपनी

सरदारी सौंप दी। ये दोनो वहने अेक-दूसरेसे मिलनेके लिअे वडी आतुर दिखाअी देती है। हिमालयमे तो अेक जगह दोनो करीव करीव आ जाती है। किन्तु अीर्ष्यालु दडाल पर्वतके वीचमें विघ्नसतोषीकी तरह आडे आनेसे अुनका मिलन वहा नही हो पाता। अेक काव्य-हृदयी ऋषि वहा यमुनाके किनारे रहकर हमेशा गगास्नानके लिअे जाया करता था। किन्तु भोजनके लिअे वापिस यमुनाके ही घर आ जाता था। जव वह वूढा हुआ—ऋषि भी अतमे वूढे होते है—तव अुसके थकेमादे पावो पर तरस खाकर गगाने अपना प्रतिनिधिरूप अेक छोटासा झरना यमुनाके तीर पर ऋषिके आश्रममें भेज दिया। आज भी वह छोटासा सफेद प्रवाह अुस ऋषिका स्मरण कराता हुआ वह रहा है।

देहरादूनके पास भी हमे आशा होती है कि ये दोनो नदिया अेक-दूसरेसे मिलेगी। किन्तु नही, अपने शैत्य-पावनत्वसे अतर्वेदीके समूचे प्रदेशको पुनीत करनेका कर्तव्य पूरा करनेके पहले अुन्हे अेक-दूसरेसे मिलकर फुरसतकी वातें करनेकी सूझती ही कैसे? गगा तो अुत्तरकाशी, टेहरी, श्रीनगर, हरिद्वार, कन्नौज, व्रह्मावर्त, कानपुर आदि पुराण-प्रसिद्ध और अितिहास-प्रसिद्ध स्थानोको अपना दूध पिलाती हुअी दौडती है, जव कि यमुना कुरुक्षेत्र और पानीपतके हत्यारे भूमि-भागको देखती हुअी भारतवर्षकी राजधानीके पास आ पहुचती है। यमुनाके पानीमे साम्राज्यकी शक्ति होनी चाहिये। अुसके स्मरण-सग्रहालयमे पाडवोंसे लेकर मुगल-साम्राज्य तकका और गदरके जमानेसे लेकर स्वामी श्रद्धानदजीकी हत्या तकका सारा अितिहास भरा पडा है। दिल्लीसे आगरे तक अैसा मालूम होता है, मानो वावरके खानदानके लोग ही हमारे साथ वाते करना चाहते हो। दोनो नगरोंके किले साम्राज्यकी रक्षाके लिअे नही, वल्कि यमुनाकी शोभा निहारनेके लिअे ही मानो वनाये गये है। मुगल-साम्राज्यके नगारे तो कवके वद हो गये, किन्तु मथुरा-वृन्दावनकी वासुरी अव भी वज रही है।

मथुरा-वृदावनकी शोभा कुछ अपूर्व ही है। यह प्रदेश जितना रमणीय है अुतना ही समृद्ध है। हरियानेकी गाँअें अपने मीठे, सरस, सकस

दूधके लिअे हिन्दुस्तान भरमें मशहूर है। यशोदामैयाने या गोपराजा नदने खुद यह स्थान पसद किया था, अिस वातको तो मानो यहाकी भूमि भूल ही नही सकती। मथुरा-वृन्दावन तो है वालकृष्णकी क्रीडा-भूमि, वीरकृष्णकी विक्रमभूमि। द्वारकावासको यदि छोड दें तो श्रीकृष्णके जीवनके साथ अधिकसे अधिक सहयोग कालिंदीने ही किया है। जिस यमुनाने कालियामर्दन देखा अुसी यमुनाने कसका शिरच्छेद भी देखा। जिस यमुनाने हस्तिनापुरके दरबारमे श्रीकृष्णकी सचिव-वाणी सुनी, अुसी यमुनाने रण-कुशल श्रीकृष्णकी योगमूर्ति कुरुक्षेत्र पर विचरती निहारी। जिस यमुनाने वृन्दावनकी प्रणय-वासुरीके साथ अपना कलरव मिलाया, अुसी यमुनाने कुरुक्षेत्र पर रोमहर्षण गीतावाणीको प्रतिध्वनित किया। यमराजकी वहनका भाअीपन तो श्रीकृष्णको ही शोभा दे सकता है।

जिसने भारतवर्षके कुलका कअी वार सहार देखा है, अुस यमुनाके लिअे पारिजातके फूलके समान ताजवीवीका अवसान कितना मर्मभेदी हुआ होगा? फिर भी अुसने प्रेमसम्राट् शाहजहाके जमे हुअे आसुओको प्रतिविंवित करना स्वीकार कर लिया है।

भारतीय कालसे मशहूर वैदिक नदी चर्मण्यवतीसे करभार लेकर यमुना ज्यो ही आगे बढती है, त्यो ही मध्ययुगीन अितिहासकी झाकी करानेवाली नन्ही-सी सिन्धु नदी अुससे आ मिलती है।

अव यमुना अधीर हो अुठी है। कअी दिन हुअे, वहन गगाका दर्शन नही हुआ है। कहने जैसी वाते पेटमें समानी नही हैं। पूछनेके लिअे असख्य सवाल भी अिकट्ठे हो गये हैं। कानपुर और कालपी वहुत दूर नही हैं। यहा गगाकी खवर पाते ही खुशीसे वहाकी मिश्रीसे मुह मीठा वनाकर यमुना अैसी दौडी कि प्रयागराजमे गगाके गलेसे लिपट गअी। क्या दोनोका अुन्माद! मिलने पर भी मानो अुनको यकीन नही होता कि वे मिली हैं। भारतवर्षके सवके सव साधु-सत अिस प्रेमसगमको देखनेके लिअे अिकट्ठे हुअे हैं। पर अिन वहनोको अिसकी सुधवुध नही है। आगनमें अक्षयवट खडा है। अुसकी भी अिन्हे परवाह नही है। वूढा अकवर छावनी डाले पडा है, अुसे कौन

पूछता है? और अशोकका शिलास्तभ लाकर वहा खडा करे तो भी क्या ये बहने अुसकी ओर नजर अुठाकर देखेगी ?

प्रेमका यह सगम-प्रवाह अखड बहता रहता है, और अुसके साथ कवि-सम्राट् कालिदासकी सरस्वती भी अखड वह रही है।

क्वचित् प्रभा-लेपिभिर्अिन्द्रनीलैर् मुक्तामयी यष्टिरिवानुविद्धा।
अन्यत्र माला सित-पकजानाम् अिन्दीवरैर् अुत्खचितान्तरेव ॥
क्वचित् खगाना प्रिय-मानसाना कादव-ससर्गवतीव पक्ति ।
अन्यत्र कालागरु-दत्तपत्रा भक्तिर् भुवश्चन्दन-कल्पितेव ॥
क्वचित् प्रभा चाद्रमसी तमोभिश्छायाविलीनै शवलीकृतेव।
अन्यत्र शुभ्रा शरदभ्रलेखा-रन्ध्रेष्विवालक्ष्यनभ प्रदेशा ॥
क्वचित् च कृष्णोरग-भूषणेव भस्मांग-रागा तनुर् अीश्वरस्य।
पश्यानवद्यागि! विभाति गगा भिन्नप्रवाहा यमुनातरगै ॥

[हे निर्दोष अगवाली सीते! देखो अिस गगाके प्रवाहमे यमुनाकी तरगे घसकर प्रवाहको खडित कर रही है। यह कैसा दृश्य है! कही मालूम होता है, मानो मोतियोकी मालामे पिरोये हुअे अिन्द्रनील मणि मोतियोकी प्रभाको कुछ धुधला कर रहे। कही अैसा दीखता है, मानो सफेद कमलके हारमे नील कमल गूथ दिये हों। कही मानो मानसरोवर जाते हुअे श्वेत हसोंके साथ काले कादंब अुड रहे हो। कही मानो श्वेत चदनसे लीपी हुअी जमीन पर कृष्णागरुकी पत्र-रचना की गयी हो। कही मानो चद्रकी प्रभाके साथ छायामे सोये हुअे अंधकारकी क्रीडा चल रही हो। कही शरदृतुके शुभ्र मेघोंके पीछेसे अिधर अुधर आसमान दीख रहा हो। और कहीं अैसा मालूम होता है, मानो महादेवजीके भस्मभूषित शरीर पर कृष्ण सर्पोके आभूषण धारण करा दिये हो।]

कैसा सुदर दृश्य! अूपर पुष्पक विमानमें मेघ-श्याम रामचद्र और धवल-शीला जानकी चौदह सालके वियोगके पश्चात् अयोध्यामें पहुंचनेके लिअे अधीर हो अुठे है, और नीचे अिंदीवर-श्यामा कालिंदी और सुधा-जला जाह्नवी अेक-दूसरेका परिरभ छोडे बिना सागरमे नामरूपको छोडकर विलीन होनेके लिअे दौड रही है।

अिस पावन दृश्यको देखकर स्वर्गसे सुमनोकी पुष्पवृष्टि हुअी होगी और भूतल पर कवियोकी प्रतिभा-सृष्टिके फुहारे अुडे होगे।

सितबर, १९२९

७

मूल त्रिवेणी

ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनो मिलकर जिस तरह दत्तात्रेयजी बनते है, अुसी तरह अलकनदा, मदाकिनी और भागीरथी मिलकर गगामैया बनती है। ये तीनो गगाकी वहने नही है, वल्कि गगाके अग है। भागीरथी भले गगोत्रीसे आती हो, तो भी मदाकिनीका केदारनाथ और अलकनदाका बदरीनारायण भी गगाके ही अुद्‌गम है।

ब्रह्मकपालसे होकर जो अलकनदा बहती है और वहा अेक बार श्राद्ध करनेसे जो अशेष पूर्वजोको अेकसाथ हमेशाके लिअे मुक्ति दे देती है, अुस अलकनदाका अुद्‌गम-स्थान क्या गगोत्रीसे कम पवित्र है? ब्रह्मकपाल पर अेक बार श्राद्ध करनेके बाद फिर कभी श्राद्ध किया ही नही जा सकता। यदि मोहवश करे तो पितरोकी अधोगति होती है। कितना जाग्रत स्थान है वह!

बदरीनारायणके गरम कुडोका पानी लेकर अलकनदा आती है, जब कि मदाकिनी गौरीकुडके अुष्ण जलसे थोडी देर कवोष्ण होती है। 'केदारनाथका मदिर बनावटकी दृष्टिसे अन्य सब मदिरोसे अलग प्रकारका है। अदरका शिवलिंग भी स्वयभू, बिना आकृतिका है। वह अितना अूचा है कि मनुष्य अुस पर झुककर अुससे हृदयस्पर्श कर सकता है। मदिरोकी जितनी विशेषता है अुतनी ही मदाकिनीकी भी विशेषता है। यहाके पत्थर अलग प्रकारके है, यहाका बहाव अलग प्रकारका है, और यहा नहानेका आनद भी अलग प्रकारका है।

गगोत्री तो गगोत्री ही है। अिन तीनो प्रवाहोमे भागीरथीका प्रवाह अधिक वन्य और मुग्ध मालूम होता है। यह नही है कि गगामें सिर्फ यही तीन प्रवाह है। नीलगगा है, ब्रह्मगगा है, कअी

गगाये है। हिमालयसे निकलनेवाले सभी प्रवाह गगा ही तो है। जिन जिनका पानी हरिद्वारके पास हरिके चरणोका स्पर्श करता है वे सब प्रवाह गगा ही है। वाल्मीकिने भी जब गगाको आकाशसे हिमालयके शिखररूपी महादेवजीकी जटाओ पर गिरते और वहासे अनेक धाराओमें निकलते देखा तब अुनकी आर्ष दृष्टिने सात अलग अलग प्रवाह गिनाये थे।

तस्या विसृज्यमानाया सप्त स्रोतासि जज्ञिरे।
ह्लादिनी, पावनी चैव, नलिनी च तथैव च॥
सुचक्षुश्चैव, सीता च, सिन्धुश्चैव, महानदी।
सप्तमी चान्वगात् तासा भगीरथ-रथ तदा॥

१९३४

८

जीवनतीर्थ हरिद्वार

त्रिपथगा गगाके तीन अवतार है। गगोत्री या गोमुखसे लेकर हरिद्वार तककी गगा अुसका प्रथम अवतार है। हरिद्वारसे लेकर प्रयागराज तककी गगा अुसका दूसरा अवतार है। प्रथम अवतारमें वह पहाडके बन्धनसे — शिवजीकी जटाओसे — मुक्त होनेके लिअे प्रयत्न करती है। दूसरे अवतारमें वह अपनी बहन यमुनासे मिलनेके लिअे आतुर है। प्रयागराजसे गगा यमुनासे मिलकर अपने बडे प्रवाहके साथ सरित्पति सागरमे विलीन होनेकी चाह रखती है। यह है अुसका तीसरा अवतार। गगोत्री, हरिद्वार, प्रयाग और गगासागर, गगापुत्र आर्योके लिअे चार बडेसे बडे तीर्थस्थान है। जितना अूपर चढे अुतना तीर्थका माहात्म्य अधिक, अैसा माना जाता है। अेक प्रकारसे यह सही भी है। किन्तु मेरी दृष्टिसे तो भारत-जातिके लिअे अत्यत आकर्षक स्थान हरिद्वार ही है। हरिद्वारमे भी पाच तीर्थ प्रसिद्ध है। पुराणकारोने हरेकके माहात्म्यका वर्णन श्रद्धा और रससे किया है। किन्तु यह महत्त्व कुछ भी न जानते

हुअे भी मनुष्य कह सकता है कि 'हरिकी पैडी' में ही गगाका माहात्म्य कहे तो माहात्म्य और काव्य कहे तो काव्य अधिक दिखाअी देता है।

यो तो हरेक नदीकी लबाअीमें काव्यमय भूमिभाग होते ही है। मेरा कहनेका यह आशय नही है कि गगाके किनारे हरिद्वारसे अधिक सुदर स्थान हो ही नही सकते। हरिकी पैडीके आसपास बनारसकी शोभाका सौवा हिस्सा भी आपको नही मिलेगा। फिर भी यहा पर प्रकृति और मनुष्यने अेक-दूसरेके वैरी न होते हुअे गगाकी शोभा बढानेका काम सहयोगसे किया है। गगाका वह सादा और स्वच्छ प्रवाह, मदिरके पासका वह दौडता घाट, घाटके नीचेका वह छोटासा टेढामेढा दह, अिस तरफ हजारो लोग आसानीसे बैठ सके अैसा नदीके पट जैसा घाट, अुस तरफ छोटे बेटके जैसा टुकडा और दोनो बाजुओको साधनेवाला पुराना पुल, सभी काव्यमय है। किनारे परके मदिरो और धर्मशालाओंके सादे शिखर गगाकी तरफ चिपका हुआ हमारा ध्यान अपनी तरफ नही खीचते। फिर भी वे गगाकी शोभामें वृद्धि ही करते है। बनारसके बाजारमे बैठनेवाले आलसी बैल अलग है और शातिसे जुगाली करनेवाले यहाके बैल अलग है। यहा गगामें कही पर भी कीचडका नामोनिशान आपको नही मिलेगा। अनतकालसे अेक-दूसरेके साथ टकरा टकरा कर गोल बने हुअे सफेद पत्थर ही सर्वत्र देख लीजिये।

हरिकी पैडीमे सबसे आकर्षक वस्तुकी ओर हमारा ध्यान हो नही जाता। हम अुसका महज असर ही अनुभव करते है। वह है यहाकी हवा। हिमालयके दूर दूरके हिमाच्छादित शिखरो परसे जो पवन दक्षिणकी ओर बहते है, वे सबसे पहले यहाकी ही मनुष्यबस्तीको स्पर्श करते है। अितना पावन पवन अन्यत्र कहा मिले? हरिकी पैडीके पास पुल पर खडे रहिये, आपके फेफडोमे और दिलमे केवल आह्लाद ही भर जायगा। अुन्मादक नही बल्कि प्राणदायी, फिर भी प्रशम-कारी।

जितनी बार मै यहा आया हू, अुतनी बार वही ग्लानि, वही आह्लाद, वही स्फूर्ति मैने अनुभव की है। चद लोग बम्बअीकी चौपाटीके

साथ अिस घाटका मुकावला करते है। आत्यतिक विरोधका सादृश्य अिन दोनोंके वीच जरूर है। यहा यात्री लोग मछलियोको आहार देते है, जब कि वहा मछुअे आहारके लिअे मछलियोको पकडने जाते है।

हरिकी पैडी देखनी हो तो शामको सूर्यास्तके वाद जाना चाहिये। चादनी है या नही, यह सोचनेकी आवश्यकता नही है। चादनी होगी तो अेक प्रकारकी शोभा मिलेगी, नही होगी तो दूसरे प्रकारकी मिलेगी। अिन दोनोमे जो पसदगी करने वैठेगा वह कला-प्रेमी नही है। सध्याकाशमे अेकके वाद अेक सितारे प्रकट होते है, और नीचेसे अेकके वाद अेक जलते दीये अुनका जवाव देते है। अिस दृश्यकी गूढ शाति मन पर कुछ अद्‌भुत असर करती है। अितनेमे मदिरसे टीग टाऽग, टीग टाऽग करते घटे आरतीके लिअे न्यौता देते है। अिस घटनादका मानो अत ही नही है। टीग टाऽग टीग टाऽग चलता ही रहता है। और भक्तजन तरह तरहकी आरतिया गाते ही रहते है। पुरुष गाते है, स्त्रिया गाती है, ब्रह्मचारी गाते है और सन्यासी भी गाते है, स्थानिक लोग गाते है और प्रात-प्रातके यात्री भी गाते है। कोअी किसीकी परवाह नही करता। कोअी किसीसे नही अकुलाता। हरेक अपने अपने भक्तिभावमे तल्लीन। सनातनी स्तोत्र गाते है, आर्य-समाजी अुपदेश देते है। सिख लोग ग्रथसाहवके अेकाध 'महोल्ले' में से आसा-दि-वार जोरसे गाते है। गोरक्षा-प्रचारक आपको यहा वतायेंगे कि मसारमे सफेद रग अिसलिअे है कि गायका दूध सफेद है। गायके पेटमे तैतीस कोटि देवता है, सिर्फ वहा पेटभर घास नही है। चद नास्तिक अिस भीडका फायदा अुठाकर प्रमाणके साथ यह सिद्ध कर देते है कि अीश्वर नही है। और अुदार हिन्दूधर्म यह सव सद्‌भावपूर्वक चलने देता है। गगामैयाके वातावरणमे किसीका भी तिरस्कार नही है। सभीका सत्कार है। लाल गेरुवा पहनकर मुक्त होनेका दावा करनेवाले मुक्तिफौजके मिशनरी भी यहा आकर यदि हिन्दूधर्मके विरुद्ध प्रचार करे तो भी हमारे यात्री अुनकी वात शातिसे सुनेंगे और कहेंगे कि भगवानने जैसी वुद्धि दी है वैसा वेचारे वोलते है; अुनका क्या अपराध है?

हिन्दू समाजमें अनेक दोष है और अिन दोषोके कारण हिन्दू समाजने काफी सहा भी है। किन्तु अुदारता, सहिष्णुता और सद्भाव आदि हिन्दू समाजकी विशेषताये हरगिज दोषरूप नही है। यह कहने-वाले कि अुदारताके कारण हिन्दू समाजने वहुत कुछ सहा है, हिन्दू धर्मकी जड ही काट डालते है।

अब भी वह घटा वज रहा है और आलसी लोगोको यह कहकर कि आरतीका समय अभी वीता नही है, जीवनका कल्याण करनेके लिअे मनाता है।

और वे बालाये खाखरेके पत्तोंके वडे वडे दोनोमें फूलोंके बीच घीके दीये रखकर अुन्हे प्रवाहमें छोड देती है, मानो अपने भाग्यकी परीक्षा करती हो। और ये दोने तुरन्त नावकी तरह डोलते डोलते — अिस तरह डोलते हुअे मानो अपने भीतरकी ज्योतिका महत्त्व जानते हो, जीवन-यात्रा शुरू कर देते है।

चली! वह जीवन-यात्रा चली! अेकके बाद अेक, अेकके बाद अेक, ये दीये अपनेको और अपने भाग्यको जीवन-प्रवाहमें छोड देते है। जो बात मनुष्य-जीवनमे व्यक्तिकी होती है वही यहा दीयोकी होती है। कोअी अभागे यात्राके आरभमे ही पवनके वश हो जाते है और चारो ओर विषाद फैलाते है। कुछ काफी आशाये दिखाकर निराश करते है। कुछ आजन्म मरीजोकी तरह डगमग करते करते दूर तक पहुचते है। कभी कभी दो दोने पास पास आकर अेक-दूसरेसे चिपक जाते है और बादमें यह जोडा-नाव दपतीकी तरह लवी लवी यात्रा करती है। अुनको गोल गोल चक्कर काटते देखकर मनमें जो भाव प्रकट होते है अुन्हें व्यक्त करना कठिन है। कअी तो जीवन-ज्योति बुझनेसे पहले ही दृष्टिसे ओझल हो जाते है। मृत्यु और अदृष्ट दोनो मनुष्य-जीवनके आखिरी अध्याय है। अिनके सामने किसीकी चलती नही, अिसीलिअे मनुष्यको अीश्वरका स्मरण होता है। मरण न होता तो शायद अीश्वरका स्मरण भी न होता।

हिंमत हो तो किसी दिन सुबह चार वजे अकेले अकेले अिस घाट पर आकर वैठिये। कुछ अलग ही किस्मके भक्त आपको यहा दिखाअी

देंगे। सुबह तीन बजेसे लेकर सूर्योदय तक विशिष्ट लोग ही यहा आयेंगे। वाजिनीवती अुषा सूर्यनारायणको जन्म देती है और तुरन्त व्यावहारिक दुनिया अिस घाट पर कब्जा कर लेती है। अुसके पहले ही यहासे खिसक जाना अच्छा है। आकाशके सितारे भी खुश होंगे।

मार्च, १९३६

९

दक्षिणगंगा गोदावरी

१

बचपनमे सुबह अुठकर हम भूपाली* गाते थे। अुनमे से ये चार पंक्तिया अब भी स्मृतिपट पर अंकित है

'अुठोनिया प्रात काळी। वदनी वदा चंद्रमौळी।
श्रीबिंदुमाधवाजवळी। स्नान करा गंगेचे। स्नान करा गोदेचे ।।

*　　　　*　　　　*

कृष्णा वेण्या तुंगभद्रा। शरयू कालिंदी नर्मदा।
भीमा भामा गोदा। करा स्नान गंगेचे ।।

गंगा और गोदा अेक ही है। दोनोंके माहात्म्यमे जरा भी फर्क नही है। फर्क कोअी हो भी तो अितना ही कि कलिकालके पापके कारण गंगाका माहात्म्य किसी समय कम हो सकता है, किन्तु गोदावरीका माहात्म्य कभी कम हो ही नही सकता। श्री रामचंद्रके अत्यंत सुखके दिन अिस गोदावरीके तीर पर ही बीते थे, और जीवनका दारुण आघात भी अुन्हे यही सहना पडा था। गोदावरी तो दक्षिणकी गंगा है।

कृष्णा और गोदावरी अिन दो नदियोने दो विक्रमशाली महाप्रजाओंका पोषण किया है। यदि हम कहे कि महाराष्ट्रका स्वराज्य

---

* प्रभातिया।

और आध्रका साम्राज्य अिन्ही दो नदियोका ऋणी है, तो अिसमें जरा-सी भी अत्युक्ति नही होगी। साम्राज्य वने और टूटे, महाप्रजायें चढी और गिरी, किन्तु अिस अैतिहासिक भूमिमे ये दो नदिया अखड वहती ही जा रही है। ये नदिया भूतकालके गौरवशाली अितिहासकी जितनी साक्षी है अुतनी ही भविष्यकालकी महान आशाओकी प्रेरक भी है। अिनमें भी गोदावरीका माहात्म्य कुछ अनोखा ही है। वह जितनी सलिल-समृद्ध है अुतनी ही अितिहास-समृद्ध भी है। गोपाल-कृष्णके जीवनमें जिस तरह सर्वत्र विविधता ही विविधता भरी हुअी है, अेकसा अुत्कर्ष ही अुत्कर्ष दिखाअी देता है, अुसी तरह गोदावरीके अति दीर्घ प्रवाहके किनारे सृष्टि-सौंदर्यकी विविधता और विपुलता भरी पडी है। ब्रह्मदेवकी अेक कल्पनामें से जिस तरह सृष्टिका विस्तार होता है, वाल्मीकिकी अेक कारुण्यमयी वेदनामें से जिस तरह रामायणी सृष्टिका विस्तार हुआ है, अुसी तरह त्र्यवकके पहाडके कगारसे टपकती हुअी गोदावरीमें से ही आगे जाकर राजमहेंद्रीकी विशाल वारिराशिका विस्तार हुआ है। सिंधु और ब्रह्मपुत्राको जिस तरह हिमालयका आलिंगन करनेकी सूझी, नर्मदा और ताप्तीको जिस तरह विंध्य-सतपूडाको पिघलानेकी सूझी, अुसी तरह गोदावरी और कृष्णाको दक्षिणके अुन्नत प्रदेशको तर करके अुसे धनधान्यसे समृद्ध करनेकी सूझी है। पक्षपातसे सह्याद्रि पर्वत पश्चिमकी ओर ढल पडा, यह मानो अिन्हे पसन्द नही आया। अैसा ही जान पडता है कि अुसे पूर्वकी ओर खीचनेका अखड प्रयत्न ये दोनो नदिया कर रही है। अिन दोनो नदियोका अुद्गम-स्थान पश्चिमी समुद्रसे ५०–७५ मीलसे अधिक दूर नही है, फिर भी दोनो ८००–९०० मीलकी यात्रा करके अपना जलभार या कर-भार पूर्व-समुद्रको ही अर्पण करती है। और अिस कर-भारका विस्तार कोअी मामूली नही है। अुसके अन्दर सारा महाराष्ट्र देश आ जाता है, हैदरावाद और मैसूरके राज्योका अत-र्भाव होता है, और आध्र देश तो साराका सारा अुसीमें समा जाता है। मिश्र सस्कृतिकी माता नाअिल नदी हमारी गोदावरीके सामने कोअी चीज ही नही है।

त्र्यबकके पास पहाडकी अेक वडी दीवारमे से गोदाका अुद्गम हुआ है। गिरनारकी अूची दीवार परसे भी त्र्यवककी अिस दीवारका पूरा खयाल नही आयेगा। त्र्यवक गावसे जो चढाअी शुरू होती है वह गोदामैयाकी मूर्तिके चरणो तक चलती ही रहती है। अिससे भी अूपर जानेके लिअे वाअी ओर पहाडमे विकट सीढिया वनायी गयी है। अिस रास्ते मनुष्य ब्रह्मगिरि तक पहुच सकता है। किन्तु वह दुनिया ही अलग है। गोदावरीके अुद्गम-स्थानसे जो दृश्य दीख पडता है वही हमारे वातावरणके लिअे विशेष अनुकूल है। महाराष्ट्रके तपस्वियो और राजाओने समान भावसे अिस स्थान पर अपनी भक्ति अुडेल दी है। कृष्णाके किनारे वाअी सातारा और गोदाके किनारे नासिक पैठण महाराष्ट्रकी सच्ची सास्कृतिक राजधानिया है।

२

किन्तु गोदावरीका अितिहास तो सहन-वीर रामचद्र और दु:ख-मूर्ति सीतामाताके वृत्तातसे ही शुरू होता है। राजपाट छोडते समय रामको दु:ख नही हुआ, किन्तु गोदावरीके किनारे सीता और लक्ष्मणके साथ मनाये हुअे आनदका अत होते ही रामका हृदय अेकदम शतधा विदीर्ण हो गया। वाघ-भेडियोके अभावमे निर्भय वने हुअे हिरण आर्य रामभद्रकी दु:खोन्मत्त आखें देखकर दूर भाग गये होगे। सीताकी खोजमे निकले देवर लक्ष्मणकी दहाडें सुनकर वडे वडे हाथी भी भय-कपित हो गये होगे। और पशुपक्षियोके दु:खाश्रुओंसे गोदावरीके विमल जल भी कषाय हो गये होगे। हिमालयमे जिस तरह पार्वती थी, अुसी तरह जनस्थानमे सीता समस्त विश्वकी अधिष्ठात्री थी। अुसके जाने पर जो कल्पातिक दु:ख हुआ वह यदि सार्वभौम हुआ हो, तो अुसमें आश्चर्य ही क्या है?

राम-सीताका सयोग तो फिर हुआ। किन्तु अुनका जनस्थानका वियोग तो हमेशाके लिअे वना रहा। आज भी आप नासिक-पचवटीमें घूमकर देखे, चाहे चौमासेमें जाये या गरमीमे, आपको यही मालूम होगा मानो सारी पचवटी जटायुकी तरह अुदास होकर 'सीता, सीता'

पुकार रही है। महाराष्ट्रके साधु-सतोने यदि अपनी मगल-वाणी यहा फैलाओ न होती, तो जनस्थान मानो भयानक अुजाड प्रदेश हो गया होता। गरमीकी धूपको टालनेके लिअे जिस तरह तृणसृष्टि चारो ओर फैल जाती है, अुसी तरह जीवनकी विषमताको भुला देनेके लिअे साधु-सत सर्वत्र विचरते है, यह कितने बडे सौभाग्यकी बात है! जब जब नासिक-त्र्यबककी ओर जाना होता है, तब तब वनवासके लिअे अिस स्थानको पसन्द करनेवाले राम-लक्ष्मणकी आखोसे सारा प्रदेश निहारनेका मन होता है। किन्तु हर बार कपित तृणोंमें से सीतामाताकी कातर तनु-यष्टि ही आखोके सामने आती है।

रामभक्त श्रीसमर्थ रामदास जब यहा रहते थे तब अुनके हृदयमें कौनसी अुर्मिया अुठती होगी! श्रीसमर्थने गोदावरीके तीर पर गोबरके हनुमानकी स्थापना किस हेतुसे की होगी? क्या यह बतानेके लिअे कि पचवटीमे यदि हनुमान होते तो वे सीताका हरण कभी न होने देते? सीतामाताने कठोर वचनोंसे लक्ष्मण पर प्रहार करके अेक महासकट मोल ले लिया। हनुमानको तो वे अैसी कोओी बात कह नही पाती! किन्तु जनस्थान और किष्किधाके बीच बहुत बडा अतर है, और गोदावरी कोओी तुगभद्रा नही है।

*   *   *

रामकथाका करुण रस द्वापर युगसे आज तक बहता ही आया है। अुसे कौन घटा सकता है? अिसलिअे हम अत्यज जातिके माने गये पाडेके मुहसे वेदोका पाठ करवानेवाले श्री ज्ञानेश्वर महाराजसे मिलने पैठण चलें। गोदावरी जिस तरह दक्षिणकी गगा है, अुसी तरह अुसके किनारे पर बसी हुओी प्रतिष्ठान नगरी दक्षिणकी काशी मानी जाती थी। यहाके दशग्रथी ब्राह्मण जो 'व्यवस्था' देते थे, अुसे चारो वर्णोंको मान्य करना पडता था। बडे बडे सम्राटोंके ताम्रपत्रोंसे भी यहाके ब्राह्मणोके व्यवस्थापत्र अधिक महत्त्वके माने जाते थे। अैसे स्थान पर शास्त्रधर्मके सामने हृदयधर्मकी विजय दिखानेका काम सिर्फ ज्ञानराज ही कर सकते थे। पैठणमे ज्ञानेश्वरको यज्ञोपवीतका

अधिकार नही मिला। सन्यासी शकराचार्यके अूपर किये गये अत्याचारोकी स्मृतिको कायम रखनेके लिअे जिस तरह वहाके राजाने नाबुद्री ब्राह्मणो पर कअी रिवाज लाद दिये थे, अुसी तरह सन्यासी-पुत्र ज्ञानेश्वरका यदि कोअी शिष्य राजपाटका अधिकारी होता तो वह महाराष्ट्रीय ब्राह्मणोको सजा देता और कहता कि ज्ञानेश्वरको यज्ञोपवीतका अिनकार करनेवाले तुम लोग आगेसे यज्ञोपवीत पहन ही नही सकते।

हाथकी अुगलियोका जिस तरह पखा बनता है, अुसी तरह बड़ी बडी नदियोमें आकर मिलनेवाली और आत्म-विलोपनका कठिन योग साधनेवाली छोटी नदियोंका भी पखा बनता है। सह्याद्रि और अजिठाके पहाडोंसे जो कोना बनता है अुसमे जितना पानी गिरता है अुस सबको खीच खीच कर अपने साथ ले जानेका काम ये नदिया करती है। धारणा और कादवा, प्रवरा और मुळाको यदि छोड दे तो भी मध्यभारतसे दूर दूरका पानी लानेवाली वर्धा और वैनगगाको भला कैसे भूल सकते है? दो मिलकर अेक बनी हुअी नदीका जिसने प्राणहिता नाम रखा, अुसके मनमें कितनी कृतज्ञता, कितना काव्य, कितना आनद भरा होगा! और ठेठ अीशान कोणसे पूर्व-घाटका नीर ले आनेवाली अष्टवक्रा अिद्रावती और अुसकी सखी श्रमणी तपस्विनी शबरीको प्रणाम किये बिना कैसे चल सकता है?

गोदावरीकी सपूर्ण कला तो भद्राचलम्से ही देखी जा सकती है। जिसका पट अेकसे दो मील तक चौडा है अैसी गोदावरी जब अूचे अूचे पहाडोंके बीचमे से होकर अपना रास्ता बनाती हुअी सिर्फ दो सौ गजकी खाअीमे से निकलती है तब वह क्या सोचती होगी? अपनी सारी शक्ति और युक्ति काममें ले कर नाजुक समयमें अपनी महाप्रजाको आगे ले चलनेवाले किसी राष्ट्रपुरुषकी तरह और गगनको विस्मयमें डालनेवाली गर्जनाके साथ वह यहासे निकलती है। नदीमें आनेवाले घोडा-पूर और हाथी-पूर जैसे भारी पूरोंकी बाते हम सुनते है; किन्तु अेकदम पचास फुट जितना अूचा पूर क्या कभी कल्पनामें भी आ सकता है? पर जो कल्पनामें संभव नही है, वह गोदावरीके प्रवाहमें

सभव है। सकडी खाओीमे से निकलते हुअे पानीके लिअे अपना पृष्ठभाग भी सपाट बनाये रखना असभव-सा हो जाता है। अर्घ्य देते समय जिस प्रकार अजलिकी छोटी नाली-सी बन जाती है, अुसी प्रकार खाओीमे से निकलनेवाले पानीके पृष्ठभागकी भी अेक भयानक नाली बनती है। किन्तु अद्भुत रस तो असिसे भी आगे अधिक है। अिस नालीमे से अपनी नावको ले जानेवाले साहसी नाविक भी वहा मौजूद है। नावके दोनो ओर पानीकी अूची अूची दीवारोको नावके ही वेगसे दौडते हुअे देखकर मनुष्यके दिलमें क्या क्या विचार अुठते होगे ?

भद्राचलम्से राजमहेन्द्री या धवलेश्वर तक अखड गोदावरी बहती है। अुसके बाद 'त्यागाय सभृतार्थानाम्' का सनातन सिद्धात अुसे याद आया होगा। यहासे गोदावरीने जीवन-वितरण करना शुरू कर दिया है। अेक ओर गौतमी गोदावरी, दूसरी ओर वसिष्ठ गोदावरी, बीचमे कअी द्वीप और अतर्वेदी जैसे प्रदेश है, और अिन प्रदेशोमे गोदाके सरस जलसे और काली चिकनी मिट्टीसे पैदा होनेवाले सोनेके जैसे शालिधान्य पर परिपुष्ट होकर वेदघोष करनेवाले ब्राह्मण रहते आये है। अैसे समृद्ध देशको स्वतत्र रखनेकी शक्ति जब हमारे लोग खो बैठे, तब डच, अग्रेज और फ्रेंच लोग भी गोदावरीके किनारे पडाव डालनेको अिकट्ठे हुअे। आज* भी यानानमें फासका तिरगा झडा फहरा रहा है।

३

मद्रासमे राजमहेन्द्री जाते समय बेजवाडेमे सूर्योदय हुआ। वर्षा-ऋतुके दिन थे। फिर पूछना ही क्या था ? सर्वत्र विविध छटाओंवाला हरा रग फैला हुआ था। और हरे रगका अिस तरह जमीन पर पडा रहना मानो असह्य लगनेसे अुसके बडे बडे गुच्छ हाथमे लेकर अूपर अुछालनेवाले ताडके पेड जहा तहा दीख पडते थे। पूर्वकी ओर अेक नहर रेलकी सडकके किनारे किनारे बह रही थी। पर किनारा अूचा होनेके कारण अुसका पानी कभी कभी ही दीख पडता था। सिर्फ तितलियोकी

---

* सौभाग्यसे आज यह परिस्थिति नही है।

तरह अपने पाल फैलाकर कतारमे खडी हुअी नौकाओ परसे ही अुस नहरका अस्तित्व ध्यानमे आता था। वीच वीचमें पानीके छोटे वडे तालाव मिलते थे। अिन तालावोमे विविधरगी वादलोवाला अनत आकाश नहानेके लिअे अुतरा था, अिसलिअे पानीकी गहराअी अनत गुनी गहरी मालूम होती थी। कही कही चचल कमलोके वीच निस्तव्ध वगुलोंको देखकर प्रभातकी वायुका अभिनदन करनेका दिल हो जाता था। अैसे काव्यप्रवाहमें से होकर हम कोव्वूर स्टेशन तक आ पहुचे। अव गोदावरी मैयाके दर्शन होगे अैसी अुत्सुकता यहीसे पैदा हुअी। पुल परसे गुजरते समय दायी ओर देखें या वायी ओर, अिसी अुधेडवुनमे हम पडे थे। अितनेमें पुल आ ही गया और भगवती गोदावरीका सुविशाल विस्तार दिखाअी पडा।

गगा, सिधु, शोणभद्र, अैरावती जैसे विशाल वारि-प्रवाह मैने जी भरकर देखे है। वेजवाडेमे किये हुअे कृष्णामाताके दर्शनके लिअे मैंने हमेशा गर्व अनुभव किया है। किन्तु राजमहेन्द्रीके पासकी गोदावरीकी शोभा कुछ अनोखी ही थी। अिस स्थान पर मैने जितना भव्य काव्यका अनुभव किया है, अुतना शायद ही और कही वहता देखा होगा। पश्चिमकी ओर नजर डाली तो दूर दूर तक पहाडियोका अेक सुन्दर झुड वैठा हुआ नजर आया। आकाशमें वादल घिरे होनेसे कही भी धूप न थी। सावले वादलोके कारण गोदावरीके धूलि-धूसर जलकी कालिमा और भी वढ गअी थी। फिर भवभूतिका स्मरण भला क्यो न हो? अूपरकी और नीचेकी अिस कालिमाके कारण सारे दृश्य पर वैदिक प्रभातकी सौम्य सुन्दरता छाअी हुअी थी। और पहाडियो पर अुतरे हुअे कअी सफेद वादल तो विलकुल ऋषियोके जैसे ही मालूम होते थे। अिस सारे दृश्यका वर्णन शब्दोमें कैसे किया जा सकता है?

अितना सारा पानी कहासे आता होगा? विपत्तियोमें से विजयके साथ पार हुआ देश जैसे वैभवकी नयी नयी छटाये दिखाता जाता है और चारो ओर समृद्धि फैलाता जाता है, वैसे ही गोदावरीका प्रवाह पहाडोंसे निकलकर अपने गौरवके साथ आता हुआ दिखाअी देता था। छोटे वडे जहाज नदीके वच्चो जैसे थे। माताके स्वभावसे परिचित होनेके कारण अुसकी गोदमें चाहे जैसे नाचे तो अुन्हें कौन

रोकनेवाला था? किन्तु बच्चोकी अपमा तो अिन नावोकी अपेक्षा प्रवाहमें जहा तहा पैदा होनेवाले भवरोको देनी चाहिये। वे कुछ देर दिखाअी देते, बडे तूफानका स्वाग रचते, और अेकाध क्षणमे हस देते। और टूट पडते। च.हे जहासे आते और च.हे जहा चले जाते या लुप्त हो जाते।

अितने बडे विशाल पटमें यदि द्वीप न हो तो अुतनी कमी ही मानी जायगी। गोदावरीके द्वीप मशहूर है। कुछ तो पुराने धर्मकी तरह स्थिर रूप लेकर बैठे है। किन्तु कअी-अेक तो कविकी प्रतिभाके समान हर समय नया नया स्थान लेते है और नया नया रूप धारण करते है। अिन पर अनासक्त बगुलोंके सिवा और कौन खडा रहने जाय? और जब बगुले चलने लगते है तब वे अपने पैरोके गहरे निशान छोडे बगैर थोडे ही रहते है। अपने धवल चरित्रका अनुसरण करनेवालोको दिशा-सूचन न करा दे तो वे बगुले ही कैसे!

नदीका किनारा यानी मानवी कृतज्ञताका अखड अुत्सव। सफेद सफेद प्रासाद और अूचे अूचे शिखर तो अेक अखड अुपासना है ही। किन्तु अितनेसे ही काव्य सपूर्ण नही होता। अत. भक्त लोग हर रोज नदीकी लहरो परसे मदिरके घटनादकी लहरोको अिस पारसे अुस पार तक भेजते रहते है।

सस्कृतिके अुपासक भारतवासी अिसी स्थान पर गगाजलके कलश आधे गोदामे अुडेलते है और फिर गोदाके पानीसे अुन्हे भरकर ले जाते है। कितनी भव्य विधि है! कितना पवित्र भावप्रधान काव्य है! यह भक्तिरव प्रत्येक हृदयमें भरा हुआ है। वह घटनाद और वह भक्तिरव पूर्वस्मृतिने ही सुनाया। दरअसल तो केवल अेजिनकी आवाज ही सुनाअी देती थी। आधुनिक सस्कृतिके अिस प्रतिनिधिके प्रति अपनी घृणाको यदि हम छोड दें तो रेलके पहियोका ताल कुछ कम आकर्षक नही मालूम होता। और पुल पर तो अुसका विजयनाद सक्रामक ही सिद्ध होता है।

पुल पर गाडी काफी देर चलनेके बाद मुझे खयाल आया कि पूर्व दिशाकी ओर तो देखना रह ही गया। हम अुस ओर मुडे। वहा

विलकुल नयी ही शोभा नजर आयी। पश्चिमकी ओर गोदावरी जितनी चौडी थी, अुससे भी विशेष चौडी पूर्वकी ओर थी। अुसे अनेक मार्गों द्वारा सागरसे मिलना था। सरित्पतिसे जव सरिता मिलने जाती है तव अुसे सभ्रम तो होता ही है। किन्तु गोदावरी तो धीरोदात्त माता है। अुसका सभ्रम भी अुदात्त रूपमें ही व्यक्त हो सकता है। अिस ओरके द्वीप अलग ही किस्मके थे। अुनमें वनश्रीकी शोभा पूरी-पूरी खिली हुअी थी। ब्राह्मणोके या किसानोंके झोंपडे अिस ओरसे दिखाअी नही पडते थे। वहते पानीके हमलेके सामने टक्कर लेनेवाले अिन द्वीपोमे किसीने अूचे प्रासाद वनाये होते तो शायद वे दूरसे ही दीख पडते। प्रकृतिने तो केवल अूचे अूचे पेडोकी विजय-पताकायें खडी कर रखी थी। और वायी ओर राजमहेद्री और धवलेश्वरकी सुखी वस्ती आनद मना रही थी। अैसे विरल दृश्यसे तृप्त होनेके पहले ही नदीके दाये किनारे पर अुन्मत्तताके साथ वहता हुआ कासकी सफेद कलगियोका स्थावर प्रवाह दूर दूर तक चलता हुआ नजर आया। नदीके पानीमे अुन्माद था, किन्तु अुसकी लहरे नही वनी थी। कलगियोंके अिस प्रवाहने पवनके साथ षड्यत्र रचा था, अिसलिअे वह मनमानी लहरे अुछाल सकता था। जहा तक नजर जा सकती थी वहा तक देखा। और नजरकी पहुच यहा कम क्यो हो? किन्तु कलगियोका प्रवाह तो वहता ही जा रहा था। गोदावरीके विशाल प्रवाहके साथ भी होड करते अुसे सकोच नही होता था। और वह सकोच क्यो करता? माता गोदावरीके विशाल पुलिन पर अुसने माताका स्तन्यपान क्या कम किया था?

माता गोदावरी! राम-लक्ष्मण-सीतासे लेकर वृद्ध जटायु तक सवको तूने स्तन्यपान कराया है। तेरे किनारे शूरवीर भी पैदा हुअे है, और तत्त्वचिंतक भी पैदा हुअे है। सत भी पैदा हुअे है और राजनीतिज्ञ भी। देशभक्त भी पैदा हुअे है और अीश-भक्त भी। चारो वर्णोंकी तू माता है। मेरे पूर्वजोकी तू अधिष्ठात्री देवता है। नयी नयी आशायें लेकर मै तेरे दर्शनके लिअे आया हू। दर्शनसे तो कृतार्थ हो गया हू। किन्तु मेरी आशायें तृप्त नही हुअी है। जिस प्रकार तेरे किनारे रामचद्रने दुष्ट

रावणके नाशका सकल्प किया था, वैसा ही सकल्प मैं कबसे अपने मनमे लिये हुअे हू। तेरी कृपा होगी तो हृदयमें से तथा देशमें से रावणका राज्य मिट जायेगा, रामराज्यकी स्थापना होते मैं देखूगा और फिर तेरे दर्शनके लिअे आअूगा। और कुछ नही तो कासकी कलगीके स्थावर प्रवाहकी तरह मुझे अुन्मत्त बना दे, जिससे बिना सकोचके अेक-ध्यान होकर मैं माताकी सेवामे रत रह सकू और बाकी सब कुछ भूल जाअू। तेरे नीरमे अमोघ शक्ति है। तेरे नीरके अेक बिदुका सेवन भी व्यर्थ नही जायेगा।

अक्तूबर, १९३१

१०

वेदोंकी धात्री तुंगभद्रा

जलमग्न पृथ्वीको अपने शूलदतसे बाहर निकालनेवाले वराह भगवानने जिस पर्वत पर अपनी थकान दूर करनेके लिअे आराम किया, अुस पर्वतका नाम वराह-पर्वत ही हो सकता है। भगवान आराम करते थे तब अुनके दोनो दतोंसे पानी टपकने लगा और अुसकी धारायें पैदा हुअी। बायें दतकी धारा हुअी तुगा नदी और दाहिने दतसे निकली भद्रा नदी। आज जिस अुद्गम-स्थानको कहते हैं गगामूल और वराह-पर्वतको कहते हैं बाबाबुदान। बाबाबुदान शायद वराह-पर्वत नही है, लेकिन अुसका पडोसी है। तुगाके किनारे शकराचार्यका शृगेरी मठ है। मैंने तुगाके दर्शन किये थे तीर्थहळ्ळीमे। (कन्नड भाषामें हळ्ळीके मानी हैं ग्राम।) तीर्थहळ्ळीमें मैं शायद अेक घटे जितना ही ठहरा था। लेकिन वहाकी नदीके पात्रकी शोभा देखकर खुश हुआ था। तीर्थहळ्ळीका माहात्म्य तो मैं नही जानता, लेकिन कन्नड भाषाकी अेक छोटीसी लघुकथामें मैंने तीर्थहळ्ळीका वर्णन पढा था। वही मेरे लिअे तीर्थहळ्ळीका स्मरण कायम करनेके लिअे काफी है। तुगाके किनारे शिमोगा शहरके पास किसी

समय महात्मा गाधीके साथ मैं घूमने गया था। अिस कारण भी यह नदी स्मृतिपट पर अकित है।

भद्राके किनारे वेंकिपुर आता है। यहाकी भाषामें अग्निको वेंकि कहते है। क्या भद्राका पानी वेंकिपुरकी आग बुझानेके लिअे काफी नही था?

तुगा और भद्राका सगम होता है कूडलीके पास। शायद अिसी सगमके महादेवके भक्त थे श्री बसवेश्वर, जो अेक राजाके प्रधान-मत्री होने पर भी लिगायत पथकी स्थापना कर सके। बसवेश्वरके काव्यमय गद्यवचनोंके अतमे 'कूडल-सगम देवराया' का जिक्र बार बार आता है। अुसे पढकर 'मीराके प्रभु गिरधर नागर' का स्मरण हुअे बिना नही रहता। कूडलीके पास जो तुगभद्रा बनती है वह आगे जाकर कुर्नूलके पास मेरी माता कृष्णासे मिलती है। अिस बीच कुमुद्वती, वरदा, हरिद्रा और वेदावति जैसी नदिया तुगभद्रासे मिलती है। (वेदावति भी तुग-भद्राके जैसी द्वद्व नदी है। वेद और अवति मिलकर वह बनती है)। अिस प्रदेशमे तुल्यबल द्वद्व सस्कृतिका ही बोलबाला होगा। क्योकि तुगभद्राके किनारे ही हरिहर जैसी पुण्यनगरीकी स्थापना हुअी है। शैव और वैष्णवोका झगडा मिटानेके लिअे किसी अुभय-भक्तने हरि और हर दोनोको मिला कर अेक मूर्ति बना दी। अुसके मदिरके आसपास जो शहर बसा अुसका नाम हरिहर ही पड़ा।

तुगभद्राका पात्र पथरीला है। जहा देखें गोल-मटोल बडे बडे पत्थर नदीके पात्रमें स्नान करते पाये जाते हैं। अैसे पत्थर कभी कभी अिस प्रदेशमें टेकरियोके शिखर पर भी अेकके अूपर अेक विराजमान पाये जाते है। अिन्ही पत्थरोके बीच अेक प्रचड विस्तार पर विजयनगर साम्राज्यकी राजधानी थी।

विजयनगरके खडहर देखनेके लिअे जब मै होस्पेटसे विरूपाक्ष गया था तब अिन भीमकाय बट्टोका या चट्टानोका दर्शन किया था। विजयनगरके अप्रतिम कारीगरीके भग्न मदिरोका दर्शन करते करते मेरा हृदय सम्राट् कृष्णरायका श्राद्ध कर रहा था। रातको विरूपाक्षके मदिरमें हम सो गये तब तीन सौ साल जिसकी कीर्ति कायम रही अुस साम्राज्यके

वैभवके ही स्वप्न मैने देखे। दूसरे दिन ब्राह्म मुहूर्तमें अुठकर हम नजदीकके मातग पर्वतके शिखर पर जा पहुचे। वहा हमें अरुणोदयका और बादमें अुतने ही काव्यमय सूर्योदयका दृश्य देखना था। मातग पर्वतकी चोटी परसे तुगभद्राका दर्शन करके हम धीरे धीरे लेकिन कूदते कूदते नीचे अुतरे।

जब रावण सीतामाताको अुठाकर गगनमार्गसे जा रहा था तब सीताके वल्कलका अचल यहाकी चट्टानोको घिस गया था। अुसकी रेखाअें आज भी यहाके पत्थरो पर पाअी जाती है।

अभी अभी चार साल पहले मैने कुर्नूलके पास तुगभद्राको अपना समस्त जीवन कृष्णाको अर्पण करते देखा, और अुसके पाससे स्वार्पणकी दीक्षा ली।

सुनता हू कि अब अिस तुगभद्रा पर बाध बाधकर अुसके अिकट्ठा किये हुअे पानीसे सारे मुल्कको समृद्धि पहुचायी जायेगी और अुसी पानीसे बिजली पैदा करके अुसकी शक्तिसे अुद्योगोका विकास किया जायेगा। माताकी सेवाकी भी कभी कोअी मर्यादा हो सकती है?

नदीके प्रवाहमे ये हाथीके जैसे बडे बडे पत्थर बादमे आकर पडे है या हाथीके जैसे पत्थरोमे से ही नदीने अपना रास्ता खोज निकाला है, अिसकी खोज कौन कर सकता है? दक्षिणमें वैदिक सस्कृतिके विजयका सूचन करनेवाला विजयनगरका साम्राज्य अिसी नदीके किनारे निर्माण हुआ। और अिसी नदीके किनारे वह कच्चे घडेके समान टूट गया। विजयनगरके साम्राज्यकी कीर्ति-पताका त्रिखडमे फहराती थी। चीनका सम्राट्, बगदादका बादशाह और विजयनगरका महाराजाधिराज, तीनोका वैभव सबसे बडा माना जाता था। अुस समय क्या तुगभद्रा आजके जैसी ही दिखाअी देती होगी? नही तो कैसी दिखाअी देती होगी? नदी क्या मनुष्यकी कृति है, जिससे अुसके वैभवमें अुत्कर्ष और अपकर्ष हो?

मुळा और मुठा मिलकर जैसे मुळामुठा नदी बनी है, वैसे ही तुगा और भद्राके सगमसे तुगभद्रा बनी है। 'द्वद्व सामासिकस्य च' के न्यायसे अिन दोनो नदियोमे अुच्चनीच भाव तनिक भी नही है। दोनो

नाम समान भावसे साथ साथ वहते हैं। अिस नदीके पानीकी मिठास और अुपजाअूपनकी तारीफ प्राचीन कालसे होती आयी है। सभी नदी-भक्तोंने स्वीकार किया है कि गंगाका स्नान और तुंगाका पान मनुष्यको मोक्षके रास्ते ले जाता है। मोटरकी यात्रा यदि न होती तो तुंगभद्राको मैं अनेक स्थानों पर अनेक तरहसे देख लेता। तुंगभद्रा अेक महान संस्कृतिकी प्रतिनिधि है। आज भी वेदपाठी लोगोंमें तुंगभद्राके किनारे बसे हुअे ब्राह्मणोंके अुच्चारण आदर्श और प्रमाणभूत माने जाते हैं। वेदोंका मूल अध्ययन भले सिंधु और गंगाके किनारे हुआ हो, परन्तु अुनका यथार्थ सादर रक्षण तो सायणाचार्यके समयसे तुंगभद्राके ही किनारे हुआ है।

१९२६–'२७

११

नेल्लूरकी पिनाकिनी

नेल्लूर यानी धानका गांव। दक्षिण भारतके अितिहासमें नेल्लूरने अपना नाम चिरस्थायी कर दिया है। बेजवाडेसे मद्रास जाते हुअे रास्तेमें नेल्लूर आता है।

भारत सेवक समाजके स्व० हणमंतरावने नेल्लूरसे कुछ आगे पल्लीपाडु नामक गांवमें अेक आश्रमकी स्थापना की है। अुसे देखनेके लिअे जाते समय सुभग-सलिला पिनाकिनीके दर्शन हुअे। श्रीमती कनकम्माके पवित्र हाथोंसे काते हुअे सूतकी धोतीकी भेंट स्वीकार करके हम आश्रम देखनेके लिअे चले। कुछ दूर तक तो बगीचे ही बगीचे नजर आये। जहां तहां नहरोंमें पानी दौड़ता था, और हरियाली ही हरियाली हंसती दिखाअी देती थी।

बादमें आयी रेत। आगे, पीछे, दायें, बायें रेत ही रेत। पवन अपनी अिच्छाके अनुसार जहां तहां रेतके टीले बनाता था, और दिल बदलने पर अुतनी ही सहजतासे अुन्हें बिखेर देता था। अैसी रेतमें

शातिसे गुजर करनेवाले तुगकाय ताडवृक्ष आनदके साथ डोल रहे थे। घूपसे अकुलाकर वे खुद अपने ही अूपर चमर डुलाते थे या हमारे जैसे पथिको पर तरस खाकर पखा करते थे, यह भला ताडोने कभी स्पष्ट किया है? दोपहरकी धूप कर्मकाडी ब्राह्मणोके समान कठोरतासे तप रही थी। पाव जलते थे। सिर तपता था। और शरीरके बीचके हिस्सेको सम-वेदना देनेके लिअे प्यास अपना काम करती थी।

अिस प्रकार त्रिविध तापसे तप्त होकर हम आश्रममें पहुचे। वहा मै अेक बडे टेकरे पर जा चढा। और अेकाअेक पिनाकिनीका तरल प्रवाह आखोमें बस गया। कितना शीतल अुसका दर्शन था! गेहूके रवेके जैसी सफेद रेत पर स्फटिक जैसा पानी बहता हो, और अूपरसे चड भास्करके प्रतापी किरण बरसते हो, अैसी शोभाका वर्णन कैसे हो सकता है? मानो चादीके रसकी कोठी भट्टीका ताप सहन न कर सकनेके कारण टूट गयी है, और अदरका रस जिस ओर मार्ग मिले अुस ओर दौड रहा है! पवनने दिशा बदली और पिनाकिनी परसे बहकर आनेवाला ठडा पवन सारे शरीरको आनद देने लगा। पासकी अमराअीके अेक पेड पर चढकर दो डालियोके बीच आरामकुर्सी जैसा स्थान ढूढकर मै बैठ गया। दूर ताडवृक्ष डोल रहे थे। वयोवृद्ध आम्रवृक्ष छाव फैला रहे थे। और पिनाकिनी शीतल वायु फूक रही थी। क्या नदनवनमें भी अिससे अधिक सुख मिलता होगा?

नदी-किनारेके अिस काव्यका पान करके आखे तृप्त हुअी और मुदने लगी। स्वर्गीय अस्थिर आम्रासनसे भ्रष्ट होनेका डर यदि न होता तो जाग्रतिके अिस काव्यसे तुलना हो सके अैसा स्वप्नकाव्य मै वहा जरूर अनुभव कर लेता।

पिनाकिनीका पट बहुत बडा है। सुना है कि वर्षाऋतुमे वह रुद्रावतार धारण करती है। अुसकी अिस लीलाके वर्णनोकी शैली परसे मालूम हुआ कि पिनाकिनीके प्रति यहाके लोगोकी कुछ अनोखी ही भक्ति है। असलमे पिनाकिनी दो है। जिसे मै देख रहा था वह है अुत्तर पिनाकिनी अथवा पेन्नेर। यह ठेठ नदीदुर्गसे आती है। वहासे

आते आते वह जयमगली, चित्रावती और पापघ्नीका पानी ले आती है। मानवन अिन नदियोके स्तन्यसे बहुत लाभ अुठाया है। और अब तो तुगभद्राका भी कुछ पानी पेन्नारको मिलेगा। और वह सब धान अुगानेके काममें आयेगा।

१९२६–'२७

१२

जोगका प्रपात

ठेठ बचपनसे ही, मैं पश्चिम समुद्रके किनारे कारवारमें था तबसे, गिरसप्पाके बारेमें मैंने सुना था। अुस समय सुना था कि कावेरी नदी पहाड परसे नीचे गिरती है और अुसकी अितनी बडी आवाज होती है कि दो मीलकी दूरी पर अेकके अूपर अेक रखी हुअी गागरे हवाके धक्केसे ही गिर जाती है। तब फिर अुस प्रपातकी आवाज तो कहा तक पहुचती होगी? बादमे जब भूगोल पढने लगा तब मनमें सदेह पैदा हुआ कि कावेरीका अुद्गम तो ठेठ कुर्गमें है और वह पूर्व-समुद्रसे जा मिलती है। वह पश्चिम घाटके पहाड परसे नीचे गिर ही नही सकती। तब गिरसप्पामे जो गिरती है वह नदी दूसरी ही होगी। अुसे तो शीघ्रतासे होन्नावरके पास ही पश्चिम-समुद्रसे मिलना था। अिसलिअे सवा-सौ, डेढ-सौ पुरुष जितनी अूचाअी से वह कूद पडी है। अुस नदीका नाम क्या होगा?

नायगराके प्रपातके कअी वर्णन मेरे पढनेमे आये थे। प्रकृति माताका अमरीकाको दिया हुआ वह अद्भुत आभूषण है। दुनिया भरके लोग अुसकी यात्राके लिअे जाते है। कअी लोगोने बडे मजबूत पीपेमें बैठकर अुस प्रपातमें से पार होनेके प्रयत्न किये है आदि वर्णन जैसे जैसे मैं अधिक पढता गया वैसे वैसे मेरा कुतूहल बढता गया। अनेक दिशाओंसे लिये हुअे चित्र और अक्षिपट (Bioscopes) नायगराको नजरके सामने प्रत्यक्ष करने लगे। अिस प्रकार नायगराका अप्रत्यक्ष दर्शन जैसे जैसे बढता

गया, वैसे वैसे बचपनमे सुने हुअे अुस गिरसप्पाके प्रपातकी मानसपूजा बढती गयी। बादमें जब यह पता चला कि नायगरा तो सिर्फ १६४ फुटकी अूचाअीसे गिरता है, जब कि गिरसप्पाकी अूचाअी ९६० फुट है, तब तो मेरे अभिमानका कोअी पार न रहा। सबसे मुख्य और ससारका सबसे बडा पर्वत हिन्दुस्तानमें है। सिंधु, गगा, और ब्रह्मपुत्रा जैसी नदियोंके बारेमें किसी भी देशको जरूर गर्व हो सकता है। यह सिद्ध करनेके लिअे कि सबसे लबी नदी हमारे ही यहा है, अमरीकाको दो नदियोकी लबाअी मिलाकर अेक करनी पडी। मिसोरी और मिसिसिपीको अलग अलग मानें तो अुनकी लबाअी कितनी होगी? हिन्दुस्तानका अितिहास जिस तरह पृथ्वी पर सबसे पुराना है, अुसी तरह हिन्दुस्तानकी भू-रचना भी सारे ससारमे अद्‌भुत है।

क्या हिन्दुस्तान केवल प्रपातके बारेमें हार जायगा? सारे ससारने कबूल किया है कि अशोकके समान दूसरा सम्राट् दुनियामें नही हुआ है। भूगोलमे भी लोगोको स्वीकारना चाहिये कि भव्यतामें गिरसप्पासे (अुसका सही नाम जोग है) मुकाबला हो सके अैसा दूसरा अेक भी प्रपात ससारमें नही है।

कारकल राजकीय परिषद्‌के लिअे मै दक्षिण कर्णाटकमें गया था तब अुम्मीद रखी थी कि अगुबा घाट चढकर शिमोगा होते हुअे गिरसप्पा देखनेके लिअे जाअूगा। किन्तु वैसा नही हो सका।

मनसा चिंतित कार्यं दैवेनान्यत्र नीयते।

निराशामे मैंने मान लिया कि अिस चिरसचित आशासे आखिर मै हमेशाके लिअे वचित हो गया हू और गिरसप्पाका दर्शन मुझे ध्यानके द्वारा ही करना होगा।

किन्तु अितना तो जान लिया था कि जोग मैसूर राज्यकी सीमा पर है। वहा जानेके दो रास्ते है। अूपरका रास्ता शिमोगा सागर होकर जाता है और दूसरा नदीके मुखकी ओरसे जाता है। अिसमें बदर होन्नावरसे नावमे बैठकर जगलोको पार करके गिरसप्पा गाव तक जाना होता है और वहासे घाट चढना पडता है। दोनो रास्तोंमे जाकर आये हुअे लोग कहते है कि अेक ओरकी शोभा दूसरी ओर देखनेको

नही मिलती। यह तो कहा ही नही जा सकता कि अेक ओरकी शोभा दूसरी ओरकी शोभासे अुतरती है। अेक रास्तेसे जाअू और दूसरी ओरका साक्षात् अनुभव न करू, तब तक तो मुझे कबूल करना ही चाहिये कि मैंने जोगके आधे ही दर्शन किये है।

गुजरातमे बाढ आयी थी अुस समय गाधीजी अपनी बीमारीके दिन बगलोरमे बिता रहे थे। मै अुनसे मिलने गया था। वहासे मैसूर राज्यमे घूमते घामते गाधीजी सागर तक पहुचे। श्री गगाधरराव और राजगोपालाचार्य साथमे थे। सागर पहुचनेके बाद गिरसप्पा देखनेके लिअे न जाना तो मेरे लिअे असभव था। मोटरसे अेक ही घण्टेका रास्ता था। शिमोगामें तुगाके किनारे घूमने गये थे तब मैंने गाधीजीसे आग्रह किया था, "आप गिरसप्पा देखने चलिये न? लॉर्ड कर्जन सिर्फ गिरसप्पा देखनेके लिअे खास तौर पर यहा आये थे। अिस ओर आना फिर कब होगा?" गाधीजी बोले, "मुझसे अितनी भी मनमानी नही हो सकेगी। तुम जरूर हो आओ। तुम देख आओगे तो विद्यार्थियोको भूगोलका अेकाध पाठ पढा सकोगे।" मैंने दलील पेश की "मगर यह ससारका अेक अद्भुत दृश्य है। नायगरासे जोग छ गुना अूचा है। ९६० फुट अूपरसे पानी गिरता है। आपको अेक बार अुसे देखना ही चाहिये।"

अुन्होने पूछा, "बारिशका पानी आकाशसे कितनी अूचाअीसे गिरता है?" और मै हार गया। मनमे कहा "स्थितधी कि प्रभाषेत? किमासीत? व्रजेत किम्?"

मुझे मालूम था कि गाधीजीको सगीतकी तरह सृष्टि-सौंदर्यका भी बडा शौक है। घूमने जाते हुअे सूर्यास्तकी शोभाकी ओर या बादलोमें से झाकते हुअे किसी अकेले सितारेकी ओर अुन्होने मेरा ध्यान किसी समय खींचा न हो अैसी बात नही थी। किन्तु प्रजाकी सेवाका व्रत लिये हुअे गाधीजी जैसे सेवक महात्मा मनमानी किस तरह कर सकते है?

कुलशिखरिण क्षुद्रा नैते न वा जलराशय ।

अेक बात अिस तरह समाप्त हुअी अिसलिअे मैने दूसरी बात शुरू कर दी "आप नही आते अिसलिअे महादेवभाअी भी नही आते। आप अुनसे कहेंगे तो ही वे आयेगे।"

"अुसकी अिच्छा हो तो वह भले तुम्हारे साथ जाये। मै मना नही करूगा। किन्तु वह नही आयेगा। मै ही अुसका गिरसप्पा हू।"

बाकीके हम सब ठहरे दुनियवी आदर्शके लोग! पहाड परसे गिरता हुआ प्रपात चर्मचक्षुसे न देखें तब तक हमें तृप्ति नही हो सकती थी। अिसलिअे भोजनके पहले ही हम सागरसे रवाना हुअे और मोटरकी मददसे जगल पार करने लगे। पहाडोको कुरेदकर रेलवेवाले जब खोह या सुरग बनाते है तब हमे बहुत आश्चर्य होता है। किन्तु बम्बअीकी बस्तीसे भी घने सह्याद्रिके जगलोमें से रास्ता तैयार करना अुससे भी अधिक कठिन है। यहा आपका डायनेमाअिट (सुरग) नही चलेगा। तनेको काटनेके बाद भी अेक अेक पेडको शाखाओके जालसे मुक्त करना हिन्दू-मुसलमानोके झगडोको निबटाने जितना कठिन काम है। खडाला घाटकी गहरी खोहके बीचोबीच जाने पर आदमी जिस भयानक रमणीयताका अनुभव करता है, अुसी तरहकी स्थितिका अनुभव अिन जगलोमें होता है। अैसे जगलोमें हाथी, बाघ या अजगर जैसे प्राणी ही शोभा देते है। अिनमे मनुष्य तो बिलकुल तुच्छ प्राणी मालूम होता है। लगता है, यह अैसे जगलमें कहासे आ गया!

खैर, हम जगल पार करके शरावतीके किनारे पहुचे। अिस ओर अुसे भारगी भी कहते है। भारगी यानी बारहगगा। यहाके लोग यदि यह मानते हो कि गगा नदीसे अिस नदीका माहात्म्य बारह गुना अधिक है, तो हम अुनसे झगडा नही करेगे। हरेक बच्चेको अपनी ही मा सर्वश्रेष्ठ मालूम होती है न? पानी रिमझिम बरस रहा था। यहा गगनभेदी महावृक्ष भी थे, और छोटे-बडे झाड-झखाड भी थे। अमर घास भी थी और जमीन तथा पेडोकी बूढी छाल पर अुगनेवाली शैवाल (काअी) भी थी। अुस पारके छोटे-बडे पेड नदीका पानी कितना ठडा या गहरा है यह जाचनेके लिअे अपने पत्तोवाले हाथ पानीमें

डालते थे। और कुहरेके चंद बादल आलसी साडकी तरह अिधर-अुधर भटक रहे थे।

नदीको देखकर हमेशा सवाल अुठता है कि यह नदी कहासे आती है और कहा जाती है? मेरे मनमें तो हमेशा नदी कहासे आती है, यही सवाल प्रथम अुठता है। दूसरोके मनमें भी यही सवाल अुठता होगा। अिसका क्या कारण है? नदी कहा जाती है, यह जाचना आसान है। नदीमे कूद पडे कि वह हमें अनायास अपने साथ ले चलती है। अुतनी हिम्मत न हो तो अेकाध पेडके तनेको कुरेदकर बस अुसमे बैठ जाअिये। किन्तु नदी कहासे आती है, यह जाचनेके लिअे प्रतीप गतिसे जाना चाहिये। अैसा तो सिर्फ ऋषिगण ही कर सकते है। अुस दिनका दृश्य अैसा था जिससे मनमें सदेह अुत्पन्न होता था कि भारगी या शरावतीका पानी पहाडसे आता है या बादलोंसे?

नावमे बैठकर हम अुस पार गये। किनारेकी जमीनसे कअी नन्हें नन्हें झरने कूद कूदकर नदीमे गिरते थे। अुन परसे हम सहज अनुमान लगा सके कि अगले दिन भारी बरसात होनेके कारण नदीका पानी काफी बढ गया था। आज वह करीब पाच फुट अुतरा था। नाव हमें नीचे अुतारकर दूसरोको लाने वापस गअी। शात पानीमें नाव जब डाडकी डब् डब् आवाज करती हुअी जाती या आती है अुस समयका दृश्य कितना सुदर मालूम होता है! और जब यह नाव हमारे प्रियजनोको अपने पेटमे स्थान देकर अुन्हे गहरे पानीकी सतह परसे खींचकर लाती है, तब चिंताका कोअी कारण न होते हुअे भी मनमें डर मालूम हुअे बिना नही रहता। राजगोपालाचार्य अपने पुत्र और पुत्रीको साथ लेकर नावमे बैठने जा रहे थे। मैंने अुनसे कहा, 'हमारे पुरखोंने कहा है कि अेक ही कुटुबके सब लोग अेकसाथ अेक ही नावमें बैठे यह ठीक नही है। या तो पिता हमारे साथ आयें या पुत्र, दोनों नही।' साथी लोग अिस रिवाजकी चर्चा करने लगे। किसीको अिसमे प्रतिष्ठाकी बू आअी, किसीको और कुछ सूझा। किन्तु किसीके ध्यानमे यह बात नही आयी कि सर्वनाशकी सभावनाको टालनेके लिअे ही यह नियम बनाया गया है। मुझे यह अर्थ स्पष्ट करके वायुमडलको विषण्ण नही बनाना

था। अिसलिअे पुरखोकी वुद्धिकी निंदा सुनता हुआ मै अुस पार पहुचा। जब नाव मझधारमें पहुची तब मंत्र वोलकर आचमन करना मै नही भूला। नदीके दर्शनके साथ स्नान, पान और दानकी विधि होनी ही चाहिये। तभी कहा जायगा कि नदीका पूरा साक्षात्कार किया।

दूसरी टुकडी आ पहुची और हम दाहिनी ओरके रास्तेसे चलने लगे। नदीका वह वाया किनारा था। रास्तेके वडे वडे पेडोको मस्जिदके स्तभोकी तरह सीधे अूचे जाते देखकर हमे आनद हुआ। हमारी टोली अितनी वडी थी कि अिस निर्जन अरण्यमे देखते ही देखते हमारा वार्ताविनोद और हमारा अट्टहास्य चारो ओर फैल गया। मगर कितनी देर तक? हम कुछ ही दूर गये होगे कि नदीने अपनी गभीर ध्वनि शुरू की। अिस आवाजको किसकी अुपमा दी जाय? अितनी गभीर आवाज और कही सुनी हो तभी तो अुपमा दी जा सके न? मेघगर्जना भीषण जरूर होती है, और यह भी सच है कि वह सारे आकाशमें फैल जाती है। किन्तु वह सतत नही होती। यहा तो आप सुन सुनकर थक जाये तो भी आवाज रुकती ही नही। क्या यहा वादल टूट पडते है? क्या तोपे छूटती है? अथवा पहाडके वडे वडे पत्थरोकी घानी फूटती है? या नदी अपना ध्यानमौन छोडकर महारुद्रका स्तवराज वोलती है?

'अव कौनसा दृश्य आयेगा?', 'अव कौनसा दृश्य आयेगा?' अैसे कुतूहलसे आखें फाडकर चारो ओर देखते देखते हम मुसाफिरखाने (डाकवगले) तक पहुचे। जहासे प्रपातका दर्शन सवसे सुन्दर होता है, वही मैसूर राज्यकी ओरसे यह अतिथिशाला वनायी गयी है। हम निरीक्षणके चवूतरे पर जा पहुचे। मगर यह क्या! सर्वव्यापी कुहरेके अलावा और कुछ दिखायी ही नही देता था। और प्रपात अपनी गभीर आवाजसे सारी घाटीको गूजा रहा था। ठीक दोपहरको भी सूर्यके दर्शन नही हो पाये। जहा देखें वहा कुहरा ही कुहरा! कुहरेके घने वादल मानो कुरुक्षेत्रका महायुद्ध मचा रहे हो और जोग अपने तालसे अुनका साथ दे रहा हो। अितनी अुम्मीदके साथ आनेके वाद अिस तरहका तमाशा हमें कभी देखनेको नही मिला था। मिनट पर

मिनट बीतते जाते थे और हमारी निराशाके साथ कुहरा भी घना होता जाता था। आखिर हम मौन तोडकर आपसमें बाते करने लगे। बाते करनेके लिअे कोअी खास विषय नही था, किन्तु निराशाकी शून्यताको भरनेके लिअे कुछ तो चाहिये था।

क्या अिद्रदेव कुपित हो गये है या वरुणदेव अप्रसन्न हो गये है? मै यह सोच ही रहा था कि अितनेमे वायुदेवने मदद की और अेक क्षणके लिअे — सिर्फ अेक ही क्षणके लिअे — कुहरेका वह घना परदा दूर हटा और जिदगीभर जिसके लिअे तरसता रहा था वह अद्‌भुत दृश्य आखिर आखोके सामने आया! महादेवजीके सिर पर जिस तरह गगाका अवतरण होता है, अुसी प्रकार अेक बडा प्रपात नीचेकी खोहसे बाहर निकले हुअे हाथी जैसे पत्थर पर गिरकर, पानीका आटा बनाकर, चारो ओर अुसकी बौछारे अुडा रहा है!!

नही। अिस दृश्यका वर्णन शब्दोंमें हो ही नही सकता। आश्चर्यमग्न होकर मै बोल अुठा.

नम पुरस्तात्, अथ पृष्ठतस् ते नमोऽस्तु ते सर्वत अेव सर्व।
अनन्त-वीर्यामित-विक्रमस् त्वम् सर्वं समाप्नोषि ततोऽसि सर्व ।।

तुरन्त सामनेका वह हाथीके समान पत्थर सिरसे प्रपातकी जटाओंको झाडकर बोला

सुदुर्दर्शम् अिद रूप दृष्टवान् असि यन् मम।
देवा अप्यस्य रूपस्य नित्य दर्शन-काक्षिण.।।

कुहरेका परदा फिर पहलेकी तरह जम गया और हमारी स्थिति अैसी हो गयी मानो हमने जो दृश्य देखा था वह सब स्वप्न था, माया थी या मतिभ्रम था! वह विस्तीर्ण खोह, वह विशाल पात्र, वह भयानक गहराअी और अुसके बीच पानीका नही बल्कि आटेका — नही, मैदेका — वह अद्‌भुत प्रपात और फव्वारा! सारा दृश्य कल्पनातीत था। यह प्रतीति दृढ होनेके पहले ही कि हम जो अपनी आखोसे देख रहे है वह सच्चा ही है, कुहरेका क्षीरसागर फिर फैल गया और हम सामनेके काव्यके साथ अुसमें डूब गये।

अब कोअी किसीसे बोलता नही था। जो देखा था अुस पर सब सोचने लगे। जहा कुछ भी नही था वहा अितनी बडी और गहरी सृष्टि कहासे पैदा हुअी और देखते ही देखते वह कहा लुप्त हो गयी — अिसी आश्चर्यने मानो हम सबको घेर लिया।

मनमें आया, चाहे अेक क्षणके लिअे ही क्यो न हो, जो देखने आये थे अुसे हमने देख लिया। अद्भुत रीतिसे देख लिया। अेक क्षणके लिअे जो दर्शन हुआ अुसके स्मरण और ध्यानमें घटो बिताये जा सकते हैं।

अितनेमे वह शुभ्र जटाधारी पत्थर फिरसे बोला

व्यपेतभी प्रीतमना पुनस् त्व तदेव मे रूपम् अिद प्रपश्य।

कुहरेका आवरण फिर दूर हटा और अब तो अिस छोरसे अुस छोर तक सब कुछ स्पष्ट दीख पडने लगा। सामनेकी ओरसे ठेठ बायें छोर पर 'राजा' अर्धचद्राकार पत्थर परसे नीचे कूद रहा था। अुसका पानी बारिशके कीचडके कारण कॉफीके रगका हो गया था। किन्तु सबसे अधिक पानी राजाको ही मिलता है। छाती फुलाता हुआ जब वह ठेठ सीधा नीचे गिरता है तब अिस बातका खयाल होता है कि प्रकृतिकी शक्ति कितनी अपरिमित है। राजा प्रपातका विस्तार भी कुछ कम नही है। और अुसके दोनो ओर बडे बडे मोतियोके कअी हार लटकते दौडते हैं। सचमुच यह प्रपात राजाके नामके काबिल ही है।

अुसके पासके जिस प्रपातका दर्शन मुझे सबसे प्रथम हुआ था वह वास्तवमें तीसरा था। अुसका नाम है वीरभद्र। बीचका अेक प्रपात रुद्र अिस ओरसे स्पष्ट दिखाअी ही नही देता। वह कदम कदम पर जोरसे चिल्लाता हुआ आखिर राजामे मिल जाता है।

ठेठ दाहिनी ओर अेक छोटासा प्रपात है। अुसकी कमर कुछ पतली है। अिसलिअे मैंने अुसका नाम पार्वती रखा। जी भरकर देखनेके बाद हमारी बातें फिरसे शुरू हुअी। स्वय जो कुछ देखा हो अुसे दूसरेको दिखानेकी अुमग जिसमें न हो वह आदमी आदमी नही

है। आदमी सचारशील होता है, सवादशील होता है। अुसने जो अनुभव किया वही दूसरोंको भी होता है—हो सकता है—अैसा विश्वास जब तक न हो तब तक अुसे परम सतोष नही होता। राजाजीने ध्यान खीचा, 'यह नीचे तो देखो! ठडी भापके ये बादल कैसे अूपर कूद आते हैं?' देवदास कहने लगे, 'अुन पक्षियोंको तो देखो! कैसे निर्भय होकर अुड रहे हैं?' मणिबहनने भी अैसा ही कुछ कहा और लक्ष्मीने अपने अण्णाको तमिल भाषामे बहुत कुछ समझाकर अपना आनद व्यक्त किया। हमारे साथ और अेक भाअी आये थे। वे रास्तेमे अकारण ही नाराज हो गये थे। हम जब अिस स्वर्गीय दृश्यके आनदमें विभोर हो रहे थे तब अुन भाअीको अपने माने हुअे अपमानकी ही जुगाली करनी थी। चद्रशकरने अुनकी अिस स्थितिकी ओर मेरा ध्यान खीचा। मै मन ही मन बोला:

पत्र नैव यदा करीर-विटपे दोषो वसतस्य किम्?
नोलूकोप्यवलोकते यदि दिवा सूर्यस्य किं दूषणम्?

अिस ससारमे निराशा, गलतफहमी, अप्रतिष्ठा, या वियोग सच्चे दुःख नही है। बल्कि अहकार ही सबसे बडा दुःख है। अहकारकी विकृतिको बडे बडे धन्वतरि भी दूर नही कर सकते।

अुन भाअीकी अनेक प्रकारकी परेशानियो और विकृतियोंको मै जानता था। अिसलिअे गिरसप्पाके जोगके सामने भी अुन्हे दो क्षण दिये बिना मुझसे रहा नही गया। मैने अुनको गिरसप्पाके बारेमे थोडी जानकारी दी और अुन्हें प्रसन्न करनेका प्रयत्न किया।

राजा प्रपातके पीछेकी ओरकी खोहमे असख्य पक्षी रहते हैं, और दूर दूरके खेतोंसे चुनकर लाये हुअे 'अुच्छिष्ट' और अुत्कृष्ट दानोका सग्रह करते हैं। अेक बार किसीसे सुना था कि यह सग्रह अितना बडा होता है कि सरकारकी ओरसे अुसका नीलाम किया जाता है। मधुमक्खियोंका मधु लूटनेवाला मानव-प्राणी पक्षियोंके संग्रहको भी लूटे तो अुसमें आश्चर्यकी क्या बात है? जो सग्रह करता है वह लूटा जाता है, अैसी सृष्टिकी व्यवस्था ही दीख पडती है: 'परिग्रहो भयायैव'।

फिर कुहरेका आवरण फैला और मुझे अन्तर्मुख होकर विचारमे डूब जानेका मौका मिला। अैसे भव्य दृश्योका रहस्य क्या है? भूगोलवेत्ता और भूस्तरशास्त्री फौरन कह देगे 'यहाका पहाड 'निस्' कोटिके पत्थरके स्तरका है। घाटीमें से अेक कगार टूट गअी होगी और आसपासकी मिट्टी धुल गअी होगी। अेक बार प्रपात शुरू होने पर वह नीचेकी जमीनको अधिकाधिक गहरा खोदता जाता है और जहासे प्रपात शुरू होता है अुस कोनेको घिसता जाता है। अूपरका वह माथा यदि सख्त पत्थरका हो, तो अूचाअी हजारो बरसो तक कायम रह सकती है। प्रपातसे समुद्र अधिक दूर न होनेसे नदीका आगेका हिस्सा साफ हो गया है और प्रपातकी अूचाअी कायम रही है।' किन्तु यह तो हुआ प्रपातका जड रहस्य। किसी आधुनिक यात्रिकसे पूछिये तो वह कहेगा 'अकेले गिरसप्पाके प्रपातमें अितना प्रचड सामर्थ्य है कि मैसूर और कानडा (कर्णाटक) अिन दोनो जिलोको चाहिये अुतनी शक्ति वह दे सकता है। फिर, आप अुससे बिजली लीजिये, हरेक शहर और गावको प्रकाशित कीजिये, कल-कारखाने चलाअिये और अपने मुल्कके या दूसरोके मुल्कके चाहे अुतने लोगोको बेकार बना दीजिये।'

प्रकृतिसे जो कुछ फायदा मिलता है वह पृथ्वीकी सभी सतानें आपसमे समझ-बूझकर बाट ले और जीवनयात्राका बोझा हल्का कर लें, अैसी बुद्धि आदमीको जब सूझेगी तबकी बात अलग है। किन्तु आज तो मनुष्यके हाथमे किसी भी तरहकी शक्ति आ गयी कि वह फौरन अुसका अुपयोग दूसरोसे स्पर्धा करके श्रेष्ठत्व पानेके लिअे ही करता है। फिर वह श्रेष्ठत्व अुसे भले दूसरोको मारकर मिलता हो, गुलाम बनाकर मिलता हो, या आधे पेट पर रखकर मिलता हो।

मैसूर राज्य अेक आगे बढा हुआ राज्य है। बडे बडे अिजीनियरोने दीवानपदको सुशोभित करके यहाकी समृद्धिको बढानेकी कोशिश की है। यदि कहे कि सारे ससारके लिअे आवश्यक चदनका तेल सिर्फ मैसूर राज्य ही देता है तो अिसमे अधिक अत्युक्ति नही होगी। हिन्दुस्तानकी बडीसे बडी सोनेकी खाने मैसूरमें ही है। भद्रावतीके लोहेके कल-कारखानेकी कीर्ति बढती ही जा रही है। और

कृष्णसागर तालाव तो मानव-पराक्रमका अेक सुन्दर नमूना है। यह तो हो ही नही सकता कि अैसे मैसूर राज्यको गिरसप्पाके प्रपातको भुनाकर खानेकी व.त सूझी न हो। किन्तु अव तक यह वात अमलमे नही आयी — अितनी वडी शक्तिका कौनसा अुपयोग किया जाय, यह न सूझनेसे या सीमाका कोअी झगडा वीचमे आनेसे या अन्य किसी कारणसे, यह मै भूल गया हू। मगर अिसमे कोअी शक नही कि गिरसप्पाकी शोभा अव भी अुतनी ही प्राकृतिक, अुदात्त और अक्षुण्ण है।

भगिनी निवेदिताकी प्रख्यात तुलनाका यहा स्मरण हो आता है। किसी भी स्थानकी रमणीयताने जव भारतवासीको आकर्षित किया है तव अुसने फौरन अुसका धार्मिक रूपान्तर कर ही दिया है। भारतका हृदय जव किसी अद्‌भुत, रमणीय या भव्य दृश्यको देखता है, तव तुरत अुसको लगता है कि यह तो गाय जैसे वछडेको पुकारती है वैसे परमात्मा जीवात्माको पुकार रहा है। नायगराका प्रपात यदि हिन्दुस्तानमें गगामैयाके प्रवाहमे होता तो यहाकी जनताने अुसका वायुमडल कैसा वना डाला होता? आमोद-प्रमोद और पिकनिककी टोलियोके वदले और रेलके यात्रियोके वदले प्रपातकी पूजा करनेके लिअे वार्षिक या मासिक यात्रियोकी टोलिया ही टोलिया यहा अिकट्ठा होती। भोगविलासके सब साधन मुहैया करनेवाले होटलोके वदले प्रपातके किनारे या अुसके वीचोवीच अुमडे हुअे हृदयकी भक्ति अुडेलनेके लिअे वडे वडे मदिर वनाये गये होते। सृष्टिके वैभवको देखकर भडकीले अैश-आराम और शान-शौकतके वदले लोगोने यहा तप किया होता। और अितनी प्रचड शक्तिको मनुष्यके फायदेके लिअे और सुख-चैनके लिअे कैद करनेकी वात सूझनेके वदले अुसे प्रकृतिके साथ अैक्यका अनुभव करनेवाली मस्तीमे भैरवजापके साथ पानीके प्रवाहमे अपने जीवन-प्रवाहको मिला देनेकी ही वात सूझती। स्वभाव-भिन्नतामे क्या कुछ वाकी रहता है?

मगर प्रकृतिकी भव्यताको देखकर अुसमें अपने शरीरको छोड देनेमे आध्यात्मिकता है क्या? नही। अिसमें कोअी सदेह नही कि शरीरके वधन टूट जाये, 'किसी भी हालतमे जीवित रहूगा ही' अिस तरहकी पामर जीवनाशा मनुष्य छोड दे, अिसमे आध्यात्मिक प्रगति

है। किन्तु यह वृत्ति स्थायी होनी चाहिये। क्षणिक अुन्मादका कोअी अर्थ नही है। फना होनेकी अिच्छा हरेक मनुष्यके दिलमें किसी समय पैदा होती ही है। अिश्ककी यह अेक विकृति है। अिसमे किन्ही आध्यात्मिक तत्त्वोकी झाकी देखकर अुस पर फिदा होना मनुष्य-जीवनकी महत्ताको शोभा नही देता। भगवान बुद्धने अपनी अचूक नजरसे अुसको विभव-तृष्णाका नाम देकर अुसे धिक्कारा है। विभवका अर्थ है नाश। भगवान मनुने भी यह बात साफ शब्दोमे बताअी है:

नाभिनन्देत मरणम्, नाभिनन्देत जीवितम्।

अिसमे सदेह नही कि गिरसप्पाके प्रपात जैसे रोमहर्षण दृश्यके सामने यत्रो, शक्तिके हॉर्स-पावर, बिजलीके प्रकाश या कल-कारखानोंके बारेमें सोचना आत्माको भूलकर बाहरी वैभवका ध्यान करनेके बराबर है। किन्तु आसपासका प्रदेश यदि अकालसे पीडित हो, लोग अनेक रोगोंके शिकार होते हो, और जनताका यह दुख प्रपातके पानीका अन्य अुपयोग करनेसे ही दूर होता हो, तो अुस समय हमारा क्या आग्रह होगा? सृष्टि-सौंदर्यका रसपान करनेवाले हमारे चित्तके आह्लादक साधनको — प्रपातको — वैसाका वैसा रखनेका, या हमारे आपद्ग्रस्त भाअियोको दुखमुक्त करनेके लिअे अुसका बलिदान देनेका? जहा पर्याप्त अनाज न मिलता हो वहा अनाजकी खेतीको छोडकर गुलाबकी खेती करने लगें, तो क्या अिससे हमारा हृदयविकास होगा? गुलाबमे काव्य है, अनाजमे कारुण्य है। दोनोमे से हम किसे पसन्द करेंगे? अिग्लैंडके अेक प्राचीन राजाने अनेक गावोको अुजाडकर मृगयाके लिअे अेक महान अुपवन तैयार किया था। अिसमे कोअी सदेह नही कि यह राजा मर्दाने खेलोका रसिया था। किन्तु सवाल यह है कि अुसे प्रजासेवक मानें या नही? जब कलाके सामने सेवाका सवाल खडा होता है, किस वृत्तिको — काव्यकी या कारुण्यकी — पोपण दे यह तय करना होता है, तब निर्णय किस कसौटी पर कसकर दिया जाय? जलते हुअे रोमको देखकर नीरोका फिडल बजाना और जलती मिथिलाको देखकर जनक राजाकी आध्यात्मिक चर्चा करना, दोनोंमें फर्क है। जनताकी सेवा जितनी बन सकती थी अुतनी सब करनेके बाद व्यर्थकी चिंतामें दिलको जलानेकी

अपेक्षा हृदयमे अतर्यामीके स्मरणको दृढ करनेका प्रयत्न आर्यवृत्तिको सूचित करता है। अिनेगिने लोगोके विलास या अैश्वर्यके लिअे प्रकृतिकी शक्तिका अुपयोग करना और प्राकृतिक सौंदर्यका नाश करना अधर्म है। किन्तु प्राणियोंके आर्तिनाशसे होनेवाले हृदयविकासको छोडकर प्रकृतिके विभूति-दर्शनमे अुसको ढूढनेकी अिच्छा रखना अुचित है या नही, यह विचारने जैसा है।

वे रूठे हुअे भाअी अपने कल्पित अपमानकी जलनमे सामनेका दृश्य भूल गये थे और मै अपने तात्त्विक कल्पना-विहारमे शून्य दृष्टिसे सामने देख रहा था। दोनो अभागे थे, क्योकि कल्पना या जलन चलानेके लिअे वादमे चाहे अुतना समय मिलता। कुहरेका आवरण फिर फैला। अब क्या प्रपात फिरसे दिखाअी देनेवाला था? राजाजीने कहा, 'गरमीके दिनोमें जव प्रपात गिरता है तब पानीकी फुहार पर तरह तरहके अिंद्रधनुष दिखाअी देते है। अुस समयकी शोभा विलकुल निराली होती है।' और यह भी नही कहा जा सकता कि चादनी रातमें भी धनुष नही दिखाअी देते। मैसूरका सर्वसग्रह (गॅज़ेटियर) लिखता है कि घासके वडे वडे गट्ठोको आग लगाकर प्रपातमे छोड देनेसे अैसा दिखाअी देता है मानो अधेरी रातमे सारी घाटी जल अुठी हो। चद लोगोने रातके समय आतिशवाजी करके भी यहा अद्भुत आनद पाया है। अुत्पाती मानव क्या क्या नही करता? मुझे तो अैसी कोअी बात पसन्द नही है। अैसे स्थान पर प्रकृति जो खुराक परोसती है अुसकी स्वाभाविक रुचि अनुभव करनेमें ही सच्ची रसिकता है। मानवी मसाले डालनेसे स्वाद और पाचनशक्ति, दोनो खराव होते है।

अव हम वगलेके भीतर पहुंचे। साथमे जो भोजन लाये थे अुसको अुदरस्थ किया। यहाका पानी पी नही सकते, क्योकि फौरन मलेरिया होता है। अधिकतर लोगोने गरम-गरम कॉफी पीकर ही प्यास बुझाअी। मैने तो अुस दिन चातककी तरह वारिशकी कुछ वूदे पाकर ही सतोष माना।

प्रपातका और अेक वार दर्शन करके हम वापस लौटे। अव तो सव तरहसे स्पष्ट हो चुका कि प्रपात तीन नही वल्कि चार है।

बाओी ओरका पहला बडा प्रपात है राजा। अुसकी बगलकी खोहसे आक्रोश करता हुआ अुससे आ मिलनेवाला 'रोअरर' (Roarer) मेरा रुद्र है। सिर पर छूट रहे फव्वारेकी शुभ्र जटाओवाला 'रॉकेट'। अुसे अब वीरभद्र कहनेके सिवा चारा नही था। और अतमे आनेवाले प्रपातका नाम मैने तन्वगी पार्वती ही रखा। अग्रेजोने रुद्रको Roarer नाम दिया है। वीरभद्रको Rocket और पार्वतीको Lady का नाम दिया है।

अब हम वापस लौटे। पावोमें जोके चिपकनेका डर था। यहाके लोगोने हम सबको सावधानीसे चलनेके बारेमें चेतावनी दे रखी थी। अुन्होने कहा था, जोकें चिपकेगी तो मालूम ही नही होगा कि चिपक गयी है, और खून चूसा जायेगा। मैने कहा, आप अिसकी फिक्र मत कीजिये। अग्रेजोको हम पहचान गये है, तो क्या जोकोंसे सावधान नही रहेगे? तिस पर भी करीब करीब हरेकके पावमें अेक अेक जोक चिपक ही गअी। हो सकता है, मेरे शरीरमे खूनका विशेष आकर्षण न होनेसे या मेरा खून कसैला होनेसे या शायद काकदृष्टिसे देख देखकर मै चलता था अिससे, मै बच गया था। हम कुछ आगे गये। किन्तु मणिबहनसे रहा नही गया। 'जरा ठहरिये। बन सके तो फिर अेक बार अिस ओरसे प्रपातके दर्शन कर आती हू।' 'मगर कुहरा खुले ही नही तो?' 'न खुले तो कोअी हर्ज नही। वापस लौट आयेंगे। किन्तु अेक बार देखने तो दीजिये।'

वापस लौटते समय बीचमे अेक जगह रास्ता फूटा था। वहामे होकर कअियोने नजदीकसे पार्वतीका दर्शन किया और वहाकी जमीन फिसलनेवाली होनेसे पार्वतीको 'वदे मातरम्' कहकर साष्टाग प्रणिपात भी किया।

जाते समय जिस रास्तेसे अज्ञात और अननुभूत दशाका काव्य अनुभव किया था, अुसी रास्तेसे वापस लौटते समय हम सस्मरणोंके स्मृति-काव्यका अनुभव करने लगे, हालाकि वही दृश्य अुलटी दिशासे देखनेमे कम नवीनता न थी। जिन पेडोंके बारेमें जाते समय हमने बातें की थी, वही पेड वापस लौटते समय ध्यान तो खीचेगे ही।

अिसलिअे अिन परिचित भाअियोंसे 'क्योजी कैसे हो?' कहकर कुशल-समाचार पूछे विना भला आगे कैसे जाया जा सकता है? और पेड-पेडके वीच प्रेमका पुल वाधनेवाली लताये? अुनकी नम्रताको नमन किये विना जो आगे जाता है वह अरसिक है। हम आहिस्ता-आहिस्ता नदीके किनारे तक आ पहुचे। अब अुसी शात प्रवाहके अूपरसे वापस लौटना था। कुहरेके वादल विखर गये थे। नदीके शात पानीको आहिस्ता-आहिस्ता प्रपातकी ओर जाता हुआ देखकर मेरे मनमे वलिदानके लिअे जाते हुअे भेडोंके झुडकी तस्वीर खडी हो गअी। मैंने अुस पानीसे कहा 'तुम्हारे भाग्यमें कितना वडा अध पतन लिखा है अिस वातका खयाल तक तुम्हें नही है। अिसीलिअे अितने शात चित्तसे तुम आगे वढते हो। या नही — मै ही गलती कर रहा हू। तुम जीवनधर्मी हो। तुम्हे विनाशका क्या डर है?

प्राय कन्दुक-पातेन पतत्यार्य पतन्नपि।

जितनी अूचाअीसे गिरोगे अुतने ही अूचे अुछलोगे। तुम्हारी दया खानेवाला मै कौन हू? शरावतीके पवित्र पानीका स्पर्श करनेके लिअे मैंने अपना हाथ लबा किया। पानी खिलखिलाकर हसा और वोला, 'न हि कल्याणकृत् कश्चित् दुर्गतिं तात! गच्छति।' नाव अिस पार आ गअी और हमें सूझा कि मोटरको अिस ओर जरा नीचे तक दौडाया जाय तो अुसी प्रपातकी फिरसे दाहिनी यात्रा भी होगी। हम जिस ओर हो आये थे अुसे 'मैसूरकी तरफ' कहते है और दाहिनी ओरसे जानेके लिअे निकले अुसे 'वम्वअीकी तरफ' कहते है। क्योंकि जोग दोनों राज्यकी सीमा पर है।

यहा तो हम विलकुल नजदीक आ पहुचे। मै वडी वडी शिलाओंके वीचसे दौडने लगा। दो सालके वीमारके रूपमें मेरी ख्याति काफी फैली हुअी थी। अिससे मुझे दौडते देखकर राजाजीको आश्चर्य हुआ। किसीने कहा, 'वे तो महाराष्ट्रके मावले है और हिमालयके यात्री भी है। मछलियोको जिस तरह पानी, अुसी तरह अिन मराठोको पहाड होते है।' अिन वचनोको सुननेके लिअे मुझे कहा रुकना था? मै तो दौडता दौडता राजा प्रपातकी वगलमें अुस प्रख्यात टीलेके पास

जा पहुचा। यहासे खडे खडे नीचेकी ओर देखा ही नही जा सकता। चक्कर खाकर आदमी गिर जाता है। कानोमे चारो प्रपातोकी आवाज अितनी भरी हुअी थी कि दूसरा कुछ सुननेके लिअे अुनमें गुजाअिश ही बाकी न थी। जिस तरह प्रपातका पानी अूपरसे नीचे गिरकर फिर अूचा अुछलता था, अुसी तरह कानमे आवाज भी अुछलती होगी। प्रथम मेरा ध्यान खींचा राजाके गडस्थल पर लटकती मोतियोकी लडियोने और जलप्रलयसे लोगोको बचानेके लिअे जिस तरह वीर तैराक पानीमे कूदते है अुसी तरह अिस ओरके प्रपातमें होकर युक्तिसे गुजरनेवाले पक्षियोने। क्या अिन पक्षियोको अिस प्रपातकी भीषण भव्यताका खयाल ही नही है, या अीश्वरने अुनके दिलमे अितनी हिम्मत भर दी है? मेरा खयाल है कि आगतुक पक्षियोकी अितनी हिम्मत नही होगी। अिन जोगवासियोका जन्म यही हुआ, प्रपातके पटलकी सुरक्षिततामे अुनकी परवरिश हुअी। शेरके बच्चे शेरनीसे नही डरते। सागरकी मछलिया लहरोमे आनद मानती है, अुसी तरह ये जोगके बच्चे जोगके साथ खेलते होगे।

राजा प्रपातको मैसूरकी ओरसे दूरसे देखा था, तब अुसका असर भिन्न प्रकारका हुआ था। यहा तो हम अुसके अितने नजदीक थे, मानो हाथीके गडस्थल पर ही सोये हो। अूपरका पानी प्रपातकी ओर अैसा खिचा चला आता था, मानो कोअी महाप्रजा जाने-अनजाने, अिच्छा-अनिच्छासे महान क्रातिकी ओर घसीटी जाती हो। कोअी महाप्रजा जब सामाजिक और राजनीतिक प्रगतिके प्रवाहमे बहने लगती है तब आगे क्या होनेवाला है अिस बातका अुसे खयाल तक नही होता। और खयाल हो भी तो 'हमारे बारेमे यह सच्चा नही होगा, हम किसी न किसी तरह बच जायेंगे,' अैसी अधी आशा वह रखती है। अिस बीच प्रगतिका नशा बढता ही जाता है। अतमें अुग्र लोग सयम सुझाते है और नरम (मॉडरेट) लोग अधे होकर गैरजिम्मेदार लोगोके साथ मिल जाते है और फिर अिच्छा होने पर भी पीछे नही हट सकते। या खुद पीछे हटे तो भी क्या? धनुषसे निकला हुआ तीर कभी पीछे खीचा जा सका है? जो अटल न हो वह क्राति काहेकी?

प्रपातका पानी नीचे कहा तक जाता है यह देखना या जानना असभव था। क्योकि अुछलते हुअे पानीके वडे बडे बादल प्रपातके पावोंसे लिपटे हुअे थे। पानीके अुन्मत्त अुत्सवको देखकर लगता था मानो महादेवजी सहारकारी ताडव-नृत्य ही कर रहे हों और सामनेका रुद्र अुसमें ताल दे रहा हो। परन्तु रोमाचकारी शोभाका परम अुत्कर्ष तो वीरभद्र ही दिखाता है। आपको यह मालूम ही नही होगा कि यहा पानी गिरता है और पानी अुछलता है। अैसा मालूम होता था मानो वडी बडी तोपोंसे गोलोंके सहारे कोरे आटेके फव्वारे अुडते हो। अुस दृश्यका वर्णन शब्दोमे हो ही नही सकता, क्योकि शब्दोकी परवरिश 'शाति और व्यवस्था' के बीच होती है।

हमने लेटे लेटे यहासे अिस दृश्यको जी भरकर देखा। या सच कहें तो चाहे अुतने लेटने पर भी तृप्त होना असभव है अिस बातका यकीन हुआ तब तक देखा। आखिर हम खडे होकर वापस लौटे। लेकिन वापस लौटना आसान न था। कोअी तो अुठता ही नही था। अुसे खीचकर लानेके लिअे दूसरा जाता था तो वह भी खुद अुस नयनोत्सवमें चिपक जाता था। पहला पछताकर अुठता था तो जो बुलाने जाता वह नही अुठता था। और जब दोनो मुश्किलसे सयम करके वापस लौटते, तब अिन पर गुस्सा होकर झगडा करनेके लिअे गये हुअे तीसरे भाअी अेक क्षणके लिअे आखोको तृप्त करने वहा खडे हो जाते और अुन दोनोके सयमको थोडा शिथिल बना देते। अुन दोनोके मनमें आता अितने चिढे हुअे समाज-नियता जितनी छूट लेते है अुतनी यदि हम भी ले तो अिसमें कोअी गलती नही है। हम कहा अुनसे अधिक सयमी होनेका दावा करते है? मेरे दिलमें आया कि अुस शिला पर पहुच जाअूगा तो राजाके पानीमे पाव डाल सकूगा। किन्तु नदीका पानी कुछ बढता जा रहा था और अुसमें वह शिला अेक छोटे द्वीपके जैसी बन गअी थी। अिसलिअे राजाजीने मुझे मना किया। मुझे भी लगा कि अुनकी बात नही मानूगा तो दूनी अुद्धतता होगी। राजाजीकी आज्ञाका अुल्लघन कैसे किया जाय? और 'राजा' के सिर पर पाव कैसे रखा जाय?

हम वापस लौटे। भक्ति, विस्मय, मानव-जीवनकी क्षणभगुरता, दृश्यकी भव्यता, अिस क्षणकी धन्यता — कओी वृत्तियोंके वादल हृदयमें भरे थे और वहासे अुस वीरभद्रकी तरह सिरमें अपने तीर छोडते थे । विचारोकी यह आतिशवाजी अद्भुत होती है। हृदयसे तीर छूटकर सीधे सिर तक पहुचता है और वहा फूटता है तब स्वस्थ शरीर कैसा अस्वस्थ हो जाता है, अिस वातका जिसने अनुभव लिया है वही अिसके चमत्कारको जान सकता है।

अिस स्थान पर मदिर क्यो नही है? हमारे मदिर तो मानो जन्मभूमिके काव्यमय स्थान है । अगर पहाडका अमुक शिखर अुत्तुग है, तो वहा कोअी ऋषि ध्यान करनेके लिअे जाकर वैठा ही है और भक्तोंने वहा अेक मदिर वनाया ही है । फिर वह चाहे पूनाके पासका पार्वती शिखर हो, चपानगरके पासका पावागढ हो, जूनागढके पासका गिरनार हो या हिमालयका कैलास शिखर हो। दक्षिणकी ओर दौडनेवाली नदी कही अुत्तरवाहिनी हुअी है? तो चलो, वहा अेकाध तीर्थकी स्थापना करो, करोडो लोग आकर पावन हो जायगे । वडी बडी दो नदिया अेक-दूसरेसे मिलती हो तो अुस प्रयागमें हमारे सतोने तीसरी अपनी सरस्वती वहायी ही है । सारी यात्रा पूरी करके समुद्र तक पहुचे, तो वहा भक्तोने जगन्नाथजीकी या सेतुवध महादेवजीकी स्थापना की ही है। जहा जमीनका अत दीख पडा वहा या तो कन्याकुमारी होगी या देवेंद्र होगा। लवे रेगिस्तानमें अेकाध सरोवर दिखाअी दे तो वह नारायणका ही सरोवर है, अुसकी पूजा होनी ही चाहिये। और क्षीरभवानीकी स्थापना भी होनी ही चाहिये!

हमारे सत कवियोने तीर्थस्थानोकी स्थापना कहा कहा की है, यह खोजने चलेगे तो हिन्दुस्तानका सारा भूगोल पूरा करना पडेगा । मुसलमान सतोंने और रोमन कैथलिक पादरियोने भी हमारे देशमें अिसी तरह अद्भुत काव्यमय स्थान पसद किये है और वहा पूजा-प्रार्थनाकी व्यवस्था की है। फिर अिस प्रपातके पास मदिर क्यो नही है? क्या जीवनराशिके अितने वडे अधःपतनको देखकर मुनि खिन्न हुअे होगे? क्या भैरवघाटीकी तरह यहा शरीर छोडनेका नशा पैदा

होगा, अिस खयालसे लोकसग्रह करनेवाले मुनियोने लोकयात्राके लिअे अिस ध्यानको नापसन्द किया होगा? या दिमागको भर देनेवाली अखड और भीषण गर्जना ध्यानके लिअे अनुकूल नही है, अैसा मानकर अुपासक यहासे विमुख हुअे होंगे? या यह प्रपात ही स्वय अभयब्रह्मकी मूर्ति है, अुसके पास ध्यान खीच सके अैसी कौनसी मूर्ति खडी करे, अिस अुधेडबुनमे पडकर अुन्होंने यह विचार छोड दिया? कौन बता सकता है? हमारे पुरखोने यहा कोअी मदिर नही बनाया, अिस बातका मुझे जरा भी दुःख नही है। किन्तु अिस स्थानको देखकर सूझे हुअे भावोका अेकाध ताडवस्तोत्र तो अवश्य अुनको लिखना चाहिये था। पार्थिव मूर्ति जहा काम नही करती वहा वाङ्मयी मूर्ति जरूर अुद्दीपक हो सकती है।

यह सारी शोभा हम प्रपातके सिर परसे देख रहे थे। होन्नावरकी ओरसे आनेवाले लोग जब अुत्तर कानडा जिलेके महाकातारसे आते है तब अुन्हे नीचेसे अिस प्रपातका आ-पाद-मस्तक दर्शन होता होगा। दोनोंमे कौनसा दर्शन ज्यादा अच्छा है, यह बिना अनुभव किये कौन बता सकेगा? और अनुभव ले भी तो क्या? प्रकृतिकी अलग अलग विभूतियोमें किसी समय तुलना हुअी है? हिमालयकी भव्यता, सागरकी गभीरता, रेगिस्तानकी भीषणता और आकाशकी नम्र अनतताके बीच तुलना या पसदगी कौन कर सकता है? अिसलिअे अेक बार होन्नावरके रास्तेसे जोगके दर्शनके लिअे आना चाहिये।

समुद्रमें जहाजी बेडेका अनुभव लेकर कुशल बने हुअे चद फौजी अफसर प्रपातको नापनेके लिअे आये थे और हिंडोलेमें लटकते हुअे प्रपातकी पीछेकी ओर पहुच गये थे। अुन्हें किस तरहका अनुभव हुआ होगा? जोगके पक्षियोंने अुनका कैसा स्वागत किया होगा? प्रपातके परदेमें से अदर फैलनेवाला बाहरका प्रकाश अुन्हें कैसा मालूम हुआ होगा? और अधेरी रातमें प्रपातके पीछे यदि घास जलाकर बडा प्रकाश किया जाय तो सारी घाटीमे किस तरहकी गधर्वनगरी पैदा होगी, अिस बातका खयाल क्या किसीको है? जब यहा बिजलीका कल-कारखाना तैयार होगा तब कुछ कल्पनाशूर लोग अिस प्रपातके पीछे बिजलीकी बत्तियोकी कतार जरूर लगायेगे और ससारने कभी न

देखा हो अैसा अिंद्रजाल फैलायेगे। अुस समय सारी घाटी अेक महान रगभूमिके जैसी बन जायगी और चारो खडोंके भूदेव अुसे देखनेके लिअे अवतार लेगे। परन्तु अुस समय क्या किसीको अीश्वरका स्मरण होगा? मालूम होता है, अपनी बुद्धिशक्तिका अुपयोग अीश्वरको पहचाननेके लिअे करनेके बदले मनुष्यने अुसका अुपयोग अीश्वरको भूलनेकी युक्तिया और पद्धतिया खोजनेमे ही किया है।

शायद अैसा भी हो कि सब ओरसे परास्त होनेके बाद ही बुद्धि अीश्वरको अधिक अच्छी तरहसे समझ सकेगी।

हरेक वस्तुका अत होता है। अिसलिअे हमारी अिस जोग-यात्राका भी अत हुआ। अत्यत पवित्र और मीठे सस्मरणोके साथ हम वापस लौटे। किन्तु फिर अेक बार वहा जानेकी वासना तो रह ही गअी। अिसलिअे 'पुनरागमनाय च' अिन शास्त्रोक्त शब्दोका अुच्चार करके हम भारत-वैभवकी अिस असाधारण विभूतिसे विदा ले सके।

सितबर, १९२७

१३

जोगके प्रपातका पुनर्दर्शन

हिमालय, नीलगिरी और सह्याद्रि जैसे अुत्तुग पर्वत, गगा, सिधु, नर्मदा, ब्रह्मपुत्र जैसी सुदीर्घ नद-नदिया, और चिलका, वुलर तथा मचर जैसे प्रसन्न सरोवर जिस देशमें विराजते हो, अुस देशमे अेकाध महान, भीषण और रोमाचकारी जलप्रपात न हो तो प्रकृतिमाता कृतार्थताका अनुभव भला किस प्रकार करे? दक्षिण भारतमें कारवार जिले तथा मैसूर रियासतकी सीमा पर अेक अैसा प्रपात है, जो ससारमें अद्वितीय या सर्वश्रेष्ठ पदका अेकमात्र भोक्ता चाहे न हो, फिर भी अैसे सर्व-श्रेष्ठ प्रपातोमे अेक जरूर है। अग्रेज लोग अुसे 'गिरसप्पा फॉल्स' के नामसे पहचानते हैं। अुसका स्वदेशी नाम है 'जोग'।

लॉर्ड कर्जन जब भारतमे आया तब जोगका प्रपात देखनेके लिअे वह अितना अुत्सुक हुआ था कि अिस देशमें आनेके बाद पहले मौकेका

फायदा अुठाकर वह अुसे देखने गया और अुसके अद्भुत सौदर्यसे अुसने अपनी आखे ठडी की। अुसके बाद हमारे देशमे अिस प्रपातकी प्रतिष्ठा बढ गअी। जहासे लॉर्ड कर्ज़नने प्रपातको देखकर अपने आपको कृतार्थ किया था, वहा मैसूर सरकारने अेक चबूतरा बनवाया है। अुसको 'कर्ज़न सीट' कहते है।

प्रपातके पास ही मैसूर सरकारने अेक अतिथिशाला बनवाअी है। अुसके मेहमानोकी सूचीमें प्रकृति-प्रेमी देशी-विदेशी यात्रियोने समय समय पर अपने आनदोद्गार लिख रखे है। अिन अुद्गारोका ही अेक सग्रह यदि प्रकाशित करें तो वह प्रकृति-काव्यकी अेक असाधारण मजूषा हो। यह सारा काव्य अुच्च कोटिका होता तो भी जोगके प्रत्यक्ष दर्शनसे अुसकी अपूर्णता ही सिद्ध होती और मुहसे यकायक अुद्गार निकलते :

अेतावान् अस्य महिमा अतो ज्यायाश्च पूरुष ।

शरावती तो है अेक छोटीसी नदी। फिर भी अुसके तीन तीन नाम क्यो रखे गये होगे? प्रथम वह भारगी या बारहगगाके नामसे पहचानी जाती है। बीचके हिस्सेमे अुसे शरावती कहते है। और जहा वह प्रौढतासे समुद्रमें मिलती है वहा अुसे बालनदी कहते है। शरावतीके प्रवाहने यदि अिस रोमाचकारी प्रपातका रूप धारण न किया होता तो भी अुसने अपने प्राकृतिक सौंदर्यके द्वारा मनुष्योका मन हरण किया ही होता। किन्तु तब वह हिन्दुस्तानकी अनेक सुन्दर नदियोमें से अेक नदी ही मानी जाती। अिस प्रपातके कारण छोटीसी शरावती भारतवर्षकी अेक अद्वितीय सरिता बन गअी है।

जोगके अिस अलौकिक दृश्यका दर्शन करनेके लिअे राजाजी तथा दूसरे मित्रोके साथ मै प्रथम गया था, अुस समयके अुस अद्भुत दृश्यके दर्शनसे अेक कुतूहल तृप्त हो ही रहा था कि अितनेमें मनुष्य-स्वभावके अनुसार मनमे कुतूहलजन्य अेक नया सकल्प अुठा कि अितनी अूचाअीसे कूदनेके बाद यह नदी आगे कहा जाती होगी, वहा कैसी मालूम होती होगी और सरित्पतिके साथ अुसका किस तरह मिलन होता होगा,

यह सब कभी न कभी जरूर देखना चाहिये। और बन सके तो बच्चा बनकर शरावतीके वक्षस्थल पर (नौका) विहार करना चाहिये। अंतरात्माकी अिस जिज्ञासाको सत्यसंकल्प अीश्वरने आशीर्वाद दिया और अेक तप (१२ वर्ष) की अवधि पूरी होनेके पहले ही जोगका दूसरी बार दर्शन करनेका मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ। पहली बार हम अूपरकी ओरसे प्रपातकी तरफ गये थे। अिस बार नदीके मुखकी ओरसे प्रवेश करके नावमें बैठकर हमने प्रतीप यात्रा की। और नाव जहां अटक गअी वहांसे तैलवाहन (मोटर) के सहारे घाट चढकर हम प्रपातके सिर पर पहुंचे।

वहां शरावतीकी अुस अर्धचंद्राकार घाटीमें चार प्रपात हैं। दाअीं ओर 'राजा' नामक प्रपात है, जो अूपरसे अेकदम ९६० फुट नीचे कूदता है। अुसका 'राजा' नाम यथार्थ ही है। अुसकी जलराशि, अुसका अुन्माद और अुसकी हिम्मत किसी जगदेक-सम्राट्को शोभा दे सके अैसी है। अुसकी बाअीं ओरका महारुद्रके समान गर्जना करनेवाला 'रुद्र (Roarer) प्रपात' राजाके चरणों पर जाकर गिरता है। रुद्रकी घोर गर्जना आसपासकी टेकरियों तथा घाटीको मीलों तक निनादित करती है। अुसकी ध्वनिको न तो मेघ-गंभीर कह सकते हैं, न सागर-गंभीर। क्योंकि मेघगर्जना आकाश-विद्रावी होने पर भी क्षण-जीवी होती है और सागरकी सनातन गर्जनाको ज्वार-भाटेके अनुसार झूलना पडता है। रुद्रकी ध्वनि अविरत, अखंड और धारावाही होती है। अुस ध्वनिका अुन्माद विलक्षण होता है।

राजा और रुद्रको संसारमें कहीं पर भी सम्राट्की पदवी मिल सकती है। किन्तु जोगका सच्चा वैभव तो आकाशमें विविध रूपसे अुडनेवाली वीरभद्र (Rocket) की शुभ्र जल-जटाओंके कारण है। वीरभद्रका प्रपात हाथीके गंडस्थल जैसे अेक विशाल शिलाखंड पर गिरते ही अुसमें से बारूदखानेके तीरों जैसे फव्वारे अूंचे और अूंचे अुडते ही चले जाते हैं। यह क्या शंकरका तांडव-नृत्य है? या महाकवि व्यासकी प्रतिभा-का नवनवोन्मेषशाली कल्पना-विलास है? या सूर्यबिंबके पृष्ठभागसे बाहर पडनेवाली सर्वसंहारकारी किन्तु कल्पनारम्य ज्वालायें हैं? या भूमाताकी वात्सल्य-प्रेरित स्तन्यधाराओंके फव्वारे हैं? अैसी अैसी अनेक

कल्पनाये मनमें अुठती है। वीरभद्र सचमुच देखनेवालोकी आखोको पागल बना देता है।

वीरभद्रकी बाअी ओरकी कर्पूरगौरा, तन्वगी और अनुदरी पर्वत-कन्या पार्वती (Lady) अपने लावण्यसे हमें आनदित करती है।

चारो प्रपातोंकी मानो रक्षा करनेके लिअे ही अुनके दोनो ओर दो प्रचड पहाड खडे है। ये सतरी खडे खडे और क्या कर सकते है? प्रपातोकी अखड गर्जनाको प्रतिक्षण प्रतिध्वनित करते रहना, अुनके अिद्रधनुषोंको धारण करना और विविध प्रकारकी वनस्पतिसे अपनी देहको सजा कर पुलकित रहना, यही अुनकी अविरत प्रवृत्ति हो बैठी है।

अबकी बार जब हम गये तब गरमीके दिन थे। शारवतीका पानी अच्छा खासा अुतर गया था। वीरभद्रकी जटाये कही भी नजर नही आती थी। रुद्रकी लबी लबी अुछल-कूद भी कम हो गअी थी। पार्वतीने अब विरहिणीका वेश धारण कर लिया था। हमे अुम्मीद थी कि कमसे कम राजाका वैभव तो देखने लायक होगा ही। किन्तु विश्व-जित् यज्ञके अतमे धन्यता अनुभव करनेवाला कोअी सम्राट् जिस प्रकार अकिंचन बन जाता है और अुस हालतमें भी अपने वैभवको व्यक्त करता है, ठीक वही हालत 'राजा' की हो गअी थी।

अबकी बार हम शरावतीकी दाअी ओर यानी अुत्तरकी ओर आ पहुचे थे। अतिथिगृहमे रुके बिना हम दौडते दौडते सीधे 'राजा' प्रपातकी बगलमे जा खडे हुअे।

वहा अेक ओर सख्त धूप थी और दूसरी ओर नीचेसे अुडनेवाले तुषारोका ठडा कोहरा था, अिन दोनोंके बीच फसनेसे हमारी जो दशा हुअी अुसका वर्णन करना कठिन है। राजाके मुकुट जैसे शोभनेवाले गरम गरम पत्थरो पर झुककर हमने नीचे घाटीमे देखा। अूपरसे राजाकी जो धारा नीचे गिरती थी वह ठेठ जमीन तक पहुचती ही नही थी। किसी मन्दोमत्त हाथीकी सूडके समान अेक प्रचड स्रोत अूपरसे नीचे गिरता हुआ दीख पडता था। नीचे गिरते गिरते शतधा विदीर्ण होकर अुसकी सहस्र धाराये बन जाती थी, और आगे जाकर अुन धाराओंके बड़े बडे जलबिंदु बन जानेके कारण वे मोतीकी मालाओंकी तरह शोभा

पाने लगती थी। अिन मोतियोंका भी आगे जाकर चूर्ण बन गया और अुसके बडे बडे कण नजर आने लगे। अब नीचे और आगे जाना छोडकर अुन्होंने थोडा स्वच्छंद-विहार शुरू किया। ये बडे कण भी छिन्नभिन्न हो गये, अुन्होंने सीकर-पुंजका रूप धारण किया और बादलोंके समान विहार करने लगे। मगर प्रकृति-माताको अितनेसे ही संतोष नहीं हुआ। आगे जाकर अिन बादलोंसे नीहारिकाओंका कोहरा बना और पवनकी लहरोंके साथ अुडकर वह सारी हवाको शीतल बनाने लगा। आश्चर्यकी बात तो यह थी कि अितनी बडी जलधाराकी अेक बूंद भी जमीन तक पहुंच नहीं पाती थी। नीचेकी जमीन गरम और अूपरकी ठंडी! अिस स्थितिको देखकर मुझे राजाओंका बगैर किसी व्यवस्थाका दान याद आया। प्रजाजनोंको अकालसे पीडित देखकर हमारे राजा जब अुदार हाथोंसे पैसे देने लगते हैं तब अुनके जयनादमें सारा वायुमंडल गूंज अुठता है। किन्तु बेचारी गरीब जनताके मुंह तक अन्नका अेक दाना भी पहुंच नहीं पाता! बीचके अमले ही सब खा जाते हैं।

अलकेश्वरके दिलमें भी अीर्ष्या अुत्पन्न हो अैसी यहांके अिंद्रधनुषोंकी शोभा थी। भेद केवल यह था कि ये अिंद्रधनुष स्थायी नहीं थे। पवनकी तरंगें जैसे जैसे दिशायें बदलती जातीं, वैसे वैसे ये सीकर-पुंज भी अपने स्थान बदलते जाते। अिस कारणसे, पार्वतीके अिशारेसे जिस तरह शंकर नाचने लगते हैं, अुसी तरह ये अिंद्रधनुष भी अिधर-अुधर दौडते हुअे नजर आते थे। क्षणमें क्षीण हो जाते, तो दूसरे ही क्षण मयासुरके महलकी शोभा धारण करते। कर्मके साथ जिस प्रकार अुसका फल आता ही है, अुसी प्रकार हरेक धनुषके साथ अुसका प्रति-धनुष भी अपना वर्णक्रम ठीक अुलटा करके हाजिर होता ही था। हमने स्थान बदला, अिसलिअे अुन सुरधनुषोंने भी अपना स्थल बदला। सुरधनु और सुरधुनीका यह आह्लादजनक खेल हम काफी देर तक विस्मय-विमुग्ध भावसे देखते ही रहे। जितना अधिक देखते अुतनी दर्शनकी पिपासा बढती जाती। हमें मालूम था कि हम घंटे दो घंटे ही यहां पर रह सकेंगे। प्रति-क्षण हमारा समयरूपी पुण्य क्षीण होता जा रहा है, और थोडी ही देरमें हमें मर्त्यलोकमें वापस लौटना होगा, अिस बातका हमें खयाल था।

स्वर्गलोभी देवता जिस विषादके साथ स्वर्गसुखका अुपभोग करते है, पराक्रमी पुरुष अपने यौवनके अुत्तरार्धमे अपने सकल्पकी पूर्तिके लिअे जितने अधीर बन जाते है, अुतने ही विषादसे और अुतने ही अधीर बनकर हम सब अुस गधर्व-नगरीका आख, कान, नाक और सारी त्वचासे सेवन करने लगे और साथ साथ हमारी कल्पनाओ द्वारा अुसी आनदको शतगुणित करके अुसका अुपभोग करने लगे।

*   *   *

अेक दिन पहले हम तीन नावें लेकर निकले थे। बीचकी नावमें स्त्रिया और बालक थे और हम पुरुष लोग दोनो ओरकी दोनो नावोमे बैठे थे। रातका समय था। अूपर आकाशमे चाद हस रहा था। अुसका वह काव्य लडकियोने हृदयमे ग्रहण कर लिया और वहासे वह अुनके आलापोके रूपमे बाहर आने लगा। हरेक लडकीने अपना प्यारा गीत नदीकी सतह पर तैरता छोड दिया। वह नाद कानो पर पडते ही किनारे परके नारियल और सुपारीके पेड रोमाचित हो अुठे और अपने अुन्नत सिर कुछ झुकाकर अुन आलापोका पान करने लगे। थक जाने तक लडकियोने गीत गाये। फिर वे सो गअी। चाद अस्त हुआ। सर्वत्र अंधकारका साम्राज्य प्रस्थापित हुआ। और अनत सितारे आसपासकी टेकरियोको अनिमेष दृष्टिसे देखने लगे। यह कहना मुश्किल था कि आसपासकी नीरव शाति जाग रही थी या वह भी निद्रामे पडी थी।

जब जब हम नीदमें से जग जाते तब तब कभी पतवारकी आवाज, कभी खलासियोके बासके साथ कुश्ती खेलते हुअे पानीकी आवाज, और कभी खलासियोंकि अेक-दूसरेको पुकारनेकी तीक्ष्ण आवाज सुनाअी देती। आखिर पौ फटी। पछियोने अपना कलरव शुरू किया। मेरे मनमें आया: बीचकी नावमें सोयी हुअी कोयलें भी यदि जग जायें तो कितना अच्छा हो! मेरे गद्य निमत्रणका अुन्होंने आलापोंसे ही अुत्तर दिया। वृक्षोने भी रातके समय सुने हुअे आलापोको याद करके, अेक-दूसरेको यह बतानेके लिअे कि 'यही तो रातका सगीत है' अपने सिर हिलाना शुरू किया। रातका जलविहार सचमुच सात्त्विक, शातिमय और यौवनमय था।

अुष कालका जलविहार भी अुतना ही सात्त्विक, शातिमय और यौवन-प्रसन्न था, जब कि प्रपातका यहाका दर्शन तो अद्भुत-भीषण और रोम-हर्षण था। अब अुन लडकियोके चेहरो पर प्रात कालकी मुग्ध प्रसन्नता नही रही थी। 'अितने अद्भुत दृश्यका सर्जन किस प्रकार हुआ होगा? सचमुच हम पृथ्वीतल पर है या स्वप्नसृष्टिमे?' अिसका विस्मय अुनके चेहरो पर स्पष्ट रूपसे नजर आता था। वे अेक-दूसरेकी आखोकी ओर देखकर अपना विस्मय बढाती जा रही थी। और अुनके अिस विस्मयको देखकर हमें अिस प्रकारका गर्व मालूम होता था, मानो हम ही अिस काव्यमय सृष्टिके विधाता हो।

भोजनका समय हो चुका था। नौकायें छोडकर हम अेक गावके नजदीक आ पहुचे। वहा चावल कूटनेकी अेक चक्की थी। भक् भक् भक् करती हुअी यह चक्की गरीब लोगोकी शाति, अुनका स्वास्थ्य और अुनकी आजीविकाको भी कूटपीट कर नष्ट कर रही थी। हमने अघाकर खाना खाया और हमारे अिन्तजारमे खडे तैलवाहनमे हम आरूढ हुअे।

पेट्रोलके अेक डिब्बेमे थोडासा तेल बाकी था। हमारा सारथी अुसीमें पानी भरकर ले आया और मोटरमें डाला। पानी गरम हुआ और तेलका धुआ पानीमें मिला। फिर क्या पूछना था? कदम कदम पर मोटर रुकने लगी, चिल्लाने लगी, शिकायत करने लगी और बदबू छोडने लगी। हम भी अूब गये, गुस्सेमें आये, आग-बबूला हुअे और अतमें यह देखकर कि अब कोअी अिलाज ही नहीं है, ठडे पड गये। बगला भाषाकी अेक कहावतका मुझे स्मरण हो आया 'जले तेले मिश खाये ना'। बडी मुश्किलसे, किसी न किसी तरह जब हम पानीवाली जगह पर आ पहुचे तब पुराने विप्लवी पानीको निकालकर हमने अुसमे शुद्ध सज्जन पानी भर लिया। अुसके बाद हमारा रास्ता बिलकुल आसान हो गया।

बरसोसे चर्चा चल रही है कि गिरसप्पाके प्रपातसे बिजली पैदा की जाय या नहीं। शरावतीके पानीको अेक ओरसे मोडकर बडे बडे नलो द्वारा नीचे अुतारकर वहा अुसकी मददसे यदि बिजली पैदा की जा सके,

तो सारी मैसूर रियासतको सस्ते दाममें बिजली दी जा सकेगी। अितना ही नही, बल्कि अुत्तर और दक्षिण कानडा जिलोंको भी दी जा सकेगी। अिससे लोगोको बडा फायदा होगा। किन्तु अिससे वह अद्भुतरम्य प्राकृतिक दृश्य हमेशाके लिअे नष्ट हो जायगा। अिन दो बातोमे से कौनसी अधिक अिष्ट है, अिसका अब तक कोअी निर्णय नही हो सका है। हजारो—नही, लाखो लोगोको पेटभर अन्न मिलेगा। सैकडो विज्ञानवेत्ता नवयुवकोको अपनी योग्यता सिद्ध करनेका मौका मिलेगा। हजारो जानवरोंकी पीडा दूर होगी। अेक स्थान पर अिस तरहका कारखाना सफल हो सका तो भारतके सब प्रपातोका अैसा ही अुपयोग किया जा सकेगा। और देशको अेक महान शक्तिका हमेशाके लिअे लाभ मिल जायगा। तब क्या केवल अेक भीषणरम्य दृश्यके लोभसे हम अिन अनेक हितकर बातोको छोड दे? कलाके शौककी भी कोअी सीमा है या नही? अपनी रानीके मनोविनोदके लिअे अपनी राजधानी रोमको जला डालनेवाले नीरोकी सुलतानी वृत्तिमें और अिस प्रकारकी कला-भक्तिमे तत्त्वत क्या फर्क है?

अिस प्रश्नके अुत्तरमे जो कुछ कहा जाता है अुसका जिक्र करनेके पहले थोडेसे विषयातरकी आवश्यकता है। यूरोपमे जब महा-युद्ध छिड गया और लाखो नौजवान तोपो तथा बदूकोके शिकार हुअे, तब साहित्य-शिरोमणि रोमे रोलाकी भूतदया द्रवीभूत हुअी और अन्य लोगोके समान, खुद अुन्होने भी अिन घायल लोगोकी सेवाका कुछ प्रबध किया। किन्तु जब अुभय पक्षके शत्रुओने अेक-दूसरेकी कलापूर्ण अिमारतो पर बम-वर्षा शुरू की तब अुनकी कलात्मा पुण्यप्रकोपसे सुलग अुठी और अुन्होने बुलद आवाजसे सारे युरोपको चेतावनी दी "अै कमबख्तो, तुम्हे अेक-दूसरेको मार डालना हो तो मार डालो, अिस ससारसे तुम्हे बिलकुल नष्ट हो जाना हो तो नष्ट हो जाओ। किन्तु ये कलाकृतिया तो आत्माकी अभिव्यक्ति करनेवाली अमर कृतिया है। अुन्हींके द्वारा समस्त मानव-जातिकी आत्मा अपने आपको व्यक्त करती है—और कुछ नही तो कम-से-कम अिनका तो नाश न करो!!"

रोमें रोलाकी आर्षवाणी युरोपकी आत्माने सुनी और युध्यमान पक्षोंने कलाकृतियोंका संहार बंद कर दिया। अब सवाल यह है कि क्या कलाकृतियां सचमुच मानवकी आत्माकी अभिव्यक्तिकी द्योतक या प्रेरक हैं? या अुच्च अभिरुचिके आवरणके पीछे रही हुअी विलासिताकी ही साधन-सामग्री हैं?

कलाको जिसने सचमुच पहचाना है वह फौरन बता देगा कि कला और विलासिताके बीच जमीन आसमानका फर्क है और सच्ची कलाकृतिके द्वारा जो निरतिशय आनंद होता है वह सोयी हुअी आत्माको सचमुच जाग्रत करता ही है। करोड़ों वॉल्टकी विद्युतशक्ति पैदा करके लाखों लोगोंकी आजीविकाका प्रबंध करना कोअी साधारण बात नहीं है। किन्तु असंख्य लोगोंको कलाके द्वारा जो आनंद या संस्कारिता प्राप्त होती है वह तो अुनकी आत्माको पोषण देनेवाली चीज है।

और जोग कोअी मानवकृत कलाकृति नहीं है। अुलटे, वह तो कलाकारोंको भव्यता और सम्यताकी अेक ही साथ शिक्षा और दीक्षा देनेवाली प्रकृति-माताकी अलौकिक विभूति है। अुसे नष्ट करना नास्तिक विद्रोहके समान है। अुसे नष्ट करनेके पहले हमें सहस्र बार सोचना होगा। जोगका प्रपात वर्तमान युगकी ही संपत्ति नहीं है। हमारे अनेक ऋषि-पूर्वजोंने अुसके पास बैठकर ओश्वरका ध्यान किया होगा, और भविष्यमें हमारे वंशजोंके वंशज अुसका दर्शन करके अपने जीवनकी अज्ञात वृत्तियों और शक्तियोंका साक्षात्कार करेंगे।

अुपयुक्ततावादका सहारा लेकर 'अल्पस्य हेतो बहु हातुम् अिच्छन्' जैसे जड़ हम न बनें। अिस प्रपातको सुरक्षित रखकर अुससे कोअी लाभ अुठाया जा सकता हो तो भले अुठायें। मानव-बुद्धिके लिअे यह बात असंभव न होनी चाहिये। किन्तु अिस तांडवयोगके दर्शनसे मनुष्य-जातिको वंचित करनेका बर्मत किसीको हक नहीं है। मंदिरमें हम मूर्तिकी स्थापना करते हैं। अुसी तरह प्रकृतिने भी विराट् स्वरूपकी भव्य प्रतिमाओंकी यहां, हमारे सामने, स्थापना की है। यहां केवल दर्शन, ध्यान और अुपासनाके लिअे आना चाहिये और

हृदयमे यदि कुछ सामर्थ्य हो तो अिनके साथ तदाकार हो जाना चाहिये । यही हमारा अधिकार है।

मअी, १९३८

१४

जोगका सूखा प्रपात

याद नही किस कविने यह विचार प्रकट किया है; मगर अुसका वह विचार मै अपनी भाषामे यहा रख देता हू।

"यह सही है कि पहाडोके जैसी अूची अूची लहरे अुछालनेवाला समुद्र भयानक मालूम होता है। मगर अुसका सारा पानी सूखकर यदि पात्र खाली हो जाय तो हजारो मील तक फैले हुअे अुसके गहरे गड्ढे कितने भयावने मालूम होगे, अिसकी कल्पना भी करना कठिन है। यह सही है कि किसी दुर्जनके पास सपत्तिके भडार हो तो वह अुनका दुरुपयोग करके लोगोको सतायेगा। मगर अुसकी यह सपत्ति नष्ट हो-कर वह यदि भूखा कगाल वन जाय, तो वह किस राक्षसी दुष्टतासे वाज आयेगा? अच्छा ही है कि समुद्र पानीसे भरपूर है, और दुर्जनोके पास अुनकी दुष्टताकी आग बुझानेके लिअे पर्याप्त सपत्ति रहती है।"

जोगके प्रपातमे से राजा और रुद्रके सूखे हुअे प्रपातोको देखकर कविकी अूपर वताअी हुअी अुक्ति याद आनेका यद्यपि कोअी कारण नही था, फिर भी यह अुक्ति याद आअी जरूर।

सन् १९२७ मे जब पहले-पहल मैने जोगका प्रपात देखा था, तब अुसका वैभव सोलहो कलासे प्रकट हुआ था । पानीका मुख्य प्रपात अपनी प्रचड जलराशिके साथ ८४० फुट नीचे कूदकर नीचेकी घाटीमें प्रपातके प्रवाहके ही द्वारा तैयार की हुअी १५० फुट गहरे तालावकी गद्दी पर गिरता था । अिस मुख्य प्रवाहकी प्रतिष्ठा बढानेके लिअे अुसके

दोनो ओर मोतियोकी मालाओके समान पानीकी अनेक धारायें अनेक ढगसे गिरती थी। अुसके दक्षिणकी ओर टेढी सीढियो परसे कूदता कूदता रुद्र अपना पानी, आधेसे अधिक पतनके वाद, राजाके पानीमें फेंक देता था। राजाकी गर्जना प्राय नीचे पहुचनेके वाद ही पैदा होती है। रुद्रका प्रपात रावणकी तरह अपने जन्मके साथ ही चिल्लाने लगता है।

दोनो प्रपात अद्भुत तो है ही। किन्तु अुस समय मुझे जो दृश्य अलौकिक लगा था वह था वीरभद्रकी अुछलती जटाओका। यह दृश्य मै फिर कभी नही देख पाया। किसी तसवीरमे भी वीरभद्रकी अुन जटाओका चित्र नही आया है।

आखिरी प्रपात है पार्वतीका। अुसे देखते ही मनमें स्त्रीदाक्षिण्य पैदा होता है।

दस सालके वाद जब मैने फिरसे जोगका दर्शन किया, तव राजाका स्रोत काफी क्षीण हो चुका था। वीरभद्रकी जटाओका मुडन हो गया था। रुद्रकी चिल्लाहट यद्यपि कम नही हुअी थी, फिर भी अुसका वह वडा ताल जोगके क्षीण प्रपातके साथ मिलता नही था। और पार्वती तो विलकुल कृषागी तपस्विनी जैसी वन गयी थी।

किन्तु अिन सब सकोचोको भुला दे अैसी खूवी तो थी प्रपातकी ठडी भापमें से अुत्पन्न होनेवाले अिन्द्रधनुषोंके भ्रूविलासमें। यह शोभा जितनी ओरसे देखने जाते अुतनी ओरसे अिन्द्रधनुष अपने मुह घुमाकर नया नया सौंदर्य प्रकट करते थे।

फिर ठीक दस सालके वाद जोगका वही प्रपात देखनेके लिअे जव हम अवकी वार गये तव चार प्रपातोमें से तीन तो विलकुल सूख गये थे। रुद्रके अभावमे सर्वत्र स्मशान-शाति फैली हुअी थी। राजाके सूख जानेमे अुनके पीछेकी अेकके नीचे अेक दो वडी दरारे औरगजेव द्वारा निकाली हुअी सभाजीकी आखो जैसी भयावनी मालूम होती थी। पार्वती तो मानो दक्षके यज्ञमे जाकर भस्म हो गअी थी और वीरभद्र अैसा मालूम होता था मानो दक्षका नाश करनेके वाद कुछ शात होकर

अपने स्वामीके ससुरकी मृत्यु पर नीरव आसू ढाल रहा हो। अितनी खिन्नता तो शायद महाभारतके युद्धके बाद कुरुक्षेत्र पर भी नही छाअी होगी !

पहली बार हम गये थे शिमोगा-सागरके रास्तेसे — गुजरातमे आयी हुअी बाढ़के सकटके दिनोमे। दूसरी बार गये अिरादतन समुद्रके छोरसे अुलटे क्रमसे — शरावतीके पानीमे अूपरकी ओर यात्रा करके। हमारे पूर्वजोने कहा है 'नदीमुखेनैव समुद्रमाविशेत्।' अिस नसीहतसे ठीक अुल्टे हम शरावती-सागर-सगमसे नावमे बैठकर प्रतीप क्रमसे प्रपातकी सीढियो तक पहुचे और वहासे पहाडकी पगडडीसे अूपर चढ़कर प्रपातके सिर पर जा पहुचे थे। अबकी बार हमने तीसरा रास्ता लेकर यात्रा की। शिरसीसे सिद्धापुर होकर हम प्रपातकी बबअीवाली बाजू पर गये। वहा राजाके सिर पर विराजनेवाली अेक बडी शिला पर लेटकर हमने नीचेका रोमहर्षण दृश्य देखा। आलेके जैसी भयावनी दरारके सिर पर जाकर अदर देखनेसे सारा बदन काप अुठता है। मनमे यह सदेह पैदा हुअे बिना नही रहता कि यह शिला अपने ही भारसे कही छूट तो नही जायगी?

अिस शिलाके बगलमें अुतनी ही बडी और अुतनी ही भयावनी जगह पर दूसरी शिला है। अुस पर प्राचीन कालमें किसी राजाका लग्नमडप खडा किया गया होगा। आज अुस मडपके चार स्तभ जिस पर खडे किये गये थे वह चार सुराखोवाला अेक बडा चबूतरा अुस शिला पर दिखाअी देता है। भयावने प्रपातकी दरारके किनारे मडप खडा करके विवाह करनेवाले राजाकी काव्यमय वृत्तिकी बलिहारी है! अैसे शौकीन राजाके साथ जिसने शादी की अुस राजकन्याको अिस मडपमें बैठते समय कैसा अनुभव हुआ होगा! किसीने बताया, 'भीषण रसके रसिया अुस राजाके नाम पर ही अिस प्रपातका नाम राजा रखा गया है।' मैंने मनमे सोचा, 'तब तो अुससे शादी करनेवाली राजकन्याका नाम हम नही जानते अिस बातका फायदा अुठाकर अुसीको हम पार्वती क्यो न कहे? पर्वतकी दरारके किनारे अुसने शादी की, क्या अितना कारण अुसे पार्वती कहनेके लिअे बस नही है?'

अैसा नही है कि पहाडोमें आलेकी जैसी गहरी दरारे मैंने न देखी हो। मस्जिदोमे भी दीवारोमे गहराअी साधकर अुनके किनारे मेहराव बनाते हैं। किन्तु राजाके नीचेका आला तो कालपुरुषके मुहसे भी वडा और गहरा था। अुसके भीतर जहा जगह मिले वहा पक्षी अपने घोसले बनाते हैं और चुनकर लाये हुअे अनाजके दानोका सग्रह करते हैं।

वम्बअीकी ओरसे यानी अुत्तरकी ओरसे जी भरकर देखनेके वाद हम मोटरमे वैठकर पूर्वकी ओर गये। वहा दो नावोको वाधकर बनाये हुअे वेडे पर — जिसे यहा 'जगल' कहते हैं — हमारी मोटरको चढाकर हम शरावती नदीको पार करके दक्षिणके किनारे आ पहुचे। वहा मैसूर सरकारकी अतिथिशालाके पाससे फिर अेक वार सारी दरारका दृश्य देखा। वीस साल पहले यहीसे राजा, वीरभद्र और पार्वतीका देवदुर्लभ दृश्य देखा था। अैसा नही था कि अवकी वारके सूखे दृश्यमें काव्य न हो। अेकके नीचे अेक, दो वडे आले ८४० फुटके पतनको नाप रहे हैं। अैसा दृश्य विधाताकी अिस विविध सृष्टिमें हर कही देखनेको थोडे ही मिलनेवाला है।

मेरे मनमे छाया हुआ विषाद मैंने पेडो पर नही देखा। दोनो आलोमे गोल गोल चक्कर काटनेवाले पक्षी भी विपण्ण नही दिखाअी देते थे। आकाशमे तैरते हुअे और प्रपातकी दरारमे ताकनेवाले वादल भी गभीर नही मालूम होते थे। फिर रिक्तताका यह दृश्य देखकर मैं ही अितना वेचैन क्यो होता हू? क्या वीस साल पहले यहा देखी हुअी जल-समृद्धिकी याद आनेसे? या दस साल पहले अुसमे देखे हुअे अिन्द्र-धनुषोको याद करके? मगर वह जल-समृद्धि और वर्णसकरका वह चमत्कार हमेशाके लिअे थोडे ही लुप्त हो गये हैं? हजारो सालसे हर ग्रीष्मकालमें अैसी ही रिक्तता देखनेको मिलती होगी और हर वर्षाकालमे भारगी सारी घाटीको जलमग्न कर देती होगी। यह क्रम तो चलता ही रहेगा। तव 'तत्र का परिदेवना'?

जोगके प्रपातके अिस तीसरे दर्शनके वाद हमने यहाके अितिहासका नया अध्याय खोला।

बीस साल पहले मैंने सुना था कि 'मैसूर सरकार अिस प्रपातके पानीसे बिजली पैदा करना चाहती हैं। बम्बअी सरकार और मैसूर सरकारके बीच अिस सिलसिलेमे पत्रव्यवहार चल रहा है। अब तक ये दोनों सरकारें अेकमत नही हो पाअी, अिसलिअे बिजलीकी वह योजना अमलमे नही लाअी गअी।'

अुस समय मैंने मनमें चाहा था कि अीश्वर करे ये दोनो सरकारें अेकमत न होने पायें। मेरे मनमें डर था कि बिजली पैदा करके यहा कल-कारखाने चलेंगे और देशकी समृद्धि बढानेके बहाने देशकी गरीब जनता चूसी जायगी। और अिससे भी अधिक अकुलाहट तो यह थी कि यत्र आने पर प्रपात टूट जायगा और प्रकृतिका यह भव्य दर्शन हमेशाके लिअे मिट जायगा। किन्तु सौभाग्यसे मेरा यह डर सच्चा नही निकला।

अिजीनियर लोगोने प्रपातसे काफी अूपर अेक बाध बाधकर वहा पानीके जत्थेको रोका है। अभी यह काम पूरा नही हुआ है। बाध बाधकर जो पानी रोका गया है अुसकी चार नहरोंको अेक दिशामें ले जाकर मैसूरकी ओर, प्रपातसे काफी दूर, टेकरी परसे नीचे छोड दिया गया है—प्रपातके रूपमे नही, बल्कि टेढे अुतरे हुअे महाकाय चार नलो द्वारा। पानी नलके द्वारा जहा पहुचता है वहा अिस पानीकी रफ्तारसे चलनेवाले यत्र रखकर अुनसे बिजली पैदा की जाती है। अब यहा अितनी बिजली पैदा होगी कि मैसूर राज्यकी भूख मिटाकर थोडी हैदराबाद राज्यको भी दी जायगी। और बबअी सरकारकी होन्नावर ताल्लुकेकी सीमा परसे शरावती नदी गुजरती है अिसलिअे कुछ हजार किलोवाट बिजली बम्बअी सरकारको भी दी जायगी। न्यायत अिस बिजली पर सबसे पहला अधिकार है होन्नावर तालुकेका और कारवार जिलेका। किन्तु यह जिला औद्योगिक दृष्टिसे अभी खिला हुआ नही है। अिस कारणसे यह तय हुआ है कि बिजली धारवाड जिलेको दी जाय। अिससे कारवार जिलेके लोग नाराज हुअे हैं। कारवार जिलेकी खनिज-सपत्ति और अुद्भिज्ज-सपत्ति धारवाड जिलेसे कअी गुनी अधिक है। अुसके पास समुद्र-किनारा होनेसे

अुसका व्यापार भी काफी वढ सकता है। कारवार जिलेमें काली, गगावली, अघनाशिनी और शरावती — ये चार नदिया नौकानयनके लिअे अनुकूल होनेसे अिस जिलेका अुद्योगीकरण भी वहुत आसान है। किन्तु आज यह कहकर कि अिस जिलेमे वडे अुद्योग नही है, अुसको विजली देनेसे अिनकार किया जाता है! और अुसके पास विजली न होनेसे वहा अुद्योग नही वढाये जा सकते, यह भी अुसे सुना दिया जाता है!! तामिल भाषाकी अेक कहावत है कि 'शादी नही होती अिसलिअे लडकीका पागलपन नही जाता, और पागलपन नही जाता अिसलिअे अुसकी शादी नही होती'। अैसी है यह स्थिति।

मै अुम्मीद रखता हू कि स्वराज्य सरकार द्वारा यह अन्याय दूर होगा और कारवार जिलेको शरावतीकी विजली मिलेगी। अलावा अिसके, कारवारके पास अुचळ्ळी, मागोड जैसे दूसरे भी छोटे वडे तीन चार प्रपात है। शरावतीकी विजली मिलने पर अुसकी मददसे दूसरे प्रपातो पर भी जीन कसा जायेगा और कारवार जिलेमें वारिशकी तरह विजलीकी भी समृद्धि होगी। जहा चार नदिया पहाडकी अूचाअीसे नीचे गिरती है वहा आज नही तो कल मनुष्य तिजारती विजली पैदा करने ही वाला है।

मुझे सतोष हुआ केवल अिसीलिअे कि शरावतीके पानीसे विजली तैयार करने पर भी जोगके प्रपातका प्राकृतिक स्वरूप तनिक भी खडित होनेवाला नही है। वावके कारण चाहे जितना पानी रोकने पर भी नदीके सामान्य प्रवाहमें पानी कम नही होगा। वारिशका पानी भर देनेके वाद हमेशाका प्रवाह हमेशाकी ही तरह चलेगा। अिसमे प्रवाहकी दिशा, गति या पानीका जत्था — किसी वातमे भी कमी नही आयेगी। अुलटा, लाभ यह होगा कि गरमीके दिनोमें हजारो सालसे जो प्रपात सूख जाता था वह, किसी दिन चाहने पर वाधके खजानेमें से पानी छोडकर, चाहे जितने प्रचड और तूफानी रूपमें प्रत्यक्ष किया जा सकेगा, जिसे देखकर आकाशके गरमीके अुष्मपा देवता भी चकित हो जायेगे।

वलिहारी है मानवी विज्ञानकी!

अप्रैल, १९४७

१५

गुर्जर-माता साबरमती

अंग्रेज सरकारके खिलाफ असहयोग पुकार कर महात्माजी स्वराज्यकी तैयारी कर रहे हैं। अहमदाबादमे गुजरात विद्यापीठकी स्थापना हुअी है। स्वातंत्र्यवादी नौजवान महाविद्यालयमे शरीक हुअे हैं। वे अपनी आकांक्षाये और कल्पना-विलास व्यक्त करनेके लिअे अेक मासिक पत्रिका चाहते हैं। मेरे पास आकर वे पूछते हैं, "मासिक पत्रिकाका नाम क्या रखेंगे?" वह जमाना अैसा था जब चाचा (काका) को ही बुआका काम करना पडता था।

मैंने कहा, "मासिक पत्रिकाअे तो काफी प्रकाशित हो रही हैं। तुम दो-दो महीनोंमे, ऋतु ऋतुमे, नये रूपसे प्रकट होनेवाली पत्रिका शुरू करो और अुसका नाम रखो 'साबरमती'।" द्विमासिककी कल्पना तो पसंद आअी। किन्तु 'साबरमती' नाम किसीको न भाया। 'साबरमती' तो है हमारी हमेशाकी परिचित नदी! हम अुसमें रोज स्नान करते हैं। अुसमे क्या नावीन्य है कि हम यह नाम अपने नवचेतनवाले साहित्य-प्रवाहको दें? मैंने कहा, "साबरमतीका प्रवाह सनातन है — अिसीलिअे नित्य-नूतन है।" मिसाल देनेकी दृष्टिसे मैंने दलील पेश की, "सिंध-हैदराबादके हमारे मित्रोंने अपनी कॉलेजकी पत्रिकाका 'फुलेली' नाम रखा है। 'फुलेली' सिंधुकी अेक नहर है। हमारी यह अनाविला (कीचड-रहित) साबरमती गांधीयुगकी प्रतीक बन सकती है। मेरी बात मान लो और साबरमती नाम अपना लो।"

युवकोंने मेरी आज्ञाका पालन करनेके लिअे साबरमती नामको अपनाया, हालांकि वे चाहते थे अिससे कोअी अधिक जोशीला नाम।

मैंने नरहरिभाअीसे कहा — "साबरमती गुजरातकी विशेष लोक-माता है। आबूके परिसरसे जिन नदियोंका अुद्गम होता है अुनमे यह ज्येष्ठ और श्रेष्ठ है। अुसका अेक गद्यस्तोत्र लिख दीजिये।" अुन्होंने अुत्साहपूर्वक अेक छोटासा, सुन्दर लेख लिख दिया। विद्यार्थियोंकी भावनाये जाग्रत हुअी। अिस लोकमाताके प्रति अुनमे भक्ति पैदा हुअी

देखकर मैंने मौकेसे लाभ अुठाया और विद्यार्थियोंसे कहा, "मेरा सुझाया हुआ नाम तुम लोग अनिच्छासे स्वीकार करो, यह मुझे पसन्द नही है। चाहो तो मैं दूसरा नाम सुझाता हू।" सबने अेक ही आवाजसे जवाब दिया, "नही, नही, हम दूसरा नाम नही चाहते। 'साबरमती' ही सबसे सुन्दर है।"

मैंने कहा, "अिसमें तो कोअी सदेह ही नही है।"

*   *   *

मेरे नदी-पूजक हृदयने भारतकी अनेक नदियोंको समय समय पर अजलिया अर्पित की है। सिंधुसे लेकर ब्रह्मपुत्रा और अिरावती तक और दक्षिणमें पिनाकिनी तथा कावेरी तक, अनेक नदियोंको मैंने सस्मरणाजलि दी है। किन्तु यह देखकर कि अिनमे गुजरातकी ही मुख्य नदिया रह गअी है, मेरे कअी पाठकोंने अिसका कारण पूछा और गुजरातकी लोकमाताओंके बारेमे लिखनेकी आग्रहपूर्वक सूचना की।

मैंने कहा, "नदीके अुपस्थानकी प्रेरणा मै दे चुका हू। अब गुजरातकी नदियोंके बारेमे गुजरातीमे कोअी गुर्जरी-पुत्र लिखे, अिसीमे औचित्य है।"

अिसकी भी काफी राह देखी गयी और बार बार मुझे सूचना की गयी। किन्तु अन्तमें मेरी श्रद्धा सच्ची साबित हुअी और गुजरात विद्यापीठके अेक विद्यार्थी, वनस्पति-अुपासक श्री शिवशकरने गुजरातकी लोकमाताओंके बारेमे लिखना शुरू किया। यह काम किसी समय अवश्य पूरा होगा। मुझे सतोष है कि साबरमतीके प्रवाह-कुटुबके बारेमे अुन्होंने पर्याप्त लिखा है। अिसलिअे मुझे विस्तारपूर्वक लिखनेकी कोअी आव-श्यकता नही है। किन्तु जिस नदीके किनारे मैंने महात्माजीके और सब साथियोंके सपर्कमे २५–३० साल बिताये, अुस नदीको श्रद्धाजलि अर्पण करनेका कर्तव्य तो रह ही जाता था। अुसे आह्लादपूर्वक पूरा करनेके लिअे थोडासा लिखता हू।

हमारे कवि हरेक नामको सस्कृत रूप देनेका प्रयत्न तो करेंगे ही। साबरमतीका सस्कृत शब्द बनाते समय अुन्होंने 'साभ्रमति' शब्द खोज

निकाला और फिर अुसका दो तरहसे पदच्छेद किया। अेक दलने बताया 'सा भ्रमति' — वह भ्रमण करती है, टेढे-मेढे मोड लेती है। दूसरेने कहा कि अिस नदीके प्रवाहके अूपरके आकाशमें अभ्र — बादल दिखाअी देते हैं, अिसलिअे वह अभ्रमति या 'साभ्र-मति' है। मेरा खयाल है कि यह सारा प्रयास मिथ्या है।

जिस नदीके किनारे गायोंके झुंड घूमते हैं, चरते हैं और पुष्ट होते हैं, वह जिस प्रकार या तो गो-दा (गोदावरी) या गो-मती होती है; जिस नदीके किनारे और प्रवाहमें बहुत पत्थर होते हैं, वह जिस प्रकार दृषद्-वती होती है, अुसी प्रकार अनेक सरोवरोंको जोडनेवाली या सारस पक्षियोंसे शोभनेवाली नदी सरस्-वती या सारस-वती कही जाती है। अिसी न्यायसे भारतकी नदियोंको बाघ-मती, हाथ-मती, अैरावती आदि अनेक नाम हमारे पूर्वजोंने दिये हैं। अिनमें हाथमती तो साबरमतीसे ही मिलनेवाली नदी है। हिरन या साबर जिसके किनारे बसते हैं, लडते हैं और आजादीसे विहार करते हैं, वह है साबर-मती। अुसका संबंध 'श्वभ्र' के साथ जोड देनेकी कोअी आवश्यकता नहीं है।

गुजरातकी नदियोंमें तीन-चार बडी नदियां आंतरप्रांतीय हैं। नर्मदा, तापी, मही — तीनों दूर दूरसे निकलकर पूर्वकी ओरसे आकर गुजरातमें घुसती हैं और समुद्रमें विलीन हो जाती हैं। साबरमती अिनसे अलग है। आरवल्ली पहाडमें जन्म पाकर तथा अनेक नदियोंको साथमें लेकर दक्षिणकी ओर बहती हुअी अंतमें वह सागरसे जा मिलती है। साबरमतीके जैसी कुटुंब-वत्सल नदियां हमारे देशमें भी अधिक नहीं हैं। साबरमतीको विशेष रूपसे गुर्जरी माता कह सकते हैं। अुसके किनारे गुजरातके आदिम निवासी सनातन कालसे बसते आये हैं। अुसके किनारे ब्राह्मणोंने तप किया है। राजपूतोंने कभी धर्मके लिअे, तो बहुत बार अपनी बेवकूफीसे भरी हुअी जिदके लिअे, वीर पुरुषार्थ कर दिखाया है। वैश्योंने अिसके किनारे गांव और शहर बसा-कर गुजरातकी समृद्धि बढायी है और अब आधुनिक युगका अनुकरण करके शूद्रोंने भी साबरमतीके किनारे मिलें चलाअी हैं।

सच पूछा जाय तो अिन नदियोंके साथ घनिष्ठ संपर्क तो पशु-पक्षियोंकी तरह आदिम निवासियोंका ही होता है। अिसलिअे साबरमतीके कुटुंब-विस्तारका काव्य यदि अिकट्ठा करना हो तो पुराणोंकी ओर मुडनेके बदले आदिम निवासियोंकी लोक-कथाओं और लोक-गीतोंकी ओर हमारा ध्यान जाना चाहिये। डर यह है कि आजके संशोधक नवयुवकोंमें अिस कामके लिअे अुत्साह पैदा हो और आदिम निवासी गिरिजनोंके साथ मिलजुल जानेके लिअे वे समय निकाल सकें, अुसके पहले ही आदिम निवासियोंकी नदी-कथायें कहीं लुप्त न हो जाय।

केवल नदी-भक्तिसे प्रेरित होकर आदिम निवासियोंका 'वौठा' का मेला जब तक होता है, तब तक बिलकुल निराश होनेका कोअी कारण नहीं है। सात नदियोंका पानी क्रमशः अेक-दूसरेमें मिलकर जिस जगह अेकत्र होता है, अुसके काव्यका आनन्द भोगने या नहानेके लिअे जहां आदिम निवासी तथा दूसरे लोग अिकट्ठे होते हैं, वहां 'वौठा'में साबरमतीके बारेमें आदि-कथायें हमें मिलनी ही चाहिये।

साबरमतीके पुराने नामोंकी खोज करते हुअे कश्यपगंगा या अैसा ही दूसरा अेकाध नाम अवश्य मिल जायगा। नदीको किसी न किसी प्रकार गंगाका अवतार जब तक न बनाये तब तक आर्योंको संतोष नहीं होता। किन्तु मुझे तो साबरमतीका पुराना नाम 'चंदना' सबसे अधिक आकर्षित करता है। क्योंकि — जैसा मैंने सुना है — कहीं कहीं पीली मिट्टीके बीचसे बहनेके कारण वह गोरोचनका रंग धारण करती है। किन्तु साबरमतीके जिस किनारे पर मैंने तीस साल बिताये, वहां अुसका पानी सज्जनों और महात्माओंके मनकी तरह बिलकुल निर्मल है।

जहां नदीका पानी छिछला होनेसे अुस पार तक आसानीसे जाया जा सकता है, अैसे स्थानको संस्कृतमें तीर्थ कहते हैं। अनेक स्थानों पर प्रयत्न कर देखनेके बाद यात्री लोग तय करते हैं कि अमुक अमुक जगह अैसे घाट हैं। अतः थोडा बहुत चलकर वे अैसे घाटके पास आते हैं, वहीं अिकट्ठे होते हैं, बैठकर विश्रांति लेते हैं, बातचीत करते हैं और नदीका पानी यकायक बढ गया हो तो जब तक वह कम न हो जाय तब तक कुछ घंटों या कुछ दिनों तक वहां ठहरते भी हैं। अिस प्रकार जहां स्वाभाविक

रूपमे लोग अिकट्ठे होते है, वहा धर्मसेवा और लोकसेवाके लिअे परम कारुणिक सत आकर वस जाते है। अिसीलिअे तीर्थ शब्दको अुसका नया अर्थ प्राप्त हुआ। मूलमे तीर्थ शब्दका अर्थ होता था केवल अैसा घाट जहासे नदीको आसानीसे पार किया जा सके। अिससे अधिक अर्थ कुछ नही। किन्तु जहा साधु-सन्त लोगोको भवनदी पार करनेकी नसीहत देते है और अुसकी कला भी सिखाते है, अुस तीर्थ स्थानको विशेष पवित्रता अपने आप प्राप्त होती है।

अहमदावादके पास सावरमतीमे रेलवे-पुलसे लेकर सरदार-पुल तक और अुससे भी अधिक दक्षिणकी ओर कअी तीर्थ है। अिनमे भी जहा चद्रभागा नदी सावरमतीसे मिलती है वहा दधीचिने तप किया था, अिसलिअे वह स्थान अधिक पवित्र माना जाता है। और आसपासके लोगोने अिहलोकको छोडकर परलोक जानेवाले यात्रियोको अग्निदाह देकर विदा करनेकी जगह भी वही पसद की है। अिससे वह स्मशान घाट भी है। स्मशानके अधिपति दूधेश्वर महादेव वहा विराजमान है और अिस महायात्राकी निगरानी करते है।

* * *

मुझे वह दिन याद है जब पूज्य गाधीजी अपने स्नेही रगूनवाले डॉ० प्राणजीवन महेता तथा रणोलीके मेरे स्नेही नाथाभाअी पटेलको साथमे लेकर आश्रमकी भूमि पसन्द करनेके लिअे निकले थे। मै भी साथ था। अुस दिनसे अिस भूमिके साथ मेरा सम्बन्ध बध गया। अिस स्थान पर पहली कुदाली मैने ही चलाअी। पहला खेमा भी मैने ही खडा किया और अुसके वाद अनेक तबू भी खडे किये। झोपडिया वनाअी, मकान बधवाये। खादीकी प्रवृत्ति, खेती और गोशालाकी प्रवृत्ति, राष्ट्रीय शाला, राष्ट्रीय त्यौहार, रास-नृत्य, लोक-सगीत तथा शास्त्रीय सगीत, 'नव-जीवन' तथा 'यग अिंडिया', साहित्य-निर्माण, सत्याग्रह, मिल-मालिकोंके साथका मजदूरोका झगडा और अतमे ब्रिटिश साम्राज्यको जडमूलसे अुखाड फेकनेके लिअे शुरू किया गया दाडी-कूच — अिन सब प्रवृत्तियोका अिस आश्रममे ही अुद्भव हुआ और यही वे विकसित भी हुअी। रौलेट

अेक्टके खिलाफ आन्दोलन, अुसमें से अुत्पन्न हुअे पंजाबके दंगे, जलियांवाला बाग, खेडा-सत्याग्रह, बारडोलीकी लडाअी, गुजरात विद्यापीठकी स्थापना, कांग्रेसके अधिवेशन, देशके हरेक राजकीय, सांस्कृतिक, सामाजिक और आर्थिक आन्दोलनका केंद्र साबरमतीका यह किनारा था। साबरमतीकी रेतमें जब सभायें होती थीं तब लाख लाख लोगोंकी भीड जम जाती थी। अिस साबरमतीकी जीवनलीलाने केवल गुजरातका ही नहीं बल्कि सारे हिन्दुस्तानका जीवन बदल दिया। अुन समयका वायुमंडल आज सारी दुनियाकी राजनीतिमें अेक नया सिलसिला शुरू कर रहा है और नये युगकी नींव डाल रहा है।

अिस साबरमतीके नीरमें हमने क्या क्या आनन्द नहीं मनाया है? आश्रमके कअी लडके-लडकियोंको, और शिक्षकोंको भी, मैंने वहां तैरने-की कला सिखाअी है। अुनकी रेतमें गीता और अुपनिषदोंका चिंतन-मनन किया है। गीता-पारायणके अनेक सप्ताह चलाये हैं। अिस आश्रम-भूमि पर खडे करीब करीब सभी पेड हमारे हाथों ही बोये गये हैं।

वह रचनाकाल था ही अद्‌भुत। हरेक हृदयमें अेक नअी शक्तिशाली आत्मा आकर बसी थी। वह सबसे तरह तरहके काम ले सकी। केवल आहारके प्रयोग भी हमने वहां कम नहीं किये। कौटुंबिक जीवनके अनेक प्रकार आजमाये। शिक्षाका तंत्र अनेक बार बदला और अुसमें भी कअी दफा क्रांति की। और जीवनके हरेक पहलूके लिअे हम नयी नयी स्मृतियां तैयार करते गये। अिस सारे पुरुषार्थकी साक्षी साबरमती नदी है।

जब तक भारतका अितिहास दुनियाके लिअे बोध-दायक रहेगा और भारतके अितिहासमें महात्मा गांधीका स्थान कायम रहेगा, तब तक साबरमतीका नाम दुनियाकी जबान पर अवश्य रहेगा।

मअी, १९५५

१६

अुभयान्वयी नर्मदा

हमारा देश हिन्दुस्तान महादेवजीकी मूर्ति है। हिन्दुस्तानके नक्शेको यदि अुल्टा पकडे, तो अुसका आकार शिवलिंगके जैसा मालूम होगा। अुत्तरका हिमालय अुसका पाया है, और दक्षिणकी ओरका कन्याकुमारीका हिस्सा अुसका शिखर है।

गुजरातके नक्शेको जरा-सा घुमाये और पूर्वके हिस्सेको नीचेकी ओर तथा सौराष्ट्रका छोर — ओखा मडल — अूपरकी ओर ले जाय तो यह भी शिवलिंगके जैसा ही मालूम होगा। हमारे यहा पहाडोंके जितने भी शिखर है, सब शिवलिंग ही है। कैलासके शिखरका आकार भी शिवलिंगके समान ही है।

अिन पहाडोके जगलोसे जब कोअी नदी निकलती है, तब कवि लोग यह कहे बिना नही रहते कि 'यह तो शिवजीकी जटाओंसे गगाजी निकली है!' चद लोग पहाडोंमें आनेवाले पानीके प्रवाहको अप्सरा कहते है। और चद लोग पर्वतकी अिन तमाम लडकियोंको पार्वती कहते है।

अैसी ही अप्सरा जैसी अेक नदीके बारेमे आज मुझे कुछ कहना है। महादेवके पहाडके समीप मेकल या मेखल पर्वतकी तलहटीमे अमरकटक नामक अेक तालाब है। वहासे नर्मदाका अुद्गम हुआ है। जो अच्छा घास अुगाकर गौओंकी सख्यामे वृद्धि करती है, अुस नदीको गो-दा कहते है। यश देनेवालीको यशो-दा और जो अपने प्रवाह तथा तटकी सुन्दरताके द्वारा 'नर्म' याने आनद देती है, वह है नर्म-दा। अिसके किनारे घूमते-घामते जिसको बहुत ही आनद मिला, अैसे किसी ऋषिने अिस नदीको यह नाम दिया होगा। अुसे मेखल-कन्या या मेखला भी कहते है।

जिस प्रकार हिमालयका पहाड तिब्बत और चीनको हिन्दुस्तानसे अलग करता है, अुसी प्रकार हमारी यह नर्मदा नदी अुत्तर भारत अथवा हिन्दुस्तान और दक्षिण भारत या दक्खनके बीच आठ सौ मीलकी अेक चमकती, नाचती, दौड़ती सजीव रेखा खीचती है। और कही

अिसको कोअी मिटा न दे, अिस खयालसे भगवानने अिस नदीके अुत्तरकी ओर विंध्य तथा दक्षिणकी ओर सातपुडाके लवे लवे पहाडोंको नियुक्त किया है। अैसे समर्थ भाअियोकी रक्षाके वीच नर्मदा दौडती कूदती अनेक प्रातोको पार करती हुअी भृगुकच्छ यानी भडौचके समीप समुद्रसे जा मिलती है।

अमरकटकके पास नर्मदाका अुद्गम समुद्रकी सतहसे करीब पाच हजार फुटकी अूचाअी पर होता है। अव आठ सौ मीलमे पाच हजार फुट अुतरना कोअी आसान काम नही है, अिसलिअे नर्मदा जगह जगह छोटी-वडी छलागें मारती है। अिसी परसे हमारे कवि-पूर्वजोने नर्मदाको दूसरा नाम दिया 'रेवा'। 'रेव्' धातुका अर्थ है कूदना।

जो नदी कदम कदम पर छलागे मारती है, वह नौका-नयनके लिअे यानी किश्तियोंके द्वारा दूर तककी यात्रा करनेके लिअे कामकी नही। समुद्रसे जो जहाज आता है, वह नर्मदामे मुश्किलसे तीस-पैतीस मील अदर जा-आ सकता है। वर्षा ऋतुके अतमे ज्यादासे ज्यादा पचास मील तक पहुचता है।

जिस नदीके अुत्तरकी और दक्षिणकी ओर दो पहाड खडे है, अुसका पानी भला नहर खोदकर दूर तक कैसे लाया जा सकता है? अत नर्मदा जिस प्रकार नाव खेनेके लिअे वहुत कामकी नही है, अुसी प्रकार खेतोकी सिंचाअीके लिअे भी विशेष कामकी नही है। फिर भी अिस नदीकी सेवा दूसरी दृष्टिसे कम नही है। अुसके पानीमे विचरनेवाले मगर और मछलियोंकी, अुसके तट पर चरनेवाले ढोरो और किसानोकी, और दूसरे तरह-तरहके पशुओंकी तथा अुसके आकाशमे कलरव करनेवाले पक्षियोकी वह माता है।

भारतवासियोने अपनी सारी भक्ति भले गगा पर अुडेल दी हो, पर हमारे लोगोने नर्मदाके किनारे कदम कदम पर जितने मदिर खडे किये है, अुतने अन्य किसी नदीके किनारे नही किये होगें।

पुराणकारोने गगा, यमुना, गोदावरी, कावेरी, गोमती, सरस्वती आदि नदियोंके स्नान-पानका और अुनके किनारे किये हुअे दानके माहात्म्यका वर्णन भले चाहे जितना किया हो, किन्तु अिन नदियोकी

प्रदक्षिणा करनेकी बात किसी भक्तने नही सोची। जब कि नर्मदाके भक्तोंने कवियोको ही सूझनेवाले नियम बनाकर सारी नर्मदाकी परिक्रमा या 'परिकम्मा' करनेका प्रकार चलाया है।

नर्मदाके अुद्गमसे प्रारभ करके दक्षिण-तट पर चलते हुअे सागर-सगम तक जाअिये, वहासे नावमे बैठकर अुत्तरके तट पर जाअिये और वहासे फिर पैदल चलते हुअे अमरकटक तक जाअिये — अेक परिक्रमा पूरी होगी। नियम बस अितना ही है कि 'परिकम्मा' के दरम्यान नदीके प्रवाहको कही भी लाघना नही चाहिये, न प्रवाहसे बहुत दूर ही जाना चाहिये। हमेशा नदीके दर्शन होने चाहिये। पानी केवल नर्मदाका ही पीना चाहिये। अपने पास धन-दौलत रखकर अैश-आराममें यात्रा नही करनी चाहिये। नर्मदाके किनारे जगलोमे बसनेवाले आदिम निवासियोके मनमें यात्रियोकी धन-दौलतके प्रति विशेष आकर्षण होता है। आपके पास यदि अधिक कपडे, बर्तन या पैसे होगे, तो वे आपको अिस बोझसे अवश्य मुक्त कर देंगे।

हमारे लोगोको अैसे अकिचन और भूखे भाअियोका पुलिसके द्वारा अिलाज करनेकी बात कभी सूझी ही नही। और आदिम निवासी भाअी भी मानते आये है कि यात्रियो पर अुनका यह हक है। जगलोमे लूटे गये यात्री जब जगलसे बाहर आते है, तब दानी लोग यात्रियोको नये कपडे और सीधा देते है।

श्रद्धालु लोग सब नियमोका पालन करके — खास तौर पर ब्रह्म-चर्यका आग्रह रखकर नर्मदाकी परिक्रमा धीरे धीरे तीन सालमे पूरी करते है। चौमासेमे वे दो तीन माह कही रहकर साधु-सतोके सत्सगसे जीवनका रहस्य समझनेका आग्रह रखते है।

अैसी परिक्रमाके दो प्रकार होते है। अुनमें जो कठिन प्रकार है, अुसमें सागरके पास भी नर्मदाको लाघा नही जा सकता। अुद्-गमसे मुख तक जानेके बाद फिर अुसी रास्तेसे अुद्गम तक लौटना तथा अुत्तरके तटसे सागर तक जाना और फिर अुसी रास्तेसे अुद्गम तक लौटना। यह परिक्रमा अिस प्रकार दूनी होती है। अिसका नाम है जलेरी।

मौज और आरामको छोडकर तपस्यापूर्वक अेक ही नदीका ध्यान करना, अुसके किनारेके मदिरोके दर्शन करना, आसपास रहनेवाले सत-महात्माओके वचनोको श्रवण-भक्तिसे सुनना, और प्रकृतिकी सुन्दरता तथा भव्यताका सेवन करते हुअे जीवनके तीन साल बिताना कोओ मामूली प्रवृत्ति नही है। अिसमे कठोरता है, तपस्या है, बहादुरी है, अतर्मुख होकर आत्म-चिंतन करनेकी और गरीबोंके साथ अेकरूप होनेकी भावना है, प्रकृतिमय बननेकी दीक्षा है, और प्रकृतिके द्वारा प्रकृतिमें विराजमान भगवानके दर्शन करनेकी साधना है।

और अिस नदीके किनारेकी समृद्धि मामूली नही है। असख्य युगोंसे अुच्च कोटिके सत-महत, वेदाती, सन्यासी और अीश्वरकी लीला देखकर गद्‌गद होनेवाले भक्त अपना अपना अितिहास अिस नदीके किनारे बोते आये है। अपने खानदानकी शान रखनेवाले और प्रजाकी रक्षाके लिअे जान कुरबान करनेवाले क्षत्रिय वीरोने अपने पराक्रम अिस नदीके किनारे आजमाये है। अनेक राजाओने अपनी राजधानीकी रक्षा करनेके हेतुसे नर्मदाके किनारे छोटे-बडे किले बनवाये है। और भगवानके अुपासकोने धार्मिक कलाकी समृद्धिका मानो सग्रहालय तैयार करनेके लिअे जगह जगह मदिर खडे किये है। हरेक मदिर अपनी कलाके द्वारा आपके मनको खीचकर अतमे अपने शिखरकी अुगली अूपर दिखाकर अनत आकाशमे प्रकट होनेवाले मेघश्यामका ध्यान करनेके लिअे प्रेरित करता है।

जिस प्रकार 'अजान' की आवाज सुनकर खुदापरस्तोंको नमाजका स्मरण होता है, अुसी प्रकार दूर दूरसे दिखाअी देनेवाली मन्दिरोकी शिखररूपी चमकती अुगलिया हमें स्तोत्र गानेके लिअे प्रेरित करती है।

और नर्मदाके किनारे शिवजी या विष्णुका, रामचद्र या कृष्णचद्रका, जगत्पति या जगदबाका स्तोत्र शुरू करनेसे पहले नर्मदाष्टकसे प्रारभ करना होता है — 'सबिंदुसिधु सुस्खलत् तरगभग-रजितम्'। अिस प्रकार जब पचचामरके लघु-गुरु अक्षर नर्मदाके प्रवाहका अनुकरण करते है, तब भक्त लोग मस्तीमे आकर कहते है, 'हे माता! तेरे पवित्र जलका दूरसे दर्शन करके ही अिस ससारकी समस्त बाधायें दूर

हो गअी—'गत तदैव मे भय त्वदम्वु वीक्षित यदा'। और अतमे भक्तिलीन होकर वे नमस्कार करते है—'त्वदीय पाद-पकज नमामि देवि! नर्मदे!'।

हमे यह भूलना नही चाहिये कि जिस प्रकार नर्मदा हमारी और हमारी प्राचीन सस्कृतिकी माता है, अुसी प्रकार वह हमारे भाअी आदिम निवासी लोगोकी भी माता है। अिन लोगोने नर्मदाके दोनो किनारो पर हजारो साल तक राज्य किया था, कअी किले भी वनवाये थे और अपनी अेक विशाल आरण्यक सस्कृति भी विकसित की थी।

मुझे हमेशा लगा है कि हिन्दुस्तानका अितिहास प्रातोंके अनुसार या राज्योंके अनुसार लिखनेके वजाय यदि नदियोंके अनुसार लिखा गया होता, तो अुसमे प्रजा-जीवन प्रकृतिके साथ ओतप्रोत हो गया होता और हरेक प्रदेशका पुरुषार्थी वैभव नदीके अुद्गमसे लेकर मुख तक फैला हुआ दिखाअी देता। जिस प्रकार हम सिन्धुके किनारेके घोडोको सैंधव कहते है, भीमाके किनारेका पोषण पाकर पुष्ट हुअे भीमथडीके टट्टुओकी तारीफ करते है, कृष्णाकी घाटीके गाय-बैलोको विशेष रूपसे चाहते है, अुसी प्रकार पुराने समयमे हरेक नदीके किनारे पर विकसित हुअी सस्कृति अलग अलग नामोंसे पहचानी जाती थी।

अिसमे भी नर्मदा नदी भारतीय सस्कृतिके दो मुख्य विभागोकी सीमारेखा मानी जाती थी। रेवाके अुत्तरकी ओरकी पचगौडोकी विचार-प्रधान सस्कृति और रेवाके दक्षिणकी ओरकी द्रविडोकी आचार-प्रधान सस्कृति मुख्य मानी जाती थी। विक्रम सवत्का काल-मान और शालिवाहन शकका काल-मान, दोनो नर्मदाके किनारे सुनाअी देते है और वदलते है।

मैंने कहा तो सही कि नर्मदा अुत्तर भारत तथा दक्षिण भारतके वीच अेक रेखा खीचनेका काम करती है, किन्तु अुसके साथ मुकावला करनेवाली दूसरी भी अेक नदी है। नर्मदाने मध्य हिन्दुस्तानमे पश्चिम किनारे तक सीमा-रेखा खीची है। गोदावरीने यो मानकर कि यह ठीक नही हुआ, पश्चिमके पहाड सह्याद्रिसे लेकर पूर्व-सागर तक अपनी अेक तिरछी रेखा खीची है। अत अुत्तरकी ओरके ब्राह्मण सकल्प वोलते

समय कहेंगे —"रेवाया अुत्तरे तीरे," और पैठणके अभिमानी हम दक्षिणके ब्राह्मण कहेंगे —"गोदावर्या दक्षिणे तीरे।" जिस नदीके किनारे शालिवाहन या शातवाहन राजाओंने मिट्टीमें से मानव बनाकर अुनकी फौजके द्वारा यवनोंको परास्त किया, अुस गोदावरीको संकल्पमें स्थान न मिले, यह भला कैसे हो सकता है?

* * *

नर्मदा नदीकी 'परिकम्मा' तो मैंने नहीं की है। अमरकटक तक जाकर अुसके अुद्‌गमके दर्शन करनेका मेरा संकल्प बहुत पुराना है। पिछले वर्ष विन्ध्यप्रदेशकी राजधानी रीवा तक हम गये भी थे। किन्तु अमरकटक नहीं जा सके। नर्मदाके दर्शन तो जगह जगह किये हैं। किन्तु अुसके विशेष काव्यका अनुभव किया जबलपुरके पास भेड़ाघाटमें।

भेड़ाघाटमें नावमें बैठकर संगमरमरकी नीली-पीली शिलाओंके बीचसे जब हम जलविहार करते हैं, तब यही मालूम होता है मानो योगविद्यामें प्रवेश करके मानव-चित्तके गूढ़ रहस्योंको हम खोल रहे हैं। अिसमें भी जब हम बंदरकूदके पास पहुंचते हैं, और पुराने सरदार यहां घोड़ोंको अिशारा करके अुस पार तक कूद जाते थे आदि बातें सुनते हैं, तब मानो मध्यकालका अितिहास फिरसे सजीव हो अुठता है।

अिस गूढ़ स्थानके अिस माहात्म्यको पहचानकर ही किसी योग-विद्याके अुपासकने समीपकी टेकरी पर चौंसठ योगिनियोंका मंदिर बनवाया होगा और अुनके चक्रके बीच नदी पर विराजित शिव-पार्वतीकी स्थापना की होगी। अिन योगिनियोंकी मूर्तियां देखकर भारतीय स्थापत्यके सामने मस्तक नत हो जाता है और अैसी मूर्तियोंको खंडित करनेवालोंकी धर्मांधताके प्रति ग्लानि पैदा होती है। मगर हमें तो खंडित मूर्तियोंको देखनेकी आदत सदियोंसे पड़ी हुअी है!!

* * *

धुवांधार प्रकृतिका अेक स्वतंत्र काव्य है। पानीको यदि जीवन कहें तो अधःपातके कारण खंड खंड होनेके बाद भी जो अनायास पूर्वरूप धारण करता है और शांतिके साथ आगे बहता है, वह सचमुच

जीवनतम कहा जायगा। चौमासेमे जब सारा प्रदेश जलमग्न हो जाता है, तब वहा न तो होती है 'धार' और न होता है अुसमे से निकलनेवाला ठडी भापके जैसा 'धुवा'। चौमासेके बाद ही धुवाधारकी मस्ती देख लीजिये। प्रपातकी ओर टकटकी लगाकर ध्यान करना मुझे पसन्द नही है, क्योंकि प्रपात अेक नशीली वस्तु है। अिस प्रपातमे जब धोबीघाट परके साबुनके पानीके जैसी आकृतिया दिखाअी देती है और आसपास ठडी भापके बादल खेल खेलते है, तब जितना देखते है अुतनी चित्तवृत्ति अस्वस्थ होती जाती है। यह दृश्य मन भरकर देखनेके बाद वापस लौटते समय लगता है, मानो जीवनके किसी कठिन प्रसगमे से हम बाहर आये है और अितने अनुभवके बाद पहलेके जैसे नही रहे है।

*   *   *

अिटारसी-होशगाबादके समीपकी नर्मदा बिलकुल अलग ही प्रकारकी है। वहाके पत्थर जमीनमे तिरछे गडे हुअे है। किस भूकपके कारण अिन पत्थरोके स्तर अैसे विषम हो गये है, कोअी नही बता सकता। नर्मदाके किनारे भगवानकी आकृति धारण करके बैठे हुअे पाषाण भी अिस विषयमे कुछ नही बता सकते।

और वही नर्मदा जब शिरोवेष्टनके साफेके समान लबे किन्तु कम चौडे भडौंचके किनारेको धो डालती है और अकलेश्वरके खलासियोको खेलाती है, तब वह बिलकुल निराली ही मालूम होती है।

*   *   *

कबीरवडके पास अपनी गोदमें अेक टापूकी परवरिश करनेका आनंद जिसे अेक बार मिला, वह सागर-सगमके समय भी अिसी तरहके अेक या अनेक टापू-बच्चोकी परवरिश करे, तो अिसमें आश्चर्य ही क्या है?

कबीरवड हिन्दुस्तानके अनेक आश्चर्योमे से अेक है। लाखो लोग जिसकी छायामे बैठ सकते है और बडी बडी फौजे जिसकी छायामे पडाव डाल सकती हैं, अैसा अेक वट-वृक्ष नर्मदाके प्रवाहके बीचोबीच अेक टापूमें पुराण पुरुषकी तरह अनतकालकी प्रतीक्षा कर रहा है। जब बाढ आती है, तब अुसमे टापूका अेकाध हिस्सा बह जाता है, और अुसके साथ

अिस वट-वृक्षकी अनेक शाखायें तथा अुन परसे लटकनेवाली जडें भी बह जाती हैं। अब तक कबीरवडके अैसे बटवारे कितनी बार हुअे, अितिहासके पास अिसकी नोंध नहीं है। नदी बहती जाती है, और बडको नअी नअी पत्तियां फूटती जाती हैं! सनातन काल वृद्ध भी है और बालक भी है। वह त्रिकालज्ञानी भी है और विस्मरणशील भी है।

अिस काल-भगवानका और कालातीत परमात्माका अखंड ध्यान करनेवाले ऋषि-मुनि और संत-महात्मा जिसके किनारे युग-युगमें बसते आये हैं, वह आर्य अनार्य सबकी माता नर्मदा भूत-भविष्य-वर्तमानके मानवोंका कल्याण करे। जय नर्मदा, तेरी जय हो!

अगस्त, १९५५

१७

संध्यारस

गौरीशंकर* तालाबका दर्शन यकायक होता है। हमने बगीचेमें जाकर पेडोंकी शोभा देख ली, चीनी तश्तरीके टुकडोंसे बनाये हुअे निर्जीव हाथी, घोडे और शेरोंका रुआब देखकर तथा पेडोंके बीच मौज करने-वाले सजीव पक्षियोंका कलरव सुनकर तालबके किनारे पहुंचे, सीढियां चढने लगे, और ठंडे पवनकी शांति अनुभव करने लगे, तो भी खयाल नहीं हुआ कि यहां पर तालाब होगा। आखिरी (यानी अूपरकी) सीढी पर पांव रखा कि यकायक मानो आकाशको चीरकर कोअी अप्सरा प्रकट हुअी हो, अिस प्रकार सरोवरका नीर हमारे सामने रश्मित वदनसे देखने लगता है। आप भले अकेले ही सरोवरका दर्शन करने आये, परन्तु आप वहां अकेले नहीं रहेंगे। आप देखेंगे कि आकाशके बादल और सबसे जल्दी दौडकर आयी हुअी सन्ध्या-तारिकायें भी आपके साथ ही सरोवरकी शोभाको निहार रही हैं।

---

* सौराष्ट्रमें भावनगरका बोर तालाब।

सरोवर तो हमेशा नीची सतह पर होते है। पहाडसे अुतरकर नीचे आते है तभी हम सरोवरके जलमे पावोका प्रक्षालन कर पाते है। किन्तु यह तो मानो गधर्व सरोवर है, मानो बादल पिघलकर टेकरीके सिर पर छलक रहे है।

अुस पारका किनारा दिखाअी दे अैसा सरोवर भला किसे पसन्द आयेगा? अितना सारा पानी कहासे आता है, अैसी अतृप्त जिज्ञासा जिसके साथ न हो, अुसके सौंदर्यमे दैवी गूढ भाव कैसे हो सकता है? रेलवे लाअिन भी बिलकुल सीधी हो तो हमें पसन्द नही आती। चढ़ाव हो, अुतार हो, दाअी या बाअी ओर मोड हो, तभी वह फबती है। सरोवर कोअी प्रपात नही है कि वह अूचे-नीचेकी क्रीडा दिखाये। गौरीगकर चारो ओर टेकरियोंसे घिरा हुआ है। किन्तु ये टेकरिया मौतकी परवाह न करनेवाले वीरोकी भाति भीड करके खडी नही है। अिसलिअे पानीको अिधर-अुधर सभी जगह फैलनेके लिअे अवकाश मिला है।

सरोवरके बाध परसे पश्चिमकी ओर देखने पर पानीमे भाति-भातिके रग फैले हुअे दिखाअी देते है, मानो किसी अद्भुत अुपन्यासमे नवो रस गूथे गये हो। पावके नीचे आत्महत्याका गहरा हरा रग मानो हर क्षण हमे अदर बुलाता है। अिसमे भी सभी जगह समानता नही है। कही मेहदीकी पत्तियोकी तरह गाढा, तो कही नीमकी पत्तियोकी तरह गहरा। काफी देखनेके बाद लगता है कि यह पानीका रग नही है, बल्कि पानीमे छिपा हुआ स्वतत्र जहर है। कुछ आगे देखने पर बादामी रग दीख पडता है, मानो निराशामें से आशा प्रकट होती हो। रग तो है बादामी, किन्तु अुसमे धातुकी चमक है। आगे जाकर वही रग कुछ रूपातर पाकर नारंगी रंगके द्वारा सध्याका अुपस्थान करता हुआ दिखाअी देता है। बादलोकी जामुनी छाया बीचमे यदि न आअी होती तो पता नही अिस ओरके नारगी और अुस ओरके सुनहरे रगके बीच कैसी शोभा प्रकट होती!

हमारा ध्यान सुनहरे रगकी ओर जाता है अुसके पहले ही मंद-मद बहता हुआ पवन जलपृष्ठ पर वीचिमाला अुत्पन्न करके हमसे कहता है, 'सुनिये, यह समयोचित स्तोत्र!' सामनेकी टेकरीने सिर अूचा न किया

होता तो यह रसवती पृथ्वी कहा पूरी होती है और नि शब्द आकाश कहा शुरू होता है, यह जानना किसी पडितके लिअे भी कठिन हो जाता।

वाअी ओर काट-छाट की हुअी मेहदीकी वाड है। सुघड वाड किसे पसद न होगी? किन्तु शृगार-साधिका मेहदीका शिरच्छेद मुझे असह्य मालूम हुआ। दाहिनी ओर ठडे पडे हुअे किन्तु गाढ न हुअे सूर्यके तेजके समान सरोवर और वाअी ओर नीचे घनी-छिछली झाडी। अैसे परस्पर भिन्न रसोके वीचसे जनककी तरह योगयुक्त चित्तसे हम आगे बढे। वहा मिला अेक निराधार सेतु। सस्कृत कवियोने अुसे देखा होता तो वे अुसका नाम शिक्य-सेतु ही रखते। अैसे सेतुओकी खोज पहले-पहल हिमालयके वनेचरोने ही की होगी। यह निराधार पुल हमे धीरे धीरे ले जाता है पानीके बीच तप करनेवाले ऋषि-जैसे अेक द्वीपके जटाभारमें। पुलके बीचोंबीच पहुचने पर आतिथ्यशील जल चेतावनी देता है. 'सावधानीसे चलिये, सावधानीसे चलिये।' और योग्य अवसर मिलने पर पादप्रक्षालन करनेमे भी नही चूकता।

और वह द्वीप? वह तो नीरव शातिकी मूर्ति है। पानीमे चाद अितना खिलखिलाकर हसता है, फिर भी अुसकी प्रतिध्वनि कही सुनाअी नही देती। मानो प्रकृतिको डर मालूम होता है कि कहीं ध्यानी मुनिकी शातिमे खलल न पडे। अिस वेटमे न तो साप है, न गिरगिट। पक्षी हो तो वे अब अपने घोसलोमे निश्चित सो गये है। आतिथेय मडपके नीचे हम विराजमान हुअे। अब तो पानीके अूपर अज्ञात या गूढ अधकारकी छाया फैलने लगी थी। अष्टमीकी चादनी सीधी पानीमें अुतर रही थी। सिर्फ जातिवैरी सुर-असुरोंके गुरु दीर्घ विग्रहसे अूबकर पश्चिमकी ओर चमक रहे थे, मानो समझौता करनेके लिअे अिकट्ठे हुअे हो। प्रकाश और अधकारकी सधि करनेका प्रयत्न सध्याने अनेक बार किया है। अिसमे यदि वह कभी कामयाब हो सके तो ही सुर-असुरोके वीच हमेशाके लिअे समाधान हो सकेगा। देखिये, दोनोके गुरु अपनी दिशाको वदलकर अपनी स्वभावोचित गतिसे जा रहे है और सध्याकी रक्त कालिमा दोनोको विनी

पक्षपातके विना घेर रही है। जो हमेशा विग्रह ही चलाता है, अुसका अस्त तो होने ही वाला है।

अब पानीने अपना रग बदला। अब तक पानीके पृष्ठ पर चादीके बनाये हुअे रास्तोके समान जो पटे बिना कारण दिखाअी देते थे वे अब दिखने बद हुअे। खेल काफी हो चुका है, अब गभीरताके साथ सोचना चाहिये, अैसा कुछ विचार आनेसे पानीकी मुखमुद्रा अतर्मुख हो गअी। टेकरिया अैसी दिखाअी देने लगी, मानो प्रेतलोकके वासनादेह विचरते हो। विस्तीर्ण शाति भी कितनी बेचैन कर सकती है, अिस बातका खयाल यहा पूरा-पूरा हो आता है। सब टेकरिया मानो हमारी अेक आवाज सुननेकी ही राह देख रही है। अिसमे कोअी सदेह नही रहता कि जरासी आवाज देने पर वे 'हा, हा! अभी आअी, अभी आअी।' कह कर दौडती हुअी आयेगी। किन्तु अुन्हे बुलानेकी हिम्मत ही कैसे हो? क्या वे टेकरिया मध्यरात्रिके समय, कोअी न देख रहा हो तब, कपडे अुतारकर सरोवरमे नहानेके लिअे अुतरती होगी? आज तो वे नही अुतरेगी, क्योकि दुर्विनीत चन्द्रमा मध्यरात्रि तक सरोवरमे टकटकी बाधकर देखता रहेगा। और मध्यरात्रिके पहले ही शिशिरकी ठडका साम्राज्य शुरू होनेवाला है। फिर पता नही, अुष कालके पहले माघस्नान करनेकी अिच्छा अिन्हे होगी या नही। अैसे किसी पुण्यसचयके बिना टेकरियोको भी अितनी स्थिरता कैसे प्राप्त हुअी होगी?

कोअी पुल परसे निकला। पानीमे अुससे खलबली मचती है, और अुसमे से निकलनेवाली लहरोके वर्तुल दूर दूर तक दौडते है। लोग अपने अपने गावोमे रहते है फिर भी जिस तरह खबरे अुनके द्वारा दूर दूरकी यात्रा करती है, अुसी तरह पुलके पास जो क्षोभ शुरू हुआ वह किनारे तक पहुचने ही वाला है। शरीरमें अेक जगह चोट लगनेसे जैसे सारे शरीरको अुसका पता चल जाता है, वैसी पानीकी भी बात है। पानीकी शातिमे यदि भग हो तो अुसके परिणामस्वरूप अुसके अुदरमे प्रतिबिबित हुआ सारा ब्रह्माड डोलने लगता है।

अब सितारोंका रास शुरू हुआ। पानीमें अुसका अनुकरण चलता दीख पडता है। किन्तु भूलोकका ताल तो अलग ही है।

फरवरी, १९२७

१८

रेणुका का शाप

रेणुका का मतलब है रेत। अुसके शापसे कौनसी नदी सूख न जायगी? गयाकी नदी फल्गु भी अिस तरह अंतःस्रोता हो गअी है न! फिर वढवाणके पासकी भोगावो भी अैसी क्यों न हो? सौराष्ट्रमें भोगावो (बरसातके बाद सूखनेवाली नदियां) बहुत हैं। क्या हरेकको किसी न किसी राणकदेवीका शाप लगा होगा? शेत्रुंजी, भादर, मच्छु, आजी, रंगमती, मेगळ — चारों दिशाओंमें बहनेवाली अिन नदियोंमें कितनी नदियां अैसी हैं, जिनमें बारह मास पानी बहता हो? खंडस्थ भारतवर्षसे सौराष्ट्र-काठियावाड अनेक प्रकारसे अलग मालूम होता है। अुसका आकार भी कितना है! चोटीला या बरडा, शेत्रुंजा या गिरनार पर्वत भला पानी देगा भी तो कितना देगा? और अुनकी लडकियां भी खींच-खींचकर आखिर कितना पानी लायेंगी? नीलगिरि और सह्याद्रि, सातपुडा और विन्ध्याद्रि, हिंदूकुश और हिमालय, नागा, खासी और ब्रह्मी योमा जैसे समर्थ पर्वतराजोंको ही बादलोंका मुख्य करभार मिलता है। अुनकी लडकियां गौरवसे कैसी अलस-लुलित होकर चलती हैं! अुनके मुकाबलेमें बेचारी काठियावाडी नदियां क्या हैं? पानी बरसा कि बहने लगी। बरसात बन्द हुआ कि असमंजसमें पडकर सूख गअी।

हरेक नदीने अेक-दो अेक-दो शहरोंको आश्रय दिया है। भोगावोके कारण वढवाण (अब सुरेन्द्रनगर) की शोभा है। राणकदेवीका शाप अगर न लगा होता तो अिस नदीका मुख कितना अुज्ज्वल मालूम होता! अंत्यजोंका शाप लेकर आगेके लोग भविष्यमें अुसकी क्या दशा करनेवाले

है ? शेत्रुजीकी वक्रता देखनी हो तो अुसके वीर(भाअी)के शिखर परसे देख लीजिये। कुदनके समान पीली घास अुगी हुअी है, दूर दूर तक गालीचोके समान खेत फैले हुअे है और वीचमें से शेत्रुजी धीमे धीमे अपना रास्ता काटती जा रही है। शेत्रुजीकी यह चाल सस्कारी और चित्ताकर्षक है।

और मेगळका नाम मेगळ (=मयगळ?) क्यो पडा होगा? क्या देवघरामे मगरने किसी हाथीको पकड रखा होगा अिसलिअे? या समुद्र और अुसके वीच आनेवाले अूचे सिकता-पट पर वह सिर पटकती है अिस-लिअे? समुद्रमे मिलनेका हक तो हरेक नदीको है ही। किन्तु वेचारी मेगळके भाग्यमें सालमें आठ महीनो तक खडिताकी तरह अपने पतिके दूरसे ही दर्शन करना वदा है। वर्षा ऋतुमे जव समुद्रसे भी रहा नही जाता तभी अिन दोनोका सगम होता है। चोरवाडके लोगोको अिस सगम पर ही स्मशान वनानेकी क्या सूझी होगी? या कैसे कह सकते है कि अिसमे भी औचित्य नही है? स्मशान भी तो अिहलोक और परलोकका सगम ही है न!

भादर ही अेक अैसी नदी है, जिसके लिअे काठियावाड गर्व कर सकता है। भादरका असली नाम क्या होगा? भाद्रपदी या भद्रावती? वहादुर तो हरगिज नही होगा। अिस नदीकी प्रतिष्ठा वहुत है। जेतपुर, नवागढ और नवोवदर जैसे स्थान अुसके तट पर खडे है। नवीवदर जव वसा होगा तव अुसको 'नवी' (=नअी) नाम देनेवाले पुरुषोंके दिलमें कितनी आकाक्षा, कितना अुत्साह होगा! पोरवदरसे भी यह श्रेष्ठ होगा, वडे वडे जहाज दूर दूरके देशोका माल देशके अदर पहुचायेगे! दैव यदि अनुकूल होता तो क्या भादर टेम्स नदीकी प्रतिष्ठा न पाती? किन्तु नदीकी प्रतिष्ठा तो अुसके पुत्रोंके पुरुषार्थ पर निर्भर है। आज भादरको हिन्दुस्तानकी पश्चिम-वाहिनी नदियोका नेतृत्व मिला है यही काफी है।

रगमती, आजी और मच्छु नदिया चाहे जितनी परोपकारी हो और नवानगर, राजकोट और मोरवीके वैभवको वे भले अखड रूपमें निहारती हो, फिर भी अुन्हे सागरको छोडकर छोटे अखातको ही व्याहना पडा है।

काठियावाडकी अिन सब नदियोंने देशी रियासतोंकी करतूतोंको तथा प्रपंचोंको पुराने जमानेसे देखा होगा। मगर काठियावाडके भिन्न भिन्न विभागोंके विशिष्ट रीति-रिवाजोंका दर्शन यदि वे हमें करा दे तो वह कथा रोचक जरूर होगी।

सौराष्ट्रकी नदियोंका पानी पीनेवाले किसी पुत्रका यह काम है कि वह अिन नदियोंके मुंहसे अुनका अपना अपना अनुभव सुनवावे।

१९२६–२७

१९

अंबा-अंबिका

भीष्म-पितामह अंबा-अंबिका नामक दो राजकन्याओंको जीतकर राजा विचित्रवीर्यके पास ले आये। कन्याओंने साफ-साफ कह दिया, 'हमारा मन दूसरी जगह बैठा हुआ है।' विचित्रवीर्य अब अिनसे विवाह कैसे करे? और जिसमें अिनका मन चिपका था वह राजा भी जीती हुअी कन्याओंका स्वीकार किस प्रकार करे? बेचारी राजकन्याओंको कोअी पति नहीं मिला और वे झूर झूर कर मर गअीं।

गरमीके दिनोंमें आबूके पहाड परसे सरस्वती और बनास नदियोंके दर्शन किये थे। वे बेचारी समुद्र तक पहुंच ही न पाअीं। बीचमें कच्छके रेगिस्तानमें ही झूर झूर कर लुप्त हो गअी हैं। अंबा-अंबिकाकी तरह कौमार्य, सौभाग्य और वैधव्यमें से अेक भी स्थिति अिनके लिअे नहीं रही। गुजरात और राजपूतानाके अितिहासमें अिन नदियोंका कितना भी महत्त्व क्यों न हो, राजा कर्णके दो आंसुओंके अलावा हम अुन्हें क्या दे सकते हैं?

१९२६–'२७

२०

लावण्यफला लूनी

खारची (मारवाड जक्शन) से सिंध हैदराबाद जाते हुअे लूनी नदीका दर्शन अनेक बार किया है। अूटोंके स्वदेश जोधपुर जानेका रास्ता लूनी जक्शनसे ही है, अिसलिअे भी अिस नदीका नाम स्मृतिपट पर अंकित है। यहाके स्टेशन पर हिरणके अच्छे-अच्छे चमडे सस्तेमें मिलते थे। अैसे मुलायम मृगाजिन यहासे खरीदकर मैंने अपने कअी गुरुजनोको और प्रियजनोको ध्यानासनके तौर पर भेंट दिये थे। पता नही कि चमडेके अिस अुपयोगसे हिरणोको अुनके ध्यानका कुछ पुण्य मिला या नही।

लूनीका नाम सुनते ही हृदय पर विषाद छा जाता है। यो तो सब-की-सब नदिया अपना मीठा जल लेकर खारे समुद्रसे मिलती है। और अिसी तरह अपने पानीको सडनेसे बचाती है। लेकिन सागरका संगम होने तक नदीका पानी मीठा रहे यही अच्छा है। बेचारी लूनीका न सागरसे संगम होता है, और न आखिर तक अुसका पानी मीठा ही रहता है।

अगर यह नदी साभर सरोवरसे निकली होती तो अुसका खारापन हम माफ कर देते। लेकिन अुसका अुद्‌गम है अजमेरके पास अरवली, आरावली या आडावलीकी पहाडियोंसे। वहा भी अुसे सागरमती कहते है! वह गोविन्दगढ तक पहुच गअी तो वहा पुष्कर सरोवरके पवित्र जल लाकर सरस्वती नदी अुससे मिलती है।

लूनीका असली नाम था लवणवारि। अुसका अपभ्रंश हो गया लोणवारी, और आज लोग अुसे कहते हैं लूनी। अजमेरसे लेकर आबू तक जो आरवलीकी पर्वत श्रेणी फैली हुअी है, अुसका पश्चिमका सारा पानी छोटे-बडे स्रोतोंके द्वारा लूनीको मिलता है। अिस पानीके बदौलत जोधपुर राज्यका आधा भाग अपनी द्विदल धान्यकी खेती करता

है। सिघाडेकी अुपज भी यहा कम नही है। जहा-जहा लूनीकी बाढ पहुचती है, वहा किसान अुसे आशीर्वाद ही देते हैं।

जब लूनी बालोतरा पहुचती है तब अुसका भाग्य — सौभाग्य नही किन्तु दुर्भाग्य, अुस पर सवार होता है। जहा जमीन ही खारी है वहा बेचारी नदी क्या करे?

जोधपुरके राजा जसवतसिहको सद्बुद्धि सूझी। अुसने लूनी नदीका पानी खारा होनेके पहले ही, बिलाडाके पास अेक बडा बाध बाध दिया और बाअीस वर्गमीलका अेक बडा विशाल, मनुष्य-कृत सरोवर बना दिया। तेरह हजार वर्गमीलका पानी अिस सरोवरमे अिकट्ठा होता है। अिसकी गहराअी अधिक-से-अधिक चालीस फुटकी है। अिस सरोवरका नाम 'जसवंत-सागर' रखा सो तो ठीक ही है, क्योकि राजाने अुसे बनाया। अगर किसानोसे पूछा जाता तो वे अुसे 'लूनी-प्रसाद' कहते।

अपनी दो सौ मीलकी यात्राके अन्तमें यह नदी कच्छके रणमें अपने भाग्यको कोसते-कोसते लुप्त हो जाती है। अिसके तीनो मुख नमकसे अितने भरे हुए रहते है कि समुद्र भी अिसके पानीका आचमन करनेमे सकोच करता है।

अब देखना है कि लूनी, सरस्वती, बनास और अैसी ही दूसरी नदिया जिस श्रद्धासे अपना जल कच्छके रणमे छोड देती है, अुस श्रद्धाका फल अुन्हे कब मिलता हैं और रणका परिवर्तन अुपजाअू भूमिमे कब हो जाता है। आज लूनी नदी करीब-करीब पाकिस्तानकी सरहद तक पहुच जाती है और कच्छके रणको दिन-पर-दिन अधिक खारा करती जाती है! अैसी लवण-प्रधान, लवण-समृद्ध नदीको अगर हम 'लावण्यवती' कहे तो वैयाकरण अुस नामको जरूर मान्य करेगे।

काव्यरसिक क्या कहेगे अिसका पता नही।

१९५७

अुंचळ्ळीका प्रपात

जोगके बिलकुल ही सूखे प्रपातके अिस बारके दर्शनका गम हल्का करनेके लिअे दूसरा अेकाध भव्य और प्रसन्न दृश्य देखनेकी आवश्यकता थी ही। कारवार जिलेके सर्वसंग्रह — गॅजेटियर — के पन्ने अुलटते अुलटते पता चला कि जोगसे थोडा ही घटिया अुचळ्ळी नामक अेक सुन्दर प्रपात शिरसीसे बहुत दूर नही है। लॅशिंग्टन नामक अेक अंग्रेजने सन् १८४५में अिसकी खोज की थी, मानो अुसके पहले किसीने अिसे देखा ही न हो! अंग्रेजोकी आंखो पर वह चढा कि दुनियामें अुसकी शोहरत हो गयी!

यह अुचळ्ळी कहा है? वहा किस ओरसे जाया जा सकता है? हम कैसे जायें? हमारे कार्यक्रममें वह बैठ सकता है या नही? आदि पूछताछ मैंने शुरू कर दी। श्री शंकरराव गुलवाडीजीने देखा कि अब अुचळ्ळीका कार्यक्रम तय किये बिना शांति या स्वास्थ्य मिलनेवाला नही है। वे खुद भी मुझसे कम अुत्साही नही थे। अुन्होने बताया कि जब बिजली पैदा करनेकी दृष्टिसे कारवार जिलेके प्रपातोकी जाच — सरवे की गअी थी, तब अिंजीनियर लोगोने अुचळ्ळीके प्रपातको प्रथम स्थान पर रखा था, और गिरसप्पा यानी जोगके प्रपातको दूसरे स्थान पर, मागोडाको तीसरा और सूपाके नजदीकके प्रपातको चौथा स्थान दिया था।

समुद्रके साथ कारवार जिलेकी दोस्ती जोडनेवाली मुख्य चार नदिया है — काळी नदी, गंगावळी, अघनाशिनी और शरावती। अिनमे से शरावती या बालनदी होन्नावरके पास समुद्रसे मिलती है। दस साल पहले जब हमने जोगका प्रपात दूसरी बार देखा था, तब अिस शरावती नदी पर नावमे बैठकर होन्नावरसे हम अूपरकी ओर गये थे। शरावतीका किनारा तो मानो वनश्रीका साम्राज्य है!

अबकी बार जब हम हुबलीसे अंकोला और कारवार गये तब आरबैल घाटीमें से 'नागमोडी' रास्ता निकालनेवाली गंगावळीको

देखा था। और अकोल्रासे गोकर्ण जाते समय अुसके पृष्ठभाग पर नौका-क्रीडा भी की थी। काळी नदीके दर्शन तो मैंने बचपनमें ही कारवारमें किये थे। पचास साल पहलेके ये संस्मरण दस साल पहले ताजे भी किये थे और अबकी बार भी कारवार पहुंचते ही काळी नदीके दो बार दर्शन किये। किन्तु अितनेसे संतोष न होनेके कारण कारवारसे हळगा तक की दस मीलकी यात्रा — आना-जाना — नावमें की।

चौथी है अघनाशिनी। अुसका नाम ही कितना पावन है! गोकर्णके दक्षिणकी ओर तदडी बंदरके पास वह टेढी-मेढी होकर खूब फैलती है। किन्तु समुद्र तक पहुंचनेके लिअे अुसको जो रास्ता मिलता है वह बिलकुल छोटा है। यह अघनाशिनी जहां समुद्रमें मिलनेके लिअे अुतावली होकर सह्याद्रिके पहाड परसे नीचे कूदती है, वही स्थान अुंचळ्ळीके प्रपातके नामसे पहचाना जाता है।

हमने सिद्धापुरसे शिरसीका रास्ता लिया। किन्तु शिरसी तक जानेके बदले अेक रास्ता पश्चिमकी ओर फूटता था, अुससे हम नीलकुंद पहुंचे। वहां श्री गोपाल मांडगावकरके चाचा रहते थे। वे बडे प्रतिष्ठित जमीदार थे। अुनके आतिथ्यका स्वीकार करके हम अुंचळ्ळीकी खोजमें निकल पडे। नीलकुंदसे होसतोट (=नया बगीचा) जाना था। फौजी 'जीप'का प्रबंध होनेसे जंगलका रास्ता कैसे तय करेंगे, यह चिंता करीब करीब मिट गअी थी। होसतोटसे होन्नेकोंब (=सोनेका सींग) की ओरका रास्ता हमें लेना था। किन्तु अिस रास्तेमें मोटर तो क्या, बैलगाडी या पालकी भी नहीं जा सकती थी। अिसे तो बाघका रास्ता कहना चाहिये। मनुष्य भी बाघके जैसा बनकर ही अैसे रास्तेसे जा सकता है। हमने अपनी जीपको अेक पेडकी छांहमें आराम करनेके लिअे छोड दिया और 'अथाऽतो प्रपात-जिज्ञासा' कहकर जंगलमें रास्ता तय करना शुरू किया। होसतोटसे अेक स्थानिक नौजवान हाथमें अेक बडा 'कोयता' लेकर हमें रास्ता दिखानेके लिअे हमारे आगे चला। अिस बेचारेको धीरे चलनेकी आदत नहीं थी, न सृष्टि-सौंदर्य निहारनेकी लत! वह तो आगे ही आगे चलने लगा। हमें अुसका

वहुत ही कम लाभ मिला। हम कुछ आगे गये। अूपर चढे, नीचे अुतरे, फिर चढे और फिर अुतरे। अितनेमें जगल घना होने लगा। थोडे समयके वाद वह घनघोर हो गया।

So steep the path, the foot was fain,
Assistance from the hand to gain.

हमारी मुख्य कठिनाअी तो पगडडीकी थी। वहा सूखे पत्ते अितने जमा हो गये थे कि पाव न फिसले तो ही गनीमत समझिये! मेहर मालिककी कि अिन पत्तोमें से सरसराता हुआ कोअी साप न निकला। वरना हमारी अुचळ्ळी वहीकी वही रह जाती। जहा सख्त अुतार होता था वहा लाठीसे पत्तोको हटाकर देखना पडता था कि कोअी मजबूत पत्थर या किसी दरख्तकी अेकाध चीमड जड है या नही।

दोपहरके वारहका समय था। किन्तु पेडोकी 'स्निग्ध-छाया' के अदर धूप आये तभी न? चलकर यदि गरम न हो गये होते तो सर्दी ही लगती। जरा आगे बढते और अेक-दूसरेसे पूछते, "हमने कितना रास्ता तय किया होगा? अव कितना वाकी होगा?" सभी अज्ञान! किन्तु सिद्धापुरसे अेक आयुर्वेदिक डॉक्टर कैमेरा लेकर हमारे साथ आये थे। ये सज्जन अेक साल पहले दूसरे किसी रास्तेसे अुचळ्ळी गये थे। अपने पुराने अनुभवके आधार पर वे रास्तेका अदाज हमें वताते थे। वीच वीचमे तो हमारा यह नाममात्रका रास्ता भी वन्द हो जाता था। आगे अदाजसे ही चलना पडता था। किन्तु सच्ची मुसीबत रास्ता वन्द हो जाने पर नही, वल्कि तव होती है जब अेक पगडडी फूटकर दो पगडडिया वन जाती हैं। जब सही रास्ता दिखानेवाला कोअी नही होता और अधा अदाज करनेवाले अेक साथीकी रायसे दूसरेका अधा अदाज मेल नही खाता, तव 'यद् भावि तद् भवतु'—जो होनेवाला होगा सो होगा—कहकर किस्मतके भरोसे किसी अेक पगडडीको पकड लेना पडता है।

किसीने कहा कि दूरसे प्रपातकी आवाज सुनाअी देती है। मेरे कान वहुत तीक्ष्ण नही हैं। अेकने तो कभीका अिस्तीफा दे दिया है और दूसरा काम भरकी ही वात सुनता है। किन्तु अपनी कल्पना-शक्तिके

बारेमे मैं अैसा नही कहूगा। मैंने कान और कल्पना, दोनोंके सहारे सुननेकी कोशिश की। किन्तु जिसे प्रपातकी आवाज कहे वैसी कोअी आवाज सुनाअी न दी। कही मधुमक्खिया भनभनाती होती तो भी मैं कहता, "हा, हा, प्रपातकी आवाज सचमुच सुनाअी देती है।" कठिन यात्रामे साथियोंके साथ झट सहमत हो जानेके यात्रा-धर्ममे मेरा पूर्ण विश्वास है। किन्तु यहा मैं लाचार था।

अेक ओर यदि जगलकी भीषण सुदरताका मैं रसास्वादन कर रहा था, तो दूसरी ओर चि० सरोजके कितने बेहाल हो रहे होगे अिस चितासे अुसकी ओर देखता था। जब सरोजने कहा, "जगलकी अैसी यात्राके अतमे अगर कोअी प्रपात देखनेको न मिले तो भी कहना होगा कि यहा आना सार्थक ही हुआ है। कैसा मजेका जगल है! ये बडे बडे पेड, अुन्हे अेक-दूसरेसे बाधनेवाली ये लतायें—सब सुन्दर है!" तब मुझे बहुत सतोष हुआ।

आगे जब रास्ता लगभग असभव-सा मालूम हुआ, और अेक हाथमें लकडी तथा दूसरेसे किसीका कधा पकडकर अुतरना भी सदेहप्रद प्रतीत हुआ, तब भी सरोज कहने लगी "मेरा अुत्साह कम नही हुआ है। किन्तु दूसरोको अडचनमे डाल रही हू अिस खयालसे ही हताश हो रही हू। यह अुतार फिर चढना होगा अिसका भी खयाल रखना है।"

मैंने कहा, "अेक बार अुचळ्ळीके दर्शन करनेके बाद किसी न किसी तरह वापस तो लौटना होगा ही। किन्तु हम पूरा आराम लेकर ही लौटेंगे। यहा तक तो आ ही गये है, और अब प्रपातकी आवाज भी सुनाअी दे रही है। अिसलिअे अब तो आगे बढना ही चाहिये।"

हमारे मार्गदर्शकने नीचे जाकर आवाज दी। डॉक्टरने कहा, "शायद अुसने पानी देखा होगा।" हमारा अुत्साह बढा। हम फिर अुतरे। आगे बढे। फिर दाहिनी ओर मुडे और आखिर जिसके लिअे आखें तरस रही थी अुस प्रपातका सिर नजर आया!

अेक तग घाटीके अिस ओर हम खडे थे और सामने अघनाशिनीका पानी, जिसे सुबह जीपकी यात्राके दरम्यान हमने तीन-चार बार

लाघा था, यहा अेक वडे पत्थरके तिरछे पट परसे नीचे पहुचनेकी तैयारी कर रहा था। गीत जिस प्रकार तम्बूरेके तालके साथ ही सुना जाता है, अुसी प्रकार प्रपातके दर्शन भी नगारेके समान धद-धव आवाजके साथ ही किये जाते है।

अुचळ्ळीका प्रपात जोगके राजाकी तरह अेक ही छलागमे नीचे नही पहुचता है। सुवहकी पतली नीदके हरेक अगका जिस प्रकार हम अर्ध-जाग्रत स्थितिमे अनुभव लेते है, अुसी प्रकार अघनाशिनीका पानी अेक अेक सीढीसे कूदकर सफेद रगका अनेक आकारोका परदा वनाता है। अितने शुभ्र पानीमे ससारका कालेसे काला 'अघ'—पाप भी सहज ही धुल सकता है

जिस प्रकार धान पछोरने पर मूपके दाने नाचते-कूदते दाहिनी ओरके कोने पर दौडते आते है, और साथ साथ आगे भी वढते है, अुसी प्रकार यहाका पानी पहाडके पत्थर परसे अुतरते समय तिरछा भी दौडता है और फेनके वलय वनाकर नीचे भी कूदता है। पानी अेक जगह अवतीर्ण हुआ कि वह फौरन घूमकर अगरखेके घेरकी तरह या धोतीके घुमावकी तरह फैलने लगता है और अनुकूल दिशा ढूढ़कर फिर नीचे कूदता है।

अव तो विना यह जाने कि यह पानी अिस प्रकार कितने नखरे करनेवाला है और अतमे कहा तक पहुचनेवाला है, मनोग मिलनेवाला न था। हममें से चद लोग आगे वढे। फिर अुतरे। और भी अुतरे। पेडकी लचीली डालियोको पकडकर अुतरे। अैसा करते करते पूरे प्रपातका अखड साक्षात्कार करानेवाले अेक वडे पत्थर पर हम जा पहुचे। अुस पर खडे रहकर सामनेकी वडी अूची चट्टानसे गिरते हुअे पानीका पदक्रम देखना जीवनका अनोखा आनन्द था। हम टकटकी लगाकर पानीको देखते थे। मगर हम लोगोको देखनेके लिअे पानीके पास फुरसत न थी। वह अपनी मस्तीमें चूर था। कपूरके चूर्णमें शुभ्र रगका जो अुत्कर्ष होता है, वही अिस जीवनावतारमे था।

भगवान सूर्यनारायण माथे परसे हमें अपने आशीर्वाद देते थे। पसीनेके रेले हमारे गालो परसे चाहे अुतने अुतरे, सामनेके प्रपातके आगे वे किसीका ध्यान थोडे ही खीच सकते थे! सूर्यनारायणके आशीर्वाद झेलनेकी जैसी शक्ति अुचळ्ळीके प्रपातमे थी, वैसी मुझमे न थी। पानी चमक कर सफेद रेशम या साटिनकी शोभा दिखाने लगा। A moving tapestry of white satin and silver filigree.

कटकमें चादीके वारीक तार खीचकर अुसके अत्यत नाजुक और अत्यत मोहक फूल, गहने आदि वनाये जाते हैं। तारके वनाये हुअे पीपलके पत्ते, कमल, करड आदि अनेक प्रकारकी चीजें मैंने अुडीसामें मन भरकर देखी हैं और कहा है, 'अिन गहनोने वेशक कटकका नाम सार्थक किया है।'

प्रकृतिके हाथोसे वननेवाले और क्षण-क्षणमे वदलनेवाले चादीके सुदर और सजीव गहने यहा फिरसे देखकर कटकका स्मरण हो आया। सोनेके ढक्कनसे सत्यका रूप शायद ढक जाता होगा, किन्तु चादीके सजीव तार-कामसे प्रकृतिका सत्य अद्भुत ढगसे प्रगट होता था। "अव अिस सत्यका क्या करू? किस तरह अुसे पी लू? अुसे कहा रखू? किस तरह अुठाकर ले चलू?" अैसी मधुर परेशानी मैं महसूस कर रहा था, अितनेमे पुरानी आदतके कारण, अनायास, कठसे अीशावास्यका मत्र जोरोसे गूजने लगा। हा, सचमुच अिस जगतको अुसके अीशसे ढकना ही चाहिये — जिस तरह सामनेका तिरछा पत्थर पानीके परदेसे ढक जाता है और वह परदा चैतन्यकी चमकसे छा जाता है। जो जो दिखाअी देता है — फिर वह चाहे चर्म-चक्षुकी दृष्टि हो या कल्पनाकी दृष्टि हो — सवको आत्मतत्त्वसे ढक देना चाहिये। तभी अलिप्त भावसे अखड जीवनका आनन्द अत तक पाया जा सकता है। मनुष्यके लिअे दूसरा कोअी रास्ता नहीं है।

दृष्टि नीचे गअी। वहा अेक शीतल कुड अपनी हरी नीलिमामे प्रपातका पानी झेलता था और यह जाननेके कारण कि परिग्रह अच्छा नहीं है, थोडी ही देरमें अेक सुदर प्रवाहमे अुस सारी जलराशिको वहा देता था। अघनाशिनी अपने टेढे-मेढे प्रवाहके द्वारा आसपासकी सारी भूमिको

पावन करनेका और मानव-जातिके टेढे-मेढे (जुहुराण) पाप (अेनस्) को धो डालनेका अपना व्रत अविरत चलाती थी। मैंने अंतमे अुसीसे प्रार्थना की :

युयोधि अस्मत् जुहुराणम् अेन:
भूयिष्ठा ते नम अुक्ति विधेम।

हे अघनाशिनी! हमारा टेढा-मेढा कुटिल पाप नष्ट कर दे। हम तेरे लिअे अनेकों नमस्कारके वचन रचेंगे।

जून, १९४७

२२

गोकर्णकी यात्रा

लंकापति रावण हिमालयमे जाकर तपश्चर्या करने बैठा। अुसकी मांने अुसे भेजा था। शिवपूजक महान सम्राट् रावणकी माता क्या मामूली पत्थरके लिंगकी पूजा करे? अुसने लडकेसे कहा, "जाओ बेटा, कैलास जाकर शिवजीके पाससे अुन्हीका आत्मलिंग ले आओ। तभी मेरे यहा पूजा हो सकती है।" मातृभक्त रावण चल पडा। मानसरोवरसे हररोज अेक सहस्र कमल तोडकर वह कैलासनाथकी पूजा करने लगा। यह तपश्चर्या अेक हजार वर्ष तक चली।

अेक दिन न जाने कैसे, नौ कमल कम आये। पूजा करते करते बीचमे अुठा नही जा सकता था, और सहस्रकी संख्यामे अेक भी कमल कम रहे तो काम नही चल सकता था। अब क्या किया जाय? आशुतोष महादेवजी शीघ्रकोपी भी है। सेवामे जरा भी न्यूनता रही कि सर्वनाश ही समझ लीजिये। रावणकी बुद्धि या हिम्मत कच्ची तो थी ही नही। अुसने अपना अेक-अेक शिर-कमल अुतारकर चढाना शुरू कर दिया। अैसी भक्तिसे क्या प्राप्त नही होता? भोलानाथ प्रसन्न हुअे। कहने लगे 'वर माग, वर माग। जितना मागे अुतना कम

हैं।' रावणने कहा, 'मा पूजामे बैठी है। आपका आत्मलिंग चाहिये।' शब्द निकलनेकी ही देर थी। शम्भुने हृदय चीरकर आत्मलिंग निकाला और रावणको दे दिया।

त्रिभुवनमे हाहाकार मच गया। देवाधिदेव महादेवजी आत्मलिंग दे बैठे। और वह भी किसको? सुरासुरोके काल रावणको! अब तीनो लोकोका क्या होगा? ब्रह्मा दौडे विष्णुके पास। लक्ष्मी सरस्वतीसे पूछने गअी। अिन्द्र मूर्छित हुआ। आखिर विघ्ननाशक गणपतिकी सबने आराधना की और अुनसे कहा, 'चाहे सो कीजिये। किन्तु यह लिंग लकामें न पहुचने पाये अैसा कुछ कीजिये।'

महादेवजीने रावणसे कहा था, 'लो यह लिंग। जहा जमीन पर रखोगे वही यह स्थिर हो जायगा।' महादेवजीका लिंग पारेसे भी भारी था। रावण अुसे लेकर पश्चिम समुद्रके किनारे चला जा रहा था। शाम होने आयी थी। रावणको लघुशकाकी हाजत हुअी। शिव-लिंगको हाथमें लेकर बैठा नही जा सकता था, जमीन पर तो रखा ही कैसे जाता? रावणके मनमें यह अुधेडबुन चल ही रही थी कि अितनेमें देवताओके सकेतके अनुसार गणेशजी चरवाहेके लडकेका रूप लेकर गौअे चराते हुअे प्रकट हुअे। रावणने कहा, 'अै लडके, यह लिंग जरा सभाल तो। जमीन पर मत रखना।'

गणेशने कहा, 'यह तो भारी है। थक जाअूगा तो तीन बार आवाज दूगा। अुतनी देरमे तुम आये तो ठीक, वरना तुम्हारी बात तुम जानो।'

हाजत तो लघुशकाकी ही थी। अुसमे भला कितनी देर लगती? रावण बैठा। बैठा तो सही किन्तु न मालूम कैसे, आज अुसके पेटमे सात समुद्र भर गये थे! जनेअू कान पर चढाने पर तो बोला भी नही जा सकता था। सिद्धि-विनायकने अिकरारके अनुसार तीन बार रावणके नामसे आवाज दी। और अर्‌र्‌र्‌र्‌की चीख मारकर लिंग जमीन पर रख दिया, मानो वजन असह्य मालूम हुआ हो! जमीन पर रखते ही लिंग पाताल तक पहुच गया! रावण क्रोधके मारे लाल-लाल होकर आया और गणपतिकी खोपडी पर अुसने कसकर अेक घूसा मारा। गजाननका सिर खूनसे लथपथ हो गया।

वादमें रावण दौडा लिंग अुखाडने। किन्तु अब तो यह वात असभव थी। पाताल तक पहुचा हुआ लिंग कैसे अुखाडा जा सकता था? सारी पृथ्वी कापने लगी, किन्तु लिंग वाहर नही आया। आखिर रावणने लिंगको पकडकर मरोड डाला। अिससे अुसके चार टुकडे हाथमें आये। निराशाके आवेशमे अुसने चारो टुकडे चारो दिशाओमे फेंक दिये और वेचारा खाली हाथ लकाको वापस लौटा।

मरोडे हुअे लिंगका मुख्य भाग जहा रहा, वहीं है गोकर्ण-महावळेश्वर। सारी पृथ्वी पर अिससे अधिक पवित्र तीर्थ-स्थान नही है।

*　　　*　　　*

गोकर्ण-महावळेश्वर कारवार और अंकोला वदरगाहोके वीच स्थित तदडी वदरगाहसे करीव छ मील अुत्तरकी ओर ठीक समुद्रके किनारे पर है। दक्षिणमे अिसका माहात्म्य काशीसे भी अधिक माना जाता है। लिंग अधिकतर जमीनके अदर ही है। अुसकी जलाधारीके वीचोवीच अेक वडा सुराख है। अुसमे अदर अगूठा डालने पर भीतरके लिंगका स्पर्श होता है। दर्शनका तो प्रश्न ही नही। वहाके पुजारी कहते है कि लिंगकी शिला अत्यत मुलायम है। भक्तोके स्पर्शसे वह घिस जाती है, अिसलिअे प्राचीन लोगोने यह प्रवध किया है। वहुत वरसोके वाद शुभ शकुन होने पर जलाधारी निकाली जाती है और आसपासकी चुनाअीको हटाकर मूल लिंगको दो-तीन हाथोकी गहराअी तक खोल दिया जाता है। कुछ महीनो तक खुला रखनेके वाद मोतियोको पीसकर वनाये हुअे चूनेसे आसपासकी चुनाअी फिरसे कर दी जाती है। यदि मै भूलता नही हू, तो अिस क्रियाको 'अष्टवंध' या अैसा ही कुछ नाम दिया जाता है।

हम कारवारमे थे तव अेक वार कपिलाषष्ठी जैसा दुर्लभ अष्टवधका योग आया। पिताश्री, आअी (मा) और मै—हम तीनो अिस यात्रामें गये। तदडी वदरगाह पर मुझे अुठा लेनेके लिअे 'कुली' किया गया। अुसके कधे पर वैठकर मै गोकर्ण गया। कोटितीर्थमे स्नान किया। गोकर्ण-महावळेश्वरके दर्शन किये। स्मशानभूमि और अुसकी रखवाली करनेवाले हरिश्चद्रका दर्शन किया। हड्डिया डालने पर जिसमें

गल जाती है अैसे पानीका अेक तीर्थ देखा। अहल्याबाअीके अन्नसत्रमे अुस साध्वीकी मूर्ति देखी। सिरमे चोटके निशानवाले और दो हाथोवाले चरवाहे गजाननके दर्शन किये। ब्रह्माकी अेक मूर्ति देखी। और सबसे बडी बात तो यह थी कि रावणकी अुस मशहूर ल्युशकाका कुड भी देखा। आज भी वह भरा हुआ है और अुसमे बदबू आती है। और भी बहुत कुछ देखा होगा, किन्तु वह आज याद नही है।

हा, अिस प्रदेशकी अेक खासियत बताना तो मैं भूल ही गया। घर चाहे गरीबका हो या अमीरका, फर्श तो गारेकी ही होगी, किन्तु वह काले सगमरमरके पत्थरके समान सख्त और चमकनेवाली होती है। सच-मुच अुसमें मुह दिखाअी देता है। गरमीके दिनोमें दोपहरके समय आदमी बगैर कुछ बिछाये गारेके अुस पलस्तर पर आरामसे सो सकता है। समय समय पर यह जमीन गोबर और काजल मिलाकर अुसमे लीपी जाती है। किन्तु हाथसे नही लीपा जाता। सुपारीके पेड पर अेक तरहकी छाल तैयार होती है। अुससे फर्शको घिस-घिसकर चमकीला बनाया जाता है। अिस छालको वहाकी भाषामें 'पोवली' कहते है।

गोकर्णसे वापस लौटते समय तदडी तक समुद्री रास्तेसे वाफर यानी स्टीमलोचमे जानेका विचार था। मौसमी तूफान शुरू होनेको बहुत ही थोडे दिन बाकी थे। आठ दिनके बाद आगबोटें भी बद होनेवाली थी। अिसलिअे वापस लौटनेवाले यात्रियोकी भीडका पार नही था। तदडी बदरसे चढनेवाले यात्रियोको स्टीमरमें जगह मिलेगी या नही, अिस बातका सदेह था। अिसीलिअे हमने स्टीमलोचमे बैठकर स्टीमर तक जल्दी पहुचना पसद किया था।

गोकर्णका बदर बना हुआ नही था। किनारेसे मेरी छाती बराबर पानी तक तो चलकर जाना पडता था। वहासे नावमें बैठकर स्टीम-लोच तक जाना पडता था। नौजवान लोग नाव तक चलकर जाते, किन्तु औरते तथा बच्चे तो कुलियोके कधे पर चढकर या दो कुलियोके हाथोकी पालकीमे बैठकर जाते।

शुरूमें ही अेक अपशकुन हुआ। अेक गरीब बुढिया शरीरसे कुछ स्थूल थी। किन्तु किराये पर दो कुली करने जितने पैसे अुसके

पास न थे। अुसने अेक लोभी कुलीको कुछ अधिक मजदूरी देनेका लालच देकर अपनेको कन्धे पर अुठा ले जानेके लिअे राजी किया। वह था दुबला-पतला। वह किनारे पर बैठ गया। विधवा बुढिया अुसके कन्धे पर सवार हुअी। किन्तु ज्यो ही कुली अुठने गया, त्यो ही दोनो धम्मसे गिर पडे। अितनेमे अेक नटखट लहरने दौडते आकर दोनोको कृतार्थ कर दिया!

यह बोट लगभग आखिरी होनेमें गोकर्णमे भी चढनेवाले यात्री बहुत थे। वे सबके सब स्टीमलोचमें कैसे समाते? अिसलिअे सौ आदमी बैठ सके अितना बडा अेक पडाव (यानी नाव) स्टीमलोचके पीछे बाध दिया गया। और अुसके पीछे कस्टम्स विभागके अेक अफसरकी सफेद नाव बाध दी गअी। मैंने देखा कि खानगी नावोकी पतवारे कडछी या पखे जैसी गोल होती है, जब कि कस्टमवालोकी पतवारे क्रिकेट-बैटकी तरह लंबी-लंबी और चपटी होती है।

हमारा काफला ठीक समय पर निकला। अेक दो मील गये होगे कि अितनेमें आसमान बादलोंसे घिर गया। हवा जोरसे बहने लगी। लहरे जोर जोरसे अुछलने लगी, मानो बडी दावत मिल रही हो। नावे डोलने लगी। और स्टीमलोच परका खिचाव भी बढने लगा। अरे! यह क्या? बारिशके छीटे! बडे बडे बेरोंके जैसे छीटे! अब क्या होगा? लहरें जोर जोरसे अुछलने लगी। स्टीमलोंच बेकाबू घोडेकी तरह अूपर-नीचे कूदने लगी। पीछेकी नावकी रस्सिया कर्र्र् कर्र्र् आवाज करने लगी। अितनेमे स्टीमलोच और नावके बीच अेक लहर अितनी बडी आअी कि नाव दिखाअी ही न दी।

मै स्टीमलोंचमें बॉयलरके पास लकडीके तख्तोके चबूतरे पर बैठा था। हमारे कप्तानको जल्दीसे जल्दी स्टीमर तक पहुचना था। अुसने स्टीमलोच पागलकी तरह पूरी रफ्तारमें छोड दी। चबूतरा गरम हुआ। मै जलने लगा। समझमे न आया कि क्या करू? जरा अिधर-अुधर हटता तो 'समुद्रास्तृप्यन्तु' होनेका डर था! और बैठना बिलकुल नामुमकिन हो गया था। अिस अुलझनसे मुझे बडे भयानक ढंगसे छुटकारा मिला। समुद्रकी अेक प्रचड लहर चढ आअी

और अुसने मुझे नखशिखान्त नहला दिया। अब चबूतरा गरम रहता ही कैसे? पिताश्री परेशान हुअे। आअी (मा) को तो कुलदेवका स्मरण हो आया 'मगेशा! महारुद्रा! मायबापा! तूच आता आम्हाला तार!' मूसलधार वर्षा होने लगी। हम स्टीमलोचवाले तो कुछ सुरक्षित थे। किन्तु पीछेके अुन नाववालोका क्या? शुरू शुरूमें तो स्टीमलोचको पानी काटना था, अिसलिअे अुसमे पानी आसानीसे आ जाता था। किन्तु नावको तो हर हिलोर पर सवार ही होना था, अिसलिअे चाहे जितना डोलने-पर भी अुसके अदर पानी नही आ पाता था। किन्तु जब हवा और बारिशके बीच होड लगी और दोनोका अट्टहास्य बढने लगा, तब अेक ही लहरमे आधीके करीब नाव भर जाने लगी। लहरे सामनेसे आती, तब तक तो ठीक था। नाव अुन पर सवार होकर अुस पार निकल जाती थी। कभी लहरोके शिखर पर तो कभी दो लहरोके बीचकी घाटीमे। कभी कभी तो नाव अेक हिलोर परसे अुतरती कि नीचेसे नअी लहर अुठकर अुसे अधरमे ही अुठा लेती थी। अैसी अनसोची हलचल होने पर अदर जो लोग खडे थे वे धडाधड अेक-दूसरे पर गिर पडते थे।

लेकिन अब लहरे बाजुओंसे टकराने लगी। नावके अदर बैठी हुअी औरतो और बच्चोको तो सिर्फ फूट फूटकर रोनेका ही अिलाज मालूम था। जितने जवामर्द थे वे सब डोल, गागर या डिब्बा, जो भी हाथमें आता अुसीमे पानी भर-भरकर बाहर फेकने लगे। फायर अेजिनके बबे भी अिससे ज्यादा तेजीसे क्या काम कर पाते? नाव खाली होती न होती अितनेमें अेकाध क्रूर लहर विकट हास्यके साथ 'ध . . ड' से नावसे टकराती और अदर चढ बैठती। अुस समय स्त्री-बच्चोकी चीखे और दहाडे कानोको फाडे डालती थी। दिल चीर डालती थी। कुछ यात्री अवधूत दत्तात्रेयको सहायताके लिअे पुकारने लगे, कुछ पढरपुरके विठोबाको पुकारने लगे। कोअी अबा भवानीकी मन्नत मनाने लगे, तो कोअी विघ्नहर्ता गणेशको बुलाने लगे। शुरू शुरूमे स्टीमलोचके कप्तान और खलासी हम सबको धीरज देते और कहते 'अजी आप डरते क्यो है? जिम्मेदारी तो हमारी है। हमने अैसे कअी तूफान देखे है।' किन्तु

देखते ही देखते मामला अितना बढ गया कि कप्तानका भी मुह अुतर गया। वह कहने लगा 'भाअियो, रोनेसे क्या फायदा? अिन्सानको अेक बार मरना तो हैं ही। फिर वह मौत बिस्तरमे आये या घोडे पर, शिकारमे आये या समुद्रमे। आप देख ही रहे है कि हम सब तरहकी कोशिश कर रहे है। किन्तु अिन्सानके हाथमे क्या है? मालिक जो चाहे वही होता है।' मै अुसके मुहकी ओर टकटकी लगाकर देख रहा था। यात्राके प्रारभमे जो आदमी गाजरकी तरह लाल-लाल था, वही अब अरबीके पत्तोकी तरह हरा-हरा हो गया था!

मै अुस समय बिलकुल बालक था। किन्तु गभीर अवसर पर बालक भी सच्ची स्थितिको समझ लेता है। पल पल पर मै स्थानभ्रष्ट हो रहा था। अपने दोनो हाथोंसे पकडकर मै बडी मुश्किलसे अपने स्थानको सभाले हुअे था। हमारा सारा सामान अेक ओर पडा था। किन्तु अुसकी ओर देखता ही कौन? लेकिन पूजाकी देव-मूर्तिया और नारियल बेंतकी जिस 'साबळी' में रखे हुअे थे, अुसे मै अपनी गोदमे लेकर बैठना नही भूला था।

मेरे मनमे अुस समय कैसे कैसे विचार आ रहे थे! वह काल था मेरी मुग्ध भक्तिका। रोज सुबह दो-दो घटे तो मेरा भजन चलता था। मेरा जनेअू नही हुआ था। अिसलिअे सध्या-पूजा तो कैसे की जाती? फिर भी पिताश्री जब पूजामे बैठते, तब पास बैठकर अुनकी मदद करनेमे मुझे खूब आनद आता। मनमे आया, आज यदि डूबना ही भाग्यमें बदा हो, तो देवताओकी यह 'साबळी' छातीसे चिपटाकर ही डूबूगा। दूसरे ही क्षण मनमे विचार आया, माके देखते ही लोचमे से पानीमे लुढक जाअूगा तो माकी क्या दशा होगी? यह विचार ही अितना असह्य मालूम हुआ कि मेरी सास रुध गअी। सीनेमे अिस तरह दर्द होने लगा, मानो पत्थरकी चोट लगी हो। मैंने अीश्वरसे प्रार्थना की कि 'हे भगवान्, यदि डुबाना ही हो तो अितना करो कि 'आअी' और मै अेक-दूसरेको भुजाओमे लेकर डूबे।'

हरेक बालककी दृष्टिमें अुसके पिता तो मानो धैर्यके मेरु होते है। बालकका विश्वास होता है कि आकाश भले टूटे, किन्तु

पिताका धैर्य नही टूट सकता। अिसलिअे जब अैसे अवसर पर बालक अपने पिताको भी दिङ्मूढ बना हुआ, घबडाया हुआ देखता है, तब वह व्याकुल हो अुठता है। मैं तूफानसे अितना नही डरा था, बरसातसे भी अितना नही डरा था, 'आदमकी बू आ रही ह, मैं अुसे खाअूगी' अैसा कहते हुअे मुह फाडकर आनेवाली लहरोंसे भी जितना नही डरा था, जितना पिताजीका परेशान चेहरा देखकर तथा अुनकी रुखी हुअी आवाज सुनकर डर गया।

हरेक आदमी कप्तानसे पूछता, 'हम कितनी दूर आ गये है? अभी कितना फासला बाकी है?' चारों ओर जहा भी नजर डालते वहा बारिश, आधी और तरगोका ताडव ही नजर आता। अितना पानी गिरा, किन्तु आकाश जरा भी नही खुला। मैंने कप्तानसे गिड-गिडाकर कहा, 'लाँचको कुछ किनारेकी ओर ले चलो न, जिससे यदि वह डूब ही गअी तो भी चद लोग तो किनारे तक तैरकर जा सकेगे।' वह अुत्साह-हीन हास्यके साथ बोला, 'कैसा बेवकूफ है यह लडका! किनारेसे जितने दूर है, अुतने ही सुरक्षित है। जरा भी पास गये तो शिलाओंसे टकराकर चकनाचूर हो जायेगे। आज तो जानबूझ कर हम किनारेसे दूर रह रहे है। स्टीमर तक पहुच गये कि गगा नहाये समझो। आज दूसरा अिलाज ही नही है।'

मैंने अिससे पहले कभी बडी अुम्रके लोगोको अेक-दूसरेसे गले लगकर रोते नही देखा था। वह दृश्य आज अुस नावमें देखा। अुसमें स्त्री-पुरुष अेक-दूसरेको भुजाओंमें लेकर फूट फूटकर रो रहे थे। दो-तीन बच्चोवाली अेक मा अपने सब बच्चोंको अेक ही साथ गोदमे लेनेकी कोशिश कर रही थी। केवल पाच-पचीस जवामर्द जीतोड मेहनत करके समुद्रके साथ अ-समान युद्ध कर रहे थे। तूफान अितना बढ गया और स्टीमलाँच तथा नाव अितनी अधिक डोलने लगी कि लोग डरके मारे रोना तक भूल गये। मृत्युकी अेक काली छाया सर्वत्र फैल गयी। होशमे थे सिर्फ नावके बहादुर नौजवान और काली-खाकी वर्दी पहने हुअे स्टीमलाँचके खलासी। हमारा कप्तान हुक्म छोडते छोडते कभी परेशान हो अुठता; किन्तु खलासी बराबर अेकाग्र मनसे, बिना परेशान

हुअे, अचूक ढगसे अपना अपना काम कर रहे थे। कर्मयोग क्या अिससे भिन्न होगा?

आखिरकार तदडी वदर आया। हम स्टीमरको देखते अुससे पहले ही स्टीमरने हमारी लॉंचको देख लिया। स्टीमरने अपना भोंपू वजाया 'भो . !' मानो सवकी करुण वाणी सुनकर अीश्वरने ही 'मा भै.' की आकाशवाणी की हो। हमारी स्टीमलॉंचने अपनी तीक्ष्ण आवाजसे जवाव दिया। सवके दिलमे आशाके अकुर फूटे। चारो ओर जय-जयकार हुआ।

अितनेमे, मानो अपना अतिम प्रयत्न कर देखनेकी दृष्टिसे और हम सवके भाग्यके सामने हारनेसे पहले आखिरी लडाअी लड लेनेके लिअे अेक वडी लहर हमारी लॉंच पर टूट पडी। और पिताजी जहा वैठे थे वही पर पीछेकी ओर गिर पडे। मैंने कातर होकर चीख मारी। अव तक मैं रोया नही था। मानो अुसका पूरा वदला मुझे अेक ही चीखमे ले लेना था। दूसरे ही क्षण पिताजी अुठ वैठे और मुझे छातीसे लगाकर कहने लगे, 'दत्तू, डरे मत। मुझे कुछ भी नही हुआ है।'

हम स्टीमरके पास पहुच गये। किन्तु विलकुल पास जानेकी हिम्मत कौन करे? कस्टमवाली नावको तो अुन लोगोने कभीका अलग कर दिया था, क्योंकि लॉंच तथा वडी नावके झोंके वह सह नहीं सकती थी। अुसकी सुरक्षितता अलग होनेमे ही थी। स्टीमलॉंचने दूरसे स्टीमरकी प्रदक्षिणा कर ली। मगर किसी भी तरह पास जानेका मौका नही मिला। तरगोंके धक्केसे लॉंच यदि स्टीमरके साथ टकरा जाती, तो विलकुल आखिरी क्षणमे हम सव चकनाचूर हो जाते। आखिर अूपरसे रस्सा फेका गया और हमारे खलासी लॉंचकी छत पर खडे होकर लम्वे लम्वे वासोंसे स्टीमरकी दीवालोंसे होनेवाली लॉंचकी टक्करको रोकने लगे। तरगे अुसे स्टीमरकी ओर फेकतेकी कोशिश करती, तो खलासी अपने लम्वे लम्वे वासोकी नोकोकी ढाल वनाकर सारी मार अपने हाथों और पैरो पर झेल लेते। तिस पर भी अतमे स्टीमरकी सीढीसे स्टीमलॉंचकी छत टकरा ही गअी, और कडडड आवाज करता हुआ अेक लम्वा पटिया टूटकर समुद्रमें जा गिरा।

मैं पास ही था, अिसलिअे स्टीमरमे चढनेकी पहली बारी मेरी ही आअी। चढनेकी काहेकी? गेंदकी तरह फेंके जानेकी! खुद कप्तान और दूसरा अेक खलासी लाँचके किनारे खडे रहकर अेक अेक आदमीको पकडकर स्टीमरकी सीढीके सबसे नीचेके पाये पर खडे खलासियोंके हाथमे फेंक देते थे। अिसमे खास सावधानी तो यह रखी जाती कि जब लाँच हिलोरोके गड्ढेमे अुतर जाती तब वे लोग राह देखते और दूसरे ही क्षण जब वह तरगोके शिखर पर चढ जाती और सीढी बिलकुल पास आ जाती, तब झट यात्रीको सौंप देते! दोनों ओरके खलासी यदि आदमीके हाथ पकड रखें तो दूसरे ही क्षण जब लाँच तरगोंके गड्ढेमे अुतरे तब अुसकी धज्जिया अुड जाय! मैं अूपर सीढी पर चढा और मुडकर देखने लगा कि मा आती है या नहीं। जब अेक बिलकुल अजनबी मुसलमानको माकी बाहें पकडते देखा तो मेरा मन बेचैन हो अुठा। किन्तु वह समय था जान बचानेका। वहा कोमल भावनाये किस कामकी? थोडी ही देरमें पिताजी भी आ पहुचे। देवताओकी 'सावळी' तो मैंने कधे पर ही रखी थी। अूपर अच्छी जगह देखकर पिताजीने हमें बिठा दिया और वे सामान लाने गये। मैं श्रद्धालु लडका अवश्य था, पर अुस समय मुझे पिताजी पर सचमुच गुस्सा आया। भाडमे जाये सारा सामान! जान खतरेमे डालनेके लिअे दुबारा क्यो जाते होंगे? किन्तु वे तो तीन बार हो आये। आखिरी बार आकर कहने लगे, 'गोकर्ण-महाबळेश्वरके प्रसादका नारियल पानीमे गिर गया।' अेक ही क्षणमे आअी और मैं दोनो बोल अुठे, आअीने कहा, 'अरे अरे!' और मैंने कहा, 'बस अितना ही न?'

लाँचवाले सब यात्रियोके चढनेके बाद नाववालोकी बारी आयी। वे सब चढे। अुसके बाद लाँच और नाव निशाचर भूतोकी तरह चीखें मारती हुअी तदडीके किनारेकी ओर गअी और किनारे पर तपश्चर्या करते बैठे हुअे यात्रियोंको थोडे थोडे करके लाने लगी। तूफान अब कुछ ठडा पडा था। मगर अधेरी रात और अुछलती हुअी तरगोंके बीच अुन लोगोका जो हाल हुआ होगा, अुनका वर्णन कौन कर सकता है?

स्टीमर यात्रियोंसे ठसाठस भर गअी। जो भी बोलता, समुद्रमें डूबे हुअे अपने सामानकी बाते ही सुनाता। आखिर यात्री सब आ गये। मेहर मालिककी कि किसीकी जान न गयी।

स्टीमर आखिर छूटी और लोग अपनी अपनी पुरानी यात्राओंके अैसे ही खतरनाक सस्मरण अेक-दूसरेको सुनाकर आजका दु:ख हलका करने लगे। बडी देर तक किसीको नीद नही आअी। मैं कब सोया, कारवारका बदरगाह सुबह कब आया, और हम घर पर कब पहुचे, आज कुछ भी याद नही है। किन्तु अुस दिनका तूफानका वह प्रसग स्मृतिपट पर अितना ताजा है, मानो कल ही हुआ हो। सचमुच .

दु:ख सत्य, सुख मिथ्या, दु:ख जन्तो पर धनम्।

अक्तूबर, १९२५

२३

भरतकी आंखोंसे

किनारे पर खडे रहकर समुद्रकी शोभाको निहारनेमे हृदय आनदसे भर जाता है। यह शोभा यदि किसी अूचे स्थानसे निहारनेको मिले तब तो पूछना ही क्या? जहाजके अूपरके हिस्सेसे या देवगढ जैसे टापूके सिर परसे समुद्रका किनारे पर होनेवाला आक्रमण देखनेमें अेक अनोखा ही आनद आता है। मनमें यह भाव अुत्पन्न होते ही कि हम समुद्रके राजा है और तरंगोकी यह फौज हमारी ही ओरसे सामनेके भूमि-भागको पादाक्रान्त कर रही है, हमारे हृदयमें अेक प्रकारका अभिमान स्फुरित होने लगता है। ध्यानसे देखने पर मालूम होता है कि समुद्रका हरा-हरा या काला-काला पानी मस्तीमे आकर सफेद बालूके किनारे पर जोरोंसे आक्रमण करता है और आखिरी क्षणमें 'अजी, यह तो महज विनोद ही था' कहकर हस पडता है। तब अुसके अिस मिथ्या-भाषण पर हम भी खिलखिला कर हस पडते है।

समुद्र-किनारे रहनेवालोंको अिस तरहके दृश्य कभी भी देखनेको मिल जाते हैं। मगर समुद्र और वालुका-पट जहां अखंड जलक्रीडा करते हों, अुस दिशामें समकोणमें अूंचाओ पर खडे रहकर वालूका यह जलविहार और तरंगोंका सिकता-विहार निहारनेका सौभाग्य यदि किसी दिन प्राप्त हो तो मनुष्य 'अद्य मे सफला यात्रा, धन्योऽहं त्वत्प्रसादतः।' क्यों नहीं गायेगा ?

सन् १८९५ में मैंने जिस गोकर्णकी यात्रा की थी और जिस गोकर्णके दर्शन मैंने श्री गंगाधरराव देशपांडेके साथ दस साल पहले किये थे, अुसी गोकर्णके पवित्र किनारे पर संगववेला* में समुद्रके दर्शन करनेका सौभाग्य प्राप्त होनेसे मैं आनन्द-विभोर हो गया था। गोकर्णका समुद्र-तट काफी विस्तृत और भव्य है। दाहिनी यानी अुत्तरकी ओर कारवारके पहाड और टापू धुंधले क्षितिज पर अस्पष्ट-से दिखाओ देते हैं, बायीं यानी दक्षिणकी ओर रामतीर्थका पहाड और अुस पर खडा भरतका छोटा-सा मंदिर दिखाओ देता है। और सामने अगाध अनंत सागर 'अमर होकर आओ' कहता हुआ अहोरात्र आमंत्रण देता है। अिस तरहका हृदयको अुन्मत्त करनेवाला दृश्य अेक बार देख लेने पर भला कभी भूला जा सकता है ? रामतीर्थकी पहाडी पर जाकर वहांके झरनेमें स्नान करनेका यदि संकल्प न किया होता, तो सागरके अिस भव्य दृश्यमें तैरते रहना ही मैंने पसंद किया होता। नारियलके बगीचों और खुरदरी शिलाओंको पार करके हम रामतीर्थ तक पहुंचे। वहांकी धाराके नीचे बैठकर नहानेका सात्त्विक जीवनानंद या स्नानानंद आपाद-मस्तक लेकर रामेश्वरके दर्शन किये। शांडिल्य महाराज नामक अेक साधुने असंख्य लोगोंमें अुत्साह प्रकट करके यहांके मंदिरका निर्माण मुफ्तमें करवा लिया था। यह मंदिर समुद्रमें घुसे हुअे अेक अुन्नत पहाड पर स्थित है। मंदिरकी अूंचाओी परसे वालूका पट और लहरोंका

*गायोंका दोहन करनेके बाद तथा गोशाला साफ करनेके बाद वनमें चरनेके लिअे अुन्हें अिकट्ठा किया जाता है, अुस समयको (सुबहके करीब नौ बजे) 'संगववेला' कहते हैं। यह शब्द वेदकालीन है।

पट जहा अेक-दूसरेका आलिंगन करके क्रीडा करते है, अुसका मीलो तक फैला हुआ सौंदर्य हम देख सके। नारियलके दो-अेक वृक्षोने अिसी स्थान पर खडे रहकर सागर-सिकता-मिलनके दृश्यका आनद सेवन करनेकी वात तय की थी। अपनी डालिया हिलाकर अुन्होने हमसे कहा 'आअिये, आअिये! बस यही स्थान अच्छा है। यहासे सिकता-सागरके मिलनकी रेखा नजरके सामने सीधी दीख पडती है।'

यहासे मैंने देखा कि पानीकी तरगोको सागरके गहरे पानीका सहारा था। लेकिन बालूके पटको सहारा कौन दे? कोअी पहाडी नजदीकमें नही थी, अिसलिअे नारियल और सरो जैसे पेडोंने यह जिम्मेदारी अपने सिर पर अुठा ली थी। ये अूचे पेड और सागरका गहरा पानी — दोनोंके हरे रगमें फर्क तो जरूर था, किन्तु अुनके कार्यमें कोअी फर्क नही मालूम होता था। पेड अपने पावोंके नीचेकी बालूको आशीर्वाद देते और समुद्रका गहरा पानी लहरोंको आगे बढनेके लिअे प्रोत्साहन देता। यह दृश्य देखकर भला कौन तृप्त होगा?

किसी दृश्यसे मनुष्य तृप्ति अनुभव नही करता, अिसलिअे अेक जगह खडे रहकर अुसीका पान करते रहना भी मनुष्यको पसन्द नही आता। मैंने देखा कि रामतीर्थके झरनेकी और रामेश्वरके मदिरकी मानो रखवाली करनेके लिअे श्रीरामचद्रजीके प्रवधक प्रतिनिधि भरत यहाकी पहाडीके अूपर खडे है। अुनके दर्शन तो करने ही चाहिये। और बन सके तो योग्य अूचाअी पर जाकर अुनकी दृष्टिसे भी सागरको देखना चाहिये। विना अूचे चढे विशाल दृष्टि कैसे प्राप्त हो? सीढियोंने निमत्रण दिया, अिसलिअे नाचता और कूदता या अुडता हुआ मै भरतके मदिर तक पहुच गया, मानो मुझे पख लग गये हो। वहा छोटे शुभ्रकाय भरतजी सुदर पीतावर पहनकर समुद्र-दर्शन कर रहे थे।

मेरी दृष्टिसे भरतकी मूर्तिके आसपास मदिर बनाना ही नही चाहिये था। अुन्हें ताप, पवन और बरसातकी तपश्चर्या ही करने देना चाहिये था। समुद्र परसे आनेवाले शीतल पवनमे सूर्यका ताप वे आसानीसे सह लेते। और लोग यह कैसे भूल गये कि भरत आखिर सूर्यवशी राजपुत्र थे? वायुपुत्र हनुमानका और सूर्यवशी राघवोंका

स्मरण करते हुअे हम वहा काफी देर तक खडे रहे। हृदयमे भक्ति-भाव अुमड रहा था और सामने समुद्रके पानीमे ज्वार चढ रही थी।

अुस दिनके अुस भव्य और पावन दर्शनके लिअे रामतीर्थका और दिक्पाल भरत महाराजका मै सदा आभारी रहूगा।

मअी, १९४७

२४

वेळगंगा — सीताका स्नान-स्थान

वेरूळग्रामका हरा कुड देखकर लौटते समय रास्तेमें वेळगगाका झरना देखा था। झरना अितना छोटा था कि अुसे नाला भी नही कह सकते। किन्तु अुसे 'वेळगगा'का प्रतिष्ठित नाम प्राप्त हुआ है। नदीका नाम सुनने पर अुसका अुद्गम कहा है, अिसकी खोज किये विना क्या रहा जा सकता है? किन्तु हम तो गुफाओंकी अद्भुत कारीगरीमें मस्त होकर विचर रहे थे, अिसलिअे हमे वेळगगाका स्मरण तक नही हुआ। 'अपौरुषेय' कारीगरीवाली कैलासकी गुफाको देखकर हम जैन तीर्थंकरोंकी अिन्द्रसभाकी ओर वढ रहे थे। अितनेमे श्री अच्युत देशपाडेने कहा, 'वेळगगाका अुद्गम यही है।' नाम सुनते ही वेळगगा दिमाग पर सवार हुअी!

अिन्द्रसभासे लौटते समय हम २९ वी गुफामे जा पहुचे। अनेक गुफाओमे घूमनेके कारण काफी थकावट मालूम हो रही थी। सारे बदनकी हड्डियोमे दर्द होने लगा था। ठीक अुसी समय बबअीके निकट स्थित धारापुरीकी अेलिफटा गुफाका स्मरण करानेवाली यहाकी २९ वीं गुफाने भव्यताका कमाल कर दिखाया। यह कहना मुश्किल था कि घूम-घूमकर हमारे पैर ज्यादा थके थे या देख-देखकर हमारी आखे ज्यादा थकी थी। हम निश्चय कर ही रहे थे कि अब नाश्तेके साथ थकावट अुतारनेके बाद ही आगे जायगे, अितनेमे सीताके स्नान-स्थानका स्मरण हुआ।

अयोध्यासे जनस्थान तककी यात्रा सीताने पैदल की थी। वहासे रावण अुसे अुठाकर लका ले गया था। दु खावेगमे सीताने दक्षिणका यह प्रदेश शायद देखा भी न होगा। किन्तु रामने रावणका वध करके अुसीके पुष्पक विमानमे बैठकर जब लकासे अयोध्या तककी हवाअी यात्रा की, तब सीतामाताको नीचेकी प्राकृतिक शोभा देखकर कितना आनद हुआ होगा! रामायणमे वाल्मीकिने प्राकृतिक सौंदर्यके प्रति सीताके पक्षपातका वर्णन जहा-तहा किया है। सृष्टि-सौदर्य देखकर सीताको कितना अलौकिक आनद होता था, अिसका वर्णन भवभूतिने भी किया है। सीताने यदि भारतके ललित और भव्य, सुन्दर और पवित्र स्थानोका वर्णन स्वय लिखा होता, तो मै समझता हू कि अुसके बाद सस्कृतके किसी भी कविने सृष्टि-वर्णनकी अेक पक्ति भी लिखनेका साहस न किया होता।

सीतामाता पहाडोंको देखकर आनदित होती, नदियोको अपने आनदाश्रुओंसे नहलाती, हाथीके बच्चोको पुचकारती, सारस-युगलोको आशीर्वाद देती, सुगधित फूलोके सौरभसे अुन्मत्त होती और प्रत्येक स्थान पर सारे आनदको राममय बनाकर अपने-आपको भूल भी जाती। लकामे राम-विरहसे झूरनेवाली सीता भी वहाकी अेक नदीसे अेकरूप हुअे बिना न रह सकी। आज भी लकामे 'सीतावाका' वर्षा-ऋतुमें अपने दोनो किनारो परसे बह निकलती है और जितने खेतोको डुबाती है अुन सबको सुवर्णमय बना देती है। सीताका जन्म ही जमीनसे हुआ था। भारतभूमिकी भक्तिके रूपमे आज भी वह हमे दर्शन देती है।

सीताको लगा होगा कि गोदावरीके विशाल प्रदेशमे चल-चलकर अब हम थक गये है। लक्ष्मणको वनफल लानेके लिअे भेज देगे। और राम तो धनुष लेकर पहरा देते ही रहेगे। तब अिस चद्राकार करारके नीचे वेळगगाका आतिथ्य स्वीकार करके थोडा-सा जलविहार क्यो न कर लिया जाय?

* * *

पहले तो हमारी वृत्ति किसी अनुकूल जगहसे वेळगगाके सुन्दर प्रपातका सिर्फ दर्शन करनेकी ही थी। अिसलिअे २९ नवरकी गुफामें, अुसकी वाअी ओर और हमारी दाहिनी ओर, जो झरोखा दिखाअी देता था वहा हम गये। मनमें यह चोरी तो अवश्य थी कि यदि नीचे जाया जा सकेगा, तो वहाका आनद लूटनेमें हम चूकेंगे नही।

झरोखेसे देखा तो अेक पतला-सा प्रपात पवनके साथ खेलता हुआ नीचे अुतर रहा है और अपनी अगुलिया हिलाकर हमे चुपचाप न्योता दे रहा है। मै विचार करने लगा कि नीचे अुतरा जा सकेगा या नही? अितना समय खर्च करना अुचित होगा या नही? साथियोको मेरी यह स्वच्छदता रुचेगी या नही? मुझको अिस प्रकार अुलझनमे पडा हुआ देखकर घाटीमें दौड-धाम करनेवाले नन्हे नन्हें पक्षी तिरस्कारमे हस पडे. "देखो तो, कितना अरसिक मनुष्य है! प्रपात अितने प्रेमसे न्योता दे रहा है और यह विचारमें डूबा हुआ है! अिन मानवोमे काव्य लिखनेवाले कअी हैं, किन्तु काव्यका अनुभव करनेवाले विरले ही होते है। और यह सामनेवाला आदमी अपने-आपको प्रकृतिका वालक कहलवाता है। आखें फाड-फाडकर प्रपातकी ओर देख रहा है। नीचेका स्फटिक जैसा निर्मल पानी देखकर अिसका हृदय भी अुमड पडता है। किन्तु यह सकल्प नही कर पाता। अिसके पैर नही अुठते। अिसे किसीने शाप तो दिया नही कि 'तू पत्थर वनकर पडा रहेगा।' फिर भी यह पत्थरसे चिपका हुआ है!"

पक्षियोकी यह निर्भर्त्सना सुनकर मै लज्जित हुआ, और होगमें आनेके पहले ही मेरे पैर सीढिया अुतरने लगे। मै सोच रहा था कि दाहिनी ओर वाले गड्ढेको लाघकर अुस पारसे प्रपातके पास जाया जाय, या वाअी ओरसे कगारके पीछेसे होकर २८ नवरकी छोटी-सी गुफा तक पहुचा जाय और वहासे प्रपातके जलकणोंका आनन्द लिया जाय? दाहिनी ओरका रास्ता लम्बा और सुरक्षित था, जब कि वाअी ओरवाले रास्तेमे काव्य था। नहानेकी तैयारी करके ही मै अुतरा था, अिसलिअे भीगनेका तो सवाल ही नही था।

२८ नंबरकी छोटी-सी गुफामे अेक दो मूर्तिया हैं; किन्तु अुस गुफाके अदर विशेष काव्य नही है। काव्य तो वाहर ही विखरा हुआ है। अिस गुफामे वैठकर यदि कोअी वाहर देखे, तो पानीके पतले परदेमें से अुसे अपने सामनेकी सृष्टिका जीवनमय विस्तार दिखाअी देगा। प्रपात तो वहा गिरता है, किन्तु वह अितना घना नही है कि आरपार कुछ दिखाअी ही न दे। यह गुफा पानीके परदेके पीछे ढकी हुअी रहने पर भी विलकुल भीगती नही, क्योंकि खिलाडी पवन भी पानीके तुषारोंको गुफाके अदर नही ले जा सकता। गुफाके जरा वाहर आयें तो फिर यह शिकायत मत कीजिये कि पवनने आपको गीला क्यो कर दिया।

हम अिस गुफासे नीचे अुतरे। कहनेकी आवश्यकता नही कि पहाडी चतुष्पाद वनकर ही हमें अुतरना पडा। प्रपात जिस पत्थर पर गिरता है, वही मैंने अपना आसन जमाया। सौ फुटकी अूचाअीसे जो पानी गिरता है, वह केवल गुदगुदा कर ही सतोष नही मानता। अुसने पहले सिर पर थप्पडे मारना शुरू किया, वादमें कधे पर चपतें जमाअी, फिर पीठ पर रप् रप् रप् रप् चपते वरसने लगी और यात्राकी सारी थकावट अुतरने लगी। अक्सर हम पहले मालिश करा कर वादमे नहाते हैं। यहा तो मालिश ही स्नान था और स्नान ही मालिश! सीतामाताने यहा अपने वालोको खोलकर पानीमें साफ-सुथरा कर लिया होगा।

किन्तु यह क्या? मै घुमक्कड यात्री हू या दुनियाका वादशाह हू? मेरी पलथीके नीचे यह रत्नखचित आसन कहासे आ गया? पानीके तुषार चारो ओर अैसे फैल रहे है, मानो मोतियोकी माला हो! और आसनके नीचे दो सुन्दर अिंद्रधनुष मुझे सम्राट्की प्रतिष्ठा प्रदान कर रहे है! अलकापुरीके कुवेरसे मेरा वैभव किस वातमे कम है? अिंद्रधनुष्की दुहरी किनारवाले, चादीके वागोंके आसन पर मै वैठा हू और मोतियोकी मालाका अुत्तरीय ओढकर यहा आनद कर रहा हू। माथे पर सूर्यनारायणका चमकता हुआ छत्र है और चारों ओर ये अुडते हुअे द्विजगण जगन्नायके स्तोत्र गा रहे है!

वदन साफ करनेके लिअे नही, वल्कि व्यायामका आनद मनानेके लिअे पत्थर पर सवार होकर प्रपातके नीचे मैंने अपना सारा वदन मला। स्नान-पानका आनद लूटा और रामरक्षा-स्तोत्रका स्मरण किया। सीतामैयाने जो स्थान पसद किया, वहा रामरक्षा-स्तोत्रके गायनका ही स्फुरण होना स्वाभाविक था। और सिरसे लेकर पैर तकके सारे गात्रोको मलकर साफ करते समय 'शिरो मे राघव पातु, भाल दशरथात्मज' आदि श्लोकोको याद करनेका यह न्यास कितना अुचित था!

*   *   *

स्वर्गको गये हुअे लोग भी यदि अतमें मृत्युलोकमें वापस आते है, तो फिर अिस प्रपात-स्नानका नशा चढने पर भी अुसमे से व्युत्थान करके फिर गद्यमय जीवनमे प्रवेश करनेकी आवश्यकता मुझे मालूम हुअी, अिसमें भला आश्चर्य कैसा? अिसलिअे आखिर अितने सारे आनदका स्वेच्छासे त्याग करनेकी अपनी सयम-शक्तिको सराहता हुआ मैं वापस लौटा। और नये कपडे पहनकर नाश्तेके लिअे तैयार हुआ। नाश्ता क्या — वह तो कला-निरीक्षणके लिअे की हुअी दोपहर तककी तपस्या और प्रपात-स्नानकी शातिके वादका अमृत-भोजन तथा वेळगगाका कृपा-प्रसाद ही था!

गुफामे स्थिर होकर खडे हुअे द्वारपालोके यदि आखे होती, तो अुन्हें जरूर हममे औीर्ष्या हुअी होती!

सितम्बर, १९४०

२५
कृषक नदी घटप्रभा

घटप्रभा और मलप्रभा हमारी ओरके कर्णाटककी प्रमुख नदिया है। वे स्वभावसे किसान है। वे जहा जाती है वहा खेती करती है, जमीनको खाद देती है, पानी देती है और मेहनत करनेवाले लोगोको समृद्धि देती है। अिसमें भी गोकाकके पास अेक वडा वाघ वनाकर मनुष्यने अिस नदीकी शक्ति वढा दी है। जहा नदीके पानीकी पहुच न थी, वहा अिस वाधके कारण वह पहुच गयी। घटप्रभाका नाम लेते ही गोकाकके पासका लवा वाघ ध्यानमे जरूर आयेगा। वडी वडी नदिया जहा-तहासे पक खीच-खीचकर ले जाती है, जब कि अैसी छोटी नदिया, वन सके वहासे, थोडा थोडा करके अच्छा कीमती पक किसानोको अपने पानीके साथ मुफ्तमे देकर अपने वालकोका पालन करती है। सचमुच घटप्रभा कृपक जातिकी नदी है।

वेलगामसे अितना नजदीक होते हुअे भी गोकाकके पासका घटप्रभाका प्रपात अभी देखना वाकी ही है।

१९२६–'२७

२६
कश्मीरकी दूधगंगा

श्रीनगरमे भला पानीकी कमी कैसे हो?

सतीसर नामक पौराणिक सरोवरको तोडकर ही तो कश्मीरका प्रदेश वना हुआ है। झेलम नदी मानो अिस अुपत्यकाकी लवाअी और चौडाअीको नापती हुअी सर्पाकारमें वहती है। अिसके अलावा जहा नजर डालें वहा कमल, सिंघाडे तथा किस्म किस्मकी साग-सब्जी पैदा करनेवाले 'दल' (सरोवर) फैले हुअे दीख पडते है। जिस वर्ष जल-प्रलय न हो वही सौभाग्यका वर्ष समझ लीजिये। अैसे प्रदेशमे गाडीके संकरे रास्ते जैसे छोटे प्रवाहको भला पूछे ही कौन?

फिर भी अैसे अेक प्रवाहको कश्मीरमे भी प्रतिष्ठा मिली है।

अिसमें पानी अधिक चाहे न हो, किन्तु यह प्रवाह अखड रूपमे वहता है। न कम होता है, न वढता है। अिसका पानी सफेद रगका है, अिसीलिअे शायद अिसका नाम दूधगगा रखा गया होगा। जिस नारायणाश्रममे हम रहते थे, अुसके नजदीकसे ही यह दूधगगा वहती थी। अेक लबी लकडी डालकर अुस पर पुल वनाया गया था। नहानेके लिअे दूधगगा बहुत अनुकूल है। अुसमे खडे खडे नहाया जा सकता है, और तैरना हो तो थोडा तैरा भी जा सकता है। वुवा बीमार थे तव वरतन माजनेमें, कपडे धोनेमे और अन्य कामोमे दूधगगाकी मुझे काफी मदद मिलती थी। अुस अपरिचित प्रदेशमे जव हम दोनो वीमार पडे, तव यदि दूधगगाकी मदद हमें न मिलती तो हमारी क्या दशा हुअी होती?

कृतज्ञताके कारण दूधगगाका माहात्म्य खोजनेकी अिच्छा हुअी। सार्वजनिक पुस्तकालयमें जाकर मैंने अनेक पुस्तके ढूढ निकाली। यह जानकर मुझे आश्चर्य हुआ कि अितनी छोटी दूधगगा बहुत दूरसे आती है और दूर दूर तक जाती है। किस ऋषिने दूधगगाको जन्म दिया, किस-किसने अुसके किनारे तपस्या की आदि सव जानकारी मैंने खोज करके प्राप्त कर ली। अितिहासकी अनत घटनाओंकी तरह यह जानकारी भी विस्मृतिके प्रवाहमे फिरसे वह गअी, और असली कृतज्ञता ही केवल शेष रही है।

अितना याद है कि रोज सुवह मठके साधु स्नान करनेके लिअे नदी पर अिकट्ठा होते थे। और रातको जव सव सो जाते तव मैं दूधगगाके किनारे वैठकर आकाशके ध्रुवका ध्यान करता था। मेरा ध्यान भी अधिक न चला, क्योंकि कश्मीरमे ध्रुव अितना अूचा होता है कि अुसकी ओर देखनेमें गर्दन दर्द करने लगती है। वहा सप्तर्षिमे से अरुंधती-सहित वसिष्ठको सीधा सिर पर विराजमान देखकर कितना आश्चर्य मालूम होता था!

कश्मीर-तल-वाहिनी सती-कन्या दूधगगाको मेरा प्रणाम।

१९२६–'२७

२७

स्वर्धुनी वितस्ता

'ससारमे अगर कही स्वर्ग है,
तो वह यही है, यही है, यही है।'

सम्राट् जहागीरने झेलम नदीके अुद्गमको देखकर अूपरका वचन कहा था। अुसका यह वचन वहाके अष्टकोनी तालावके पास पत्थरमें खोद दिया गया है। सचमुच यह स्थान भू-स्वर्गके पदके योग्य ही है। वेदकालमे अिस नदीका नाम था वितस्ता।

जहा अग-अगमें और रोम-रोममे प्राण फूकता हुआ ठडा मीठा पवन वहता है, जहा वनश्री अपने यौवनका पूरा-पूरा अुन्माद प्रकट करती है, जहाके पहाड अपने सौंदर्यसे मनमे सदेह पैदा करते है कि ये पहाड है या रगभूमिका परदा, और जहाकी शाति चैतन्यसे भरी हुअी है — वहीसे झेलमका अुद्गम हुआ है। जहागीरने अिस अुद्गम-स्थान पर अेक अष्टकोनी तालाव बनवाया है। और अदरका पानी? वह तो मानो नीलमणिका अमृत-रस हो! देखते ही मनमे आता है कि यहा नीलमे रगे कपडे किसीने धो डाले है। किन्तु अितना स्वच्छ और मीठा पानी अन्यत्र कहा मिलेगा?

अिस तालावके अेक ओरसे जो सुन्दर, सीधी नहर वहती है वही है हमारी वितस्ता-झेलम। अिस स्वर्गका आनद लूटनेके लिअे मानो गधर्व मछलियोंका रूप धारण करके अिस तालाव और नहरमें नहानेके लिअे अुतरे है। अैसी अुसकी शोभा है। अिस प्रदेशमें मछलियोको पकडनेकी यदि सख्त मनाही न होती तो भला अिस सौंदर्यकी क्या दशा हो जाती? मैने अेक वडा वरतन नहरमें डुबो दिया तो अुसमे नहरकी पाच-सात मछलिया आ गअी — अितनी भोली है वे। मैंने अुनको फिरसे नहरमें छोड दिया।

अिस स्थानको वेरीनाग कहते है। यहासे आगे खनवल नामक अेक स्थान आता है। यहासे झेलम नदी नावे चलाअी जा सकें अितनी बडी हो जाती है। खनवलके पास ही अनतनाग नामक अेक सुन्दर तालाव

है। यहासे आगे सारी जमीन समतल है। कश्मीरकी सारी घाटी अिसी तरह चारों ओर सपाट है।

झेलमको सीधा चलनेकी सूझती ही नही। मोड लेती लेती मद गतिसे वह आगे वढती है। अुसके किनारे अेक वडी वैभवशाली सस्कृतिका विकास हुआ और अस्त भी हुआ। परन्तु वितस्ता आज भी जैसीकी तैसी ही वहती है।

खनवलसे आगे वीजव्यारा नामक अेक स्थान आता है। वहा चिनारका अेक खास पेड हमने देखा। नौ आदमियोने हाथ फैलाकर अुसको आलिंगन किया और अुसके तनेको नापा। ठीक चौपन फुटका घेरा था।

वीजव्याराके मदिरके वारेमे हमने यहा अेक मजेदार दतकथा सुनी, जो अग्रेज लेखकोने भी लिख रखी है।

धर्मांध मुसलमान जब यह मदिर तोडनेके लिअे आये, तब यहाके पुजारियोने अुनका न तो कोअी विरोध किया, न धन देकर मन्दिरको वचानेकी वात की। अुन्होने कहा, "आअिये, आअिये, मदिरको तोड डालिये। हमारे शास्त्रोमे लिखा है कि यवन आयेंगे और मूर्तिका नाश करके मदिरको तोड डालेगे। हमारे शास्त्रोमे जो लिखा है, वह झूठा होनेवाला नही है।" वुतशिकन गाजीको लगा, "अिनका मदिर यदि तोडेंगे तो अिन काफिरोंके शास्त्र सच्चे सावित होगे। अिसमे वेहतर तो यह है कि यह अेक मदिर छोड दिया जाय।" पता नही यह कहानी कहा तक सच है, किन्तु यह हमारे यहाके वनियेकी कहानी जैसी चतुराअीकी कहानी जरूर है। और यह वात भी सही है कि वीजव्याराका मदिर मुसलमानोंके आक्रमण या अमलके दरम्यान भी टूटा नही।

यहासे कुछ दूरी पर अवतपुर नामक अेक प्राचीन शहर जमीनके नीचे दवकर छोटी पहाडी वन गया है। खेतोमें खोदते समय पुरानी सुन्दर कारीगरी, कअी प्राचीन कोठिया और कोयला वना हुआ चावल यहा मिला है, जिन्हे मैने खुद देखा है।

नदी अिधर अुधर घूमती-घामती अितनी धीरेसे वहती है कि पानीका प्रवाह मालूम ही नही होता। नदीके प्रवाहकी विरुद्ध दिशामें

जब जाना होता है तब पतवार चलानेके बजाय किश्तीकी नाकको काफी लम्बी डोरी बाधकर अेक या दो आदमी किनारे परसे खीचते चलते है। किश्ती प्रवाहमे ही चले, किनारे पर न आये, अिसलिअे नावमे बैठा हुआ माझी हाथमे रही पतवारको टेढा पकड रखता है।

कश्मीरी शालोंके कोने पर आमके या काजूके आकारके जो बेलबूटे होते हैं वे यहाकी कारीगरीकी विशेषता हैं। कहते है कि झेलमके मोड देखकर यहाके कारीगरोको ये बेलबूटे सूझे। अेक दफा हमने नदीमे अेक बदरसे चौदह मीलकी यात्रा की। अितनेमे पिछले बदर पर जरा देरीसे आया हुआ यात्री पैदल चलकर हमसे आ मिला। अुसे केवल ढाअी मील ही चलना पडा। अितने मोड़ लेती हुअी यह नदी बहती है।

अिन मोडोंके कारण प्रवाहका जोर टूट जाता है और नदीका पात्र घिसता नही। जब बाढ आती है तभी सिर्फ 'सर्वत. संप्लुतोदके' जैसी स्थिति हो जाती है। यहाके प्राचीन अिजीनियर राजाओने बाढके वक्त नदीको कावूमें रखनेके लिअे अैसे अनेक मोड तथा नहरे खोद रखी है।

यह अिलाज अितना अकसीर है कि आज भी अुसीका अनुकरण करना पडता है। अेक बडी किश्तीमे से सूअरके दातके जैसा अेक बडा राक्षसी हल नदीके तलकी जमीनको चीरता हुआ जाता है और अंदरके कीचडको बिजलीके पप द्वारा बाहर फेकता जाता है। यह सारी प्रवृत्ति 'वराहमूलम्' (आजकलका बारामुल्ला) क्षेत्रमें देखनेको मिलती है।

बारामुल्ला कश्मीरकी ˉˉटीका अुस पारका सिरा है। वहासे आगे झेलम जोरोंसे दौड़ती है।

अिस सारे प्रदेशके बीचोबीच कश्मीरकी राजधानी है। श्रीनगर शहर नदीके दोनो किनारो पर बसा हुआ है। नदीके अूपर थोडे थोडे अतर पर सात पुल (कदल) बनाये गये है। अिसके सिवा, दोनो ओरसे शहरके अदर तक नदीमें से नहरे खोदी हुअी होनेके कारण अनायास ही

प्रवाही शांत जलमार्ग मिलते है। नदीका मुख्य प्रवाह ही राजमार्ग है। बाकीकी नहरे अिस राजमार्गसे आकर मिलनेवाले गौण रास्ते है। खुश्की रास्तो पर जिस प्रकार गाडिया दौडती है, अुसी प्रकार यहा लम्बी और सकरी 'शिकारा' किश्तिया तीरकी तरह दौडती है। नदीमे किश्तियोकी चाहे जितनी धूमधाम हो, वह बिना आवाजकी ही होती है।

दोपहरको जब महाराजाके मदिरकी पूजा पूरी होती है और अगले दिनके निर्माल्य फूल नदीके पाट पर फेक दिये जाते है, तब ये फूल करीब आधे मील तक आहिस्ता आहिस्ता लम्बी हारमे बहते हुअे बडे सुन्दर दिखाअी देते है।

और अिस नदीके किनारे चलनेवाली प्रवृत्ति भी किस प्रकारकी है! कही शतरजिया बुनी जाती है तो कही अप्रतिम गालीचे। अेक जगह अखरोटकी लकडी पर सुदर कारीगिरीका काम चल रहा है, तो दूसरी जगह रेशमका कारखाना भद्दे कीडोको अुबालकर सुदर मुलायम रेशम बना रहा है। चीन, तिब्बत तथा समरकद और बुखाराके सौदागर यहा महीनो तक पडाव डाले पडे रहते है और होशियार पजाबी अुनसे तिजारत करनेमे मशगूल रहते है। जहा देखे वहा हाथोंसे ज्यादा लम्बी बाहवाले कोट पहने हुअे लोग घूमते नजर आते है।

आगे जाकर यही झेलम हिन्दुस्तानके बडेसे बडे सरोवर वुलरमे जा गिरती है और अुसमे विलीन होकर गुप्त रूपसे लम्बी यात्रा करके दूसरे छोर पर बाहर निकलती है और बारामुल्लाकी ओर जाती है। वहा अिस नदीमें से अेक कृत्रिम नहर पैदा करके जो बिजली तैयार की जाती है वही कश्मीरके राज्यको पर्याप्त शक्ति देती है। अवटाबादके नजदीक यह नदी दिशा बदलती है और दौडती हुअी आगे बढती है। झेलमकी सारी घाटी अपने सौंदर्यके लिअे प्रख्यात है।

लोककथा कहती है कि अकबर बादशाह अिस घाटीके सौदर्यके नशेमे अूपरसे नीचे कूद पडे थे। यह कवि-कल्पना भले हो, किन्तु घाटीको देखने पर अिस तरहका नशा चढना सभव तो अवश्य जान पडता है। अैसी लोककथाअे किसी राजाके गौरवका वर्णन करनेकी अपेक्षा

नदीके मोहक सौंदर्यकी तारीफ करनेके लिअे ही अर्थवादके तौर पर गढ ली जाती है।

जब हिन्दुस्तानका सच्चा अितिहास लिखा जायगा, तब अुसमे बडी बडी नदियोके अनुसार देशके अलग अलग विभाग बनाये जायगे। अैसे अितिहासमे झेलमकी स्वर्गीय सस्कृतिका विभाग मामूली नहीं होगा। सचमुच झेलमको स्वर्धुनीका ही नाम शोभा देता है।

१९२६–'२७

२८

सेवाव्रता रावी

सिन्धु नदीको करभार देनेवाली पाच नदियोमे वितस्ता— झेलम—और शुतुद्री दो ही महत्त्वकी मानी जाती है। बाकीकी नदिया अपने जिम्मे आया हुआ काम नम्रताके साथ पूरा करती है। जिस प्रकार किसी श्रेष्ठ पुरुषसे मिलनेके लिअे शिष्ट-मडल जाता है, अुसी प्रकार ये नदिया धीरे धीरे साथ मिलकर आखिर सिन्धुसे जा मिलती हैं। व्यास सतलजसे मिलती है। चिनाव झेलमसे मिलती है और रावी अिन दोनोंसे मिलती है। मुलतानके पास तीन नदियोका पानी लाती हुअी झेलम हिन्दुस्तानके अुस पारसे आनेवाली सतलजसे मिलती है। और अन्तमे अिन सबोका बना हुआ पचनद सिन्धुमें मिलकर कृतार्थ होता है। सिन्धुसे बाते करनेवाले शिष्ट-मडलका अध्यक्षीय स्थान तो सतलजको ही मिल सकता है, क्योंकि वह भी सिन्धुकी तरह परलोकसे (हिमालयके अुस पारसे) ही आती है।

अिन पाच नदियोमे मध्यम स्थान अिरावतीका यानी रावीका है। वेदोमे अिराका अर्थ है पानी, आह्लादक पेय। यो तो नदीमे पानी होता ही है। किन्तु अिस नदीके विशेष गुणको देखकर ऋषियोने अुसे अिरावती नाम दिया होगा। ब्रह्मदेशकी अैरावती (अिरावान् = समुद्र) को

समुद्रके समान विस्तृत देखकर क्या यह नाम दिया होगा? रावी अितनी विस्तृत नहीं है।

स्वामी रामतीर्थकी जीवनीमे रावीका जिक्र अनेक जगह पर आता है। रावीको देखकर स्वामी रामतीर्थकी आखे प्रेमसे भर आती थी। वैराग्य और सन्यासके कच्चे विचार अुन्होने अिस नदीके किनारे ही पक्के किये। किन्तु रावी तो सिख-गुरु अर्जुनदेव और सिख-महाराज रणजितसिंहके लिअे ही आसू बहाती दिखाअी देती है।

मै लाहौर गया था तब अिरावतीके पुण्यदर्शन कर पाया था। अुस समय वह कितनी शात थी! अुसके विशाल पट पर सारा लाहौर अुलट पडा था। लोगोकी धूमधाम और पैसेवालोकी शान-शौकत तथा विलासके सामने रावीकी शाति विशेष रूपसे शोभा पाती थी। यहा रावीका दृश्य अैसा मालूम होता था, मानो सारे लाहौरको अपनी गोदमे लेकर खेलाती हो!

अपना पावन और पोषक जल देनेके अलावा रावी अपने बच्चोकी विशेष सेवा करती है। हिमालयके घने अरण्योमे चीड, देवदार, बाझ, सफेता आदि आर्य वृक्षोके घने नगर बसे हुअे है। कही कही तो अैन दोपहरके समय भी सूरजकी धूप जमीन तक बडी मुश्किलसे पहुचती है। और वयोवृद्ध वृक्षोका अेकाध पितामह जब अुन्मूल होकर गिर पडता है तब भी अुसका जमीन तक पहुचना असभव-सा हो जाता है। आसपासके वृक्ष अपनी बलवान भुजाओमे अुसको अतरिक्षमे ही पकड लेते है। मानो बाणशय्या पर पडे हुअे भीष्माचार्य हो। बरसो तक अिस तरह अधर ही अधरमें रहकर ठड, धूप तथा बारिश सहते हुअे आखिर अिस भीष्माचार्यका विशाल शरीर छिन्न-भिन्न और चूर्णित होकर लुप्त हो जाता है।

अैसे जगलोसे अिमारती लकडी काटकर लाना आसान बात नहीं है। अिसलिअे लोगोने रावीका आश्रय लिया। रावीके किनारे जहा बडे बडे जगल है वहा लकडी काटनेवाले जाते है और लकडीके बडे बडे लट्ठे काटकर रावीके प्रवाहमे छोड देते है। बस हो-हा करते हुअे वे चलने लगते है। कही कही पाठशालामे जानेवाले आलसी लडकोकी

भाति वे धीरे धीरे और रुकते रुकते भी चलते है। और कही कही शामके समय घरकी ओर दौडनेवाले साडोकी तरह वे नाचते-कूदते, अूपर-नीचे होते, अेक-दूसरेसे टकराते हुअे दौडते जाते है।

जब सजीव जानवरोको भी हाकनेके लिअे गडरियोकी आवश्यकता होती है, तब ये निर्जीव लट्ठे अैसी किसी देखरेखके बिना मुकाम तक कैसे पहुच सकते है? नदीका कही मोड देखा कि सब रुक गये। अेक रुका अिसलिअे दूसरा रुका। अुसके सहारे तीसरा रुका। 'आगे जानेका रास्ता नही है' कहकर चौथा रुका। 'क्या देखकर ये सब यहा खडे हो गये है, देखू तो सही!' कहकर पाचवा रुका। रात बितानेके लिअे यह पडाव होगा, अैसा अीमानदारीके साथ मानकर सातवा, आठवा और दसवा रुका। बादमे आये हुअे तो यह मानने लगे कि हमारा मुकाम ही यही है, अब यात्रा करना बाकी नही रहा। जहा सब रुके 'सा काष्ठा सा परा गति'।

सुबह होते ही अिन लट्ठोके गडरिये आते है और सबको आगे हाक ले जाते है। 'अरे भअी, चलो चलो' करते यह काफिला फिर कूच शुरू करता है। नदीका प्रवाह अच्छा हो वहा तक तो यह यात्रा ठीक चलती है। मगर जहा प्रवाह ज्यादा तेज, छिछला या पथरीला होता है वहा बडी मुश्किल होती है। अेकाध लबे लट्ठेको दो बडे पत्थरोका आश्रय मिल गया कि वह वही रुक जायगा और कहेगा 'मै तो यहासे हटनेवाला ही नही हू। और दूसरोको भी नही जाने दूगा।' अैसी जगह पर अुन लट्ठोके जानेके लिअे पाच-सात ही स्वेज नहरे होगी। वे रुध गअी कि सारा काफिला रुक गया समझिये। गडरिये यहा तैर कर आनेकी हिम्मत भी नही करेगे, क्योकि अुनको अिन लट्ठोसे अधिक अपना सिर प्यारा होता है। किनारे पर खडे रहकर लम्बे लम्बे बासोसे ढकेल ढकेल कर कअियोको निकाला जा सकता है। किन्तु जो प्रवाहके बीचोबीच रुक गये हो अुनका क्या?

मनुष्यने अिस आफतका भी अिलाज खोज निकाला है। हिमालयमे भैसके समान बडे जानवर रहते होगे। अुनकी पूरी खाल अुतार कर अुसको सी लेते है और अुसका थैला बनाते है। गलेकी ओरसे

हवा भर कर अुसे भी सी डालते है। अिससे यह जानवर अप्सराकी तरह, विना मास या हड्डियोका, हवासे भरा हुआ हो जाता है और पानी पर तैरने लायक वन जाता है। अुसके चार पाव भी हड्डियोको निकालकर जैसेके तैसे रखे जाते हैं। फिर अिम तैरते हुअे फुग्गे या मशकको पानीमे छोडकर ये गडरिये अुसके पेट पर अपनी छाती रख देते है और पाव हिलाते हिलाते तय किये हुअे मुकाम पर पहुच जाते है। फुग्गेके कारण पानीमे तैरना आमान हो जाता है। फुग्गेके पावोको पकड रखने पर वह छातीके नीचेसे खिसकता नही और तेज प्रवाहमे कही पत्थरमे टकराने पर चोट खालको ही लगती है, अुस पर सवार हुअे आदमीको नही।

अितनी तैयारी होने पर वे लट्ठे भटकते कैमे रह सकते है? अेक अेकको तो आगे वढना ही पडता है। पहाडकी घाटियोको पार कर अेक वार वाहर निकल आये कि ये लट्ठे मनचाहे ढगमे अलग अलग न हो जाय अिसलिअे अुनके गडरिये सबको रस्सेसे वाधकर अुन पर सवार होते हैं और अुन्हे आगे ले जाते है।

लाहौरमें रावीके प्रवाह पर अिन लट्ठोके कअी काफिले तैरते हुअे दीख पडते है। अुनके शत्रु अुनको पानीसे वाहर निकालकर अुनके टुकडे टुकडे कर डालते है, और फिर मनुष्योंके मकान या दूसरे साज-सामान तैयार करनेके लिअे दधीचि ऋपिकी तरह अुन्हें अपना शरीर अर्पण करना पड़ता है। अपने पर्वतीय सहोदरोको मनुष्यकी सेवामें अिस प्रकार लाकर छोडते समय रावीको कैसा लगता होगा? रावी अितना ही कहती होगी . 'भाअियो, परोपकाराय अिद शरीरम्।'

जून १९३७

२९

स्तन्यदायिनी चिनाब

कश्मीरसे लौटते समय पैर अुठते ही नही थे। जाते समय जो अुत्साह मनमें था, वह वापस लौटते वक्त कैसे रह सकता था? अिसी कारण, जाते समय जो रास्ता लिया था, अुसे छोडकर पीर पुजालके पहाडोको पार करके हम जम्मूके रास्तेसे आ रहे थे। श्रीनगरसे जम्मू तक गाडीका रास्ता भी नही है। हिम्मत हो तो पैदल चलिये, वरना कश्मीरी टट्टू पर सवार हो जाअिये। रास्तेमे प्रकृतिकी सुदरता और जहागीरकी विलासिताका कदम कदम पर अनुभव होता है। जहा देखे वहा वधे हुअे जलाशय और पहाडोमे वनाये हुअे रास्ते दीख पडते है। आज शिमलाकी जो प्रतिष्ठा है, वही या अुससे भी अधिक प्रतिष्ठा जहागीरके समयमें श्रीनगरकी थी। अैसे वादशाही पहाडी रास्तेसे वापस लौटते समय भगवती चद्रभागाके दर्शन किये थे। लोग आज अुसे चिनावके नामसे पहचानते है।

यदि मै भूलता नही हू तो हम रामवनके आसपास कही थे। सारा दिन और सारी रात चलना था। चादनी सुदर थी। थके-मादे हम रास्ते पर पियक्कड आदमीकी तरह लडखडाते हुअे चल रहे थे। पावोके तलुओमें छाले निकल आये थे। घुटनोमे दर्द था और निराश नीदका रूपातर हुआ था आधी क्लान्तिमे। निद्रा सुखावह होती है, तन्द्रा वैसी नही होती।

अैसी हालतमे हम आगे बढ रहे थे, अितनेमे दायी ओरकी गहरी घाटीमे से गभीर ध्वनि सुनाअी दी। सामनेकी टेकरी परसे झुककर आया हुआ पवन शीतल-सुगधित मालूम होने लगा। तन्द्रा अुड गअी। होश आया। और दृष्टि कलरवका अुद्गम खोजने दौडी। कैसा मनोहर दृश्य था! अूपरसे दूधके जैसी चादनी वरस रही है। नीचे चद्रभागा पत्थरोंसे टकराकर सफेद फेन अुछाल रही है। और अुसका आस्वाद लेकर तृप्त हुआ पवन हमे वहाकी शीतलता प्रदान कर रहा है।

साथ आये हुअे अेक आदमीसे मैंने पूछा, "यह कोअी नदी है, या पहाडी प्रवाह है?" अुसने जवाब दिया, "दोनों है। वह तो मैया चिनाव है।" मैंने चिनावको प्रणाम किया। नीचे तो अुतरा नहीं जा सकता था। अत दूरसे ही दर्शन करके पावन हुआ। प्रणाम करके कृतार्थ हुआ और आगे चलने लगा।

क्या यही है वेदकालीन भगवती चद्रभागा! कअी ऋषियोने अपने ध्यान और अपनी गायोको यहा पुष्ट किया होगा। आज भी अुद्यमी लोग अिस नदी माताका दोहन कम नही करते। मेरी जीवन-स्मृति शुरू होती है अुसी समय पहाडो जैसे कद्दावर पजावी अिस नदीके किनारे पर नहरे खोदते थे। आज पचीस लाख अेकड जमीन अिस माताके दूधसे रसकस प्राप्त करती है और पजावी वीरोका पोषण करती है। वेद-कालीन चिनावका सत्त्व आर्योके अुत्कर्पमे काम आता था। रणजितसिंहके समयमे यही जल गुरुकी फतह पुकारता था। आजका रग भी अतिम नहीं है। चिनावका पानी बिलकुल नि सत्त्व नही हुआ है। पचनदकी प्रतिष्ठा फिरसे जागेगी और सप्तसिधुका प्रदेश भारतवर्षको भाग्यके दिन दिखलायेगा।

१९२६–'२७

[चिनावका प्रवाह पजावकी भाग्यरेखा होनेके वजाय आज पजावके वटवारेकी रेखा वना है, यह कितना दैवदुर्विपाक है!]

३०

जम्मूकी तवी अथवा तावी

किसी नदीके बारेमें कहने जैसा कुछ न मिले तो भी क्या? अुसमे स्नान करनेका आनद कम थोडे ही होनेवाला है! नदीका महत्त्व स्वत सिद्ध है। अुसके नामके साथ कोओी अितिहास जुडा हुआ हो तो धन्य है वह अितिहास। नदीको अुससे क्या? अितिहासकी दिलचस्पी विग्रहके साथ अधिक होती है—जब कि नदीका काम सधिका, मेलजोलका होता है। किसानोको और पथिकोको, पशुओंको और पक्षियोको अपने जलसे सतुष्ट करती हुअी नदी जब वहती है, तब वह 'आत्मरति, आत्मक्रीड और आत्मन्येव च सतुष्ट' जैसी मालूम होती है। आप नदीसे पूछिये, 'तेरा अितिहास क्या है?' वह जवाब देगी, 'मै पहाडकी लडकी हू। असख्य मानव तथा तिर्यक् प्रजाकी माता हू। मै सागरकी सेवा करती हू, और आकाशके बादल ही मेरे स्वर्गस्थान है। बस अितना अितिहास मेरी दृष्टिसे महत्त्वका है।' ज्यादा पूछो तो तावी कहेगी कि 'आसपासके प्रदेशको पिलानेके बाद मेरा जो पानी बचता है वह मैं चिनाबको देती हू। चिनाब अपना पानी झेलममें विसर्जन करती है। झेलम सिधुसे मिलती है। और सिधु हम सबका पानी सागरमें छोडकर अपनेको और हम सबको कृतार्थ करती है। वही है हमारी सायुज्य मुक्ति। बाकी तुम पागलोका अितिहास तुम जानो। दुश्मनी और पागलपनका अितिहास भला कभी लिखा जाता है? वह तो भूल जानेकी बात है, भूल जानेकी। क्या तुम दुश्मनी और जहरको कायम रखनेके लिअे अितिहास लिखते हो? अैसे अितिहासको दफना दो या धो डालो। सेवाका अितिहास ही सच्चा अितिहास है। द्विगर्तवासी डोगरा, गद्दी और गुज्जर जैसी प्रजा मेरी सतान है। अुनका जीवन ही मेरा जीवन है।'

कश्मीरकी यात्रा पूरी करके हम जम्मू आये और रघुनाथजीके मदिरमें ठहरे। पास मे ही तवी बह रही थी। जम्मूकी ओरका तवीका किनारा खासा अूचा है। तवी भी वैसी ही है जैसी बहुतसी नदिया

होती है। अुसमें असाधारण कुछ नहीं है। अेक महाराष्ट्रीय अिंजीनियरसे हम मिलने गये थे। अुन्होंने बताया कि 'तवीके अूपर बिजलीके यंत्र लगाये गये हैं। अिस बिजलीसे बहुतसा काम किया जा सकता है।' किन्तु तवीको अुससे क्या? वह तो निरन्तर बहती ही रहती है।

१९२६-'२७

३१
सिंधुका विषाद

हिमालयके अुस पार, पृथ्वीके अिस मानदंडके लगभग बीचमें, कैलासनाथजीकी आंखोंके नीचे चिर-हिमाच्छादित पुण्यवान प्रदेश है, जिसके छोटेसे दायरेमें आर्यावर्तकी चार लोकमाताओंका अुद्गम-स्थान है। अुस पार और अिस पारका विचार यदि न करें, तो हम कह सकते हैं कि अुत्तर भारतकी लगभग सभी नदियां यहांसे झरती हैं।

हिमालय हिन्दुस्तानका ही है, और किसी देशका नहीं, मानो यही सिद्ध करनेके लिअे हिमालयके अुत्तरकी ओर बहनेवाले पानीका अेक-अेक बूंद अिकट्ठा करके, हिमालयके दोनों छोरोंसे घूमकर अुन्हें हिन्द महासागर तक पहुंचानेका काम सिन्धु और ब्रह्मपुत्र, दोनों नद अखंड रूपसे करते हैं। ये दो नद अैसे लगते हैं, मानो श्री कैलासनाथजीने भारतवर्षको अपनी भुजाओंमें लेनेके लिअे दो कारुण्यबाहु फैलाये हों। हिमालयकी रुकावट मानो सहन न होती हो अिस तरह सतलज और घाघरा हिमालयकी गोदमें से सीधा रास्ता निकाल कर मानसरोवरका जल भारतवर्षके दो बड़े प्रांतोंको पिलाने लगती हैं। जब कि गंगा, यमुना और अुनकी असंख्य बहनें पिताका लिहाज रखकर अिस ओर रहते हुअे वही काम करती हैं। पंजाबकी पांच नदियां और युक्तप्रांतकी (अुत्तर प्रदेशकी) पांच नदियां मिलकर भारतवर्षकी समृद्धिको दसगुना बना देती हैं। ये दसों नदियां भारतीय हैं। केवल सिंधु और ब्रह्मपुत्रको अति-भारतीय कह सकते हैं।

भारतवासी गगा मैयाको प्राप्त करके सिंधुको मानो भूल ही गये है। सिन्धुके तट पर आर्योके धर्मप्रसिद्ध तीर्थ है ही नही। वैदिक देवताओके देवता अिन्द्रको जिस प्रकार हम भूल गये है, अुसी प्रकार सप्त-सिंधुमे से मुख्य सिन्धु नदीको भी मानो हम भूल ही गये है। दक्षिण और पूर्वकी ओर महासाम्राज्योकी स्थापना करके प्राचीन आर्य वायव्य दिशाके प्रति कुछ अुदासीनसे बने और अिस कारण हमेशाके लिअे खतरेमे आ पडे। अुत्तरकी ओर तो हिमवानकी रक्षा थी ही। पश्चिमकी ओर ठेठ अन्दर तक राजपूतानेकी मरुभूमि और राजपूत तथा डोगरा जातिके शौर्यसे पूरी रक्षा मिलती थी। अुससे बाहर वेगवती सिंधु रक्षा कर रही थी। अिससे आगे करतार (खिरथर) से लेकर हिन्दूकुश तक प्रचड पर्वतमालाकी रक्षा थी। पहाडी परोपनिसदी (अफगान) लोगोकी स्वातत्र्य-प्रियता भी विदेशियोको अिस ओर आने नही देती थी। मगर जहा देशवासी ही अुदासीन हो गये, वहा पहाडी दीवारे और नदिया कितनी रक्षा कर सकती है? परोपनिसदी लोगोमें यवन मिल गये और बाल्हीकके पास हिन्दुस्तानकी जो शास्त्रीय फौजी सीमा थी, वह खिसकती खिसकती अटक तक आकर अटक गअी। और अटकने भी विदेशियोको अदर आनेसे अटकानेके बजाय भारतवासियोको बाहर जानेसे ही अटकाया! रानी सेमीरामिस हिन्दुस्तान आनेसे नही अटकी। फारसके सम्राट दरायस पजाब और सिंधुसे सुवर्ण-करभार लेनेसे न अटके। युअेची तथा हूण लोग हिन्दुस्तान आनेसे न अटके। सिकदर पाच नदियोको पार करनेसे न अटका। महमूद या बाबरको भी यह अटक न अटका सकी। हमें मालूम होना चाहिये था कि जिस नदीने काबुल नदीके पानीका स्वीकार किया वह पश्चिमकी ओरसे आनेवाले लोगोको नही अटकायेगी!

पश्चिम तिब्बतमें कैलासकी तलहटीमे सिन्धुका अुद्गम है। वहासे सीधी रेखामे वायव्यकी ओर वह दौडती है, क्योकि अतमे अुसे नैऋत्यकी ओर जाना है। कश्मीरमें घुसकर लेहकी फौजी छावनीकी मुलाकात लेती हुअी काराकोरम पहाडकी रक्षामें वह सीधी आगे बढती है। स्कार्डुके पास अुसे होश आता है कि मुझे हिन्दुस्तान जाना है। गिलगिटके किलेको

दूरसे देखकर वह दक्षिणकी ओर मुडती है। चित्रालकी ओर तो वह खुद जाना नही चाहती, लेकिन यह जाचनेके लिअे कि वहाका पानी कैसा है, वह स्वात नदीको अपने पास बुलाती है। स्वात भला अकेली क्यो आने लगी? अुसकी निष्ठा कावुल नदीके प्रति है। सफेद कोहका पानी लानेवाली कावुलसे मिलकर वह अटकके पास सिन्धुसे आ मिलती है। अव सिन्धु पूरी पूरी भारतीय वन जाती है। स्वात और कावुलके पास सुननेके लिअे काफी अितिहास पडा है। खैवरघाटसे कौन कौन लोग आये और गये, वैक्ट्रियाके यूनानी लोग किस रास्तेसे आये, और कर्नल यगहसवड वहासे चित्रालकी चढाअी पर कैसे गया — आदि सारा अितिहास ये दो नदिया वता सकती है। अमीर अमानुल्लाने गरमीके पागलपनमे परसो ही जो चढाअी की थी अुसकी वात यदि पूछे तो वह भी ये वता सकेगी। और कोहाटकी क्रूरतासे भी सिन्धु अपरिचित नही है। वजीरिस्तान और वन्नूमे क्षात्र-धर्मको लज्जित करनेवाली जो घटनाअे घटी थी, अुनकी कहानी कुरमके मुहसे सुनकर सिन्धुका जी काप अुठता है। क्रुमु या कुरम नदी सिन्धुसे मिलती है तव अुसका प्रवाह विगडता है। पहाडके अभावमे वह मर्यादामें नही रह पाता। छोटे वडे टापू वनाती वनाती सिन्धु डेरा अिस्माअिलखासे लेकर डेरा गाजीखा तक जाती है।

अव सिन्धु पाचो नदियोके पानीकी राह देखती हुअी सकरी होकर दौडती है। जम्मूकी ओरसे आनेवाली चिनाव कश्मीरी झेलम नदीमे मिलती है। लाहौरके वैभवका अनुभव करके तृप्त वनी हुअी रावी अिन दोनोंसे मिलती है। व्यासके पानीसे पुष्ट वनी सतलज अिन तीनोंके पानीमें जा मिलती है। और फिर अुन्मत्त वना हुआ पचनदका प्रवाह अपनी पूरी रफ्तारके साथ मिट्टनकोटके पास सिन्धुके अूपर टूट पडता है। अितने वडे आक्रमणको सहकर, हजम करके, अपना ही नाम कायम रखनेवाली सिन्धुकी शक्ति भी अुतनी ही वडी होनी चाहिये।

सिन्धु न सिर्फ अपना नाम ही कायम रखती है, वल्कि यहासे वह अपने जीवनकी अुदार कृपाको अनेक प्रकारसे फैलाती हुअी आस-पासके प्रदेशको भी अपना नाम अर्पण करती है। 'त्यागाय सभृतार्था-

नाम्’ के अुदाहरणरूप आर्य राजाओका ही वह अनुकरण करती है। बडी बडी सात घाटियोका पानी वह अिकट्ठा जरूर करती है, मगर सारा पानी अनेक मुखोसे महासागरको देनेके लिअे ही। और बीचमे यदि कोअी गरजमद आदमी अुसमें से मनमाना पानी कही ले जाना चाहे, तो सिन्धुको कोअी अेतराज नही है।

फिर भी गगा मैयाकी अुदारता सिन्धुमे नही है। अिसलिअे अटक और सक्करसे लेकर हैदराबाद तक अुस पर पुल बनाये गये है। सक्करका पुल फौजी दृष्टिसे बहुत महत्त्वका है। सिंधुमें स्थित अेक बडे टापूसे लाभ अुठाकर यह पुल बनाया गया है। मगर रोहरीकी ओर जहा पानी गहरा है, वहा यह पुल किसी भी समय पखेकी तरह समेटकर अिकट्ठा किया जा सकता है। यदि फौजके लिअे सिन्धुको पार करना असभव-सा बना देना हो, तो अेक मत्र बोलते ही सारा पुल लुप्त हो सकता है। फिर शिकारपुर-सक्कर अलग और रोहरी अलग।

यह बात नही है कि शिकारपुर-सक्करको अग्रेजोने ही महत्त्व दिया है। यहाके हिन्दू व्यापारी प्राचीन कालसे बोलनघाटके रास्तेसे कदहार जाकर मध्य अेशियामे तिजारत करते आये है। हिरात या मर्व, बुखारा या समरकद, कही भी देखिये आपको शिकारपुरके व्यापारी जरूर मिल जायेगे। शिकारपुरकी हुडी मास्को और पिटर्सबर्ग (लेनिनग्राड) तक सकारी जाती थी। सक्करका स्मरण करें और बडे जहाजके समान पानीमे तैरनेवाले साधुबेला नामक टापूका स्मरण न हो यह असभव है। साधुओकी काव्यमय अभिरुचि हमेशा सुन्दरसे सुन्दर स्थान पसद करती है। साधुबेलाके सौदर्यकी अीर्ष्या सम्राट् भी करेगे।

पता नही, सिन्धुको आराम लेनेकी सूझी या सिघाडे खानेकी, वह यहासे मचर सरोवरकी दिशामे दौडती है। किन्तु समय पर सावधान होकर या खिरथर (करतार) के कहने पर वह वापस लौटती है और शेवणमे आग्नेय दिशामें मुडकर हैदराबाद तक जाती है। यह प्रदेश कअी युद्धोका साक्षी है। मालूम नही, जयद्रथके समयमें यहाकी स्थिति कैसी थी। मगर दाहिर और जच्चके समयमें यह प्रात काफी पिछडा

हुआ रहा होगा। चंद्रगुप्तके पहले अीरानी साम्राज्यको सोना दे देकर नि:सत्त्व हो जानेके कारण कहो, या वहांके ब्राह्मण राजाओंके अनाचारोंके कारण कहो, वहांकी प्रजा बिलकुल कंगाल और कमजोर हो गअी थी। अीरानका बादशाह आये या सिकंदर आये, बगदादका मुहम्मद-बिन-कासिम आये या सर चार्ल्स नेपियर आये, सिन्धु-तटवासी लोग हर समय हारे ही हैं।

जब सिकंदरने जहाजोंमें बैठकर सिन्धुको पार किया तब अुसने अपनी रक्षाके लिअे दोनों किनारों पर अपनी फौज चलाअी थी। आज अंग्रेजोंने सिन्धुकी रक्षाके लिअे नहीं, बल्कि पंजाबका गेहूं विलायत ले जानेके लिअे सिन्धुके दोनों तट पर रेलें दौड़ाअी हैं। सिन्धुका प्रवाह काफी वेगवान होनेसे गंगाकी तरह अुसमें जहाज नहीं चल सकते। अिसी कारणसे कराचीके पासके केटी बंदरगाहका कोअी महत्त्व नहीं रहा है।

सिन्धुके मुखका प्रदेश सिन्धुके ही पुरुषार्थके कारण बना है। दूर दूरसे कीचड और बालू ला लाकर सिन्धु वहां अुंडेलती गअी है। नतीजा यह हुआ है कि अरबी समुद्रको हमेशा अत्यंत सूक्ष्मतासे या 'बहादुरीसे' पीछे हटना पड़ा है।

सिन्धुका प्रवाह सिन्धु नामको शोभा दे अितना विस्तीर्ण और वेगवान है। गरमीके दिनोंमें जब पिघले हुअे बर्फके पानीका पूर अुसमें आता है, तब अुसको घोड़े या हाथीकी अुपमा शोभा तो क्या दे, वह सूझती भी नहीं। अुसको तो जल-प्रलय ही कहना होगा। सागरकी लहरें जैसी अुछलती हैं, वैसी ही सिन्धुकी लहरें अुछलती हैं। मगर-मच्छोंके गुरु बन सकें, अैसे तैराक भी पूरके समय पानीमें कूदनेकी हिम्मत नहीं करते।

प्रेम-दिवानी सती सुहिणीकी ही, कच्चे घड़ेके आधार पर, अैसे प्रवाहमें कूदनेकी हिम्मत हो सकती थी। प्रेमका प्रवाह, प्रेमका वेग और परिणामके बारेमें प्रेमका निरादर महासिंधुसे भी बड़ा होता है।

सितंबर, १९२९

३२

मंचरकी जीवन-विभूति

जिसने पानीको जीवन कहा, वह कवि था या समाजशास्त्री? मुझे लगता है वह दोनो था। विना पानीके न तो वनस्पति जी सकती है, न पशु-पक्षी ही जी सकते है। तव फिर दोनोका आश्रित मनुष्य तो विना पानीके टिक ही कैसे सकता है? अीश्वरने पृथ्वीके पृष्ठभाग पर तीन भाग पानी और अेक भाग जमीन वनाकर यह वात सिद्ध की है कि पानी ही जीवन है। वेहोश आदमी आखोको पानीकी अेक ठडी वूद लगनेसे भी होशमे आ जाता है, तो फिर अनत वूदोंसे छलकते हुअे सरोवरको देखकर जीवन कृतार्थ होने जैसा आनन्द यदि वह अनुभव करे तो अिसमें आश्चर्य ही क्या?

अनत सागर और अुसकी अनत तरगोको देखने पर मनुष्यको अुन्माद होना स्वाभाविक है। पर जिसके सामनेके किनारेकी थोडी झाकी ही हो सकती है, और अिस कारण आखोको जिसके विशाल विस्तारका माप पानेका आनद मिल सकता है, अैसे शात सरोवरका दर्शन मित्र-दर्शनके समान आह्लादक होता है। सागर अज्ञातमे कूद पडनेके लिअे हमे वुलाता है, जव कि सरोवर अपनी दर्पण जैसी शीतल पारदर्शक शाति द्वारा मनुष्यको आत्म-परिचय पानेके लिअे प्रोत्साहन देता है। सरोवरमे हमें जीवनकी प्रसन्नताका दर्शन होता है, जव कि सागरमे जीवनकी प्रक्षुब्ध विराटताका साक्षात्कार होता है। सागरका ताडव-नृत्य देखकर जो मनुष्य कहेगा

दिशो न जाने न लभे च शर्म।

वही मनुष्य विशाल सरोवरके किनारे पहुचते ही 'हाश' करके गायेगा:

अिदानी अस्मि सवृत्त, सचेता, प्रकृतिं गत ।

अिस प्रकार सागर और सरोवर जीवनकी दो प्रधान और भिन्न विभूतिया है।

मै जानता था — कभीका जानता था — कि जीवन-विभूतिका अैसा अेक सुभग दर्शन सिंधमे सदाके लिअे फैला हुआ है। किन्तु अुसे देखनेके सौभाग्यका अुदय अभी तक नही हो पाया था। जब मेरे लोकसेवक सस्कार-सपन्न रसिक मित्र श्री नारायण मलकानीने मुझे अिस बार सिंधमे घूमनेका आमत्रण दिया, तब मैंने अुनसे यह शर्त की कि अबकी बार यदि जीवन और मरण दोनोका साक्षात्कार करानेके लिअे आप तैयार हो तो ही मै आअूगा। अिस तरहकी गूढ वाणीकी अुलझनमें मित्रको लम्बे समय तक डालना मैंने पसन्द नही किया। मैंने अुनको लिखा, जहा अेक अेक करके तीन युग दबे पडे है, और जहा मृत्युने अपना सबसे बडा म्यूजियम खोला है, वह 'मोहन-जो-दडो'* मुझे फिरसे देखना है। अुसी तरह जहा कमलकदकी जडमे से पैदा होनेवाले असख्य कमलों, अिन कमलोके बीच नाचनेवाली छोटी-बडी मछलियो, अिन मछलियो पर गुजर करनेवाले रगबिरगे पक्षियो और कमलकद से लेकर पक्षियो तक सबको बिना किसी पक्षपातके अपने अुदरमे स्थान देनेवाले सर्वभक्षी मनुष्योकी निश्चितताके साथ जहा वृद्धि होती है, अुस जीवन-राशि मचर सरोवरका भी मुझे दर्शन करना है। नारायणकी स्थिति तो 'जो दिल-पसन्द था वही वैद्यने खानेको कहा' जैसी हुअी होगी। अुन्होने सिंधके सूफी दर्शनका पालन करके प्रथम लारकानाके रास्तेमे 'मौतके टीले' का दर्शन कराया, और अुसके पश्चात् ही जीवनकी अिस राशिकी ओर वे हमे ले गये!

सिन्धुके पश्चिम तट पर, जहा पजाबका गेहू कराची तक पहुचा देनेवाली रेलवे दौडती है, दादू और कोटरीके बीच बूबक स्टेशन आता है। बगैर पूछे आदमीको कैसे पता चले कि अबूबकर नामके दोनो छोरके अक्षर कम करके बूबक नामका सर्जन हुआ है? स्टेशनसे पश्चिमकी ओर चार मीलका धूल-भरा रास्ता पार करके हम बूबक पहुचे। वहाके लोग बाजे, शहनाअी और थोडी-बहुत दक्षिणा लेकर हमे लेने

---

*अुसका सही नाम है 'मूवन-जो-दडो'। जिसका अर्थ होता है मरे हुअे लोगोका टीला।

आये। अुनके साथ सारा गाव घूमकर, गली-कूचोको देखकर, हम अपने मिजबान श्री गोधूमलजीके घर पहुचे। अुनके आतिथ्यको स्वीकार करके खाया-पिया, दस-पद्रह मिनट तक स्वप्नसृष्टि पर राज्य किया और वहाके गालीचो तथा रगाअी-कामकी कद्र करके हम मचरके दर्शन करने निकले।

दो मीलका धूल-भरा रास्ता हमे फिर तय करना पडा। अुसके बाद ही खेतोके बीच अटसट बाते करनेवाली और गडरियोकी कुटियोकी मुलाकात लेनेवाली अेक नहर आअी। जहासे वह शुरू होती थी, वही नअी-पुरानी किश्तियोका अेक झुड कीचडमे पडा था। अुनमें से अेक बडी किश्ती हमने पसन्द की और अुसमें सवार हुअे। ('सवार' या 'असवार' यानी 'अश्वारोही', हम तो नौकारोही हुअे थे।) अिस प्रकार हमने और दो मीलकी प्रगति की। दोनो ओर पानीके साथ क्रीडा करनेवाली रहट घुमानेका पुण्य प्राप्त करनेवाले अूट हमने देखे। खुले वायुमडलमे ही अपना जीवन, अपना विनोद और अपना अुद्योग चलानेवाले किसान भी हमने वहा देखे। और जमीन तथा पानीके बीच आवा-जाअी करनेवाले बनजारे पक्षी भी देखे।

हमारे काफिलेके बीसो जन आनदके अुपासक बने थे। कुछने 'चल चल रे नौजवान — रुकना तेरा काम नही, चलना तेरी शान' वाला कूचगीत छेडा। अिसमे हसनेकी बात तो अितनी ही थी कि नौकारोही हम लोग पैदल कूच नही कर रहे थे, मगर लबे लबे बासोंसे कीचडको कोचते कोचते आगे बढ रहे थे। हमारे पैर कोअी हल-चल किये बिना अजगरोकी अुपासना कर रहे थे। पर जब सभी खुश-मिजाज होते है, तब बातो तथा गीतोमें औचित्यके व्याकरणकी कोअी परवाह नही करता।

जब चि० रैहानाबहनको 'बेनवा फकीर' की मुरलीके सुर छेडनेका निमत्रण दिया गया तभी सच्चा रग जमा, ठीक अिसी समय हमारी नहरने अपना मुह चौडा करके हमारी किश्तीको सरोवरमें ढकेल दिया। फिर तो पूछना ही क्या? जहा देखो वहा जीवन ही जीवन फैला आ था। पद्रहसे बीस मील लबा और दस मील चौडा जीवनका

काव्यमय विस्तार! पानीकी विस्तृत जलराशिकी काति और बीच बीचमें हरे घासके टापुओकी शाति! प्रकृतिको अितना काव्य कैसे सूझा होगा? मैंने गोबूमलजीसे कहा, 'यहा तो मेरा हृदय द्रवित होता जा रहा है।' अुन्होंने अुतनी ही रसिकताके साथ जवाब दिया: 'यदि आप नववरमे यहा आते तो यहाके लाखो कमलोमें दब जाते। आपको यदि यह अुल्लास देखना हो तो अपने विष्णुशर्माको किसी भी साल लिखकर सूचना कर दीजिये। वे मुझे लिखेंगे और मै आपके लिअे सब तैयारी कर रखूगा। हमारा प्रदेश अितना अलग पड गया है कि आपके जैसे लोग शायद ही यहा आते हैं। जहा तक मुझे याद आता है, अिसके पहले यहा अेक ही महाराष्ट्रीय प्रोफेसर आये थे और वे भी आपकी ही तरह आनन्द-विभोर हो गये थे। हा, हर साल कुछ गोरे फौजी अफसर यहा मछलियां मारने या शिकार खेलने जरूर आते है। मगर अुससे हमें क्या लाभ हो सकता है?'

दूरी पर अेक किश्ती दिखाअी दी। देहातका कोअी कुटुब स्थलातर करता होगा। अुनकी नारगी रगकी ओढनी तथा नीले रगके पायजामेका प्रतिबिंब पानीमे कितना सुशोभित हो रहा था—मानो ग्रामीण काव्य ही आनदमें आकर जल-विहार कर रहा हो! दूर दूर काले जल-कुक्कुट पानीकी सतह पर तैरते हुअे अुदर-पूजन कर रहे थे। हममें से कुछ लोगोको किश्तीके किनारे बैठकर पानीमें पाव धोनेकी सूझी। अुन्होने रिपोर्ट दी कि कही पानी बिलकुल ठडा है और कही कुनकुना। अिसका कारण क्या है, यह तो लोग मुझसे ही पूछेंगे न? अैसी लहरी टोलीमे मै हमेशा सर्वज्ञ होता हू। मैंने फौरन कारण ढूढ निकाला और सबको शास्त्रीय अुपपत्तिका सतोष प्रदान किया।

'वे सामने जो टेकरिया दिखाअी देती है, अुनका क्या नाम है?' मैंने आसपासके लोगोंसे पूछा। अुन्हें मेरे प्रश्नसे आश्चर्य हुआ। मानो अुन्हें मालूम ही नही था कि स्वदेशी टेकरियोके नाम भी होते है। और अिधर प्रत्येक रूपके साथ यदि नाम न जुडा हो तो मेरी दार्शनिक आत्मा सतुष्ट नही होती। हमारी टोलीमे तूबकका अेक छोटा, नाजुक और शर्मीले स्वभावका लडका अेक कोनेमें बैठा था। मैंने

अुसे 'अीस्सरदास' कहकर पुकारा। पाठशालामें पढा हुआ भूगोल अुसके काम आया। अुसने तुरन्त कहा, 'सामनेकी टेकरियोंको खिरथर कहते हैं।' मैं हस पडा और मेरे मुहसे अुद्‌गार निकल पडा 'धन्य हैं करतार!' छुटपनमें हाला और सुलेमान पर्वतके नाम हमने रटे थे। आगे जाकर हाला पर्वतने करतारका नाम धारण किया था। अुसका कारण अितना ही था कि अंग्रेजोंने खिरथरकी स्पेलिंग की थी Kirthar। विदेशी लिपिके कारण हमारे यहा कअी अनर्थ हुअे हैं। यह अुनमें से ही अेक था। खिरथरकी टेकरिया अिस किनारेसे दस बारह मील दूर हैं। वहा सिंध पूरा होकर बलूचिस्तान शुरू होता है।

अब सूरज थककर खिरथरका आश्रय लेनेकी सोच रहा था। हमने भी सोचा कि अब लौटकर घर जाना चाहिये और सात बजनेसे पहले जठराग्निको आहुति देना चाहिये! नावने दिशा बदली और हम पूर्वकी ओरकी शोभा देखने लगे। 'वऽऽह सामने दूर जो नाव दिखाअी दे रही है वह अिस समय पश्चिमकी ओर कहा जाती होगी?' मैंने भाअी गोवूमलजीसे पूछा। अुन्होंने बताया, 'अुस किनारे खिरथरकी बगलमें अेक गाव है। वहा महाशिवरात्रिका अेक मेला लगता है। अुस दिन हिन्दू लोग महाशिवरात्रिके कारण वहा अिकट्ठा होते हैं। मुसलमान भी अुस दिन वहीं अपने किसी पीरके नाम पर अिकट्ठा होते हैं। बहुत बडा मेला लगता है। ये लोग शायद मेलेके लिअे ही जा रहे होंगे।' हम गये अुस दिन फरवरीकी २१ तारीख थी। महाशिवरात्रि बिलकुल पास यानी २४ तारीखको थी। हमारे कार्यक्रममें फेरबदल किया ही नहीं जा सकता था। 'आज यदि २४ तारीख होती तो मैं जल्दी निकलकर अुस गावमें जरूर जाता। मैं महाशिवरात्रिका व्रत रखता हू। हिन्दू और मुसलमानोंको अेकहृदय होकर अेक ही अीश्वरकी भक्ति करनेके लिअे हजारोंकी तादादमें अेक ही जगह अिकट्ठा हुअे देखकर अपने हृदयको पवित्र करनेका मौका मैं न छोडता। शिवरात्रिके दिन जिस वृत्तिसे हिन्दू और मुसलमान प्रेमसे अिकट्ठा होते हैं, वही वृत्ति यदि हिन्दुस्तानमें सर्वत्र फैल जाय तो हमारा बेड़ा पार! वह दिन हिन्दुस्तानके लिअे सुदिन तथा शिवदिन हो जाय।'

अितना कहकर मै खामोश हो गया। अब किसीके साथ बातें करनेमें मेरी दिलचस्पी न रही। मै दूर दूर तक देखने लगा। पृथ्वी पर या आकाशमे नही, बल्कि कालके अुदरमे देखने लगा। कोलबस जिस प्रकार श्रद्धापूर्वक अमरीकाका रास्ता खोजता था, अुसी प्रकार शिवरात्रिका कब शिवदिन होगा अिसकी मैं श्रद्धाकी दृष्टिसे खोज करने लगा।

'वह सामने जो हरे हरे खेत दीख पडते है अुनके पीछे तमाकू या भागकी खेती होती है।' बूबकके अेक साथीने मेरा ध्यान भग किया। हमने सरोवरमें से नहरमे प्रवेश किया था। नहरके किनारे, बासकी कमानी पर, पैरोको बाधकर खडे हुअे बगुले मछलियोका ध्यान कर रहे थे। झोपडियोमे से चूल्हेका घुआ निकलने लगा था। आखे बूबकके अूचे अूचे चौरस मकानोके स्थापत्यको निहारने लगी। अिन मकानोंके कुछ 'मघ' बगुलोकी तरह सिर अूचा करके वायुसेवनके पैतरेमें खडे थे। हमने तमाकू और भागके खेत भी पार किये। भागके विजयमें सरकारी नीतिका अितिहास सुना। और घर लौटकर समय पर भोजन करने बैठे।

किन्तु मेरा मन तो मचरके 'ढढ' (बाघ) पर महाशिवरात्रिका आनन्द ले रहा था।

मार्च, १९४१

३३

लहरोंका तांडवयोग

[कराचीके पास कीआमारीसे जरा दूर मनोरा नामक अेक टापू है। वहा अेक सुन्दर मदिर है। टापू पर अधिकतर पोर्टट्रस्टके लोग और थोडी-सी फौज रहती है। मनोरा टापू कराचीका गहना तथा समुद्रका खिलौना है। अिसके दक्षिणके छोर पर अेक बडी खोह है, जिस पर समुद्रकी लहरे टकराती है। अिससे आगे काफी दूर तक अेक बडी दीवार खडी करके लहरोको रोका गया है। अिससे वहा लहरोंका अखड सत्याग्रह देखनेको मिलता है। यह दृश्य देखनेके लिअे मै अेक बार गया था।

हिंदी-साहित्य-समेलनमे भाग लेनेके लिअे अिस साल कराची गया, तब दुबारा वह दृश्य देख आया। लहरोका असर अुन पत्थरो पर चाहे न भी हो, परतु हृदय पर अुनका असर हुअे बिना थोडे ही रहता है! हृदय और समुद्र दोनो स्वभावसे ही अूर्मिल है।]

कोअी प्राकृतिक दृश्य पहली बार देखकर हृदय पर जो असर होता है, वह दूसरी बार देखने पर नही होता। पहली बार सब नया ही नया होता है। अुस समय अज्ञात वस्तुओका परिचय करना होता है। कदम कदम पर आश्चर्य और चमत्कृतिका अनुभव होता है। दूसरी बार अुसी जगह जाने पर किन किन बातोकी आशा करनी चाहिये, अिसका मनुष्यको खयाल होता है। अिसलिअे अुतनी मात्रामें चमत्कृतिके लिअे गुजाअिश कम रहती है। परिचित वस्तुके प्रति प्रेम हो सकता है, आश्चर्य और चमत्कृति तो अपरिचितके लिअे ही हो सकती है।

अैसी ही प्रेमपूर्ण किन्तु अुत्सुकता-रहित वृत्तिसे मै कराचीके पासके मनोराकी लहरें देखनेके लिअे अबकी बार गया। यह आशा भी मनमे थी कि पुराने किन्तु नौजवान मित्रोंसे अिस रम्य स्थान पर विस्रब्ध वार्तालाप हो सकेगा। लहरे तो वहा है ही, अुनको देखकर आनन्द जरूर होगा। अिससे विशेष कुछ नही होगा — अिस प्रकार मनको समझाकर मै वहा गया।

पिछली बार जब गया था तब मैंने अुछलती लहरोंके धवल हास्यको पकडनेके लिअे तरह तरहके फोटो खीचे थे। मगर अुनमें से अेक भी अच्छा नही आया था। अिस कारण अिन लहरोंके प्रति मनमें थोडा गुस्सा होते हुअे भी अितना विश्वास था कि वार्तालापके लिअे वहा अनुकूल वायुमडल अवश्य मिलेगा।

किन्तु वहा जाकर मैंने क्या देखा? पिछली बार जो दृश्य देखा था और जिसके काव्यमय चित्रोको मैंने चित्तमें सग्रह करके रखा था, अुन्हें फीके बना कर चित्तमे से धो डालनेवाला लहरोका अेक अखड ताडव अेकाअेक दीख पडा! अब बातचीत काहेकी और विस्रब्ध कथा काहेकी! मुझे तो वहा मानो अुन्मत्त करनेवाला नशा ही मिल गया। वहा मैं यदि अकेला होता तो अिन लहरोंके ताडवमें कूदकर अुनके साथ अेकरूप होनेके भीतरी खिचावको रोक पाता या नही, यह मैं निश्चय-पूर्वक नही कह सकता।

अेक आदमी गाने लगे तो दूसरेको गानेकी स्फूर्ति अवश्य होगी। अेक सियार रात्रिकी शातिके खिलाफ यदि बगावत करे तो दूसरे क्रातिकारी सियार अपने फेफडोकी कसरत जरूर करेंगे। अजी, तरबवाली सितारके मुख्य तारको अपने प्राणोके साथ छेड दीजिये, तुरन्त नीचेके तार अपने-आप अपना आनद-झकार शुरू कर देंगे। तो फिर मेरे जैसा प्रकृति-प्रेमी जीव कुदरतकी भव्यताके दर्शन करके अुससे अपना भिन्नत्व यदि भूल जाय तो मानवीय सयानपनकी दृष्टिसे अुसमें आश्चर्य भले हो, किन्तु वह अनहोनी बात नही है।

जिस प्रकार हाथीकी सारी शोभा अुसके गडस्थलमे केंद्रीभूत होती है, किलेकी सपूर्ण शोभा अुसके गजेन्द्र-भव्य बुर्जमे होती है, जहाजकी शोभा अुसके तूतक (अूपरके डेक) मे परिपूर्ण होती है, अुसी प्रकार मनोराके अिस छोर पर किलेके समान जो दीवारे खडी है अुनके कारण यह टापू यहा विशेष रूपसे शोभा पाता है, और समुद्रकी लहरें भी यही वप्रक्रीडा करके अपनी खुजली (कडु) शात करती है। यह कडु-विनोद सतत चलता रहे तो भी देखनेवाला अूबता नही। अिसलिअे यह दृश्य चिर-मनोहारी होता ही है। परन्तु यहा पर आदमीने अेक लबी दीवार बना-

कर समुद्रकी लहरोको बेहद छेडा है, और अब अितने साल हो गये फिर भी लहरे अिस अधिक्षेप (अपमान)को न तो आज तक सह सकी है, न आगे सहनेवाली है। जितनी वार अुन्हे अिस अपमानका स्मरण होता है, अुतनी ही बार वे बडी फौज लेकर अिन दीवारो पर टूट पडती है और अिन पत्थरोका प्रतिकार करनेके लिअे अेक-दूसरेको भडकाती जाती है। कैसा अुनका यह अुन्माद! कैसी अुनकी दृढ प्रतिज्ञा! कैसा अुनका वह प्राणघातक आक्रमण! आज तो अुनका यह अमर्ष चरम सीमाको पहुच गया था। फिर पूछना ही क्या था! मानो वीरभद्र सारे शिवगणोको अेकत्र करके लहरोके रूपमे यहा प्रलय-काल मचाना चाहता हो!

अेक अेक लहर मानो अुछलती पहाडी-सी मालूम होती थी। अेककी अुत्तुग शोभाको देखकर वैसी ही दूसरी लहरोको अुसकी कदर करना चाहिये। किन्तु अिसके बदले, दोनो अेक होकर अेक नयी ही अूचाअी पर पहुचती है और आसपासकी लहरोको भी अुतनी ही अूचाअी तक चढनेके लिअे अुत्तेजित करती जाती है। और यह ताडव नृत्य, अेक क्षणके लिअे भी रुके बिना, अखड रूपसे चलता रहता है। टकटकी लगाकर अिस ताडवको देखते रहिये तो अुसमें अेक प्रचड ताल मालूम होता है। मानो शिव-ताडव-स्तोत्रका प्रमाणिका वृत्त अपनी शक्ति आजमाने लगा है, और दिल भर आने पर प्रवाह-वेग बढनेसे देखते ही देखते प्रमाणिकाका पचचामर छन्द हो जाता है। और फिर अपनी सुधबुध भूलकर पुष्पदत भी अुस तालके साथ ताडव-नृत्य करने लगता है।

जिस तरफ लहरोका आक्रमण अधिकसे अधिक जोरदार है, और जहा टकरानेवाली लहरे चकनाचूर हो जाती है तथा आकाशमे अुनके अिन्द्रधनुषको झेलनेवाला बडा पंखा तैयार होता है, वही कुछ सीढिया अखड स्नान करते हुअे ऋषियोकी तरह ध्यान करती बैठी है। लहरोका पानी अुनके सिर पर गिरकर हसता हुआ और गोमूत्रिका-बध करता हुआ सीढिया अुतरता जाता है। दिल्ली-आगरेमें और कश्मीर या मैसूरके वृदावनमे मनुष्यने विलासके जो साधन निर्माण किये है और पानीका प्रवाह श्रावण-भादोकी बडी धाराओमे बहाया है, अुसका यहा स्मरण हुअे बिना नही रहता।

मगर कुछ लहरें तो अुस लम्बी दीवारके साथ टकराकर अुसके सिर पर पानीकी लंबी लंबी धारायें फेंकनेमें ही मशगूल रहती हैं। लहर टकराती है, दीवार पर सवार होती है और दीवारकी चौडाअीका अनादर करके सामनेकी ओर कूद पडती है और होलीकी पिचकारियां दूरसे हमारी ओर दौडती आती हैं — यह दृश्य हर तरहसे अुन्मादक होता है। और यह महोत्सव मनाने आये हुअे हम लोगोंका स्वागत करनेका कर्तव्य मानो अपने सिर आ पडा हो, अैसा समझकर अिन धाराओं तथा अुस पखेमें से फैलनेवाले पानीके कण सारी हवाको शीतल बना देते हैं। जब यह खारी ओस आंखकी पलकों पर, नाककी नोक पर और आश्चर्यसे खुले हुअे ओठों पर जमती हैं, तब लगता है कि हम भी नागरिक या ग्रामवासी नहीं हैं, बल्कि वरुणके सामुद्रिक राज्यकी प्रजा हैं।

और महासागरके अूपरसे दौडकर आनेवाला शुद्ध पवन कहता है "अिस दृश्यका आतिथ्य स्वीकारनेकी पूरी शक्ति तुम्हारे पामर हृदयमें कहांसे होगी! चलो, मैं तुम्हें दूर दूरसे लाये हुअे ओझोन (प्राणवायु) की दीक्षा देता हूं, पाथेय देता हूं। ओझोन जब तुम्हारे दिलमें भर जायगा, तब तुम्हारे फेफडे प्राणपूर्ण होंगे, पवित्र होंगे। अुसके बाद ही तुम यहांका वातावरण तथा अुदावरण सहन कर सकोगे।" और सचमुच, प्राणवायुके श्वासोच्छ्वाससे हरेकके मुंह पर अुषाकी लालिमा छा गअी थी। हम आठों जन आठ दिशाओंमें देख देखकर भी तृप्त नहीं होते थे।

अिसी स्थान पर हमारे पहले अेक सिंधी सज्जन अेक बडी शिला पर बैठकर चुपचाप अिस काव्यमें ओतप्रोत होकर भावनामें नहा रहे थे। वे न बोलते थे, न चालते थे, न हंसते थे, न गाते थे। तल्लीन होकर जरा डोल रहे थे। हम बातें कर रहे थे, हृदयके अुद्गार प्रकट कर रहे थे। मगर अुन सज्जनको अिनकी क्या परवा? अुन्हें मनुष्यकी मौज नहीं मनाना था, बल्कि लहरोंकी मस्तीको अपनाना था, अुसे पी जाना था। अेक पैर पर दूसरे पैरकी पलथी लगाकर, अुस पर कुहनी रख-कर और सिरको अेक ओर झुकाकर वे समुद्रका ध्यान कर रहे थे।

अुनकी बालोंकी मांगमें सीकर-बिन्दुओंकी मुक्तामाला चमक रही थी। मानो वरुणदेवने अपना वरद हस्त अुनके सिर पर रख दिया हो!

हमने स्थान बदल बदल कर अनेक दृष्टिकोणोंसे यह दृश्य देखा। अिससे लहरोंके मनमें हमारे प्रति सद्भावकी जागृति हुअी। वे कहने लगी, "आओ आओ, अितनी दूरसे क्या देख रहे हो? तुम पराये नही हो। पास आओ, मौज मनाओ, लहरोंका आनन्द लूटो, हंसो और कूदो। यह क्षण और अनत काल — अिनके बीच कोअी फर्क नही है। चलो, आ जाओ।" लहरोंकी शिष्टता भिन्न प्रकारकी होती है। न्योता देते समय वे हाथ नही पकड़ती, बल्कि पाव पखारती है। हमने सभ्यतासे अिस स्वागतको स्वीकार करके कहा, "सचमुच आनेका जी होता है। मगर अभी नही। अभी हमारा काम पूरा नही हुआ है। काफी बाकी रहा है। हमारे मनके कअी सकल्प अभी अधूरे है। जिस भारतमाताके चरणोंका तुम अखड रूपसे प्रक्षालन कर रही हो, वह अभी तक आजाद नही हुअी है। मनुष्य-मनुष्यके बीचका विग्रह शात नही हुआ है। गरीब तथा दबी हुअी जनताके साथ जब तक पूरी अेकताका हम अनुभव नही करते, तब तक तुम्हारे साथ अेकता अनुभव करनेका अधिकार हमें कैसे प्राप्त होगा? तुम मुक्त हो, अखंड कर्मयोगी हो, सतत कार्य करते हुअे भी तुम्हारे लिअे कर्तव्य जैसा कुछ नही रहा है। हम तो कर्तव्योंका पहाड सामने देखते हुअे भी आलस्यमें पडे है। तुम्हारी पक्तिमें खडे रहकर नाचनेका अधिकार हमें नही है। तुम हमें प्रेरणा दो। हमारे दिलमे तुम्हारी मस्ती भर दो। तुम्हारा वेदान्त हमारे चित्तमें बो दो। फिर हमें अपना कार्य पूरा करनेमें, भारतको आजाद करनेमें देर नही लगेगी। और यह अेक सकल्प यदि पूरा हुआ, तो बिना किसी विषादके हम तुम्हारे पास दौड आयेंगे। तुम्हारे साथ अद्वैत सिद्ध करेंगे। और अिसमें यदि हड्डिया, चमडी या मास शिकायत करने लगें, तो जिस प्रकार कष्ट देनेवाले कपड़े फाड़ दिये जाते है, अुसी प्रकार अिस शरीरको हम चकनाचूर कर डालेंगे और फिर अुसके पिंडोंके नये नये आकारोंको देखकर हंसने लगेंगे।"

"ठीक है। जब अनुकूल हो तब आना। तुम आओ या न आओ, हमारा यह ताडव-नृत्य तो चलता ही रहेगा। जीवनका रास पूरा करके गोपिया अिसमे मिल गअी है। संसारके चक्रव्यूहसे मुक्त हुअे तमाम साधु-सत, फकीर और औलिये अिसमे आ मिले है। विज्ञानवीर तथा सत्यके अुपासक अिसमें मिलकर शात हो गये है। अिसीलिअे हमारा यह सघ अखड अशाति मचाते हुअे भी शातिका सागर-सगीत सुना सकता है।

"क्या तुम्हे सुनाअी देता है यह सगीत?"

जून, १९३७

३४

सिन्धुके बाद गंगा

फरवरीकी १५ या १६ तारीखको ठेठ पश्चिमकी ओर रोहरी-सक्करके बीच सिंधुके विशाल पट पर जल-विहार करनेके बाद और २८ फरवरीको कोटरीके समीप अुसी सिन्धुके अतिम दर्शन करनेके बाद, बारह-पद्रह दिनके भीतर ही पूर्वकी ओर पाटलिपुत्रके निकट गगाका पावन प्रवाह देखनेको मिला। यह कितने सौभाग्यकी बात है! आर्योंकी वैदिक माता सिन्धु और अुन्ही भारतीयोंकी सनातन माता गगाके दर्शन अिस प्रकार अेकके बाद अेक होते रहें तो अुस सौभाग्यका स्वागत कौनसा नदी-पुत्र नही करेगा? गगाको जिस प्रकार अुसके पानीका अुपयोग करनेवाला भगीरथ मिला अुसी प्रकार यदि सिन्धुको भी मिल जाता, तो राजस्थान और सिन्धका अितिहास दूसरे ही ढगसे लिखा जाता। सिन्धु बिना किसीके कहे, अनेक दिशाओंमें बहती है और अपना पात्र बदलनेमें सकोच नही करती। तब यदि भगीरथ और जह्नु जैसे अुपासक अिजीनियर अुसे मिल जाते, तो वह सिंध तथा सौवीर देशोंके लिअे क्या क्या न करती? क्या आज भी रोहरी और सक्करके बीच अपना पानी अेकत्र करके नहरोंके सात प्रवाहों द्वारा

यह स्वच्छद-विहारिणी सिन्धु अपना स्तन्य सिंधु देशको पिलाने नही लगी है?

सिन्धु नदी पजावके सात प्रवाहोका पानी अेकत्र करके मिट्ठन-कोट और कश्मीर तक युक्तवेणी रहती है, वही सिन्धु सक्कर-रोहरीके बाद पहले-पहल मुक्तवेणी हो जाती है और कोटरीके बाद केटी वंदर तक तो न मालूम कितने मुखोंसे समुद्रमे जा मिलती है।*

गगा नदी गोआलदो तक युक्तवेणी रहती है। गोआलदोमे गगा और ब्रह्मपुत्राके मिलनसे अुनके अमर्याद प्रवाहोकी अैसी अराजकता मच जाती है कि मुक्तवेणी और युक्तवेणीका भेद ही नही किया जा सकता। कलकत्ताके वाद सुन्दरवनका पखा देखनेको जरूर मिलता है। किन्तु यह नही कहा जा सकता कि गगाका विस्तार अितना ही है।

गावी-सेवा-सघकी अतिम बैठकके लिअे हम मालीकादा गये थे। तब असम प्रातसे शिलोगके रास्ते सुरमा घाटी होकर वापस लौटे थे। जाते और आते समय भगवती गगाके विविध दर्शन किये थे। किन्तु सम्राट् अशोकके पाटलिपुत्र (आजकलके पटना) के समीप गगाकी शोभा अनोखी है। पटनाके पास मैंने भिन्न भिन्न समय पर कमसे कम तीन-चार बार गगा पार की होगी। फिर भी वहा गगाके दर्शनकी नवीनता कम होती ही नही। मेरा खयाल है कि नेपालकी यात्रा

---

* जिस प्रदेशमे अनेक प्रवाह आकर अेक नदीमे मिल जाते है, अुस सारे प्रदेशको अग्रेजीमें 'region of tributaries' कहते है। और जहां अेक नदीमे से अनेक प्रवाह निकल कर चारों ओर फैल जाते है अुस प्रदेशको 'region of distributaries' कहते है। हमारे यहा यही भाव व्यक्त करनेके लिअे 'युक्तवेणी' और 'मुक्तवेणी' शब्द काममे लाये गये है।

जब नदी समुद्रको मिलनेके लिअे दो या अधिक मुखोमे विभक्त होती है, तब बीचके अुस तिकोने प्रदेशको अुसी आकारके ग्रीक अक्षर परसे 'delta' कहते है। हमें अैसे प्रदेशको 'नदीका पखा' कहना चाहिये।

समाप्त करके मैं मुजफ्फरपुरसे कलकत्ता गया तब पहले पहल पटना गया था। फालगुन मासके दिन थे। जहा जायें वहा आमके मौरसे हवा महक रही थी। और अजनबी मैं पटनाके छोटे बडे रास्तो पर मतवालेकी तरह अपने अत करणमे वसतोत्सव मना रहा था। वहा जो पहली छाप मन पर पडी, वह आज भी मौजूद है। फिर भी अुसके बाद जब जब मैं पटना गया हू, तब तब कुछ न कुछ नवीनता मैंने वहा अवश्य पायी है।

श्री राजेन्द्रबाबू जहा रहते है और जहा विहार विद्यापीठ चल रहा है, वह सदाकत आश्रम गगाके ठीक किनारे पर ही है। आश्रमके सामनेका रास्ता लाघकर तीन फुटके बाध पर चढते ही गंगाकी विस्तीर्ण जलराशि पश्चिमसे आकर पूर्वकी ओर बहती हुअी नजर आती है। अुस पारका किनारा देखनेकी यदि कोशिश करे, तो जमीनकी अेक पतली-सी रेखाके सिवा कुछ दिखाअी ही नही देता। चकित होकर आप सायमें आये हुअे किसी आदमीसे कहें कि 'गगाका पाट कितना चौडा है!' तो वह तुरत हसकर कहेगा, 'वह जो सामने दीख पडता है वह केवल अेक टापू है। अुसके आगे भी गगाका प्रवाह है। अुस पारका किनारा यहासे दिखाअी नही पडता।'

सामने जो पतली-सी लकीर दिखाअी देती है वह अेक चौडा टापू है, यह सुनने पर भी यकीन नही होता कि पानीके अितने बडे विस्तारके बाद, लकीरके अुस पार और भी विस्तार हो सकता है। अेक वार सदेह मनमें पैदा हुआ कि वह कुतूहलका रूप अवश्य धारण कर लेता है। कुतूहल परिपक्व होने पर अुसमे से सकल्प अुठता है। और सकल्पके जैसी बेचैन बनानेवाली दूसरी कोअी वस्तु भला हो सकती है?

सदाकत आश्रममे रहे तब तक रोज गगाके किनारे टहलना हमारा काम था। क्योंकि गगाकी सस्कृति-पुनीत मोहिनी न होती, तो भी किनारे पर खडे पुराण-पुरुष जैसे वृक्षोकी पक्ति हमे खीचे बिना न रहती। सह्याद्रि या हिमालयके अुत्तुग वृक्ष जितने देते हैं, अुसका जी ललचानेकी शक्ति मामूली वृक्षोमें कहासे आवे? किन्तु गगाके

तट पर, पटनाके आसपास, योजनों तक चलते रहिये — चारो ओर अूचे-अूचे वृक्ष अपनी पुष्ट शाखाये चारो दिशाओमे अूपर और नीचे दूर दूर तक फैलाये हुअे नजर आते है। किसी समय, पटना सम्राट् अशोकके साम्राज्यकी राजधानी था। आज वही पटना वृक्षोंके अेक विशाल साम्राज्यका पोषण करता है। •

अैसे स्थान पर खडे रहकर, जो न तो बहुत दूर हो और न बहुत पास, अिन बडे वृक्षोके अग-प्रत्यगोकी शोभाको यदि ध्यानसे निहारे, तो अुनका स्वभाव, अुनकी चित्तवृत्ति और अुनकी कुलीनताका खयाल आये बिना नही रहता। सभी वृक्ष तपस्वी नही होते। कुछ मौनी ध्यानी जैसे दिखाअी देते है, कुछ क्रीडाप्रिय होते है, कुछ वियोगी विरही जैसे, तो कुछ अत्युत्कट प्रेमी जैसे। परन्तु किसी भी स्थितिमें वे अपना आर्यत्व नही छोडते। कुछ वृक्षोकी शाखाये अूपर अितनी फैली हुअी होती है, मानो टूटते हुअे आसमानको बचानेका काम अुन्हींके जिम्मे आया हो।

चार बूढे सज्जन शातिसे गभीर बातें कर रहे है और तुतलाते हुअे बच्चे अुनकी गोदमें अुछल-कूद मचा रहे है — क्या अैसा दृश्य आपने कभी देखा है? बूढे बच्चोको डाटते नही, कोमलताके साथ अुन्हे पुचकारते है। फिर भी अुनकी गभीर बातचीतमे खलल नही पडती। गगाके किनारे सनातन मत्रणा चलानेवाले अिन पेडोके बीच जब छोटे-बडे पक्षी मीठा कलरव करते है, तब ठीक वही वृद्ध-अर्भक-दृश्य नये ढगसे आखोके सामने आता है।

फाल्गुन पूर्णिमाके आसपासके दिन थे। शामको अगर घूमने निकलते तो 'चदामामा' पेडोकी ओटमे से दर्शन देते ही थे। हमने यहा अेक नये आनदकी खोज की। जिस प्रकार अलग अलग प्रकारकी अगूठियोमे जडने पर हीरा नयी नयी शोभा दिखाता है, अुसी प्रकार अलग अलग पेडोकी ओटमे चाद नयी नयी छबि धारण करता था। अेक बार सीग जैसी दो शाखाओंके बीचमें अुसे खडा करके हमने देखा। दूसरी बार गोल-कीपर (goal-keeper)या लक्ष्यपाल जैसे अेक बडे पेडको अुसी चद्रको हवा-गेंद (फूटबॉल) की तरह अुछालते हुअे

देखा। दीघाघाटके बंदरगाहके पास अेक जगह तो दो पेडोंके बीच चन्द्रमा अिस तरह जमकर बैठा था कि मालूम होता था मानो "यह चांद तेरा नहीं है, मेरा है" कहकर पेड आपसमें लड रहे हों। और अंतमें अिन दोनोंका झगडा निपटानेके लिअे चांदने मुंह बनाकर कहा, "तुम दोनोंमें से मैं किसीका भी नहीं हूं, जाओ।" अितना कहकर वह रुका नहीं। वह तो सीधा अूंचा ही चढता गया। चंद्रकी अिस तटस्थताकी कद्र करके हम थोडे आगे बढे ही थे, अितनेमें वह अपना न्यायाधीशपन भूलकर अेक पेडसे जाकर चिपक गया! और अंतमें भुजाओंमें जकडे जानेके कारण हंसने लगा।

मनमें संकल्प अुठा अैसे चांदनीके दिनोंमें कुछ समय सामनेके अुस निर्जन टापूमें बिता सकें तो कितना अच्छा हो! होली और धुलेंडीके दिन तो छोड ही देने पडे, क्योंकि लोग होली पीकर अुन्मत्त हो गये थे, और अुन्होंने दो दिन तक गंगा-किनारेके कीचड और पेडोंके रंगोंका अनुकरण करनेका निश्चय किया था। जब वे अिससे निवृत्त हुअे, तब हम अेक नावकी व्यवस्था करके चल पडे।

चंद्र निकले अुसके पहले रवाना होनेमें भला मजा कैसे आवे? किन्तु चंद्रको जल्दी थी ही नहीं। निकला भी तो प्रकाश नहीं देता था। किसीको पता चले बिना जिस प्रकार कोअी नया धर्म स्थापित होता है, अुसी प्रकार चंद्रमा निकला। अुसका प्रकाश अितना मंद था कि स्वातिको भी अुस पर तरस आ रहा था। जब चंद्र ही अितना मंद था, तब वफादार चित्रा अदृश्य रहे, अिसमें आश्चर्य क्या? शनि और गुरु मंत्र पढते हुअे पश्चिमकी ओर अस्त हो रहे थे। तारकांकित झोंपडीके स्वामी अगस्ति दक्षिण पर आरोहण कर रहे थे। हमारी नाव चलने लगी। पानीमें चन्द्रका अेक लम्बा स्तंभ दिखाअी देने लगा। प्रथम स्थिर, बादमें तरल। हम ज्यों ज्यों आगे बढते गये त्यों त्यों पानीका पृष्ठभाग अधिकाधिक चंचल होता गया, और भांति भांतिकी आकृतियोंका प्रदर्शन करने लगा।

मेरे मनमें विचार आया कि पानीके जत्थे और रफ्तारके साथ ये आकृतियां भी बदलती हैं। तो अिनका अध्ययन करके हरेकको अलग

अलग नाम देकर अैसी योजना क्यों न बनायी जाय कि नदीकी रफ्तार दिखानेके लिअे अुन आकृतियोंका नाम ही बता दिया जाय? अुच्च और नीच ध्वनिको हम यदि 'सा, रे, ग, म, प, ध, नी' जैसे नाम दे सकते हैं, अत्यंत अुग्र तापको (white heat) सूर्यकांति अुष्णता कह सकते हैं, तो नदीकी रफ्तारको गोमूत्रिका-वेग, वलय-वेग, आवर्त-वेग, विवर्त-वेग आदि नाम क्यों नहीं दे सकते?

अिस कल्पनाके साथ ही मैं विचारोंके आवर्तमें अुतर गया और चित्रा कब प्रकट हुअी, अिसका पता ही न चला। हम मझधारमें पहुंचे और मुझे प्रार्थना सूझी। अैसे स्थान पर आंखें मूंदकर कहीं अंधेरी प्रार्थना की जा सकती है? हमारा प्रार्थना-स्वामी जब हमारे सामने विविध रूपसे प्रत्यक्ष विराजमान हो, तब आंखें मूंदकर हम गुहा-प्रवेश किसलिअे करें? 'रसो वै स' कहकर जिसे हम पहचानते हैं, वह जब रसपूर्ण भूमि, पवित्र जल, सौम्य तेज, आह्लादकारी पवन और पितृ-वात्सल्यसे हमारी ओर देखनेवाले आकाशके विस्तार आदिके विविध रूपोंमें प्रकट हो और 'विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिन, रसवर्जं रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते।' श्लोक हम गाते हों, तब सारा जीवन-दर्शन नये सिरेसे सोचा जाता है। गहरा विचार लम्बा होता ही है, अैसी कोअी बात नहीं है। **रसका निवर्तन कब होता है और परिवर्तन किस तरह होता है,** अिसकी सारी मीमांसा मैंने तीन-चार क्षणोंमें ही मनमें कर ली और देखते ही देखते प्रार्थनामें ताजगी आ गअी। 'रघुपति राघव राजाराम' की धुन शुरू हुअी, और चंचल मन जीवन-रसकी गंभीर मीमांसा छोड़कर तुरन्त पूछने लगा, 'श्री रामचंद्रजीने गुहककी सहायतासे गंगा किस स्थान पर पार की होगी? गुहककी नाव हमारी नावके जितनी चौड़ी होगी या किसी पेड़के तनेसे बनाअी हुअी नन्हीसी डोंगी जैसी होगी?'

बातकी बातमें हम अुस टापू पर पहुंच गये। और सलिल-विहार छोड़कर हमने सिकता-विहार शुरू किया। चमकीली बालू चमकीले पानीसे कम आनंददायक नहीं थी। टापूके किनारे थोड़ी दूब अुगी हुअी थी। अेक क्षणका विचार करके हमने निश्चय कर लिया कि यहां

साप, बिच्छू, काटा कुछ भी नही हो सकता। यहा तो अक्षुण्ण बालू ही बिछी हुअी है। यदि कोअी निशानी है तो वह अस्थिर-मति पवनकी लहरोंकी ही। गगाकी लहरोंके कारण रेतमे बनी हुअी आकृतियोंको मिटानेकी क्रीडा मनमौजी पवन किस प्रकार करता है, अिसका आलेख यहा देखनेको मिलता था। रेत पर बनी हुअी आकृतिया अैसी दिखाअी देती थी, मानो पाठशालाके बच्चे थककर सो गये हो और अुनकी कापिया तथा स्लेटे कितावोंके साथ अिधर-अुधर बिखर पडी हो। कही मनचले, लहरी पवनकी लिखावट दिखाअी देती, तो कही लहरोंकी स्वर-लिपि रेतमें अकित दिखाअी देती थी। अिनमे अपने पदचिह्न अकित करनेका मेरा जी नही होता था। किन्तु बालूके झट टूट जानेवाले पपडे जब पैरो तले टूट जाते, तब पापड खाने जैसा मजा आता था। पैरोंके आनदको सारे शरीरने अनुभव किया और अुसे लगा कि दरअसल मूसलकी तरह खडे खडे चलनेमें पूरा मजा नही है। All rights reserved का दावा करनेवाला कोअी गवा वहा नही था। अिसलिअे हमने नि शक होकर रेतमें लोटनेकी सोची। किन्तु दुर्भाग्यवश अिस बातमे हमारे साथियोका अेकमत नही हो सका। किसीकी प्रतिष्ठा अिसमें बाधक हुअी, तो किसीका कैकर्य आडे आया। हमारे खलासी तो हमे वही छोडकर किसीसे मिलने टापूके दूसरे छोर पर चले गये। शराबखानेके नौकर पियक्कडोंकी ओर जिस दृष्टिसे देखते है, अुसी दृष्टिसे अुन्होने हम सौंदर्य-पिपासु लोगोंकी ओर देखा होगा।

गया काग्रेसके बाद हम चपारणकी ओर गये थे, तब अिसी स्थानसे हमने गगा पार की थी। अुस समय आश्रमके दो विद्यार्थियोंने अेक मीठा भजन गाया था 'मगल करहु दयाऽऽऽ करी देवी'। अिस स्थान पर आते ही वह सब याद आया और मैं भीमसेनका अनुकरण करके मुक्तकठसे गाने लगा। साथियोंने अुदारताके साथ अुसे सह लिया। अिससे मैं और भी चढ गया और मथुराबाबूसे कहने लगा, "मुझे छपरासे मुगेर तक नावमें जाना है। कितना समय लगेगा?" अैसी यात्रा मेरे नसीबमे है या नही, अीश्वर जाने। किन्तु कल्पनामे तो मैंने वह पूरी भी कर ली।

आकाशमें ब्रह्महृदय अस्त होनेकी तैयारी कर रहा था। महाश्वान अपनी मृगयामें मशगूल था। अगस्तिकी झोंपडी अब अपनी जगह पर आ गयी थी। और कृत्तिका तटस्थतासे स्मित कर रही थी। पुनर्वसुकी नावने अपना अग्रभाग जरा अूचा करके दक्षिणकी यात्रा शुरू की और हमें अिस बातकी याद दिलाअी कि हम अिस टापूके निवासी नही हैं; यहासे हमें वापस लौटना है और परियोंकी सृष्टिको छोडकर मानवी सृष्टिमें अुतरना है। हम तुरत टापूके किनारे पर आ गये और पुनर्वसुकी तरह अपनी नाव हमने दक्षिणकी ओर बढाअी।

'फिर यहा कब आयेंगे?' अैसा विषाद मनमें नही अुठा। गंगोत्रीसे लेकर हीरा बंदर तक गंगाके अनेक बार दर्शन करके मैं पावन हुआ हूं और मैयाकी कृपासे आगे भी अनेक बार दर्शन होंगे। अब अिस पूर्णानंदमें घट-बढ होनेकी संभावना नही है। अिसीलिअे वापस लौटते समय मुंहसे शांतिपाठ निकल पड़ा:

ॐ पूर्णम् अद, पूर्णम् अिद; पूर्णात् पूर्णम् अुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णम् आदाय पूर्णम् अेवावशिष्यते॥

अप्रैल, १९४१

३५
नदी पर नहर

श्रावण पूर्णिमाके मानी हैं जनेअूका दिन; और यदि ब्राह्मण्यको भूल जाय तो राखीका दिन। अुस दिन हम रुडकी पहुंचे। मजाकिये वेणीप्रसादने देखते ही देखते मुझसे दोस्ती कर ली और कहा, 'अजी काकाजी, आज तो आपके हाथसे ही जनेअू लेंगे। यहाके ब्राह्मण वेदमंत्र बराबर बोलते ही नही। आप महाराष्ट्री हैं। आप ही हमें जनेअू दीजियेगा।' वेणीप्रसादके मामा परम भक्त थे। अुनसे जनेअूके बारेमें चर्चा चली। अुत्तर भारतके ब्राह्मण चाहते हैं कि वे ही नही बल्कि तीनों द्विज वर्ण नियमित रूपसे जनेअू पहनें और संध्यादि नित्यकर्म करें। मगर यहाके लोगोंकी बड़ी अनास्था है।

अिससे ठीक विपरीत, दक्षिणमें जब ब्राह्मणेतर जनेअू मागते है, तब महाराष्ट्रके ब्राह्मण 'कलौ आद्यन्तयो स्थिति' के वचनके अनुसार अैसी बेहूदी जिद लेकर बैठते है, मानो बीचके दो वर्ण है ही नहीं। (सौभाग्यसे आज वह स्थिति नही रही।) जिन्हे जनेअू पहननेका अधिकार है, वे अुसे पहननेके बारेमें अुदासीन रहते है, और जो हाथापाअी करके भी जनेअू पहननेका अधिकार प्राप्त करना चाहते है, अुनके लिअे अपना द्विजत्व सिद्ध करनेमें कठिनाअी पैदा की जाती है! यह चर्चा सुनकर वेणीप्रसादको लगा कि 'आज हमे जनेअू मिलनेवाली नहीं है।' अुसने दलील पेश की 'कलियुगमें क्या नही हो सकता? नदी पर यदि नदी सवार हो सकती है, तो महाराष्ट्रके ब्राह्मण भी हमें जनेअू दे सकते है।' दलील मजूर हुअी। किन्तु विषय बदला और कलियुगके भगीरथोंकी बहादुरीके अुदाहरण-स्वरूप गगाकी नहरके बारेमें बातें चली।

दोपहरके समय हम लोग मानवका यह प्रताप देखने निकले। गगाकी नहर शहरके समीपसे जाती है। लडके अुसमे मछलियोंकी तरह अेक खेल खेल रहे थे। नहरके किनारे किनारे हम अुस प्रख्यात पुल तक गये। वह दृश्य सचमुच भव्य था। पुलके नीचेसे गरीब ब्राह्मणीके समान सोलाना नदी बह रही थी और अूपरसे गगाकी नहर अपना चौडा पाट जरा भी सकुचित किये बिना पुल परसे दौड़ती जा रही थी। पुलके अूपर पानीका बोझ अितना ज्यादा था कि मालूम होता था, अभी दोनो ओरकी दीवारे टूट जायेगी और दोनो ओरसे हाथीकी झूलके समान बडे प्रपात गिरना शुरू होगे। पुलकी दीवार पर खडे रहकर नहरके बहावकी ओर देखते रहनेमे दिमाग पर अुनका असर होता था। दुःखी मनुष्यको जिस प्रकार अुद्वेगके नये नये अुभार आते हैं, अुसी प्रकार नहरके जलमे भी अुभार आते थे। किन्तु ससुराल आयी हुअी बहू जिस प्रकार अपनी सब भावनायें नये घरमें दबा देती है, अुसी प्रकार गगा नदीकी यह परतत्र पुत्री अपने सब अुभारोको दबा देती थी। अुसका विस्तार देखकर प्रथम दर्शनमें तो मालूम होता था मानो यह कोअी धनमत्त सेठानी है। किन्तु नजदीक जाकर देखने पर श्रीमतीके नीचे परतत्रताका दुःख ही अुसके वदन पर दीख पड़ता था।

अूपरसे नीचे देखने पर निम्नगा सोलानाका क्षीण किन्तु स्वतंत्र वहाव दोनो ओरसे आकर्षक मालूम होता था। चुभता केवल अितना ही था कि नहरकी दोनो ओरकी दीवारोमे परिवाहके तौर पर कओी मूराख रखे गये थे, जिनमें से नहरका थोडा पानी अिस तरह सोलानामे गिर रहा था मानो अुस पर अहसान कर रहा हो।

हम पुलसे नीचे अुतरे और सोलानाके किनारे जा बैठे। अूचेसे दिये जानेवाले अुपकारको अस्वीकार करने जितनी मानिनी सोलाना नही थी। मगर कोओी कृपा अवतरित होगी, अैसी लोभी दृष्टि रखने जितनी हीन भी वह न थी। हीनता अुसमे जरा भी नही थी। और मानिनीकी वृत्ति अुसको शोभती भी नही। अुसकी निर्व्याज स्वाभाविकता प्रयत्नसे विकसित अुदात्त चारित्र्यसे भी अधिक शोभा देती थी।

भगीरथ-विद्यामें (अिरिगेशन अिंजीनियरिंगमे) पानीके प्रवाहको ले जानेवाले छ प्रकार वताये गये है। अुनमे अेक प्रवाहके अूपरसे दूसरे प्रवाहको ले जानेकी योजनाको अद्‌भुत और अत्यन्त कठिन प्रकार माना गया है। अिस प्रकारके रेलके या मोटरके मार्ग हमने कओी देखे है। मगर, जहा तक मै जानता हू, हिन्दुस्तानमें अिस प्रकारके जल-प्रवाहका यह अेक ही नमूना है। सस्कृतिके प्रवाहकी दृष्टिसे यदि सोचें, तो सारा भारतवर्ष अैसे ही प्रकारसे भरा हुआ है। यहा हरअेक जातिकी अपनी अलग सस्कृति है, और कओी वार आमने सामने मिलने पर भी वे अेक-दूसरीसे काफी हद तक अस्पृष्ट रह सकी है!

१९२६–'२७

३६

नेपालकी बाघमती

कश्मीरकी जैसे दूधगगा है, वैसे नेपालकी वाघमती या वाघमती है। अितनी छोटी नदीकी ओर किसीका ध्यान भी नही जायेगा। किन्तु वाघमतीने अेक अैसा अितिहास-प्रसिद्ध स्थान अपनाया है कि अुसका नाम लाखोकी जवान पर चढ गया है। नेपालकी अुपत्यका अर्थात् अठारह कोसके घेरेवाला और चारो ओर पहाडोसे सुरक्षित रमणीय अण्डाकार मैदान। दक्षिणकी ओर फरपिग-नारायण अुसका रक्षण करता है। अुत्तरकी ओर गौरीशकरकी छायाके नीचे आया हुआ चगु-नारायण अुसको सभालता है। पूर्वकी ओर विशगु-नारायण है और पश्चिमकी ओर है अिचगु-नारायण।

हिमालयकी गोदमे वसे हुअे स्वतत्र हिन्दू राज्यके अिस घोसलेमे तीन राजधानिया अैसी है, मानो तीन अडे रखे गये हो। अत्यन्त प्राचीन राजधानी है ललितपट्टन, अुसके वादकी है भादगाव, और आजकलकी है काठमाडू या काष्टमडप। नेपालके मदिरोकी वनावट हिन्दुस्तानके अन्य स्थलोकी वनावटके समान नही है। मदिरकी छतमे जहा वरसातके पानीकी धाराये गिरती है वहा नेपाली लोग छोटी-छोटी घटिया लटका रखते है। और वीचमे लटकनेवाले लोलकको पीतलके पतले पीपल-पान लगा दिये जाते है। जरा-सी हवा लगते ही वे नाचने लगते है। यह कला अुन्हे सिखानी नही पडती। अेकसाथ अनेक घटिया किणकिण किणकिण आवाज करने लगती है। यह मजुल ध्वनि मदिरकी शातिमे खलल नही डालती, वल्कि शातिको अधिक गहरी और मुखरित करती है। भादगावकी कअी मूर्तिया तो शिल्पकलाके अद्भुत नमूने है। शिल्पशास्त्रके सब नियमोकी रक्षा करके भी कलाकार अपनी प्रतिभाको कितनी आजादी दे सकता है, अिसके नमूने यदि देखने हो तो अिन मूर्तियोको देख लीजिये। मालूम होता है यहाके मूर्तिकार कलाको अतिमानुषी ही मानते है।

खेतोमें दूर दूर भव्याकृति स्तूप अैसे स्वस्थ मालूम होते है, मानो समाधिका अनुभव ले रहे हो।

और काठमाडू तो आजके नेपाल राज्यका वैभव है। नेपालमे जानेकी अिजाजत आसानीसे नही मिलती। अिसीलिअे परदेके पीछे क्या है, अवगुठनके अदर किस प्रकारका सौदर्य है, यह जाननेका कुतूहल जैसे अपने-आप अुत्पन्न होता है, वैसे नेपालके बारेमें भी होता है। आठ दिन रहनेकी अिजाजत मिली है। जो कुछ देखना है, देख लो। वापस जाने पर फिर लौटना नही होगा। अैसी मन स्थितिमें जहा देखो वहा काव्य ही काव्य नजर आता है।

पशुपतिनाथका मदिर काठमाडूसे दूर नही है। वह अैसा दिखता है मानो मदिरोके झुडमें वडा नदी बैठा हो। निकटमे ही बाघमती बहती है। रेतीली मिट्टी परसे अुसका पानी बहता है, अिसलिअे वह हमेशा मटमैला मालूम होता है। अुसमे तैरनेकी अिच्छा जरूर होती है, मगर पानी अुतना गहरा हो तभी न? गुह्येश्वरी और पशुपतिनाथके बीचसे यह प्रवाह वहता है, अिसी कारण अुसकी महिमा है।

पशुपतिनाथसे हम सीधे पश्चिमकी ओर शिगु-भगवानके दर्शन करने गये। रास्तेमें मिली बाघमतीकी बहन विष्णुमती। अिस नदी पर जहा तहा पुल छाये हुअे थे। पुल काहेके? नदीके पट पर पानीसे अेक हाथकी अूचाअी पर लकडीकी अेक अेक वित्ता चौडी तख्तिया। सामनेसे यदि कोअी आ जाय तो दोनो अेकसाथ अुस पुल परसे पार नही हो सकते। दोनोमें से किसी अेकको पानीमें अुतरना पडता है। कही कही पानी अधिक गहरा होता है, वहा तो आदमी घुटनो तक भीग जाता है।

शिगु-भगवानकी तलहटीमें ध्यानी बुद्धकी अेक वडी मूर्ति सूर्यके तापमें तपस्या करती है। टेकरी पर अेक मदिर है। अुसमें तीन मूर्तिया हैं। अेक बुद्ध भगवानकी, दूसरी धर्म भगवानकी, तीसरी सघ भगवानकी। हरेकके सामने घीका दीया जलता है। और अेक कोनेमें लकडीकी बनायी हुअी अेक चौखटमें पीतलकी अेक पोली लाट खडी कर रखी है, जिस पर 'ॐ मामे पामे हुम्' (ॐ मणिपद्मेऽहम्)का पवित्र मत्र कअी वार खुदा

हुआ है। दस्ता घुमाने पर लाट गोल गोल घूमती है। रुद्राक्ष या तुलसीकी माला फेरनेकी अपेक्षा यह सुविधा अधिक अच्छी है। हर चक्करके साथ अुस पर जितनी बार मन्त्र लिखा हुआ है अुतनी बार आपने मन्त्रका जाप किया, और अुतना पुण्य आपको अपने-आप मिला गया, अिसमें संदेह रखनेका कोअी कारण नही है। 'नात्र कार्या विचारणा'। तथागतको अपने संदेशका यह स्वरूप देखनेको नही मिला, यह अुनका दुर्भाग्य है, और क्या? अिसी मंदिरके पास पीतलका बनाया हुआ अिंद्रका वज्र अेक चबूतरे पर रखा है। भगिनी निवेदिताको अिसका आकार बहुत पसंद आया था। अुन्होंने सूचना की थी कि भारतवर्षके राष्ट्रध्वज पर अिसका चित्र बनाया जाय।

बाघमतीके किनारे धान, गेहू, मकअी और अुडद काफी पैदा होते है। अरहर वहा नही होती। मालूम नही, अिन लोगोने अिसे पैदा करनेकी कोशिश की है या नही। रुअी पैदा करनेके प्रयत्न अभी अभी हुअे है।

बाघमती नेपाली लोगोकी गंगा-मैया है। गोरक्षनाथ अुनके पिता है।

१९२६–'२७

३७

बिहारकी गंडकी

छुटपनमें मैंने अितना ही सुना था कि गंडकी नदी नेपालसे आती है और अुसमें शालिग्राम मिलते है। शालिग्राम अेक तरहके शंख जैसे प्राणी होते है, अुन्हे तुलसीके पत्ते बहुत पसंद आते है, पानीमें तुलसीके पत्ते डालने पर ये प्राणी धीरे-धीरे बाहर आते है और पत्ते खाने लगते है, अुन्हे पकडकर अंदरके जीवको मार डालते है और काले पत्थर जैसे ये शंख साफ करके पूजाके लिअे बेचे जाते है, लेकिन आजकलके धूर्त लोग काले रंगकी शिलाका अेक टुकडा लेकर अुसमें सुराख करके नकली शालिग्राम

बनाते है, अैसी कअी बाते सुनी थी। अिसलिअे कअी दिनोसे मनमें था कि अैसी नदीको अेक वार देख लेना चाहिये।

मुझे याद है कि स्वामी विवेकानदने कही लिखा है कि नर्मदाके पत्थर महादेवके बाणलिंग है और विष्णुके शालिग्राम बौद्ध स्तूपोके प्रतीकके तौर पर गडकीमे से लाये हुअे पत्थर है। पेरिसकी वडी प्रदर्शनीके समय अुन्होने किसी भाषण या लेखमे जाहिर किया था कि बाणलिंग और शालिग्राम बौद्ध जगतके दो छोर सूचित करते है।

गगा नदीका जहा अुद्गम है, वहीसे वह दोनो ओरसे कर-भार लेती हुअी आगे वढती है। अुसकी माडलिक नदिया अधिकाशत अुत्तरकी ओरकी यानी वायी तरफकी है। चवल और शोणको यदि छोड दे, तो महत्त्वकी कोअी नदी दक्षिणसे अुत्तरकी ओर नही जाती। गगाकी दक्षिण-वाहिनी माडलिक नदियोमे गडकी' गगाके लिअे बिहारका पानी लाती है।

हम सब मुजफ्फरपुर गये थे तब अेक दिन गडकीमे नहाने गये। बिहारकी भूमि है अनासक्तिके आद्य प्रवर्तक सम्राट् जनककी कर्म-भूमि, अहिसा-धर्मके महान प्रचारक महावीरकी तपोभूमि, अष्टागिक मार्गके सशोधक बुद्ध भगवानकी विहार-भूमि। ये सब धर्मसम्राट् अिस नदीके किनारे अहर्निश विचरते होगे। अुनके असख्य सहायकोने तथा अनुयायियोने अिसमें स्नान-पान किया होगा। सीतामैयाने छुटपनमें अिसमें कितना ही जल-विहार किया होगा। वही गडकी मुझे अपने शैत्य-पावनत्वसे कृतार्थ करे — अिस सकल्पके साथ मैंने अुसमें स्नान किया। नदीके पानीको किसी भी प्रकारकी जल्दी नही थी। अुसमें किसी प्रकारका अुत्पात न था। वह शातिसे बहती जाती थी, मानो मारको जीतनेके बाद बुद्ध भगवानका चलाया हुआ अखड ध्यान ही हो।

१९२६–'२७

३८

गयाकी फल्गु

संस्कृतमें फल्गुके दो अर्थ होते हैं। (१) फल्गु यानी निःसार, क्षुद्र, तुच्छ, और (२) फल्गु यानी सुन्दर। गयाके समीपकी नदीका फल्गु नाम दोनों अर्थोंमें सार्थक है। पुराण कहते हैं कि अुसे सीताका शाप लगा है। सीताके शापके बारेमें जो होगा सो सही, किन्तु अुसे सिकताका शाप लगा है यह तो हम अपनी आंखोंसे देख सकते हैं। जहां भी देखें, बालू ही बालू दिखाअी देती है। बेचारा क्षीण प्रवाह अिसमें सिर अूंचा करे भी तो कैसे? यात्री लोग जहां तहां खोदकर गड्ढे तैयार करते हैं। लकडीके बडे फावडेको लम्बी डोरी बांधकर हलकी तरह अुसे अिन गड्ढोंमें चलाते हैं, जिससे नीचेका कीचड निकल कर गड्ढा अधिक गहरा होता है और अधिक पानी देता है।

असंख्य श्रद्धावान यात्री फल्गुके पटमें 'सनान' करके पितरोंके लिअे चावल पकाते हैं और पिंड तैयार करते हैं। चावल, पानी, मटकी, गोबर आदिकी मात्रा पंडोंने हमेशाके लिअे तय कर रखी है। नियमके अनुसार पैसा दे दीजिये, पंडा सब सामग्री ले आता है। गोबरके थपले सुलगाकर अुस पर चावलकी मटकी रख दीजिये, अमुक विधियोंके पूरे होने तक चावल तैयार हो ही जायगा।

फल्गुके किनारे मंदिर और धर्मशालाओंका सौंदर्य बहुत है। अिनमें भी श्री गदाधरजीके मंदिरका शिखर तो अनायास हमारा ध्यान खींचता है।

फल्गुकी सच्ची शोभा देख लीजिये, गयासे बोधगयाकी ओर जाते समय। बालूका लंबा-चौडा पाट, आसपास ताडके अूंचे अूंचे पेड़ और अिनके बीचसे टेढा-मेढा बहता हुआ फल्गुका क्षीण प्रवाह। मगर अुसे क्षुद्र या निःसार कौन कहेगा? यहां रामचन्द्र और सीताजी आयी थीं। भगवान बुद्ध यहां घूमे थे। और कअी सत्पुरुष यहां श्राद्ध करने आये थे। अिस महातीर्थको निःसार तो कह ही नहीं सकते। आखिर फल्गु यानी सुन्दर — यही अर्थ सही है।

१९२६-'२७

३९

गरजता हुआ शोणभद्र

'अय शोण शुभ-जलोऽगाध पुलिन-मण्डित ।
'कतरेण पथा ब्रह्मन् सतरिष्यामहे वयम्?'।।
अेवम् अुक्तस् तु रामेण विश्वामित्रोऽब्रवीद् अिदम्।
'अेष पन्था मयोद्दिष्टो येन यान्ति महर्षय'।।

आसेतु-हिमाचल भारतवर्षके बारेमें अेक ही साथ विचार करने-वाले क्षत्रिय गुरु-शिष्यकी अिस जोडीके मनमे शोणनद पार करते समय क्या क्या विचार आये होगे? प्रकृतिके कवि वाल्मीकिने विश्वा-मित्र और राम, दोनोके प्रकृति-प्रेमका मुक्तकठसे वर्णन किया है। तीनो जनगण-हितकारी मूर्तिया। अुनकी भावनाओका स्रोत भी शोणभद्रकी तरह ही बहता होगा, और आसपासकी भूमिको मुखरित करता होगा।

अमरकटकके आसपासकी अुन्नत भूमि भारतवर्षके लगभग मध्यमें खडी है। वहासे तीन दिशाओकी ओर अुसने अपनी करुणाका स्तन्य छोड दिया है। भौगोलिक रचनाकी दृष्टिसे जिनके बीच काफी साम्य है, किन्तु दूसरी दृष्टिसे सपूर्ण वैषम्य है, अैसे दो प्रातोको अुसने दो नदिया दी हैं। नर्मदा गुजरातके हिस्से आयी, और महानदी अुत्कलको मिली।

अमरकटकका तीसरा स्रोत है पीवरकाय शोणभद्र। नर्मदा सुदीर्घा है, महानदी अष्टावक्रा है और शोणभद्र सुघोष है। करीब पाच सौ मीलका पराक्रम पूरा करके वह पटनाके पास गगासे मिलता है। शोणके कारण ही शोणपुरका स्थान मशहूर है। कहते हैं कि ग्राहके साथ गजेंद्रकी लडाअी गगा-शोणके सगमके समीपस्थ दहमें ही हुअी थी। मानो अिसी प्रसगको चिरस्मरणीय करनेके लिअे अब भी शोणपुरमे लाखो लोगोका मेला होता है, और अुसमें सैकडो हाथी बेचे जाते हैं।

सिन्धु और ब्रह्मपुत्रके साथ शोणभद्रको नर नाम देकर प्राचीन ऋषियोने अुसका समुचित आदर किया है। बनारससे गया जाते समय अिस महाकाय और महानाद नदके दर्शन हुअे थे। गाडी बडे पुल परसे जाती है और शोणभद्रका पुलिन-मडित महापट दिखता रहता है।

सकरी घाटीमें अपना विकास रुकनेके कारण अधीरताके साथ जब दौडता हुआ वह यकायक विशाल क्षेत्रमें पहुचता है, तब कहा जाअू और कहा न जाअू यह भाव अुसके चेहरे पर स्पष्ट रूपमे दिखाअी देता है। 'नाल्पे सुखम् अस्ति, यो वै भूमा तत् सुखम्'—यह माननेवाले महर्षिगण शोणके किनारे अच्छा अुतार खोजते हुअे जब घूमते होंगे, तब अुनके मनमें क्या क्या विचार आते होंगे? यह तो विश्वामित्र या अुनके मखत्राता प्रभु श्री रामचद्रजी ही जाने।

१९२६–'२७

४०

तेरदालका मृगजल

मेरे विवाहके बाद कुछ ही दिनोमे हम शाहपुरसे जमखडी गये। पिताजी हमसे पहले वहा पहुच गये थे। रातको हम कुडची स्टेशन पर अुतरे। वहासे रातको ही बैलगाडीमें रवाना हुअे। दोनों बैल सफेद और मजबूत थे। रग, सीगोका आकार, मुखमुद्रा और चलनेका ढग सब बाते दोनोमें समान थी। हमारे यहा अैसी जोडीको 'खिल्लारी' कहते हैं। अिन बैलोने हमें चौबीस घटोमे पैतीस मील पहुचा दिया।

जमखडी जाते हुअे रास्तेमें अितिहास-प्रसिद्ध तेरदाल आता है। हम तेरदालके पास पहुचे तब मध्याह्नका समय था। दाहिनी ओर दूर दूर तक खेत फैले हुअे थे। काफी दूर, लगभग क्षितिजके पास, अेक बडी नदी बह रही थी। पानी पर सख्त धूप पडनेके कारण वह चमचमा रहा था। और पानी कितने वेगसे बह रहा है अिसका भी कुछ कुछ खयाल होता था। अितनी सुदर नदीके किनारे पेड कम क्यो है, अिसका कारण मैं समझ न सका। मैंने गाडीवानसे पूछा, 'अिस नदीका नाम क्या है? कितनी बडी दिखाअी देती है? कृष्णा नदी तो नही है?' गाडीवान हस पडा। कहने लगा, 'यहा नदी कहासे आयेगी? वह तो मृगजल है। पानीके अिस दृश्यसे बेचारे प्यासे हिरन

धोखेमे आ जाते है और धूपमे दौड-दौडकर और पानीके लिअे तडप-तडप कर मर जाते हैं। अिसीलिअे अुसको मृगजल कहते है।'

मृगजलके बारेमे मैने पढा तो था। मृगजलमे अूपरके पेडका प्रतिबिंब भी दिखाअी देता है, रेगिस्तानमें चलनेवाले अूटोके प्रतिबिंब भी दिखाअी देते है, आदि जानकारी और अुसके चित्र मैने पुस्तकोमें देखे थे। मगर मै समझता था कि मृगजल तो अफ्रीकामे ही दिखाअी देते होगे। सहाराके रेगिस्तानकी अिक्कीस दिनकी यात्रामें ही यह अद्भुत दृश्य देखनेको मिलता होगा। हिन्दुस्तानमें भी मृगजल दिखाअी दे सकते है, अिसकी यदि मुझे कल्पना होती, तो मै अितनी आसानीसे और अितनी बुरी तरहसे धोखा नही खाता।

अब मैं देख सका कि हम ज्यो ज्यो गाडीमे आगे बढते जाते थे, त्यो त्यो पानी भी आगे खिसकता जाता था। मैंने यह भी देखा कि अुस पानीके आसपास हरियाली नही थी, और पानीका पट आसपासकी जमीनसे नीचे भी नही था। जमीनकी सतह पर ही पानी बहता था। अूपरकी हवामे भी धूपका असर दिखाअी देता था। फिर तो मृगजलकी मौज देखनेमे और अुसका स्वरूप समझनेमें बहुत आनद आने लगा। बेचारे बैल अधमुदी आखोसे अपनी गतिके तालमे अेक समान चल रहे थे। कोअी बैल चलते चलते पेशाब करता, तो अुसका आलेख जमीन पर बन जाता था और थोडी ही देरमे सूख जाता था। हम आधे-आधे घटेमें सुराहीसे पानी लेकर पीते थे, फिर भी प्यास बुझती नही थी।

अैसा करते करते आखिर तेरदाल आया। धर्मशाला पत्थरकी बनी हुअी थी। देशी रियासतका गाव था, अिसलिअे धर्मशाला अच्छी बनी हुअी थी। मगर सख्त धूपके कारण वह भी अप्रिय-सी मालूम हुअी। मुकाम पर पहुचनेके बाद मै तालाबमें नहा आया। साथमें पूजाकी मूर्तिया थी। बेंतकी पेटीमें से अुन्हें निकालकर पूजाके लिअे जमाया। अुनमे अेक शालिग्राम था। वह तुलसीपत्रके बिना भोजन नही करता, अिसलिअे मैं गीली धोतीसे, किन्तु नगे पैरो तुलसीपत्र लानेके लिअे निकल पडा। अेक घरके आगनमें सफेद कनेरके फूल भी मिले और तुलसीपत्र भी मिले। दोपहरका समय था। पेटमें भूख थी, पैर जल रहे थे, सिर

गरम हो गया था — अैसे त्रिविध तापमे पूजा करने वैठा। देवता कुछ कम न थे। अीश्वर अेक अवश्य है, मगर सवकी ओरसे अेक ही देवताकी पूजा करता तो वह चल नही सकता था। पूजा करते समय मेरी आखोके सामने अधेरा छा गया। वडी मुश्किलसे मैंने पूजा पूरी की और खाना खाकर सो गया।

स्वप्नमे मैंने हिरनोके अेक वडे झुण्डको गेंदकी तरह दौडते हुअे मृगजलका पानी पीने जाते देखा।

अैसा ही अेक मृगजल दाडीयात्राके समय नवसारीसे दाडीके समुद्र-किनारेकी ओर जाते समय देखनेको मिला था। हमे यह विश्वास होते हुअे भी कि यह मृगजल है, आखोका भ्रम तनिक भी कम नही होता था। वेदान्तका ज्ञान आखोको कैसे स्वीकार हो?

आजकल कलकत्तेकी कोलतारकी सडको पर भी दोपहरके समय अैसा मृगजल चमकने लगता है, जिससे यह भ्रम होता है कि अभी अभी वारिश हुअी है। दौडनेवाली मोटरोकी परछाअिया भी अुनमे दिखाअी देती है। भगवानने यह मृगजल शायद अिसीलिअे वनाया है कि ज्ञान होने पर भी मनुष्य मोहवश कैसे रह सकता है, अिस सवालका जवाव अुसे मिल जाय।

१९२५

४१
चर्मण्वती चंवल

जिनके पानीका स्नान-पान मैंने किया है, अुन्ही नदियोका यहा अुपस्थान करनेका मेरा सकल्प है। फिर भी अिसमे अेक अपवाद किये विना रहा नही जाता। मध्य देशकी चवल नदीके दर्शन करनेका मुझे स्मरण नही है। किन्तु पौराणिक कालके चर्मण्वती नामके साथ यह नदी स्मरणमें हमेशाके लिअे अकित हो चुकी है। नदियोके नाम अुनके किनारेके पशु, पक्षी या वनस्पति परसे रखे गये है, अिसकी मिसाले वहुत है। दृषद्वती, सारस्वती, गोमती, वेत्रवती, कुशावती, शरावती, वाघमती,

हाथमती, साबरमती, अिरावती आदि नाम अुन अुन प्रजाओको सूचित करते हैं। नदीके नामसे ही अुनकी सस्कृति प्रकट होती है। तब चर्मण्वती नाम क्या सूचित करता है? यह नाम सुनते ही हरेक गोसेवकके रोगटे खडे हुअे विना नही रहेगे।

प्राचीन राजा रतिदेवने अमर कीर्ति प्राप्त की। महाभारत जैसा विराट ग्रथ रतिदेवकी कीर्ति गाते थकता नही। राजाने अिस नदीके किनारे अनेक यज्ञ किये। अुनमे जो पशु मारे जाते थे, अुनके खूनसे यह नदी हमेशा लाल रहती थी। अिन पशुओके चमडे सुखानेके लिअे अिस नदीके किनारे फैलाये जाते थे, अिसीलिअे अिस नदीका नाम चर्मण्वती पडा। महाभारतमें अिस प्रसगका वर्णन बडे अुत्साहके साथ किया गया है। रतिदेवके यज्ञमे अितने ब्राह्मण आते थे कि कभी कभी रसोअियोको भूदेवोसे विनती करनी पडती कि 'भगवन्! आज मास कम पकाया गया है, आज केवल पचीस हजार पशु ही मारे गये हैं। अिसलिअे सब्जी-कचूमर अधिक लीजियेगा।'

अुस समयके हिन्दूधर्ममें और आजके हिन्दूधर्ममें कितना बडा अतर हो गया है! यूनानी लोगोके 'हैकॅटॉम' को भी फीका सिद्ध करे अितने बडे यज्ञ करके हम स्वर्गके देवताओको तथा भूदेवोको तृप्त करेंगे, अैसी अुम्मीद अुस समयके धार्मिक लोग रखते थे। बादके लोगोने सवाल अुठाया

> वृक्षान् छित्वा, पशून् हत्वा, कृत्वा रुधिर-कर्दमम्
> स्वर्गं चेत् गम्यते मर्त्यै नरकं केन गम्यते?

'पेडोको काटकर, पशुओको मारकर और खूनका कीचड बनाकर यदि स्वर्गको जाया जाता हो, तो फिर नरकको जानेका साधन कौनसा है?' अिस चर्मण्वती नदीके किनारे कअी लडाअिया हुअी होगी। मनुष्यने मनुष्यका खून बहाया होगा। मगर चबलका नाम लेते ही राजा रतिदेवके समयका ही स्मरण होता है।

यदि आज भी हमें अितना अुद्वेग मालूम होता है, तो समस्त प्राणियोकी माता चर्मण्वतीको अुस समय कितनी वेदना हुअी होगी?

१९२६-'२७

४२

नदीका सरोवर

हमारे देशमें अितने सौंदर्य-स्थान विखरे हुअे हैं कि अुनका कोअी हिसाव ही नही रखता। मानो प्रकृतिने जो अुडाअूपन दिखाया अुसके लिअे मनुष्य अुसे सजा दे रहा है। आश्रममें जिन्हें चौवीसो घटे वापूजीके साथ रहने तथा वातें करनेका मौका मिला है, वे जैसे वापूजीका महत्त्व नही समझते और वापूजीका भाव भी नही पूछते, वैसा ही हमारे देशमें प्रकृतिकी भव्यताके वारेमें हुआ है।

हम माणिकपुरसे झासी जा रहे थे। रास्तेमें हरपालपुर और रोहाके वीच हमने अचानक अेक विशाल सुदर दृश्य देखा। पता ही नही चला कि यह नदी है या सरोवर? आसपासके पेड किनारेके अितने समीप आ गये थे कि अिसके सिवा दूसरा कोअी अनुमान ही नही हो सकता था कि यह नदी नही हो सकती। मगर सरोवरकी चारो वाजू तो कमोवेश अूची होनी चाहिये। यहा सामने अेक अूचा पहाड आसपासके जगलको आशीर्वाद देता हुआ खडा था, और पानीमे देखनेवाले लोगोको अपना अुलटा दर्शन देता था। दाढी रखकर सिर मुडानेवाले मुसलमानोकी तरह अिस पहाडने अपनी तलहटीमें जगल अुगाकर अपने शिखरका मुडन किया था।

पुलकी वाअी ओर पानीके वीचोवीच अेक छोटा-सा टापू था — दो अेक फुट लवा और अेक हाथ चौडा, और पानीके पृष्ठभागसे अधिक नही तो छ अिच अूचा। अुसका घमड देखने लायक था। वह मानो पासके पहाडसे कह रहा था, 'तू तो तट पर खडा खडा तमाशा देख रहा है, मुझको देख, मै कितना सुन्दर जल-विहार कर रहा हू!'

तव यह नदी है या सरोवर? अभी अभी वेलाताल स्टेशन गया। अिसलिअे लगा कि अिस प्रदेशमें जगह जगह तालाव होगे। किन्तु विश्वास न हुआ। डिब्बेमे वैठे हुअे लोगोको अवश्य पूछा जा सकता था। मगर अेक तो पैसेजर गाडी होते हुअे भी दीपावलीके दिन होनेके कारण

अुसमे स्थानिक यात्री नही थे, और यदि होते भी तो अुनसे अधिक जानकारी पा मकनेकी अुम्मीद थोडे ही रखी जा सकती थी। युगो तक जीवन-यात्रा विपम वनी रही, अिस कारण लोगोके जीवनमें से सारा काव्य सूख गया है। अिसलिअे जो भी मवाल पूछा जाय, अुसका जवाव विपादमय अुपेक्षाके माथ ही मिलता है। लोगोकी भलमनसाहत अभी कुछ वाकी है, किन्तु काव्य, अुत्साह और कल्पनाकी अुडान अव स्मृतिशेप हो गये हैं।

पर अितना मुन्दर दृश्य देखनेके वाद क्या विपादके विचारोका सेवन किया जा मकता है? यात्रामे मैं हमेशा अेक-दो नक्शे अपने माथ रखता ही हू। वलिहारी आधुनिक समयकी कि अैसे साधन अनायास मिल जाते हैं। मैंने 'रोड मैप ऑफ अिन्डिया' निकाला। हरपालपुर और मअुरानीपुरके वीचसे अेक लवी नदी दक्षिणसे अुत्तरकी ओर दौडती है, वेतवामे जा मिलती है और वेतवाकी मददसे हिमतपुरके पास अपना नीर यमुनाके चरणोमे चढा देती है। 'मगर अिस नदीका नाम क्या है?' मैंने नक्शेसे पूछा। वह आलसी वोला 'देखो, कही लिखा हुआ होगा!' और मचमुच अुसी क्षण नाम मिला — धसान! अितने सुदर और शात पानीका नाम 'धसान' क्यो पडा होगा? यह तो अुसका अपमान है। मै अिस नदीका नाम प्रसन्ना रखता। मदस्रोता कहता या हिमालयसे माफी मागकर अुसे मदाकिनीके नामसे पुकारता।

मगर हमे क्या मालूम कि जिस लोककविने अिस नदीका नाम धसान रखा, अुसने अुसका दर्शन किस ऋतुमें किया होगा? वर्पा मूसलधार गिर रही होगी, आसपासके पहाड वादलोको खीचकर नीचे गिरा रहे होगे, और मस्तीमें झूमनेवाले नीर हाथीकी रफ्तारसे अुत्तर दिशाकी ओर तेजीसे दौड रहे होगे। शका पैदा हुअी होगी कि समीपकी टेकरिया कायम रहेंगी या गिर पडेंगी। अैसे समय पर लोककविने कहा होगा, 'देखो तो अिस धसान नदीकी शरारत, मानो महाराज पुलकेशीकी फौज अुत्तरको जीतनेके लिअे निकल पडी है!'

किन्तु अव यह नदी अितनी शात मालूम होती है, मानो गोकुलमें शरारत करनेके वाद यशोदा माताके सामने गरीव गाय वना हुआ कन्हैया हो!

सुवह नाश्तेके समय अितनी अनमोची मेजवानी मिलने पर अुसे कौन छोडेगा ?

अघाकर खानेके वाद रिश्तेदारोका स्मरण तो होता ही है। अब अिस धसानका मगल दर्शन अिष्ट मित्रोको किस प्रकार कराया जाय ? न पास कैमरा है, न ट्रेनसे फोटो खीचनेकी सुविधा है। और फोटोकी शक्ति भी कितनी होती है ? फोटोमे यदि सारा आनद भरना मभव होता, तो घूमनेकी तकलीफ कोओी न अुठाता । मै कवि होता तो यह दृश्य देखकर हृदयके अुद्गारोकी अेक सरिता ही वहा देता। मगर वह भी भाग्यमे नही है। अिसलिअे 'दूधकी प्यास छाछसे वुझाने' के न्यायसे यह पत्र लिख रहा हू । भारतकी भक्ति करनेवाला कोओी समानधर्मी झासीसे करीव पचास मीलके अदर आये हुअे अिस स्थानका दर्शन करनेके लिअे जरूर आयेगा।

स्टेशन वरवासागर, १४–११–'३९

ता० १६–११–'३९

धसानसे आगे वढे और ओरछाके पास वेतवा नदी देखी। यह नदी भी काफी सुन्दर थी। अुसके प्रवाहमे कओी पत्थर और कओी पेड थे। अुसके लावण्यमें फीका कुछ भी नही था । दूर दूर तक ओरछाके मदिर और महल दिखाअी देते थे, कीचडका दर्शन कही भी नही हुआ। यह अनाविला नदी देखकर हम झासी पहुचे। वहा श्री मैथिलीशरणजीके भाओी — सियारामशरणजी और चारुशीलाशरणजी अपने परिवारके अन्य लोगोके साथ भोजन लेकर आये थे। मेरे मनमे सदेह था कि काव्य पढ-पढकर काव्यका सर्जन करनेवाले हमारे कवि जिस तरह प्रकृतिका प्रत्यक्ष दर्शन हृदयसे नही करते, अुसी तरह अिन कवि-वन्धुओने भी धसान और वेतवाके वारेमें शायद कुछ न लिखा होगा। अिसलिअे मैने अुनसे साफ साफ कह दिया कि 'आपने यदि अिन दो नदियो पर कुछ भी न लिखा हो, तो आप निंदाके पात्र है!' सियारामशरणजीने अपने विनयसे मुझे पराजित किया। अुन्होने कहा, 'भैयाजीने (मैथिलीशरणजीने) अिन नदियोके वारेमें गाते हुअे

कहा है कि सौदर्यमें बुदेलखडकी ये नदिया गगा-यमुनासे भी बढकर है। अिसलिअे मेरे बडे भाअी तो आपके अुपालभमें नही आयेंगे। हा, मैंने खुद अिन नदियोके बारेमें कुछ नही लिखा है। मगर मैं कहा अभी बूढा हो गया हू। मुझे तो अभी बहुत लिखना है।"

अुनसे मालूम हुआ कि धसानका मूल नाम था दशार्ण। और यह तो मुझे मालूम था कि बेतवाका नाम था वेत्रवती। दशार्ण = दशाअण = दशाण = धसान। अितना ध्यानमें आनेके बाद धसान नामके बारेमें मैंने जो अूटपटाग कल्पना की थी, वह पत्तोके महलकी तरह गिर पडी। किसी तरहके सबूतके बिना केवल कल्पनाके सहारे खोज करनेवाले मेरे जैसे कअी लोग अिस देशमें होगे। अुनकी गलती बतानेके लिअे जो जानकारी चाहिये अुसके अभावमे अैसी निरी कल्पनायें भी अितिहासके नामसे रूढ हो जाती है, और आगे जाकर रूढियोके अभिमानी लोग जोशके साथ अैसी कल्पनाओसे भी चिपटे रहते है।

मैंने अेक दफा 'वती-मती' वाली नदियोके नाम अिकट्ठा किये थे। अिसीलिअे वेत्रवती ध्यानमें रही थी। जिसके किनारे बेंत अुगते हैं वह है वेत्रवती। दृषद्वती (पथरीली), सरस्वती, गोमती, हाथमती, बाघमती, अैरावती, साबरमती, वेगमती, माहिष्मती (?), चर्मण्वती (चबल), भोगवती (?), शरावती। अितनी नदिया तो आज याद आती है। और भी खोजने पर दूसरी पाच-दस नदिया मिल जायेंगी। महाभारतमें जहा तीर्थयात्राका प्रकरण आता है, वहा कअी नाम अेकसाथ बताये गये है। परशुराम, विश्वामित्र, बलराम, नारद, दत्तात्रेय, व्यास, वाल्मीकि, सूत, शौनक आदि प्राचीन घुमक्कड भूगोलवेत्ताओसे यदि पूछेंगे, तो वे काफी नाम बतायेंगे या पैदा कर लेंगे। हमारी नदियोके नामोके पीछे रही जानकारी, कल्पना, काव्य और भक्तिके बारेमें आज तक भी किसीने खोज नही की है। फिर भारतीय जीवन भला फिरसे समृद्ध किस तरह हो?

नवबर, १९३९

४३
निशीथ-यात्रा

जबलपुरके समीप भेडाघाटके पास नर्मदाके प्रवाहकी रक्षा करने-वाले संगमरमरके पहाड हम रात्रिके समय देख आयेंगे, यह ख्याल शायद मध्यरात्रिके स्वप्नमें भी न आता। किन्तु 'सबिन्दु-सिन्धु-सुस्खलत् तरंगभंग-रंजितम्' कहकर जिसका वर्णन हम किसी समय संध्या-वंदनके साथ गाते थे, अुस शर्मदा नर्मदाके दर्शन करनेके लिअे यह अेक सुन्दर काव्यमय स्थान होगा, अैसी अस्पष्ट कल्पना मनके किसी कोनेमें पडी हुअी थी।

हिमालयकी यात्राके समय मैं रास्तेमें जबलपुर ठहरा था। किंतु अुस समय भेडाघाटकी नर्मदाका स्मरण तक नही हुआ था। गंगोत्री और अुसके रास्तेमे आनेवाले श्रीनगरके चिंतनके सामने नर्मदाका स्मरण कैसे होता? नर्मदा-तटकी गहनताके महादेवको छोडकर मैं गंगोत्रीकी यात्राके लिअे चल पडा था।

फैजपुर कांग्रेसके समय हमने केवल अजंता जानेका सोचा था। किन्तु रेलवे कंपनीने झोन टिकट निकाले, और हममे अिधर-अुधर अधिक घूमनेकी वृत्ति जगा दी। जबलपुरकी यात्रा यदि मुफ्तमें होती है, तो क्यो न हो आयें? —यो सोचकर हम चल पडे। यह सच था कि हम किसी खास कामके लिअे जबल्पुर नही जा रहे थे, मगर अेक दिन सिर्फ मौज करना है, अैसी भी हमारी वृत्ति नही थी।

देशके अलग अलग धार्मिक स्थल, अैतिहासिक स्थान, कला-मंदिर और निसर्ग-रमणीय दृश्य देखनेको मैंने कभी निरी नयन-तृप्ति नही माना है। मंदिरमें जाकर जिस प्रकार हम देवताका दर्शन करते हैं, अुसी प्रकार भूमाताकी अिन विविध विभूतियोके दर्शनके लिअे मैं आया हू, अिसी भावनासे मैंने अब तक की अपनी सारी यात्रायें की हैं। अपने देशकी रग-रगकी जानकारी मुझको होनी चाहिये और जिस जानकारीके साथ साथ भक्तिमें भी वृद्धि होनी चाहिये, अैसी मेरी अपेक्षा रहती है।

ज्यो ज्यो मै यात्रा करता हू और अभिमान तथा प्रेममे हृदयको भर देनेवाले दृश्य देखता हू, त्यो त्यो अेक चीज मुझे वेचैन किया ही करती है यह मेरा अितना सुन्दर और भव्य देश परतत्र है, अिसके लिअे मै जिम्मेदार हू। पारतत्र्यका लाछन लेकर मै अिस अद्‌भुत-रम्य देशकी भक्ति भी किस प्रकार कर सकता हू? क्या मै कह सकता हू कि यह देश मेरा ही है? मै देशका हू अिसमे तो कोअी सदेह नही है, क्योकि अुसने मुझे पैदा किया है, वही मेरा पालन-पोषण अखड रूपसे कर रहा है; वही मुझे रहनेके लिअे स्थान, खानेके लिअे अन्न और आरामके लिअे आश्रय देता है, अपने वालबच्चोको मै अुसीके सहारे, निश्चित होकर छोड सकता हू, जिस अुज्ज्वल अितिहासके कारण मै ससारमें सिर अूचा करके चलता हू, वह आर्योका प्राचीन अितिहास भी अिसी देशने मुझे दिया है। अिस प्रकार मैंने अपना सर्वस्व देशमे ही पाया है। किन्तु यह देश मेरा है, यो कहनेके लिअे मैने देशके लिअे क्या किया है? मेरा जन्म हुआ अुसके साथ ही मै देशका वना, मगर यो कहनेके पहले कि 'यह देश मेरा है' मुझे जिदगी भर मेहनत करके अिसके लिअे खप जाना चाहिये।

मनमे अिस तरहके विचारोका आवर्त अुठने पर मै क्षण भर वेचैन हो जाता हू, किन्तु अिसी अस्वस्थतामे से धर्मनिष्ठा पैदा होकर दृढ बनती है। अिसी वेचैनीके कारण स्वराज्यका सकल्प वलवान होता है और देशके लिअे — देशमें असह्य कष्ट अुठानेवाले गरीबोके लिअे — यत्किचित् भी कष्ट सहनेका जव मौका मिलता है, तव मुझे लगता है कि मै अुपकृत हुआ हू। और ज्यो ज्यो यात्रा करता रहता हू, त्यो त्यो मनमे नयी शक्तिका सचार होने लगता है। युवकोसे मै हमेशा कहता आया हू कि 'स्वदेशमे घूमकर देशके और देशके लोगोके दर्शन करनेका तुम अेक भी मौका मत छोडना।'

अिस प्रकारकी अुत्कट भावनाका अुदय जव हृदयमें होता है, तव अैसा लगना स्वाभाविक है कि पासमे कोअी न हो तो अच्छा। अपनी नाजुक भावनाओको शब्दोमे लिखकर लोगोके सामने रखना अुतना कठिन नही है। किन्तु अिन भावनाओसे बैचेन होने पर हमारी

जो विह्वल दशा हो जाती है और हम मतवाले वन जाते है, असे कोअी देखे यह हमें सहन नही होता। अिसी कारण मै जव जव भक्ति-यात्राके लिअे चल पडता हू, तव तव मुझे लगता है कि मै अकेला ही जाअू और अेकातमे ही प्रकृतिका अनुनय करू तो अच्छा होगा।

किन्तु मेरी जाति है कौवेकी। अकेले अकेले सेवन किया हुआ कुछ भी मुझे हजम नही होता। अिसलिअे अनिच्छासे ही क्यो न हो, मै सव लोगोसे कह देता हू 'मुझसे अव रहा नही जाता, मै तो यह चला।' लिहाजा कोअी न कोअी मेरे साथ हो ही लेता है। लोगोको लगता है कि अिनके साथ जानेसे हमारे चर्मचक्षुओको अिनके प्रेम-चक्षुओकी मदद मिलेगी, और अपना देश हम चार आखोसे जी भरकर देख सकेंगे। मेरी अिस स्थितिका वर्णन मैंने अपने अेक मित्रको लिख-कर कहा था कि 'मै खोजता हू अेकात, किन्तु पाता हू लोकात।'

आखिर अिस सवका नतीजा यह होता है कि मुझे समुदायके साथ यात्रा करनी पडती है, और अिसलिअे अपनी अुछलनेवाली मनोवृत्तियोको दवा देना पडता है। और अेक ओर मनके अन्तर्मुख वनकर चिंतन-मग्न होने पर भी दूसरी ओर मुझे वाहरके लोगोंके वायुमडलके अनुकूल वनना पडता है।

यात्रामे हो या किसी महत्त्वके काममे हो, मगलाचरणमे कोअी विघ्न न आये तो मुझे कुछ खोया-खोया-सा मालूम होता है। निर्विघ्न प्रवृत्ति यदि मैंने अपनी स्वप्नसृष्टिमें भी न देखी हो, तो जागृतिमें भला वह कहासे आयेगी? वडे अुत्साहके साथ हम भुसावलसे रवाना हुअे और अिटारसीमे ही पहली ठोकर खाअी। पहलेसे सूचना देने पर भी अिटारसीके स्टेशन-मास्टर गाडीमे हमारे लिअे कोअी प्रवध नही कर सके थे। नया डिव्वा जोड दे तो अुसे खीचनेकी ताकत अेजिनमें नही थी, क्योकि अिटारसीके पहले ही गाडीमें ज्यादा डिव्वे जोडे गये थे और सव डिव्वे ठसाठस भरे हुअे थे।

क्या अव यहीसे वापस लौटना पडेगा? कितनी निराशा! सोचा, मनको दूसरी दिशामे मोड दें और दिलजोअीके लिअे यहासे होशगावाद तक मोटरसे जाकर नर्मदामाताके दर्शन कर लें और फैजपुरकी ओर

वापस लौट जाय। किन्तु अितनी हिम्मत हारनेकी भी हिम्मत न होनेसे आखिर आयी हुअी गाडीमें हम किसी न किसी तरह घुस गये।

जवलपुर जाकर अेक-दो स्थानिक सज्जनोकी मददसे हम नजदीककी धर्मशालामें जा पहुचे और मोटरकी व्यवस्था करनेकी कोशिशमें लगे।

कोअी वडा काफिला साथमे लेकर यात्रा करनेमें जिस व्यवस्था-शक्तिकी आवश्यकता रहती है, वही युद्धोमें वडी फौजके स्थानातरके समय रहती है। किसी आश्रम, सस्था, मदिर या छोटे-वड़े सस्थानको चलानेमे जिन गुणो या शक्तियोका विकास होता है, अुन्हीका अुपयोग किसी राज्य या साम्राज्यको चलानेमें होता है। कोअी होशियार किसान मौका मिलते ही अुत्तम शासक या प्रवधक हो सकता है; और वडे वडे कल-कारखाने चलानेवाला कल्पक या योजक कारखानेदार किसी साम्राज्यका सूत्र आसानीसे चला सकता है। यात्रामें मनुष्यकी सव तरहकी कुशलताकी परीक्षा होती है। और अुसमे योग्य पुरुष — और स्त्रिया भी, अपने आप आगे आ जाती हैं।

यह विचार यहा क्यो सूझा, यह वतानेके लिअे हम न रुकेंगे। हमे समय पर भेडाघाट पहुचना है, और वारिश तो मानो 'अभी आती हू' कहकर टूट पडने पर तुली हुअी है। यो तो ये वारिशके दिन नही हैं। किन्तु हिन्दुस्तानके चारो ओरके लोग फैजपुर काग्रेसके लिअे जा रहे हैं, यह देखकर वारिशको भी लगा, 'चलो हम भी अलग अलग स्थान देखते हुअे फैजपुर हो आयें।' मगर जाडेके दिनोमें वारिशके पावोमें ताकत नही होती, अिसलिअे दौडते दौडते वह रास्तेमे ही गिर पडी और फैजपुर तक पहुच न सकी! अुसके हाथमें यदि 'स्वराज्यकी ज्योति' होती, तो शायद लोगोने अुसे अुठकर आगे वढनेमे मदद की होती।

खैर; हमारी दोनो मोटरे तैल-वेगसे चल पडी और सध्याके समय हम भेडाघाट जा पहुचे। सगमरमरकी शिलायें देखनेके लिअे अिसमे पहले शायद ही कोअी अैसे समय यहा आया होगा। मगर प्रकृतिके दीवानेको समयके साथ क्या लेना देना है?

* * *

यहा आकर हम बडी दुविधामें पडे। निकटमें ही अेक टेकरी पर महादेवजीके मदिरको घेरकर चौरासी योगिनिया तपस्या करती हुअी बैठी थी। तपस्या करते करते अहल्याकी तरह वे शिलारूप बन गअी होगी। रामके चरणोका स्पर्श होनेके बजाय मुसलमानोकी लाठियोका स्पर्श होनेके कारण अिनमे से बहुत-सी योगिनियोकी काफी दुर्दशा हुअी है। अिस टेकरीके अुस पार धुवाधार नामक अेक मशहूर प्रपात है। अुसे देखने जायें या सगमरमरकी शिलायें देखनेके लिअे नौका-विहार करें?

विहार करनेके लिअे नौकायें केवल दो ही थी। अिसलिअे हम सब किसी अेक बात पर अेकमत हो जाय अिसमे लाभ नही था। लिहाजा हमने दो टोलिया बनायी। यह स्थान सगमरमरकी शिलाओंके लिअे मशहूर था, अिसलिअे बडी टोलीने अुस ओर जाना पसन्द किया। अिसमें सदेह नही कि थोडा अुजियाला जो बचा था अुसीमे यह स्थान देख लेनेमे अक्लमदी थी। हमारी दूसरी टोलीने योगिनियोका दर्शन करके धुवाधार जानेका निर्णय किया और हम सीढिया चढने लगे। सब योगिनियोके दर्शन हमने अपने हाथकी बिजलीकी अेक छोटी-सी मशालकी मददसे किये। मूर्तिया सुन्दर ढगसे बनाअी हुअी और कलापूर्ण लगी। मदिरके भीतर विराजमान महादेव तथा अुनका नदी भी देखने लायक है।

मनमे विचार आया कि जब किसी लडाअीमे हम घायल होते हैं, तब तुरत अिलाज करके हम अच्छे हो जाते हैं। गावमे रोगसे किसीकी मौत होती है, तो हम तुरत अुसे जला देते या दफना देते हैं। जब जमीन पर दूध गिरता है तब हम अुसके धब्बोको अमगलकारी समझकर अुन्हे जमीन पर रहने नही देते, अुन्हे पोछ डालते हैं। अैसा मनुष्य-स्वभाव होने पर भी हमने खडित मूर्तिया ज्यो-की-त्यो क्यो रहने दी? क्या धर्मान्ध मुसलमानोके अत्याचारोका स्मरण करानेके लिअे? या खुद अपनी कायरता और सामाजिक गैर-जिम्मेदारीको स्वीकार करनेके लिअे? अप्रतिम कलामूर्तिया बनानेकी कला यदि देशमें से नष्ट हो गअी होती, तो अिस प्रकारके प्राचीन अवशेषोके नमूनोको सुरक्षित रखना

अुचित माना जाता। किन्तु मैंने देखा है कि आवूमें देलवाडेके मदिरोमे सगमरमरकी कारीगरी करनेवाले कुटुम्बोको हमेशाके लिअे नियुक्त कर लिया गया है, मदिरके किसी हिस्सेमे जव कुछ खडित होता है तो तुरत अुसकी मरम्मत करके अुसको पहलेकी तरह वना दिया जाता है। अिसी तरह लाहौरके अजायवघरमे भी मैंने देखा है कि मूर्तियोका कोअी कुशल सर्जन घायल मूर्तियोके हाथ, पैर, नाक, ओठ आदिको सीमेन्टकी मददसे अिस ढगसे ठीक कर देता है कि किसीको पता तक न चले। मगर हमारे मदिर योग्य और पुरुपार्थी लोगोके हाथमें है ही कहा? हमारे समाजकी स्थिति लावारिस ढोरो जैसी है।

योगिनियोके आशीर्वाद लेकर हम टेकरीसे नीचे अुतरने लगे। अब भी कुछ प्रकाश वाकी था। अिसलिअे हम हसते-खेलते किन्तु द्रुत गतिसे धुवाधारकी खोज करने निकल पडे। जो साथी आगे दौड रहे थे अुनकी लगाम खीचनेका और जो पीछे पड रहे थे अुन्हें चावुक लगानेका काम अेक ही जीभको करना पडता था। मेरा अनुभव है कि नयी आजादीसे वहकनेवाले वछडो या भेडोको ज्यो ज्यो पास लानेकी कोशिश की जाती है, त्यो त्यो सघको छोड़कर दूर दूर भागनेमे अुन्हे वडी वहादुरी मालूम होती है, फिर अुन पर रुष्ट होकर अुन्हें वापस लानेमें होनेवाले कष्टके कारण सघपतिको भी अपना महत्त्व वढा हुआ-सा मालूम होता है। परस्पर खीचातानीके कष्टोका आनन्द दोनोमे छोडा नही जाता।

जहा भी हमारी नजर जाती, सफेद पत्थर ही पत्थर नजर आते थे। जवलपुरका ही यह प्रदेश है! किन्तु अेक जगह तो हमे सग-जराहतका खेत ही मिल गया। सग-जराहत अेक अद्भुत चीज है। वह पत्थर जरूर है, मगर विलकुल चिकना। मानो पेन्सिलका सीसा। छुटपनमें अेक वार मुझे सग्रहणी हो गअी थी। अुस समय अिस सग-जराहतका चूरा छानकर मावेकी वरफीमें मिलाकर मुझे खिलाया गया था। तवसे अुस पर मेरी श्रद्धा जमी हुअी है। आवकी वजहसे जव आतोमें घाव हो जाते है तव अुन्हे भरनेमें यह चूरा मदद करता है; और घाव भरनेके वाद वह अपने-आप पेटके वाहर निकल जाता

है। पत्थरका चूरा हजम थोडे ही हो सकता है! पेटमें रहे तो रोग हो जाय। मगर वह अपना काम पूरा होते ही अुपकारके वचनोंकी वसूली करनेके लिअे भी अधिक दिन रहनेकी गलती नहीं करता।

अब तो चारो ओर काफी अंधेरा छा गया था। सर्वत्र भयानक अेकात था। हमारी टोली अिस अेकातको चीरती हुआी आगे चल रही थी, मानो अनन्त समुद्रमें कोआी नाव चल रही हो। हवा कुछ रुधी हुआी-सी लगती थी। कब पानी गिरेगा, कहा नहीं जा सकता था। अूपर आकाशमें देखा तो काले काले बादलोंके बीच अेक ओर सिर्फ अेक तारका चमक रही थी। चमकती क्या थी? बेचारी बडे दु:खके साथ झाक रही थी, मानो किसी बडे मकानकी खिडकीमें कोआी अेकाकी वृद्धा निर्जन रास्ते पर देख रही हो। हम आगे बढे। अब जमीन भी अच्छी खासी गीली थी। बीच-बीचमें पानी और कीचडके गड्ढे भी आते थे।

अंधेरा खूब बढ गया। गड्ढोंमें से रास्ता निकालना कठिन-सा मालूम होने लगा। आगे जानेका अुत्साह बहुत कम हो गया। अैसे कठिन स्थान पर अंधेरी रातके समय हम यहा तक आये, अिसीको यात्राका आनद मानकर हमने वापस लौटनेका विचार किया। मनमें डर भी पैदा हुआ — अैसे निर्जन और भयावने स्थानमें कहीं चोरोंसे मुलाकात न हो जाय!

कुछ लोगोंको अकेले यात्रा करते समय चोर-डाकुओंका डर मालूम होता है। जब समुदाय बडा होता है, तब यह डर मानो सबके बीच बट जाता है और हरेकके हिस्से बहुत कम आता है। फिर अेक-दूसरेके सहारे हरेक अपना अपना डर मन ही मनमें दबा भी सकता है। कुछ लोगोंका अिससे बिलकुल अुलटा होता है। अकेले होने पर अुन्हें अपनी कोआी परवाह नहीं होती। अपना कुछ भी हो जाय। मार-पीटका प्रसग आ जाये तो जी-भर लडते हुअे शानके साथ सारे बदन पर मार खानेमें विशेष नुकसान नहीं लगता। और यदि अहिंसक वृत्ति हो तो बिना गुस्सा किये और बिना डर कर भागे मार खाते रहनेमें अनोखा आनन्द आता है। सत्याग्रही

वृत्तिसे खायी हुअी मारका असर मारनेवाले पर ही होता है, क्योंकि अहिंसक मनुष्यको मारनेवालेकी अपने ही मनके सामने प्रतिक्षण फजीहत होती है।

मगर जब बडी टोलीके साथ होते हैं, तब भरोसा नही होता कि कौन किस प्रकार व्यवहार करेगा। बच्चे और औरतें यदि साथ हो तब कुछ अलग ही ढगसे सोचना पडता है। अपने-आपको खतरेमें डालनेमें जो मजा आता है, वह अैसे असवरो पर अनुभव नही होता। सभी सत्याग्रही हो तो बात अलग है। किन्तु बडी खिचडी-टोली साथमे लेकर खतरेके स्थान पर कभी भी नही जाना चाहिये। श्रीकृष्णके कुटुम्ब-कबीलेको ले जानेवाले वीर अर्जुनकी भी क्या दशा हुअी थी, यह तो हम पुराणोमे पढते ही है।

अैसे अधेरेमे शिलाओके बीचसे कहा तक जायें और वहा क्या देखनेको मिलेगा, अिसकी कुछ कल्पना ही नही थी। अत मनमे आया, यहीसे वापस लौटना अच्छा होगा। अितनेमे दाहिनी ओर अेक छोटी-सी टूटी-फूटी कुटिया दीख पडी। अैसे निर्जन स्थानमें चोर भी चोरी काहेकी करेंगे? मगर चोरी करके थकने पर शाति और निश्चिन्तताके साथ बैठनेके लिअे यह स्थान बहुत सुन्दर है। चोरोको ढूढने निकलनेवाले लोगोको यहा तक आनेका खयाल भी नही आयेगा। तो क्या अिस कुटियामे निरजनका ध्यान करनेवाला कोअी अलख-अुपासक साधु रहता होगा? हम कुटियाके नजदीक गये। अदर कोअी नही था! तब तो यह कुटिया साधुकी नही हो सकती। फकीर दिनभर कही भी घूमता रहे, रातको अपनी मसजिदमें आना वह कभी नही भूलेगा। और बाबाजी रात बाहर कही बितानेके बजाय अपनी सहचरी धूनीके सपर्कमें ही बितायेंगे।

तब यह कुटिया मछलिया मारनेवाले किसी मच्छीमारकी होगी। किसीकी भी हो, हमें अिससे क्या मतलब? आजकी रात हमें यहा थोडी बितानी है? जरा आगे जाने पर यकीन हुआ कि रास्ता ठीक न होनेसे अधेरेमे अिससे आगे जाना खतरा मोल लेना है। अत मैंने हुक्म छोडा 'चलो, अब वापस लौटें।' अितनेमें मानो सत्त्व-परीक्षा

पूरी हो गओ हो, अिस खयालमे बादल जरा हटे और ठीक हमारे सिर पर विराजित चद्रने 'पश्याश्चर्याणि भारत!' कहकर आसपासका प्रदेश प्रकाशित कर दिया। सूर्य सब कुछ प्रकट कर देता है, अिसलिअे अुसके प्रकाशमें कोओ काव्य नही होता। अधेरी रातमें आकाशके सितारोमे विचरनेवाली दृष्टिको चद्र पृथ्वी पर भेज देता है और कहता है 'थोडा आखोंसे देखो और बाकीका सब कल्पनासे भर दो।'

चद्रने कुछ मदद की और दूर दूरसे धुवाधारका घोष भी सुनाओ देने लगा। मेरा हुक्म अेक ओर रह गया और सब अपने पैर तेजीसे अुठाने लगे। जरा आगे गये कि धुवाधार दीख पडा! मानो दूधका स्रोत बह रहा हो!! सर-सर धब-धब! सुलमुल धब-धब! करर्रर्र धब-धब! धब-धब, धब-धब! अुन्मत्त पानी बहता ही जा रहा था। और अुसमें से निकलनेवाली सीकर-वृष्टि सर्वत्र फैल रही थी। वृष्टि काहेकी? तुषारका फव्वारा ही समझ लीजिये। कितना अतिथिशील! अिन सूक्ष्म जीवन-कणोने हमारे अिन जीवन-क्षणोको सार्थक कर दिया। चद्र प्रसन्नतासे हस रहा था, पानी खेल रहा था, तुषार अुड रहे थे, हवा झूम रही थी और हम मस्तीमे डोल रहे थे। अिधर देखिये, अुधर देखिये, कैसा मजा है! आदि अुद्गारोका प्रपात भी देखते ही देखते शुरू हो गया। भिन्न भिन्न ऋतुओमें धुवाधार कैसा दिखाओ देता है, अिसका वर्णन हमारे साथ आये हुअे स्वयसेवक पथदर्शकने शुरू किया। यहा लोग तैरने कैसे जाते है, कहासे कूदते है, गरमीके दिनोमे धुवाधारकी अूचाओ कितनी होती है, आदि बहुत-सी जानकारी अुसने हमे दी। और अपनी जानकारी तथा रसिकताके लिअे अुसने हमसे अपनी कद्र भी करवा ली। अब सब शात हो गये और अेकध्यानने धुवाधारके साथ अेक-रूप होनेमें मग्न हो गये। कितना भव्य और पावन दर्शन था! अरणिके मथनसे प्रथम गरमी पैदा होती है, फिर धुवा निकलता है, धुवा बढने पर अुसमें से चिनगारिया अुडती है और फिर लपटें निकलने लगती हैं। अिसी तरह निसर्ग-यात्रामे प्रथम कुतूहल जाग्रत होता है, कुतूहलमें से अद्भुतता पैदा होती है, और अद्भुतताके काफी मात्रामें अेकाग्र होने पर यकायक भक्तिकी अूर्मिया बाहर आती है। 'चलो, हम यहा

शिला पर बैठकर प्रार्थना करें।' प्रार्थनाके लिअे अितना पवित्र स्थान और अितना शुभ समय हमेशा नही मिलता। सब तुरन्त बैठ गये और 'य ब्रह्मा वरुणेन्द्र ' की ध्वनि धुवाधारके कानो पर पडी।

जिस प्रकार भिन्न भिन्न समय पर भिन्न भिन्न राग गाये जाते है, अुसी प्रकार भिन्न भिन्न स्थलो पर मुझे भिन्न भिन्न स्तोत्र सूझते है। हिन्दुस्तानके दक्षिणमे कन्याकुमारी मै तीन बार गया, तब मुझे गीताका दसवा और ग्यारहवा अध्याय सूझा। विभूतियोग और विश्व-दर्शनयोगका अुत्कट पाठ करनेके लिअे वही अुचित स्थान था। और जब सीलोनके मध्यभागमे — अनुराधापुरके समीप — महेन्द्र पर्वतके शिखर पर सध्यास्तके समय पहुचा था, तब पाटलिपुत्रसे आकाशमार्ग द्वारा आकर अिस शिखर पर अुतरे हुअे महेन्द्रका स्मरण करके मैंने ओशावास्योपनिपद् गाया था। दैव जाने अनात्मवादी बुद्ध-शिष्योकी आत्माको ओशोपनिषद् सुनकर कैसा लगा होगा! और पूनासे जब शिवनेरी गया, तब मसजिदकी अूची दीवारोकी सीढिया चढकर दूरसे श्री शिवाजी महाराजके बाल्यकालकी क्रीडाभूमिके दर्शन करते समय न मालूम क्यो माडुक्योपनिषद् गाना मुझे ठीक लगा था। यह अुपनिपद् श्रीसमर्थको प्रिय था, अैसा माननेका कोअी सबूत नही है। फिर भी 'नान्त प्रज्ञ न वहि प्रज्ञ नोऽभयत प्रज्ञ न प्रज्ञानघनम् न प्रज्ञ नाप्रज्ञम्।' यह कडिका बोलते समय मै शिव-कालीन महाराष्ट्रके साथ तथा आत्मारामकी अभेद-भक्ति करनेवाले साधु-सन्तोके साथ बिलकुल अेकरूप हो गया था। अुस समय मनमे यह भाव अुठा था — 'मै नही चाहता यह अलग व्यक्तित्व, अेकरूप सर्वरूप हो जाय अिस समस्त दृश्यके साथ।' धुवाधारकी मस्ती तथा अुसके तुपारोका हास्य देखकर यहा स्थितप्रज्ञके श्लोक गाना ठीक लगा।

अुत्कट भावनाओका सेवन लम्बे समय तक करते रहना जरूरी नही है। अेक आलापमें अेक अखिल भावसृष्टिको समाया जा सकता है। अेक जलबिंदुमें प्रचण्ड सूर्य भी प्रतिबिम्बित हो सकता है। अेक दीक्षामत्रसे युगोका अज्ञान हटाया जा सकता है। अेक क्षणमे हमने धुवाधारके वायुमडलको अपना बना लिया। आखोकी

शक्ति कितनी अजीब होती है! धुवाधारका पान मुंहसे करना असभव था। हम कुभ-सभव अगस्ति थोडे ही थे! मगर हमारी दो नन्ही पुतलियोने अखड वहनेवाले अिस प्रपातका आ-कठ पान किया। मुझे लगता है कि अैसे दृक्-पानको 'आ-कठ' कहनेके बदले 'आ-पलक' कहना चाहिये। हम सबने अपनी अपनी आखोमे यह लूट अेक क्षणमें भर ली और वापस लौटे। हमारा यह भूतोका सघ तरह तरहकी बातें करता हुआ तथा गर्जना करता हुआ मोटरके अड्डे पर आ पहुचा।

यहा भेडाघाटकी सगमरमरकी शिलायें देखकर लौटी हुअी टोली हमसे मिली। अेक-दूसरेके अनुभवोका आदान-प्रदान करके हमने अिस टोलीको वुजुर्गोंना सलाह दी कि 'अिस समय धुवाधार जाना बेकार है। आप तैल-वाहनमे वैठकर सीधे जवलपुर चले जाअिये। आप जहा हो आये है वहा थोडा नौका-विहार करके हम तुरन्त लौट आयेंगे।' मालूम नही, हमारी यह सलाह अुन्हे पसद आयी या नही। मगर अुसको माने सिवा अुनके लिअे कोअी चारा नही था।

रास्तेकी ओरसे अुतरते हुअे और अधेरेमें लडखडाते हुअे हम प्रवाहके किनारे तक पहुचे और दो टोलियोमें बटकर दो नावोमे चढ वैठे। हमारी नाव आगे बढी। सर्वत्र शातिका ही साम्राज्य था और अुसकी गहराअीकी मानो थाह लगानेके लिअे बीच बीचमे हमारी नावकी पतवारें तालबद्ध आवाज करती थीं। चद्र अपनी टिमटिमाती मशाल सिर पर रखकर मानो यह सुझा रहा था 'आसपासकी यह शोभा दिनके समय कैसी मालूम होती होगी अिसकी कल्पना कर लीजिये।' कअी स्थानो पर बिलकुल अधेरा था। बीच बीचमे चादनीके धब्बे दिखाअी पडते थे। आकाश निरभ्र न था। अिसलिअे चादनी छाछके समान पतली वन गअी थी। आकाशके वादल बीच बीचमे मलमलके जैसे पतले दीख पडते थे, अत अुनकी ओर भी ध्यान खिच जाता था। दोनो ओर सगमरमरकी शिलाये कितनी अूची मालूम होती थीं! अूची और भयावनी। मानो राक्षसोका समूह वैठा हो! और अिन

शिलाओके वीचसे नर्मदाका प्रवाह मोड ले लेकर अपना चक्रव्यूह रच रहा था।

अूची अूची शिलायें या पहाड जहा अेक-दूसरेके वहुत पास आ जाते हैं, वहा 'प्राचीन कालमे अेक सरदारने अपने घोडेको अेड लगाकर अिस शिखरसे सामनेके शिखर तक कुदाया था' जैसी दतकथा चलती ही है। वदर तो सचमुच अिस प्रकार कूदते ही हैं। यहा भी आपको अिस प्रकारकी दतकथाये नाववालोके मुहसे सुननेको मिलेंगी।

यहा अिन शिलाओके वीच कअी गुफाअें भी है। अिनमें अृषि-मुनि ध्यान करनेके लिअे अवश्य रहते होगे। और मध्ययुगमें राज-कुलोके आपद्ग्रस्त लोग तथा स्वतत्रताकी साधना करनेवाले देशभक्त भी यही आत्मरक्षाके लिअे छिपते रहे होगे। और फिर छछूदरोकी तरह नावे अिन लोगोको गुप्त रूपसे आहार, समाचार और आश्वासन पहुचाती रहती होगी। अिन गुफाओको यदि वाचा होती, तो अितिहासमे जिसका जिक्र तक नही है, अैसा कितना ही वृत्तात वे हमे वताती।

खोहके बीचोवीच नावसे जाते हुअे हम अेक अैसे स्थान पर आ पहुचे, जिसे शातिका गर्भगृह कह सकते है। यहा हमने पतवारे वद करवायी, और अिस डरसे कि कही शातिमें भग न हो जाय हमने श्वास भी मद कर दिया। प्रार्थनाके श्लोक हमने वहा गाये या नही, अिसका स्मरण नही है। किन्तु मैंने मन ही मन सोलह अृचाओका पुरुष-सूक्त वडी अुत्कटताके साथ वहा गाया। वादमे लगा कि अितनी शातिमें तो अपने-आप समाधि ही लगनी चाहिये। पता नही कितना समय नौका-विहारमे वीता। अितनेमें डव डव डव करती हुअी दूसरी नाव वहा आ पहुची। अुसमें जो टोली थी अुसने अेक मजुल गीत छेडा। आसपासकी खोहे अिसकी प्रतिध्वनि करे या न करे अिस दुविधामे सकोचसे अुत्तर दे रही थी।

नाववालेने कहा, 'अव अिससे आगे जाना असभव है, यहासे लौटना ही चाहिये।' अत दौडते मनको पीछे खीचकर हम वोले 'चलो! पुनरागमनाय च!'

अब यदि जाना हो तो वर्षाके अंतमें, चांदनीके दिन देखकर, दिनरात अिस मूर्तिमंत काव्यमें तैरते रहनेके लिअे ही जाना चाहिये। सचमुच, यह रमणीय स्थान देखकर मनने निश्चय किया कि यदि फिर कभी यहां आना न हो, तो यहांसे निकलना ही नहीं चाहिये।

अक्तूबर, १९३७

४४

धुवांधार

अेक, दो, तीन। धुवांधार अभी अभी मैंने तीसरी बार देख लिया। धुवांधार नाम सुन्दर है। अिस नाममें ही सारा दृश्य समा जाता है। किन्तु अबकी बार अिस प्रपातको देखते देखते मनमें आया कि अिसको धारधुवां क्यों न कहूं? धार गिरती है, फव्वारे अुड़ते हैं और तुरन्त अुसके तुषार बनकर कुहरेके बादल हवामें दौड़ते हैं। अतः धारधुवां नाम ही सार्थक लगता है। मगर यह नाम चल नहीं सकता!

जबलपुरसे गोल गोल पत्थर तथा चमकीले तालाब देखते देखते हम नर्मदाके किनारे आ पहुंचते हैं। रास्तेका दृश्य कहता है कि यह काव्यभूमि है। चारों ओर छोटे-बड़े पेड़ खेल खेलनेके लिअे खड़े हैं। बगलमें अेक बड़ा टीला टूट कर गिर पड़ा है। किन्तु अुसके सिर पर खड़े पेड़ अपनी आधी जड़ें अलग पड़ जाने पर भी शोकमग्न या चिंतातुर नहीं मालूम होते। अैसे पेड़ोंसे जीवन-दीक्षा लेकर ही आगे बढ़ा जा सकता है।

टीला टूटता तो है, किन्तु टूटा हुआ हिस्सा आसानीसे जमींदोज नहीं होता। अिस टीलेने अेक दो मीनार और अेक बड़ा शिखर बना लिया है, जो कहते हैं कि यदि विनाशमें से भी नयी सृष्टिकी रचना न कर पाये तो हम कल्प-कवि कैसे? टीलेके अूपरसे नीचेके पत्थरों और पानीका दृश्य दृढ़ता और तरलताके विचार अेक ही साथ

मनमे पैदा कर रहा था। पुल पार करके हम आगे आये और योगि-नियोकी टेकरीके नीचेका कअी बार देखा हुआ सामान्य दृश्य देखा। यह दृश्य अितना गरीब है कि अुसके प्रति गुस्सा नही आता। यहा गरीब कारीगर पत्थरोसे छोटी-बडी चीजें बनाकर बेचनेके लिअे बैठते है। सफेद, काले, लाल, पीले, आसमानी और रगबिरगे सग-मरमरके शिवलिंगोकी बगलमे सग-जराहतके डिब्बे, शिवालय, हाथी और अन्य छोटे-बडे खिलौने मानो स्वयवर रचकर खडे रहते है। जिसकी नजरमे जो जच जाता है वह अुसे अुठाकर ले जाता है। आज ये खिलौने अेक आसन पर बैठे हुअे है। कल न मालूम कौनसा खिलौना कहा चला जायगा? कुछ तो हिन्दुस्तानके बाहर भी जायगे। और वहा बरसो तक धुवाधारका धारावाहिक सगीत याद करके चुपके चुपके सुनायेगे।

यहासे धुवाधार तक पैदल जानेकी तपस्या मैंने दो बार की थी। पहली यात्रा रातके समय की थी। दूसरी सुबह स्नानके समय की थी। हरेकका काव्य अलग ही था। आज तीसरा प्रहर पसद किया था। अिस समय अधिक तपस्या नही करनी पडी। ब्यौहार राजेन्द्र-सिंहजीने अपना तैल-वाहन (मोटर) दिया था, अत हम लगभग धुवाधार तक बिना कष्टके पहुच गये। सग-जराहतके खेतके पास अुतरकर, वहाकी तीन दुकाने पार करके, पत्थरोके बीचसे होकर हम धुवाधार पहुचे। पत्थर ज्यो ज्यो अडचनें पैदा करते थे, त्यो त्यो चलनेका मजा बढता जाता था। अैसा करते करते हम धुवाधारके पास पहुचे।

प्रपात यानी जीवनका अध पात। मगर यहा वैसा मालूम नही होता। पहली बार गये थे दिसबरमे और अधेरेमें। आकाशके बादल चादके खिलाफ षड्यत्र रचकर बैठे थे। अत चादनी रात होते हुअे भी वहा अमावास्याकी-सी भीषणता थी। अमावास्याकी रातमे आकाशके सितारे अिस भीषणताको हसकर अुडा देते है। मगर बादलोके सामने अिसकी भी आशा न रही। परिणामस्वरूप अुस रातको स्वय धुवाधारको अपनी भव्यतासे हमें प्रसन्न करना पडा। रातकी प्रार्थना करके हमने वह आनद हजम किया और वापस लौटे।

दूसरी बार गये थे त्रिपुरी कांग्रेसके बाद करीब नौ-दस बजे की बढती हुअी धूपके स्वागतका स्वीकार करते हुअे। धुवांधारके संपूर्ण दर्शन हम अुसी समय कर पाये थे। मार्चका महीना था। अतः पानीमें गरमीकी अृतुका अकाल न था। पहाडीकी कुछ टेढीमेढी खुरदरी सीढियां अुतरकर हमने नीचेसे धुवांधारको गिरते देखा था। पानीकी वह गति और फव्वारेकी वह चंचलता चित्तको आश्चर्यकारक ढंगसे स्थिर करती थी। पानीकी ओर अनिमेष देखते ही रहे तो अैसा अनुभव होता है मानो नवनवोन्मेषशालिनी धारायें वेगकी समाधि लगाकर खडी हैं। अिसी समय मैं देख सका कि वहांके काअीवाले पत्थर अूपरसे चाहे जैसे दीखते हों, लेकिन अंदरसे तो वे प्रेमका रंग खिलानेवाले (लाल रंगके) ही हैं। पानीके जोरके कारण पत्थरका अेक टुकडा अुड गया था और अंदरका गुलाबी लाल रंग साफ दिखाअी देने लगा था, मानो अुसे घाव पड गया हो।

धुवांधार देखनेका अच्छेसे अच्छा समय है दीपावलीका। बारिश न होनेसे रास्तेमें कहीं कीचड नहीं था। वर्षा अृतुमें जब आते हैं तब सारा प्रदेश जलसे भरा होनेके कारण प्रपातके लिअे गुंजाअिश ही नहीं होती। जहां हृदयको हिला देनेवाला प्रपात है, वहीं वर्षा अृतुमें सिरमें चक्कर लानेवाले भंवर दिखाअी देते होंगे। अिन भंवरोंका रुद्र स्वरूप देखनेके लिअे यदि यहां तक आया जा सकता हो, तो मैं यहां आये बिना नहीं रहूंगा। भंवर क्रान्तिका प्रतीक है। अुसका आकर्षण कुछ अनोखा ही होता है। कभी कभी मौतको न्योता देने-वाला भी।

दीपावलीके समय जलराशि सबसे अधिक पुष्ट, प्रपातकी शोभा सबसे अधिक समृद्ध, और मीठी धूपके सेवनके बाद तुषारके बादलोंकी चुटकियां सबसे अधिक आह्लादक होती हैं। आजका दृश्य वैसा ही था, जैसी हमने आशा रखी थी। तुषारके बादल दूरसे ही नजर आते थे। रसोडेका धुआं देखकर जिस प्रकार अतिथिको आनंद होता है, अुसी प्रकार अिस धुअेंके बादलको देखकर ही मैं कल्पना कर सका कि आज किस प्रकारका आतिथ्य मिलनेवाला है। धारधुवा जैसा प्रपात

जव देखनेके लिअे जाते है, तव वहा वनाया हुआ पटियेका कामचलाअू छोटा पुल भी कलापूर्ण और आतिथ्यशील मालूम होने लगता है। हम परिचित किनारे पर जाकर वैठे ही थे कि स्नेहार्द्र पवनने तुषारकी अेक फुहार हमारी ओर भेजकर कहा, 'स्वागतम्', 'सुस्वागतम्'। अेक क्षणके अदर हमारा सारा अध्व-खेद अुतर गया। हम ताजे हो गये और ताजी आखोंसे धुवाधारको देखने लगे।

धुवाधार यानी पत्थरोंके विस्तारमे वनी हुअी अर्धचद्राकार घाटी। अुसमे से जव पानीका जत्था नीचे कूदता है तव वीचमे जो काचके जैसा हरा रग दीख पडता है, वह जहरके समान डर पैदा करता है। अुसकी वाअी ओर यानी हमारी दाअी ओरकी शिला हाथीके सिरकी तरह आगे निकली हुअी है। अुस परसे जव पानी नीचे गिरता है तव मालूम होता है मानो असख्य हीरोंके हार अेक अेक सीढी परसे कूदते-कूदते अेक-दूसरेके साथ होड लगा रहे हैं। ज्यो ज्यो वे कूदते जाते है त्यो त्यो हसते जाते है, और पानीको पीज पीजकर अुसमें से सफेद रग तैयार करते जाते हैं। वीचका मुख्य प्रपात घाटीमें गिरते ही अितने जोरोंसे अूपर अुछलता है कि आतिशवाजीके वाणोंको भी अुससे अीर्ष्या हो सकती है। अेक फव्वारा अूपर अुडकर जरा शिथिल पडता है कि अितनेमें दूसरे फव्वारे नये जोशसे अुसके पीछे पीछे आकर और धक्का देकर अुसे तोड डालते है और फिर अुसके जलकण पृथ्वीके आकर्षणको भूलकर धुअेंके रूपमें व्योम-विहार शुरू कर देते है। ये तुषार जरा अूपर आते है कि पवनके झोंके अुन्हे अुडाते अुडाते चारो ओर फैला देते है। धुअेंकी ये तरगे जव हवामें हलके-गाढे रूपमें दौडती है, तव वायलके अत्यन्त सुन्दर वेलवूटे दिखाअी देते है।

और नीचे! नीचेके पानीकी मस्तीका वर्णन तो हो ही नही सकता। पानी मानो अद्वैतानदमें फिसल पडा। जितना नीचे गिरा, अुतना ही अूपर अुडा। अुसने हरे रगमे से सफेद फेन पैदा किया और जीमे आया वैसा विहार किया। अिस अपूर्व आनदको याद करके नीचेका पानी वार वार अुभर आता था। धोवीघाट परके सावुनके पानीकी अुपमा यदि अरसिक न होती तो नीचेके पानीके अुभारकी तुलना मैं

अुसीसे करता। मगर धोबीके साबुनका पानी गदा होता है। अुसमे गति और मस्ती नही होती, बेपरवाही और ताडव भी नही होता। और न हास्य फीका पडते ही चेहरे पर फिरसे निर्मल भाव धारण करनेकी कला अुसके पास होती है। यहाका पानी देखकर धोबीघाटका स्मरण ही क्यो हुआ? अुसमें किसी प्रकारका औचित्य ही नही था।

मनुष्य यदि समाधिकी मस्ती चाहता हो, तो अुसे यहा आना चाहिये। अुसे किसी भी कारणसे निराश नही होना पडेगा।

अिस ओरके (दायें) टीलेकी दो सीढिया अबकी बार मैं फिर अुतरा। अिस बार यहा अुपनिषद् सूझा। अूपर सूरज तप रहा था और मैं गा रहा था—'पूषन्नेकर्षे! यम! सूर्य! प्राजापत्य! व्यूह रश्मीन्, समूह तेजो।' जब पाठका अत करीब आया और मैं बोला 'ॐ क्रतो स्मर, कृत स्मर।' तब यकायक तीन-चार सालका मेरा सारा जीवन अेकसाथ अिस जीवन-धाराके सामने खडा हुआ और मुझे लगा मानो मैं अपना जीवन अिस मस्त जीवनकी कसौटी पर कस रहा हू और यह देखकर कि वह पूरी तरह खरा अुतर नही रहा है, परेशान हो रहा हू। दूसरे ही क्षण अिन तीन वर्षोकी स्मृतिके भी तुषार बनकर आकाशमें अुड गये और मैं प्रपातके साथ अेकरूप हो गया। सचमुच यह प्रपात पूर्ण है। और मैं भी अिस पूर्णका ही अेक अश हू, अत तत्त्वत पूर्ण हू। हम दोनो वि-सदृश नही हैं, अेक ही परम तत्त्वकी छोटी-बडी विभूतिया हैं। यह भान जाग्रत होते ही चित्त शात हुआ और मैं अूपर आया।

चि० सरोजिनी भी यह सारा दृश्य अुत्कट नयनोसे अघाकर पी रही थी। अिस सारे आनदको किस तरह समझें, किस तरह हजम करें और किस तरह व्यक्त करें, अिस बातकी मीठी परेशानी अुसकी आखोमे दिखाअी दे रही थी।

यहासे तुरन्त लौटकर चौसठ योगिनियोंके दर्शन करने थे, नर्मदा-प्रवाहके रक्षक सफेद, पीले, नीले पहाड देखने थे। अत वह जिस प्रकार पीहरसे ससुराल जाते समय दोनो ओरके सुख-दु खके

मिश्रित भाव अनुभव करती हुअी जाती है, अुसी प्रकार धुवाधारको हार्दिक प्रणाम करके हम वापस लौटे।

हिन्दुस्तानमे अिस प्रकारके अनेक प्रपात अखड रूपसे वहते रहते है और मनुष्यको भव्यताके तथा अुन्मत्त अवस्थाके सबक सिखाते रहते है। हजारो साल हुअे — लाखो नही हुअे अिसका विश्वास नही है — धुवाधार अिसी तरह सतत गिरता रहा है। श्रीरामचद्रजी यहा आये होगे। विश्वामित्र और वशिष्ठ यहा नहाये होगे। चद्रगुप्त और समुद्रगुप्तके सैनिकोने यहा आकर जल-विहार किया होगा। श्री शकराचार्यने यहा वैठकर अपने स्तोत्रोका सर्जन किया होगा। कलचुरि तथा वाकाटक वशके वीरोने अिसी पानीमें अपने घावोको धोया होगा और अल्हणादेवीने यही वैठकर चौसठ योगिनियोका स्मारक वनानेका सकल्प किया होगा। और भविष्यकालमे धुवाधारके किनारे क्या क्या होगा, कौन बता सकता है? खुद धुवाधारको ही यह मालूम नही है। वह तो सतत गिरता रहता है और तुषारके रूपमे अुडता रहता है।

नववर, १९३९

४५

शिवनाथ और अीव

कलकत्ता आते और जाते समय अनेक नदियोसे मुलाकात होती है। अिस प्रदेशका अितिहास मुझे मालूम नही है, अिसकी शर्म आती है। यहाके लोग कितने सरल और भले मालूम होते है! अुन्होने यदि मनुष्य-सहारकी कला हस्तगत की होती, तो अुनका नाम अितिहासमें अमर हो जाता। कुछ लोग मरकर अमर होते है। कुछ लोग मारनेवालोके रूपमे अमर होते है। मलिक काफूर, काला पहाड आदि दूसरी कोटिके लोग है।

अिन नदियोके किनारे लडाअिया हुअी हो तो मुझे मालूम नही। अिसलिअे मेरी दृष्टिसे अिन नदियोका जल फिलहाल तो विशेष पवित्र है।

चर्मण्वतीने यज्ञ-पशुओके खूनका लाल रग धारण किया। शोण और गगाने सम्राटोका महत्त्वाकाक्षी रक्त हजम किया। अिन नदियोने भी वैसा ही किया हो तो कोअी आश्चर्य नही। मगर जब तक मुझे मालूम नही है, तब तक अिस अनिश्चयका लाभ मैं अुन्हे देता हू।

किन्तु अिन नदियोके किनारे कअी साधुओने तप अवश्य किया होगा और कृतज्ञतापूर्वक अुनके स्तोत्र भी गाये होगे। यह भी मुझे मालूम नही है। फिर भी मै अपनेको भारतवासी कहता हू!

* * *

अेक बार मैं द्रुग गया था तब शिवनाथ नदीका मुझे थोडा परिचय हुआ था। गोड, भील आदि पर्वतीय जातियोकी वह माता है। सारे छत्तीसगढकी तो वह स्तन्यदायिनी है। अुसकी करुण कथा* चित्तको गमगीन करनेवाली है। पुण्य-सलिला नदीकी कहानी क्या अैसी होती है? किन्तु नदी बेचारी क्या करे? विजयी आर्योने यदि अुसकी कथा गढी होती तो अुसमें अुल्लासका तत्त्व मिल जाता। यह तो हारी हुअी, दबी हुअी और अुलझनमें पडी हुअी आदिम-निवासियोकी जातिके सस्मरणोके साथ बहनेवाली नदी है! अुसकी कहानिया तो वैसी ही गमगीनी-भरी होगी।

कलकत्तेके रास्ते पर शिवनाथ नदी बार बार मिलती है और कहती है 'राजाओके और साधुओके अितिहाससे तुम सतोष मत मानना। विजेताओके और सम्राटोके अितिहासमे तुम्हे लोक-हृदय नही मिलेगा। ब्राह्मण और श्रमण, मुल्ला और मिशनरी, किसीने भी जिनका दु ख नही जाना अैसे पहाडी लोगोके दु ख-दर्दका अध्ययन करनेकी दीक्षा मैं तुम्हे दे रही हू। क्या यह दीक्षा लेनेका साहस तुममे है?'

हिन्दुस्तानकी मूक जनताको वाचाल अेकता देनेके हेतुसे मैं हिन्दुस्तानीका प्रचार कर रहा हू। अिसी कामके सिलसिलेमे अभी मैं पूना हो आया। अिसी कामके लिअे अब रामगढ जा रहा हू। वहाकी काग्रेसमे तमाम प्रातोके लोग आयेंगे। गाधीजीके आग्रहके कारण काग्रेसके

* देखिये 'दुर्दैवी शिवनाथ'।

अधिवेशन अब देहातोमे होने लगे है। यह सब ठीक है। मगर क्या रामगढमे भी ये पर्वतीय लोग आयेगे? बिहारके 'सान्थाल' और 'हो' शायद आयेगे। किन्तु पता नही अिस शिवनाथके पुत्र आयेगे या नही।

* * *

आज सुबहसे अनेक नदिया देखी। लबे लबे और चौडे पत्थरोवाली नदी भी देखी और कीचडवाली नदी भी देखी। जिसके किनारे अेक भी पेड नही है अैसी नदी भी देखी, और जिसने अेक ओर पेडोकी अेक मोटी दीवार खडी की है अैसी नदी भी देखी। सफेद बगुले अुसके पट पर कीचडमे अपने पैरोकी आकृतिया बना रहे थे। मगर अिस चरण-लिपिमे मै कोअी अितिहास नही पा सका, न किसी दतकथाका हल खोज सका। नदी आशासे लिखती जाती है और निराशासे अपना लिखा लेख मिटाती जाती है। और नये लेखक-पाठकोकी राह देखती रहती है।

हम झारसूगुडा जक्शनके पास जा रहे है। अेक छोटा-सा स्टेशन पास आ रहा है। अितनेमे हमारे रास्तेके नीचेसे बहती हुअी अेक सुन्दर नदी हमने देखी। सभी नदिया सुन्दर होती है, मगर अिस नदीमें असाधारण सुन्दर आकृतिया बनानेकी कला नजर आयी। पानीके स्रोतमें भवर पैदा होते होगे। काअीके कारण पानीको विशेष रूप प्राप्त होता होगा। अूपरसे यह सब देखकर मुझे रवीन्द्रनाथके चित्र याद आये। अिस नदीकी आकृतिया भी बिना कुछ बोले, बिना कोअी बोध दिये, हृदय तक पहुचती थी और वहा हमेशाके लिअे अपनी छाप डाल देती थी। अिसीका नाम है सच्ची कला!

मगर अिस नदीका नाम क्या है? परिचय हो और नाम न मिले, यह कितनी विचित्र स्थिति है! अितनेमे अीब स्टेशन आया। हमने लोगोसे पूछा, 'अिस नदीका नाम क्या है?' अुन्होने बताया 'अीब'। 'नदीके नाम परसे ही स्टेशनका नाम पडा है।' तब अुसमें औचित्य नही है, अैसा कौन कहेगा? मगर मनमे सदेह जरूर पैदा हुआ। यहा भेडेन नामक अेक नदी अीबसे मिलती है। स्टेशन भेडेनके किनारे है। अीब जरा बडी है; अिसी कारण भेडेनके साथ

अन्याय करके अुसका नाम स्टेशनको नही दिया गया। भेडेन कोअी मामूली नदी नही है। काफी चौडी है। दूरसे आती है। मगर वह किसी तरहका गर्व न रखते हुअे अपना पानी औवको सौप देती है और अपने नामका आग्रह भी नही रखती। मैने औवसे पूछा 'देखो, अुदारतामें यह भेडेन तुझसे श्रेष्ठ है या नही?' औवने जरा-सा आकृतियोवाला स्मित करके कहा "यह तो तुम मनुष्य जानो! भेडेनने अपना नाम छोडकर अपना नीर मुझे दे दिया, अिस अुदारताकी तारीफ करनेके वजाय अुससे अर्पणकी दीक्षा लेकर अुसके जैसी वनना मुझे अधिक पसद है। देखो, अुसका और मेरा नीर अिकट्ठा करके महानदीको देनेके लिअे मै सवलपुर जा रही हू। वहा मै भी अपना नाम छोड दूगी। अिस प्रकार अुत्तरोत्तर नामरूपका त्याग करनेसे ही हम सवको महानदीका महत्त्व प्राप्त हुआ है, और वह भी सागरको अर्पण करनेके लिअे ही।"

और जाते जाते औवने अनुष्टुभ् छदमे अेक पक्ति गा सुनाअी -

सर्वे महत्त्वम् अिच्छन्ति कुल तत् अवसीदति।
सर्वे यत्र विनेतार राष्ट्र तन् नाशम् आप्नुयात्॥

*   *   *

औवका यह सदेश सुनकर ही मै रामगढ गया।

मार्च, १९४०

४६

दुर्दैवी शिवनाथ

['शिवनाथ और ओब' लेखमे जिसका जिक्र आया है, अुस लोककथाका सार बेमेतरा-द्रुगसे लिखे हुअे नीचेके पत्रमे मिलेगा।]

कल और आज शिवनाथ नदीके दर्शन किये। यो तो कलकत्ता आते और जाते समय शिवनाथको अेक दो बार पार करना ही पडता है । यहा वडे अूचे पुल परसे शिवनाथका प्रवाह अूचे अूचे टीलोके बीचसे वहता हुआ देखनेको मिलता है। कल शामको बालोडसे वापस लौटे तव शिवनाथके किनारे खास तौर पर घूमने गये थे।

चौमासा तो बैठ गया है, किन्तु नदीमे अभी तक पानी नही आया है। परिणाम-स्वरूप शिवनाथ किसी विरहिणीके जैसी म्लान-वदना मालूम पडी। श्रावण-भादोमे जो अपने दोनो किनारोको लाघ कर मीलो तक फैल जाती है, अुसी नदीको अिस तरह अपने ही पटमे अजगरके समान अेक कोनेमे पडी हुअी देखकर किसीके भी मनमें विपाद अुत्पन्न हुअे विना नही रहेगा।

द्रुगके लोगोसे शिवनाथके बारेमे मैंने पूछा 'यह नदी कहासे आती है? कितनी लवी हे? आगे अुसका क्या होता है?' परतु कोअी मुझे ठीक जवाव नही दे सका। अिस नदीके माहात्म्यका वर्णन पुराणोमें कही है? अुसके वारेमे कोअी लोकगीत प्रचलित है? कोअी दतकथा सुनाअी देती है? अेक भी सवालका जवाव 'हा' में नही मिला। नदीके बारेमे जानने जैसा होता ही क्या है? रोज सुवह अुससे सेवा लेते है, वस, अुससे अधिक अुसका हमारे जीवनसे क्या सबध है?

अतमे मैंने द्रुग तहसीलका गेझेटियर मगवाया। अुसमे अूपरके साधारण सवालोके जवाव तो दिये ही है, मगर अिसके अलावा

शिवनाथके वारेमे अेक लोककथा भी दी हुअी है। यही कथा आज मै यहा अपनी भाषामे देना चाहता हू।

शिवा नामक अेक गोड लडकी थी। जगली गोड जातिकी होते हुअे भी वह सस्कारी और रसिक थी। अुस पर गोड जातिके ही अेक लडकेका दिल वैठ गया। लडकीके दिलको आकर्षित कर सके, अैसा अेक भी गुण अुसमे नही था। स्वच्छदतासे पेश आना और धमकिया देकर लोगोसे काम निकालना, वस अितना ही अुसे मालूम था। वह शिवाका ध्यान करता रहता था और अुसे पानेका कोअी रास्ता न देखकर परेशान होता रहता था। आखिर अपनी जातिके रिवाजके अनुसार अुसने मौका देखकर शिवाका हरण किया और राक्षस-पद्धतिसे अुसके साथ विवाह किया।

विवाह-विधि पूरी करना अुसके लिअे आसान था, मगर शिवाको अपनी वनाना आसान काम नही था।

शिवा जैसी सस्कारी और भावनाशील लडकी अुसकी ओर भला क्यो देखने लगी? और यह जडमूढ अनुनय जैसी चीजको क्या समझे? अुसने पतिकी हुकूमत चलानेकी कोशिश की। लडकीने अवलाका सामर्थ्य प्रकट किया। शिवाको लूटकर लानेवाला युवक शिवाके रुद्ध हृदयके सामने हारा। अुसका क्रोध भडक अुठा। शरीरको ही सव-कुछ समझनेवाला आदमी शरीरके वाहर जा ही नहीं सकता। अुसने अतमे शिवाको मार डाला और अुसके शरीरके टुकडे अेक गहरी घाटीमे फेक दिये।।

जहा शिवाका शव गिरा वहीसे तुरन्त अेक नदी वहने लगी। वही है हमारी यह शिवनाथ, जो आगे जाकर महानदीमे अपना पानी छोड देती है।

आज सुवह हम वेमेतरा जानेके लिअे निकले। रास्तेमे अेक दुर्घटना हुअी। हमारी दौडती हुअी मोटर अेक वैलगाडीसे टकरा गअी और अेक वैलका सीग टूट गया। हम रुके और अुसकी मदद करनेके लिअे दौडे। मुझे वैलका लटकनेवाला सीग काटनेकी सलाह देनी पडी। और जहासे खून वह रहा था वहा पेट्रोलकी पट्टी वाधनी पडी।

सारा वायुमंडल करुण तथा गमगीन बन गया। अिस हालतमें शिवनाथका दुबारा दर्शन हुआ। यहा नदीका पट सुन्दर है। आसपासके पत्थर जामुनी लाल रगके थे। नदीका पात्र भी सुन्दर था। प्रतिबिंब काव्यमय मालूम होता था। मगर शिवाकी करुण कथा मनमें रम रही थी। अत अिस दर्शनमें भी विषादकी ही छाया थी।

शायद शिवनाथकी तकदीर ही अैसी हो। आखिर मनका विषाद कम करनेके लिअे यह पत्र लिख डाला। अब दिल कुछ हलका मालूम होता है।

मअी, १९४०

४७

सूर्याका स्रोत

वारिशके होते हुअे हम कासाका सर्वोदय केंद्र देखने गये। वहा जानेके लिअे ये दिन अच्छे नही थे, अिसीलिअे तो हम गये। वारिशके दिनोंमें छोटी-छोटी 'नदिया' रास्ते परसे बहने लगती हैं, अुनमें पानी बढने पर मोटर वसें भी घटो तक रुकी रहती हैं। हमने सोचा कि हमारे सर्वोदय-सेवक हमारे आदिम-निवासी भाअियोंके बीच कैसे काम करते हैं यह देखनेका यही समय है।

भारतके पश्चिम किनारेके अेक सुदर स्थानसे मेरा घनिष्ठ परिचय है। बम्बअीके अुत्तरमें करीब सौ मीलके फासले पर बोरडी-घोलवडका स्थान है। वहा मैं महीनो तक रहा था। और वहाके समुद्रकी लहरोंसे रोज खेलता था।* समुद्रका पानी भी जब भाटाके कारण पीछे हटता था तब मील डेढ मील तक पीछे चला जाता था। और सारा समुद्र किनारा गीले टेनिस कोर्टके जैसा हो जाता था। हम पाच-दस

---

* अिस स्थानका वर्णन मैंने अपने 'मरुस्थल या सरोवर' लेखमें विस्तारसे किया है।

लोग अिस गीली रेतीके मैदान पर होकर समुद्रकी लहरें ढूढने चले जाते थे। जब ज्वार आता तव पानीकी लहरें हमारा पीछा करती थी और हम किनारेकी ओर दौडते आते थे। पानीकी लहरे धावा वोलें और हम अपनी जान लेकर किनारे तक दौडते आ जायें, यह खेल वडे मजेका था। देखते देखते सारा खुला मैदान वडे सरोवरका रूप ले लेता है और वायु पानीके साथ खेल करती है। अैसे खारे पानीमें और रेतीमें भी अेक जगह तरवडके पेड अुगे थे। अुनके चिकने-चिकने पत्ते देखकर मै कहता कि ये वडे 'होनहार विरवान ' है।

अिस विशाल सरोवर-मैदानमे अुदावरण*-प्रजाकी वहुत वडी सृष्टि वसी है। किस्म-किस्मके शख, किस्म-किस्मके केकडे और अैसे ही छोटे-मोटे प्राणी वहा रहते थे और अुनके कवच और हड्डिया समुद्र किनारे देखनेको मिलती थी।

वोरडीमे मै रहने गया, तव वहा अेक ही अच्छा हाअीस्कूल था। अव वह अेक अच्छा और वडा शिक्षा-केंद्र हो गया है। वाल-शिक्षण, प्रौढ-शिक्षण, नयी तालीम, आदिम-निवासियोकी तालीम, अध्यापन-केंद्र आदि अनेक सस्थायें वहा पर स्थापित हो गयी है। अव तो वोरडी राजनैतिक जाग्रतिका, शिक्षा-वितरणका और समाज-सेवाका अेक प्रधान केंद्र वना हुआ है।

वोरडीके दक्षिणमें मै अेक दफा चीचणी भी गया था। वहाके कारीगर ठप्पा वनानेकी कलामें सारे हिन्दुस्तानमे अद्वितीय गिने जाते है। काचकी चूडिया भी वहा अच्छी वनती है।

अवकी वार चीचणी और वोरडीके वीच डहाणू हो आया। यह स्थान भी समुद्रके किनारे है। अुसका प्राकृतिक दृश्य वोरडीसे कम सुन्दर नही है।

---

* वातावरण=पृथ्वीके गोलेको घेरनेवाला हवाका आवरण या वायुमडल।

अुदावरण=पृथ्वी परकी जमीनको घेरनेवाला पानीका आवरण। अुद्=पानी।

पचास पौन सौ बरस पहले ओीरानसे आये हुओ चद ओीरानी खानदान यहा बसे हुओ है। घर पर ओीरानी भाषा बोलते है। अब ये लोग ओीरानसे प्राचीन कालमे आये हुओ पारसी लोगोके साथ कुछ-कुछ घुलमिल रहे है, और गुजराती और मराठी अुत्तम बोलते है। अिन ओीरानियोके बगीचे और बाडिया खास देखने लायक है। खेतीके आनुभविक विज्ञानसे और मेहनत-मजदूरीसे अिन लोगोने लाखो रुपये कमाये है। हमारे देशमे बसकर अिन लोगोने अिस देशकी आमदनी बढायी है और यहाके किसानोको अच्छेसे अच्छा पदार्थपाठ सिखाया है। ये लोग हमारे धन्यवादके पात्र है।

*　　　　*　　　　*

डहाणूसे सोलह मीलका फासला तय करके हम कासा गये। मेरे अेक पुराने विद्यार्थी श्री मुरलीधर घाटे बारह-पन्द्रह बरससे ग्राम-सेवाका काम करते आये है। अिसी साल अुन्होने — और अुनकी सुयोग्य धर्मपत्नीने — कासाका केंद्र अपने हाथमे लिया। और देखते-देखते यहाका सास्कृतिक वातावरण समृद्ध बना दिया। आचार्य श्री शकरराव भीसेकी प्रेरणासे यह सब काम चल रहा है।

डहाणूसे कासा पहुचते हुओ सामने अेक बहुत अूचा पर्वत-शिखर दीख पडता है। शिखरका आकार देखते हुओ अिस पहाडको ॠष्य-शृग कहना चाहिये। दरयाफ्त करने पर मालूम हुआ कि शिखरके शृगका पत्थर मजबूत नही है। पत्थरको पकडकर कोओी अूपर चढने जाये तो पत्थरके टुकडे हाथमे आ जाते है। मुझे डर है कि हजार दो हजार बरसके अदर यह सारा शृग हवा, पानी और धूपसे घिस जायगा और पहाडकी अूचाओी अेकदम कम हो जायगी। अिस पहाडके शिखर पर श्री महालक्ष्मीका मदिर है। कहा जाता है कि कोओी गर्भिणी स्त्री महालक्ष्मीके दर्शनके लिअे अूपर तक गयी और थक गयी। महा-लक्ष्मीने पुजारीको स्वप्नमे आकर कहा कि अपने भक्तोके अैसे कष्ट मै बरदाश्त नही कर सकती, मुझे नीचे ले चलो। अब अुसी पहाडकी तराओीमे महालक्ष्मीका दूसरा मदिर बनाया गया है।

कासाके नजदीक अेक अच्छी-सी नदी वहती है, जिसका नाम है सूर्या। अिस नदीके वारेमे भी अेक लोककथा है।

जब पाडव अिस रास्तेसे तीर्थयात्रा करने जा रहे थे, तब भीमकी अिच्छा हुअी कि स्थान-देवता श्री महालक्ष्मीसे शादी करे। पूछने पर महालक्ष्मीने कहा कि चद योजनके फासले पर जो सूर्या नदी वहती है अुसके प्रवाहको अगर तुम मोडकर मेरे अिस पहाडके पावके पास ले आओगे तो मै तुमसे शादी करूगी। शर्त अितनी ही है कि यह सारा काम अेक रातके अदर होना चाहिये। अगर सुवहका मुर्गा वोला और तुम्हारा काम पूरा न हुआ तो हमसे तुम्हारी शादी न होगी। भीमने वादा किया। वडे-वडे पत्थर लाकर अुसने नदीके प्रवाहको रोक दिया। थोडी-सी जगह वाकी थी, अुसके लिअे पत्थर न मिलने पर अुसने अपनी पीठ ही अडा दी। फिर तो पूछना ही क्या? नदीका पानी वढने लगा और धीरे-धीरे महालक्ष्मीकी पहाडीकी ओर मुडने लगा। महालक्ष्मी घवडा गयी कि अव अिस निरे मानवीके साथ शादी करनी होगी। देवोमें चालवाजी वहुत होती है। हारनेकी नौवत आती है तव वे कुछ-न-कुछ रास्ता ढूढ ही निकालते हैं।

अिधर भीम वाधके पत्थरोके वीच पीठ अडाकर राह देख रहा था कि पानी पहाडी तक कव पहुच जाता है। अितनेमे महालक्ष्मीने मुर्गेका रूप धारण किया और सुवह होनेके पहले ही 'कुकूच कू' करके आवाज दी। वेचारा भोला भीम निराश हुआ कि समयके अदर अपना प्रण पूरा नही हो सका। वह अुठा। अुतनी जगह मिलते ही वढा हुआ पानी जोरोसे वहने लगा और पानीके साथ भीमकी मुगद भी वह गयी।

अिसी तरह धूर्त देवोका और वलशाली असुरोका झगडा भी अनगिनत लोककथाओमे और पुराणोमे पाया जाता है।

हम अनेक हरे-हरे खेतोको पारकर सूर्याके किनारे पहुचे। वारिशके दिन थे। पानी खूव वढा हुआ था और भीम-वाधके सिर परसे नीचे कूद पडता था। दृश्य वडा ही मनोहारी था। जहा पानी जोरसे वहता था, वहा हमने अपनी कल्पनाका भीम वैठा हुआ देखा।

हमने अुसे प्रणाम किया। अुसने विषादसे अपना सिर हिलाया। और वह फिर ध्यानमे मग्न हो गया।

हम लौटकर कासा आये। वहाका काम देखा। आदिम जीवनको प्रकट करनेवाली प्रदर्शनी देखी। कुछ खाना खा लिया, लोगोसे बाते की और फिर बसमे बैठकर महालक्ष्मीका मदिर देखने गये। रास्तेमे आदिम-निवासी जातिके लोगोकी कुटिया और अुनके खेत देखे। यह जाति पिछडी हुअी जरूर है, किन्तु अुसने अपने जीवनका आनद नही खोया है। महालक्ष्मीका मदिर पहाडीके नीचे अेक रमणीय स्थान पर है। देवीके भक्त दूर-दूर तक फैले हुये है। हर साल अेक बहुत बडा मेला लगता है। देखते-देखते अेक लाख लोगोकी यात्रा भर जाती है। अैसे यात्रियोके रहनेके लिअे चद लोगोने अभी यहा पर अेक अच्छी धर्मशाला बाध दी है। अुसे जाकर देखा। सगमरमरके पत्थर पर दाताओके नाम खुदे हुअे थे। नाम पढकर मुझे बडा ही आश्चर्य हुआ। सबके सब नाम अफ्रीकाके दक्षिण रोडेशियामे बसे हुअे गुज-राती धोबियोके थे। किसीने सौ शिलिग दिये थे। किसीने हजार दिये थे। कहा दक्षिण रोडेशिया, कहा गुजरात और कहा थाना जिलेके मराठी लोगोके बीच यह गुजरातियोका बनाया हुआ आराम-घर!

स्वराज्य सरकारकी मददसे अिन आदिम-निवासियोके नवयुवक अब अुत्साहके साथ नयी-नयी बाते सीख रहे है और अपनी जातिके अुद्धारकी बाते सोच रहे है। मैंने अुनको कहा, तुम अितने पिछडे हुअे हो कि अपनी जातिके ही अुद्धारके लिअे प्रयत्न करना तुम्हारे लिअे ठीक है। लेकिन मै तो वह दिन देखना चाहता हू कि जब तुम लोग केवल अपनी ही जातिका नही किन्तु सारे भारतके अुद्धारका सोचने लगोगे। केवल अपनी जातिके ही नही किन्तु सारे देशके नेता बनोगे। जो अपनी ही जमातका सोचते है, अुनका पिछडापन दूर नही होता। जो सारी दुनियाका सोचते है, सारी दुनियाकी सेवा करते है, वही अपनी और अपने लोगोकी सच्ची अुन्नति करते है।

मैने अपने मनमें प्रश्न पूछा, अगर अिन लोगोमे भीमके जैसी शक्ति आयी और यहाके अिर्द-गिर्दके सवर्ण, सफेदपोश लोगोमे स्थानीय

देवता महालक्ष्मीके जैसी चतुराअी आयी तो परिणाम क्या होगा! फिर तो केवल पानीकी सूर्या नदी नही वहेगी!

कलियुगका माहात्म्य समझकर नही, किन्तु सत्ययुगकी स्थापनाके लिअे हमें अिन आदिम-जातियोको अपनेमे पूरी तरह समा लेना चाहिये। चार वर्णोंकी पुन स्थापनाकी वाते और आदिम-जातिके 'अुद्धारकी' परोपकारी भाषा अब हमे छोड देनी चाहिये। अिनमे और हममे कोअी भेद ही नही रहना चाहिये।

सितम्बर, १९५१

४८

अबरी ओब

मै कलकत्तासे वर्धा जा रहा था। गाडीमे रातको विना कुछ ओढे सोया था। ओढनेकी जरूरत न थी, फिर भी यदि ओढ लेता तो चल सकता था। सुवह पाच वजे जव जागा तव हवामे कुछ ठड मालूम हुअी, और चद्दरकी गर्मी न लेनेका पछतावा हुआ। आखिर 'अब क्या हो सकता है?' कहकर अुठा। कवियोको जितना भविष्यकाल दिखाअी देता है, अुतना ही वाहरका दृश्य दिखाअी देता था। सारा दृश्य प्रसन्न था, मगर पूरा स्पष्ट नही था।

अितनेमें अेक नदी आयी। पुलके दो छोरोके वीच अुसकी धाराये अनेक पक्तियोमे वट गअी थी। हरेक नदीके वारेमे अैसा ही होता है। मगर यहा स्पष्ट मालूम होता था कि अिस नदीने कुछ विशेष सौंदर्य प्राप्त किया है। पतले अधेरेमे प्रभातके समयका आकाश यह तय नही कर पाता था कि पानीकी चादी वनाये या पुराने जमानेका चमकते लोहेका आअीना वनायें?

हम पुलके वीचमे आये। मै प्रवाहका सौंदर्य निहारने लगा। अितनेमें अैसा लगा मानो किसीने पानीके अूपर सफेद रग छिडक

दिया है और धीरे धीरे अुसकी अबरी* बन गअी है। यह रूप देखकर मैं खुश हो गया। अभी अभी दिल्लीमे जामिया मिलियाके छोटे बच्चोको कागज पर अबरीकी आकृतिया बनाते हुअे मैंने देखा था। मुझे ये प्राकृतिक आकृतिया बहुत आकर्षक मालूम होती है।

अिस नदीका नाम क्या है? कौन बतायेगा? मैंने सोचा, नाम न मिला तो मैं अुसे अबरी नदी कहूगा।

नदी गअी और वह कहाकी है यह जाननेकी मेरी अुत्कठा बढी। क्योकि अुसके बाद धुवा छोडनेवाली अेक दो चिमनिया दिखाअी दी थी। और निकटके गावमें बिजलीके दीये भी दिखाअी दिये थे। रेलवेका टाअिम टेबल निकालकर मैंने अुससे पूछा 'पाच अभी ही बजे है। हम कहा है?' अुसका जवाब सुनते ही मुहसे परिचयका आनदोद्गार निकला 'ओहो! यह तो हमारी औब है!' रामगढ जाते समय अुसने कितनी सुन्दर आकृतिया दिखलाअी थी! मैंने अुसे कृतज्ञताकी अजलि भी दी थी। औबको मै पहचान कैसे न सका? अबरीका यह कला-विलास सभी नदिया थोडे बता सकती है!

तो अिस औब नदीने अबरीकी कला कौनसी वर्षा-शालामे सीखी होगी? या शायद दुनियाने अबरी-कला सबसे प्रथम अिसीसे सीखी होगी।

मअी, १९४१

---

* कितावकी जिल्द पर या अुसके अदर जो रगीन आकृतियोवाला कागज अिस्तेमाल किया जाता है, और जिसको अग्रेजीमे marble paper कहते है, अुसके लिअे देशी शब्द है 'अबरी'।

४९

तेंदुला और सुखा

आज मै अेक अनसोचा और असाधारण आनद अनुभव कर सका।

हम वर्धासे द्रुग आये है। आसपासके दो गावोमे राष्ट्रीय ग्रामशिक्षा (बेसिक अेज्युकेशन) शुरु करनेके लिअे शिक्षक तैयार करनेवाली अेक सस्थाका अुद्घाटन करनेको हम सुबह चार बजे द्रुग आ पहुचे। नहा-धोकर नाश्ता किया और बालोडके लिअे रवाना हुअे।

द्रुगसे बालोड ठीक दक्षिणकी ओर ३७ मील पर है। रास्ता सीधा है। मानो रस्सीसे रेखाये आककर बनाया गया हो। मीलो तक सीधी रेखामें दौडते रहनेमें जिस प्रकार अेकसा-पन होता है, अुसी प्रकार अेक तरहका नशा भी मालूम होता है। बालोडके पास पहुचे और किसीने कहा कि यहासे पास ही तेदुला बद और केनाल है। मामूली-सी वस्तु भी स्थानिक लोगोकी दृष्टिमे बडे महत्त्वकी होती है। भाअी तामस्करने जब कहा कि व्याख्यानके बाद हम यह बद देखने चलेंगे तब विशेष अुत्साहके बिना मैंने 'हा' कह दिया था। वहा कुछ देखने योग्य होगा, अैसा मेरा खयाल ही न था। 'हा' कहा केवल स्थानिक लोगोके आतिथ्यका अुत्साह भग न होने देनेकी भलमनसाहतके कारण।

खासी ३७ मीलकी जो यात्रा की अुसमे गड्ढे आदि कुछ भी नही थे। जमीन सर्वत्र समतल थी। गुजरातकी तरह यहाकी जमीनमे बाडोकी अडचन भी नही है। अिस तरहकी समतल जमीन देखनेके बाद अेकाध नदी-नाला देखनेको मिले, अेकाध बाध नजरके सामने आये तो मनको अुतना व्यजन मिलेगा, अिस खयालमे मैंने जाना कबूल किया था। जिसने पूनाके बडगार्डनसे लेकर भाटघरके प्रचड बाध तक अनेक बाध देखे है, अुसका कुतूहल यो सहज जाग्रत नही हो सकता।

बेजवाडामे कृष्णा नदीका भव्य बाध, गोकाकके पास घटप्रभाका बाल्य-परिचित बाध, लोणावलाके दो तीन आकर्षक बाध, मैसूरमे वृदा-

वनका पोपण करनेवाला बादशाही कृष्णसागर, दिल्लीके निकट यमुनाका रमणीय 'ओखला' का बाध और नासिकसे मोटरके रास्ते पचास मील दूर जाकर देखा हुआ 'प्रवरा' नदीका सुन्दरतम और रोमाचकारी बाध —— अैसे अनेक जलाशय जिसने देखे है, वह सिहगढकी तलहटीका 'खडक-वासला' जैसा बाध देखकर सतुष्ट भले हो, मगर अुसका कुतूहल बाल्यावस्थामे तो हो ही नही सकता।

भावनगरके पासके बोर तालावका वर्णन मैने लिखा है। बेज-वाडाकी कृष्णा नदीको मैने श्रद्धाजलि अर्पित की है। दूसरोके बारेमे अब तक कुछ लिखा नही है, अिस बातका मुझे दु ख है। फिर भी आज किसी भव्य जलराशिके दर्शन होगे, अैसी अुम्मीद मुझे न थी। व्याख्यान, सभाषण और भोजन समाप्त करके हम तेंदुला केनाल देखनेके लिअे वाहनारूढ हुअे और बाधकी ओर दौडने लगे। बाध परसे मोटर ले जानेकी अिजाजत पानेके लिअे अेक आदमी आगे गया था। अुसकी राह देखनेका धीरज हममे न था। अिजाजत मिल ही जायगी, अिस खयालसे हम तेज रफ्तारसे आगे बढे और बाधके पास पहुचे। बाधके अूपर गये, और ——

मै तो अवाक् हो गया!

कितना लबा और चौडा पानीका विस्तार! और पानी भी कितना स्वच्छ!! मानो आकाश ही आनदातिशयमे द्रवीभूत होकर नीचे अुतर आया हो! और पानीका रग? जामुनी, नीला, फीरोजी, सफेद और गुलाबी!! और वह भी स्थायी नही। आकाशके बादल जैसे जैसे दौडते जाते थे, वैसे वैसे पानीका रग भी बदलता जाता था। छोटी तरगोके कारण पानीकी तरलता तो खिलती ही थी, तिस पर अूपरसे अुसमें यह रग-परिवर्तनकी चचलता आ मिली। फिर तो पूछना ही क्या था? जहा देखो वहा काव्य डोल रहा था, चमत्कार नाच रहा था। अपना महत्त्व किसके कारण है, यह दोनो ओरके किनारे जानते थे। अत वे अदबके साथ जलराशिकी खुशामद करते थे।

अिस बाधकी खूबी अुसके विस्तारके अलावा अेक दूसरी विशेषतामें है। तेंदुला और सुखा दोनो नदिया बहने है। तेंदुला बड़ी बहन

है। वह ३०–४० मील दूरसे आती है। अुसके मुकाबलेमें सुखा केवल बालिका है। तीन मील दौडकर ही वह यहा आ पहुचती है। ये दोनो जहा अेक-दूसरेके पास आती है, वही यह प्रेममूर्ति बाध मानो यह कह कर कि 'मेरी सौगध है तुम्हे जो आगे बढी तो!' दोनोके सामने आडा सो गया है। करीब तीन मील लबा बाध अिन दो नदियोको रोकता है। और फिर अपनी मरजीके अनुसार थोडा थोडा पानी छोड देता है। कच्ची मिट्टीका अितना बडा बाध हिन्दुस्तानमें तो क्या सारे ससारमें और कही नही होगा! बाधके नीचेकी १५ मील तककी अभिमानी जमीन अैसा अुपकारका पानी लेनेसे अिनकार करती है। अत यह नहर अुसके बादके ६०–७० मील तक दोनो ओरके खेतोकी सेवा करती है। बाधकी वजहसे अूपरकी बहुत-सी जमीन पानीमें डूब गअी है अिसकी कल्पना केवल आखोसे कैसे हो? तलाश करने-पर पता चला कि करीब तीन सौ बीस वर्गमील जमीन पर गिरनेवाला पानी यहा जमा हुआ है। पानीका विस्तार सोलह वर्गमील है। १९१० मे अिस बाधका काम आरभ हुआ और पौन करोडसे अधिक रुपया खर्च होनेके बाद ही वह पूरा हुआ। बारिशमें अिन दोनो नदियोका पानी अेकत्र होता है। और फिर तो सारा जलमग्न दृश्य देखकर 'सर्वत सप्लुतोदके' का स्मरण हो आता है। जब बीचका टापू अपना सिर जरा अूचा करनेका प्रयास करता है, तब अुसकी यह परेशानी देखकर हमे हसी आती है। आज अिस टापू पर कुछ अूचे पेड 'यद् भावि तद् भवतु' वृत्तिसे अिस बाढकी प्रतीक्षामें खडे है। अुन्हे अुस लाल किनारवाली किश्तीमें बैठकर थोडे ही भाग जाना है? अैसे पेड जब तक टिक सकते है, शानके साथ रहते है। और अतमें जडे खुली पडने पर पानीमें गिर पडते है।

गरमीमें जब दो नदियोंके पात्र अलग अलग हो जाते है, तब धूप तथा विरहके कारण वे अधिक सूखने न पायें, अिस हेतुसे बीचमें अेक नहर खोदकर दोनोका पानी अेक-दूसरेमें पहुचानेका प्रबध कर दिया जाता है।

जाननेवाले जानते है कि नदियोका भी हृदय होता है। अुनमे वात्सल्य होता है, चारित्र्य होता है और अुन्माद तथा पश्चात्ताप भी होता है। ये दो बहने यहा जो कुछ करती है अुसमे अेक-दूसरेकी शोभाकी अीर्ष्या जरा भी नही करती। मत्सर या सापत्न-भाव अुनके चेहरे पर बिलकुल नही दीख पडता। अुन्हे अिस बातका भान है कि बाधरूपी जबरदस्त सयमके कारण अुनकी शक्ति बहुत कुछ बढी है। केवल बहते रहना ही नदीका धर्म नही है। फैलना और आशीर्वाद-रूप बनना भी नदी-धर्म ही है, तमाम नदियोको यह नसीहत देनेके लिअे ही मानो वे यहा फैली हुअी है।

नदीके किनारे पेड खडे हो, तो वहा अेक तरहकी शोभा नजर आती है। और ये पेड जब अुसके पात्रको ढकनेका वृथा प्रयत्न करते है, तब अिस विफलतामे से भी वे सफल शोभा अुत्पन्न करते है।

हम अुस किनारेके पेडोकी मुलाकात लेने गये। समय दोपहरका था। निद्रालु पेड नदीके साथ बाते करते करते नीदमे डूब रहे थे और चारो ओर अुष्ण-शीतल शाति फैली हुअी थी। सिर्फ तरह तरहके पक्षी मद मजुल कलरव करके अेक-दूसरेको अिस काव्यका आनद लूटनेके लिअे प्रोत्साहित कर रहे थे।

और लाल मकोडे, जिन्हें मराठीमें 'वाघमुग्या' या 'अुवील' कहते हैं, अेक किस्मके चिकने पदार्थसे पेडोके चौडे पत्तोको अेक-दूसरेसे चिपकाकर अिस सारे काव्यको भरकर रखनेके लिअे थैलिया बना रहे थे। मेरी आखें भी दिलकी थैली बनाकर अुसमें सामनेका दृश्य भरनेके लिअे सारे प्रदेशको चूस रही थी।

नदीको अिसमे कोअी अेतराज नही था।

मार्च, १९४०

५०

अृषिकुल्याका क्षमापन

आज महाशिवरात्रिका दिन है। रोजके सब काम अेक तरफ रखकर सरिता, सरित्पिता और सरित्पतिका ध्यान करनेके निश्चयसे मैं बैठा हूं। सरितायें लोकमातायें हैं। अुनकी 'जीवनलीला' को अनेक प्रकारसे याद करके मैं पावन हुआ हूं। पूर्वजोंने कहा है कि नदीका पूजन स्नान, दान और पानके त्रिविध रूपसे करना चाहिये। मुझे लगा - केवल स्नान-दान-पान ही क्यों? भक्ति ही करनी है तो फिर वह चतुर्विधा क्यों न हो? अैसा सोचकर मैंने नदीका गान करनेका निश्चय किया। 'लोकमाता' और प्रस्तुत 'जीवनलीला' अिन दो ग्रंथोंमें यह गान सुननेको मिल सकता है।

अब जब कि प्रवास कम हो गया है और सरित्पति सागरका निमंत्रण भी कम सुनाअी देने लगा है, मैं दिलमें सोच रहा था कि सरित्पिता पहाड़ोंका कुछ श्राद्ध करूं। अितनेमें अेक छोटीसी पवित्र नदीने आकर कानमें कहा "क्या मुझे बिलकुल भूल गये?" मैं शरमाया और तुरन्त अुसको स्मरणांजलि अर्पण करके अुसके बाद ही पहाड़ोंकी तरफ मुड़नेका निश्चय किया। यह नदी है कलिंग देशमें केवल सवा सौ मीलकी मुसाफिरी करनेवाली अृषिकुल्या।

अृषिकुल्या नदीका नाम तक मैंने पहले नहीं सुना था। मैं अशोकके शिलालेखोंके पीछे पागल हुआ था। जूनागढ़के शिलालेख मैंने देखे थे। फिर अुड़ीसाके भी क्यों न देखूं? अैसा खयाल मनमें आया। कलिंग देशका हाथीके मुंहवाला धौलीका शिलालेख मैंने देखा था। फिर अितिहास-दृष्टि पूछने लगी कि थोड़ा दक्षिणकी ओर जाकर वहांका जौगटका विख्यात शिलालेख कैसे छोड़ सकते हैं? अुसको तृप्त करनेके लिअे गंजामकी तरफ जाना पड़ा। वह प्रवास बहुत काव्यमय था। लेकिन अुनका वर्णन करने बैठूं तो वह अृषिकुल्यासे भी लम्बा हो जायगा।

यह नदी चिलका सरोवरसे मिलनेके बजाय गजाम तक कैसे गअी और समुद्रसे ही क्यों मिली, अिसका आश्चर्य होता है। शायद सागर-पत्नीका सौभाग्य प्राप्त करनेके लिअे अुसने गजाम तक दौड लगाअी होगी। लेकिन यहाके समुद्रमे कोअी अुत्साह दिखाअी नही देता। रेतके साथ खेलते रहना ही अुसका काम है।

अृषिकुल्या वैसे छोटी नदी है, फिर भी शायद नामके कारण अुसकी प्रतिष्ठा बडी है। क्योकि अितनी छोटीसी नदीको कर-भार देनेके लिअे पथमा और भागुवा ये दो नदिया आती हैं। और भी दो-तीन नदिया अुसे आकर मिलती है। लेकिन दारिद्रयके ममेलनसे थोडे ही समृद्धि पैदा होती है? गरमीके दिन आये कि सब ठनठन गोपाल!

अृषिकुल्याके किनारे अस्का नामका अेक छोटासा गाव है। छोटासा गाव सुन्दर नही हो सकता, अैसा थोडे ही है? जहा नदियोका सगम होता है, वहा सौंदर्यको अलगसे न्यौता नही देना पडता। और यहा पर तो अृषिकुल्यासे मिलनेके लिअे महानदी आअी हुअी है! दोनो मिलकर गन्ना अुगाती है, चावल अुगाती है और लोगोको मधुर भोजन खिलाती है। और जिनको अुन्मत्त ही हो जाना है, अैसे लोगोके लिअे यहा शराबकी भी सुविधा है। अिस 'देवभूमि' मे लोगोके सुरा-पानको अुचित कहे या अनुचित? जो सुरा पीते है सो सुर यानी देव, और जो नही पीते सो असुर — अीरानी लोगोकी सुर-असुरकी व्याख्या अिस प्रकार है।

अृषिकुल्या नाम किसने रखा होगा? अिसके पडोसकी दो नदियोके नाम भी अैसे ही काव्यमय और सस्कृत है। 'वशधारा' और 'लागुल्या' जैसे नाम वहाके आदिवासियोके दिये हुअे नही प्रतीत होते।

यह सारा प्रदेश कलिगके गजपति, आध्रके वेगी तथा दक्षिणके चोल राजाओकी महत्त्वाकाक्षाओकी युद्धभूमि था। तब ये सब नाम चोलके राजेन्द्रने रखे या कलिगके गजपतियोने, यह कौन कह सकेगा?

जौगढका अितिहास-प्रसिद्ध शिलालेख देखकर वापस लौटते हुअे शामके समय अृषिकुल्याका दर्शन हुआ। सस्कृत साहित्यमें दधिकुल्या, घृतकुल्या, मधुकुल्या जैसे नाम पढकर मुहमे पानी भर आता था।

ऋषिकुल्याका नाम सुनकर मैं भक्तिनम्र हो गया और अुसके तट पर हमने शामकी प्रार्थना की।

छोटीसी नदी पार करनेके लिअे नाव भी छोटीसी ही होगी। अुस दिनका हमारा दैव भी कुछ अैसा विचित्र था कि यह छोटीसी नाव भी आधी-परधी पानीसे भरी हुअी थी। अदरका पानी बाहर निकालनेके लिअे पासमें कोअी लोटा-कटोरा भी नही था। अिसलिअे जूते हाथमे लेकर हमने नावमे खुले पाव प्रवेश किया। अिच्छा थी कि नदीमे पाव गीले न हो जाये। लेकिन आखिर नावमे जो पानी था अुसने हमारा पद-प्रक्षालन कर ही दिया। खडे रहते है तो नाव लुढक जाती है। बैठते है तो धोती गीली होती है। अिस द्विविध सकटमे से रास्ता निकालनेके लिअे नावके दोनो सिरे पकडकर हमने कुक्कुटासनका आश्रय लिया और अुसी स्थितिमे बैठकर वेद-कालीन और पुराण-कालीन ऋषियोका स्मरण करते करते अुनकी यह कुल्या पार की। तबसे अिस ऋषिकुल्या नदीके बारेमे मनमे प्रगाढ भक्ति दृढ हुअी है। कुक्कुटासनका 'स्थिर-सुख' जब तक याद रहेगा, तब तक निशीथ-कालका वह प्रसग भी कभी भूला नही जायगा।

वहाके अेक शिक्षकके पाससे ऋषिकुल्याके बारेमे जानकारी प्राप्त करनेकी कोशिश की। अुन्होने अुडिया भाषामे लिखा हुआ अेक दीर्घ-काव्य परिश्रमपूर्वक लिखकर मेरे पास भेज दिया। अब तक अुस काव्यका आस्वाद मैं नही ले सका हू। ऋषिकुल्याके प्रति भक्तिभाव दृढ करनेके लिअे आधुनिक काव्यकी जरूरत भी नही है। मेरे खयालमे महा-शिवरात्रिके दिन किया हुआ ऋषिकुल्याका यह क्षमापन-स्तोत्र अुसको मजूर होगा और वह मुझे अचलोका अुपस्थान करनेके लिअे हार्दिक और सुदीर्घ आशीर्वाद देगी।

महाशिवरात्रि,
२७ फरवरी, १९५७

५१

सहस्रधारा

पुराना अृण शायद मिट भी सकता है, किन्तु पुराने सकल्प नही मिट सकते। पचीस वर्ष पहले मै देहरादूनमे था, तव सहस्रधारा देखनेका सकल्प किया था। अुत्कठा वहुत थी, फिर भी अुस समय जा नही सका था। कुछ दिनो तक अिसका दु ख मनमे रहा, किंतु वादमे वह मिट गया। सहस्रधारा नामक कोअी स्थान ससारमे कही है, अिसकी स्मृति भी लुप्त हो गअी। मगर सकल्प कही मिट सकता है?

आचार्य रामदेवजीने वहुत आग्रह किया कि मुझे अुनका कन्या-गुरुकुल अेक वार देख लेना चाहिये। मुझे भी यह विकसित हो रही सस्था देखनी थी। पिछले साल नही जा सका था। अत. अिस साल वचन-वद्ध होकर मै वहा गया। अव प्रकृतिके पीछे पागल नही वनना है, अव तो मनुष्योमे मिलना है, सस्थाये देखनी है, राष्ट्रीय सवालोकी चर्चा करनी है, अच्छे अच्छे आदमी ढूढकर अुन्हे काममे लगाना है, सेवकोके साथ विचारोका और अनुभवोका आदान-प्रदान करना है—आदि विविध धाराये मनमे चल रही थी। तव सहस्रधाराका स्मरण भला कहासे होता? मै तो हिन्दी-हिन्दुस्तानीकी चर्चामे ही मशगूल था। अितनेमे युवक रणवीर मुझसे मिलने आये। किसीने अुनकी पहचान कराअी। अुन्होने अपने आप कहा, देहरादूनमें देखने लायक स्थानोमें फॉरेस्ट कॉलेज है, फौजी पाठशाला है, और प्राकृतिक दृश्योमे गुच्छुपानी और सहस्रधारा है। आखिरका नाम सुनना था कि पचीस वर्षकी विस्मृतिके पत्थरोकी कब्रको तोडकर पुरानी स्मृति और पुराना सकल्प भूतकी तरह आखोके सामने खडे हो गये। अव अिस सकल्पको गति दिये सिवा कोअी चारा ही न था।

तैल-वाहन (मोटर)का प्रवध हुआ और अुत्तरकी ओर पाच-सात मीलका रास्ता तय करके हम राजपुर पहुचे। यहीसे अूपर मसूरी जानेका रास्ता है। हम राजपुरसे करीव ढाअी मील पूर्वकी ओर जगलमें पैदल

चले। ठीक पैंसठ मिनट चलकर हम सहस्रधारा पहुंचे। शामका समय था। पीछेकी ओर सूर्य अस्त होनेकी तैयारी कर रहा था और अुनकी लंबी होती किरणें हमारे सामनेके मार्गको अधिकाधिक लंबा बना रही थीं। पांच-दस मिनटमें हमने मानव-संस्कृतिको छोड़कर जंगलमें प्रवेश किया। पानीके बहावके कारण जमीनमें गहरे खड्डे पड़ गये थे। अुनमें होकर हमें जाना था। हम चार आदमी थे। बातें करते जाते, आसपासका सौंदर्य निहारते जाते और समयका हिसाब लगाते जाते। अमरनाथ, तुंगनाथ, बदरीनाथ विशाल जैसे स्थान जिसने देखे हैं, अुसके सामने मसूरीके पहाड़ क्या चीज हैं? फिर भी काफी वर्षोंके पश्चात् फिरसे हिमालयकी तलहटीमें जाना हुआ, अिससे यह दृश्य भी आंखोंको भव्य मालूम हुआ।

मसूरीके पहाड़ोंमें कअी बार टेकरियां गिर पड़ती हैं, जिसे अंग्रेजीमें 'लैण्ड-स्लिप' या 'लैण्ड-स्लाअिड' कहते हैं। यह दृश्य अैसा दिखाअी देता है मानो किसी सूरमा योद्धाको जबरदस्त चोट लगी हो। बड़े बड़े पर्वत छोटे-बड़े वृक्षोंसे ढके हों और बीचमें ही अुनका अेक बड़ा हिस्सा टूट जानेसे खुला पड़ गया हो, तो वह दृश्य देखकर हृदयमें कुछ अजीब भाव पैदा होते हैं। अैसे असाधारण प्राकृतिक दृश्य बहुत बड़े होते हैं। और अिस दुर्घटनाका कोअी अिलाज नहीं होता। अतः अैसे घाव विषम नहीं मालूम होते, बल्कि पर्वतका आदरपात्र वैभव ही दिखाते हैं।

हम नीचे अुतरे, फिर चढ़े। फिर अुतरे। खूब चढ़े। वहांसे चक्कर आये अैसा अुतार आया।

हम स्वेच्छासे चतुष्पाद बनकर आहिस्ता-आहिस्ता नीचे अुतरे। रास्तेमें हर जगह जहां भी अुतरे वहां पत्थरोंकी अेक फैली हुअी सूखी नदी थी ही। वर्षाऋतुमें ये दृषद्वती नदियां अितना कोलाहल करती हैं कि सारी घाटी सहस्र-निनादसे गरज अुठती है, मगर आज तो चारों ओर भीषण शांति थी। छोटे छोटे पक्षी अेक-दूसरेको दूर दूरसे यदि अिशारा न करते, तो यहां खड़े रहनेमें भी दिलमें डर घुस जाता। आखिर अुतार आया और चारों ओर स्लेटवाले पत्थर

नजर आये। जान बचानेके लिअे जब अेकाध तख्तीको पकडने जाते, तो अुसका चूरा ही हाथमे आ जाता था!

ज्यो त्यो करके हम नीचे अुतरे। करीब अेक घटे तक हम चलते रहे। जिनकी मोटरमे आये थे वे भाअी कहने लगे, 'मै तो यही बैठता हू, आप आगे हो आअिये।' मैने कहा, 'आपसे हमने वादा किया था कि अेक घटेमे वापस लौट आयेगे। मगर सहस्रधारा पहुचनेके लिअे अेक घटेसे अधिक समय लगेगा। अत आप वापस जाअिये और मोटरके साथ समय पर देहरादून पहुच जाअिये। हम किरायेकी बसमे आ जायेंगे।' रणवीर कहने लगे, 'अब तो दस मिनटमे हम पहुच जायेगे। सामनेकी टेकरी पर वह जो सफेद कुटिया दिखाअी देती है अुसके पास ही सहस्रधारा है।'

अितनी दूर आये है, तो पाच मिनट और सही, अैसा विचार करके हम आगे बढे। पीछे मुडकर देखनेकी अिच्छा हुअी तो सूरज आकाशमे लटक रहा था और तलहटीकी घाटीके पहाड अपने दो हाथ अूचे करके अुसका स्वागत कर रहे थे, मानो गेद पकडनेकी तैयारी कर रहे हो। अूपर अुछाला हुआ बच्चा माके हाथोमे पडते ही हसने लगता है और मा प्रसन्न होती है, अैसा ही वह दृश्य था। अैसे समय पर माके प्रेमके अुभारका मनमे सेवन करे, या बच्चेका विश्वासपूर्ण हास्य विकसित करे, दोमे से किस आनदके साथ तादात्म्यका अनुभव करे, अिसका निश्चय न होनेसे मन परेशान होता है। अितना ही अेक दृश्य देखनेके लिअे यहा तक आया जा सकता है! मगर सकल्प तो किया था सहस्रधाराका। अत लबी सूर्य-किरणोकी ओरसे हमने मुह फेरा और आगे बढे।

अितनेमे यकायक अेक बडा प्रपात धबधबाता हुआ नजर आया। अूचाअीसे स्वच्छ पानी मजबूत मिट्टीकी प्राकृतिक दीवारसे लुडकता है, आवाज करता है और अनोखी मस्तीभरी अेकतानतासे नीचे अुतरता है। पासमें कोअी है या नही, यह देखनेकी अुसे फुरसत कहा है? क्या होता है अिसकी अुसे कोअी परवाह नही है। वह तो धब-धब, धव-धब आवाज करता ही रहता है। पत्थरके

अूपरसे जब पानी गिरता है तब अुतना आश्चर्य नही होता। मगर यहा तो अपनी जिद न छोडनेवाली मिट्टी परसे पानी गिरता है। मैं तो देखता ही रहा। पानीके भव्य दृश्यमे अितना नशा होता है, यह शराबियोको यदि मालूम हो जाय, तो वे शरावका नशा छोडकर अहर्निश यही आकर बैठे रहे। अेक क्षणके लिअे तो मैं भूल ही गया कि हमे वापस लौटना है। भले अेक क्षणके लिअे, मगर जब हम प्रकृतिके साथ अेकरूप हो जाते है तब वह सचमुच अद्वैतानद होता है। अपना होश भूल जानेके बाद आनदके सिवा और कुछ रह ही नही सकता।

तब क्या जिसे हम जड सृष्टि कहते है वह जड नही है, बल्कि अद्वैतानदकी समाधिमे अेकतान होकर पडी है? अिसका जवाब भला कौन दे सकता है? और कौन सुन भी सकता है?

रणवीर कहने लगे, 'अब हम जरा आगे चलेगे।' अब देरी करनेकी मेरी अिच्छा न थी। मगर थोडा बाकी रह गया अैसा विषाद मनमे न रहे अिसलिअे मैं आगे बढा। नीचे पानी बह रहा था। धीरे धीरे हम नीचे अुतरे ही थे कि सुराखारकी महक आने लगी। नीचे अुतरकर थोडासा पानी पिया। कहते है कि तमाम चर्म-रोगोके लिअे यह पानी बहुत मुफीद है। अिस पानी और अुसके अद्भुत गुणोके बारेमे मैं सोच रहा था, किन्तु दिल तो अभी देखे हुअे प्रपातकी धब-धब आवाजके साथ ही ताल साध रहा था। अितनेमे दाहिनी ओर अूपर अेक झुकी हुअी खोहके छतमे पानीकी बूदे गिरती देखी। अुनकी आवाज अैसी हो रही थी मानो अत्यत सौम्य और मूक-प्राय जलतरग या वृद-गायन हो।

यही है सच्ची सहस्रधारा। हजारो बूदें अिस गुफाके अूपरसे और अदरसे टप टप गिरती है। मगर अुनकी आवाज नही होती। शातिके साथ ये बूदें सतत गिरती रहती है। अेक ओरसे हम अूपर चढे। वहा अेक गहरी गुफा थी। बीचमे स्तभके समान पत्थरका भाग था। हम अुसके अिर्दगिर्द घूमे। चारो ओर सहस्रधाराकी बरसात हो रही थी। मालूम होता था मानो सारा पहाड पिघल रहा है। हम काफी

भीग गये। अेक घटा तेजीसे चलकर आनेसे शरीरमे गरमी खूब थी। अिसलिअे भीगते समय विशेष आनद महसूस हुआ। कितना ठडा है यहाका दृश्य! यहा रहनेके लिअे मनुष्यका जन्म कामका नही। यहा तो वेदमत्रोका चार्तुमास्यमे रटन करनेवाले मेढकोका अवतार लेकर रहना चाहिये। जो हृदय कुछ समय पहले शक्तिशाली प्रपातके साथ अेकरूप हो गया था, वही यहा अेक क्षणमें अिस रिमझिम रिमझिम सहस्रधाराके बालनृत्यके साथ तन्मय हो गया। मैंने रणवीरको जी भरकर धन्यवाद दिया और कहा, 'अितना हिस्सा यदि देखना बाकी रह जाता, तो सचमुच मैं बहुत पछताता।' बारिशसे रक्षा करनेवाली असख्य गुफाअे मैंने देखी है। मगर ग्रीष्मकालमे भी अपने पेटमे बारिशका सग्रह रखनेवाली गुफा तो पहले-पहल यही देखी। सीलोनके मध्यभागमे अेक स्थान पर चित्रोवाली अेक बडी गुफा है, अुसमे से अेक नन्हा-सा झरना झरता है। मगर अिस प्रकारकी अखड बारिश तो यही पहले-पहल देखी। हमे वापस लौटनेकी जल्दी थी। मगर अिस बारिशको जल्दी नही थी। अुसको अपना जीवन-कार्य मिल चुका था। पत्थरो पर जमी हुअी काअीके कारण पाव फिसलते थे, और यहाके सौंदर्य, पावित्र्य और शातिके कारण पाव यहा चिपकते थे। जीमें आता था कि जितना अधिक समय अिस स्थितिमे बीते अुतना ही लाभ है।

आखिर वहासे लौटना ही पडा। अब तो दुगुनी रफ्तारसे जाना था। रास्ते पर चद मजदूर और ग्वाले जल्दी जल्दी चलते हुअे नजर आये। बेचारे गरीब लोग! वे बडी कठिनाअीसे अैसे स्थान पर जीवन बिताते हैं। मगर हमे तो अिसी बातकी अीर्ष्या हुअी कि अिन्हे सहस्रधाराकी अमृतमयी दृष्टिके नीचे रहनेको मिलता है।

अुतरते समय तो अुतर गये थे, मगर अब अधरेमें चढेंगे कैसे, यह सवाल था। मनमे आया, अेकाध लाठी मिल जाय तो अच्छा हो। वहा अेक देहाती दुकान थी। दुकानदारसे हमने पूछा, 'भैया, अेक अच्छीसी लकडी दे दोगे?' मैं अेक कानसे नही सुनता, तो दुकानदार दोनो कानोंसे बहरा था! मेरी बात अुसकी समझमे नही आती थी। मैं

अधीर बन गया था। आखिर अेक साथीने अिशारेसे अुसको समझाया। अुसने तुरन्त अन्दरसे अपनी बासकी लकडी ला दी। पैसे दिये तो अुसने लेनेसे अिनकार कर दिया। और लकडी लेकर मानो मैंने ही अुस पर अहसान किया हो, अैसी धन्यता अपनी आखोंमें दिखाकर वह कहने लगा, 'ले जाअिये, आप ले जाअिये।' रणबीरने अुसके कानोंमें जोरसे कहा, 'ये मेहमान तो महात्मा गाधीके आश्रमसे आते है।' तब अुसकी धन्यता और मेरे सकोचका कोअी पार न रहा। लकडी लेकर मै तो भागा।

अब हमारा बोलना बन्द हो गया। पैर दौडते जा रहे थे और मै मनमे प्रार्थना करता जा रहा था। आकाशमे गुरु और शुक्र चद्रकी कुछ टीका कर रहे थे।

मोटरवाले भाअी पहाडके शिखर पर बैठकर हमारी राह देख रहे थे। जब हम मिले तब वे कहने लगे, 'आप दौडते गये और दौडते आये, और मै अुतने समय शातिसे अिस घाटीके भव्य विस्तारका, डूबते हुअे प्रकाशका और पलटते हुअे रगोका आनद लूटता रहा। अब आप बताअिये, अधिक आनद किसने लूटा?'

मैंने प्रतिध्वनिकी तरह पूछा 'सचमुच, किसने लूटा?'

दिसबर, १९३६

५२

गुच्छुपानी *

गुच्छुपानी कुदरतका अेक सुन्दर खेल है। मै सन् १९३७ में देहरादून गया था, तब अेक दिनकी फुरसत थी। कअी साथियोने कहा, "चलो हम 'गुच्छुपानी' देखनेके लिअे चले।" अन्य साथियोने 'सहस्र-धारा' देखनेका आग्रह किया। गुच्छुपानी नाम तो अच्छा लगा, लेकिन विस्मृतिके आवरणके नीचे दबे हुअे पुराने सकल्पने अपना मत सहस्र-धाराके पक्षमे दिया। अिसलिअे अुस समय गुच्छुपानी देखना रह गया।

१९३९ मे कन्या-गुरुकुलके अुत्सवके निमित्तसे देहरादून जाना पडा। अिस वक्त गुच्छपानी मुझे बुलाये बगैर थोडा ही रहनेवाला था? देहरादूनसे गुच्छुपानी आरामसे जानेके लिअे दो-तीन घटे काफी है। मोटर तो क्या, पैदल आने-जानेमे भी तीन साढे-तीन घटेसे ज्यादा समय नही लगता। पहले तो, करीब डेढ मील तक मोटरके लिअे बनाया हुआ आस्फाल्टका वज्रलेप रास्ता हमे धीरे-धीरे अूचे-अूचे पेडोके बीचसे होकर अूचे चढाता है, और सामनेके पहाड पर चमकती मसूरीकी गधर्व-नगरीका दर्शन करवाता है। वहाके बगलोकी टेढी-मेढी कतार जब सध्या-किरणोमे चमकने लगती है तो अैसा आभास होता है मानो चकमकके चौरस टुकडे बिखरे पडे हो।

रास्ता छोडकर हम बायी ओरके खेतमे अुतरे, तो सामने सालके बाल-वृक्षोकी अेक घटा दिखाअी देने लगी। अिस घटाके बीचसे होकर पहाडकी अेक लडकी पत्थरोके साथ खेलती दक्षिणकी ओर दौडती जाती है अुसका दर्शन हुआ। अिस समय अुसके पात्रमे पानी नही था। सिर्फ टेढे-मेढे लेकिन चमकीले सफेद पत्थर ही वहा बिखरे हुअे थे। आम तौर पर बिना पानीकी नदी हम पसन्द नही करते। लेकिन जब दोनो ओर अूची-अूची टेकरिया होती है और सारा प्रदेश निर्जन-रम्य

---

* अर्थात् पहाडको चीरकर बहता झरना।

होता है, तो सूखी हुअी नदी भी भीषण-रमणीय रूप धारण करती है। पानीका प्रवाह भले न हो, लेकिन हरे-हरे जगलमे से होकर सफेद धवल पत्थरोकी पट्टी जब पहाडोके बीचमे अपना रास्ता निकालती आगे बढती है, तो मनमें सहज ही खयाल आता है कि ये पत्थर स्कूलके बच्चोकी तरह खेलमें दौडते-दौडते यकायक रुक गये है।

हम आगे बढे, फिर चढे, फिर अुतरे। खाअियोमे होकर गुजरना था, अिसलिअे दूर-दूर देखनेके बजाय आसमानकी ओर देखकर ही सतोष मानना पडता था। बीच-बीचमें पीले और सफेद फूलोका अुडाअू-पन देखकर लगता था कि यहा किसीका बगला होगा, लेकिन दूसरे ही क्षण यकीन हो जाता था कि अैसे दृश्य देखकर ही शहरके बगले-वालोको अपने बगलेके अिर्द-गिर्द फूलके पौधे लगानेका खयाल आया होगा। बगलेकी चार दीवारे तो कुदरतकी गोदमे बिछुडे हुअे मानवके लिअे ही है। यहा तो कुदरतका विशाल महल है। चार दिशाअे अुसकी चार दीवारे है और आसमानका कटाह अुसका गुबद। रात होनेके पहले ही अिस गुबदमें चाद-तारोका चदोवा नियमपूर्वक ताना जाता है। हवाके बिगडने पर चदोवा मैला न हो अिस दृष्टिसे कभी-कभी अुसके अूपर बादलका पर्दा ढक दिया जाता है।

फूल खुशीसे हस रहे थे। क्या मालूम किसको देखकर हस रहे थे! अपने आनेकी सूचना तो हमने दी नही थी और दी भी होती तो अपने शिकारियोका आगमन अुनको भाता या नही यह भी अेक सवाल है।

बीच-बीचमें छोटी झोपडिया और अिन झोपडियोको अपमानित करनेवाले चूने-मिट्टीके घर भी आते रहते थे। रास्ते और म्युनिसिपैलिटीकी सुविधासे महरूम घर वनश्रीके साथ अच्छी तरहसे हिलमिल गये थे और वहाके देहाती जीवनकी शान बढाते थे। गोरोकी फौजी नौकरीसे निवृत्त हुअे गुरखे सैनिक यहा कुदरतकी गोदमे निवृत्तिका आनद महसूस करते है और अपनी वृद्ध पहाडी हड्डियोको आराम देते है।

हम आगे बढे। आगे यानी सीधा आगे नही। पहाडी पग-डडियोके चक्रव्यूहमे तो जैसा रास्ता मिलता जाता है, वैसे आगे बढना

पडता है। बायी ओर जाना हो तो भी कभी-कभी दाहिनी ओरका रास्ता लेकर अुसकी खुशामद करते-करते आगे बढना पडता है। चि० चदनने कहा, "आसपासका सुन्दर दृश्य और आसमानके पल-पलमे वदलते दृश्य हमारा ध्यान अपनी ओर खीचते है, लेकिन अेक पलके लिअे भी पैरकी ओरसे असावधान हुअे तो अिस पहाडी नदीके पत्थरोकी तरह लुढकना पडेगा।" अुसकी वात सच थी। वडे-वडे पत्थरो पर पैर रखकर चलनेमें खास मजा आता है। लेकिन वे समानान्तर थोडे ही होते है? अिसलिअे कौनसा पत्थर कहा है, मनुष्यके पावका बोझ सिर पर आने पर भी अपने स्थानसे डिगे नही अैसा धीरोदात्त पत्थर कौन है? —अिस तरह रास्तेका 'सर्वे' करते-करते जहा आगे वढना होता है, वहा हरेक कदममे अपना चित्त लगाना पडता है। हाथमें पूनी लेकर सूत कातते समय जैसे तसू-तसूमे हमारा ध्यान भी कतता है, वैसे ही अिस तरहकी पहाडी यात्रामें कदम-कदम पर हमारा चित्त यात्राके साथ ओतप्रोत होता है और अिससे ही यात्राका आनद गहरा होता है।

अव तो अेक लवी-चौडी नदी नीचे दिखाअी देने लगी। दाहिनी ओरकी दरीसे आकर बाअी ओर दो शाखाओमे वह विभक्त हो जाती थी। सामनेकी टेकरी परसे तारघरके खभोने पाच-सात तारोकी कतारे शुरू करके अिस पार दूर तलहटीमे अिस तरह झेली थी, मानो किसी वच्चेने अपने हाथ और अपनी आखे यथासभव तान कर नदीकी चौडाअी वतानेकी कोशिश की हो।

अुस नदीके पट पर होकर दो छोटे प्रवाह, किसी राजाके अस्त हुअे वैभवकी तरह धीमे-धीमे जा रहे थे। पानी तो वच्चोके हास्य और रिस जैसा ही निर्मल था। अिच्छा हुअी कि थोडा पानी पेटमे पहुचा दू। लेकिन धर्मदेवजीकी रसिकता वीचमे आयी। अुन्होने कहा, "देखिये, सामने झरना दिखाअी देता है। अेक समय था जब मै अुसका पानी यहा आकर रोज पीता था। चलिये वही चले।"

हम गये। वहा अेक छोटी पहाडीकी कमर पर अेक छोटा-सा ताक था। अमृत जैसे झरनेको अुसमे से निकलनेका सूझा। किसी परोपकारी

आदमीको अुम तापके नजदीक अेक लकडीकी परनाली लगानेकी अिच्छा हुअी, अिसलिअे हम लोगोको जलदान स्वीकारनेमें आसानी हुअी। पानी पीनेके पहले पश्चिमकी ओर ढलते सूर्यको अेक मनोमय अर्घ्य देना मैं न भूला।

अब तो जिस दिशामे सूर्य-किरणे फैल रही थी, अुस ओर धीरे-धीरे नदीके पटमें हम चढने लगे। आगे क्या दिखाअी देगा अुसकी निश्चित कल्पना नही हो सकती थी। नदीका मूल होगा? या अूपरसे पानी गिरता होगा? या सहस्रधाराकी तरह पानीमे गधक होगा? अैसी अनेक कल्पनाअें मनमे अुठती थी। अिस झरनेके नामके मुताबिक अुसका रहस्य भी हमारे लिअे गुह्य था। माना जाता है कि गुच्छु शब्द गुह्य परसे आया है।

सुदूर अेक कोटर दिखाअी देता था। वहा पहुचे तो कुछ और ही निकला। वहा हमें मालूम हुआ कि गुच्छुपानीके मानी क्या हैं।

रेलवे लाअिन डालनेके लिअे जिस तरह पहाड तोडकर सुरग या टनल खोदी जाती है, अुसी तरह अेक आग्रही झरनेने सारी टेकरीको आरपार बीधकर अपना रास्ता निकाला था। नही, नही, यह तो गलत अुपमा दे दी। जिस तरह फौलादकी करवत लकडी या 'पोरबदरी' पत्थरको काटती-काटती नीचे अुतरती जाती है, अुसी तरह अिस झरनेने अेक टेकरी सीधी काट डाली है। अिसमें किसी तरकीबसे काम नही लिया गया। वज्रकाय पाषाणोको बीधकर पानी जब आरपार निकल जाता है, तो आश्चर्यचकित मन सवाल पूछ बैठता है कि समर्थ कौन है? अडिग पहाड और अुसके प्राचीन पत्थरोकी अभेद्य दीवारे या पल भरका भी विचार किये बगैर अपना बलिदान देनेको तैयार चचल और तरल नीर?

अुस विवर या गुफामे घुसनेकी कोशिश करते-करते दिल थोडा-सा काप अुठे तो अुसमे कोअी आश्चर्यकी बात नही, अितना अद्भुत था वह दृश्य। वह मौतके मुहमें प्रवेश करने जैसा साहस था। अदर दाखिल होते ही मुझे तो गीताके ग्यारहवें अध्यायके श्लोक याद आने लगे। फिर भी पहाड और जलकी शक्तिके द्वारा

अपना सामर्थ्य व्यक्त करनेवाली प्रकृतिमाताके स्वभाव पर विश्वास रखकर हम लोग अदर दाखिल हुअे।

अुस टेकरीके कुदरती वज्रलेपमे चुने हुअे काले, धौले और लाल गोल पत्थर अैसे दिखाअी देते थे मानो सीमेन्टसे चुने गये हो। और जलका नम्र प्रवाह पैरके नीचे छोटे-छोटे पत्थरो परसे अपनी विजय-गाथा गाता हुआ दौडता चला जा रहा था। सिर अूचा करके देखा तो पानी द्वारा टेकरीको काटकर वनाअी हुअी खासी वीस-तीस फुटकी दो दीवारे अपने लाखो वरसोके अितिहासकी गवाही दे रही थी। मेरे वजाय कोअी भूस्तरशास्त्री यहा आया होता तो पहले वह यह देखता कि यह पत्थर ग्रेनाअीटके है या सेडस्टोनके? फिर दीवारकी अूचाअी क्या है, पानीका ढाल कितना है, हर दसवे साल पानी कितना गहरा जाता है, अिन सवका हिसाव लगाकर वह अिस कुदरती सुरगकी अुम्र निश्चित करके कहता, "अिस पहाडी प्रवाहका खेल पचास हजार या दो लाख सालोसे चला आ रहा है।" पासकी दीवारमे फसे हुअे रग-विरगे पत्थरोको देखकर वह अुनकी अुम्र पूछता और अुनको जकडकर वैठी हुअी मिट्टीको वज्रलेप सीमेन्ट होते कितने साल वीते होगे अुसका हिसाव लगाकर टेकरीकी अुम्र भी (हमारे लिअे) निश्चित कर देता। और यदि अुसको यहा हुअे भूकपका अितिहास किसीसे मालूम हो जाता तो अपने गणितमे अुसके मुताविक परिवर्तन करके अुसने नये निर्णय भी दिये होते। अिस वज्रलेप सीमेन्टके वीचमे चमडे या वारीक जाल जैसी डिज़ाअिन कैसे वनी और अुसमे से पानीके वारीक फुहारे क्यो निकलते है, यह भी वताया होता। सचमुच नक्षत्र-विद्याके समान यह भूस्तर-विद्या भी अद्भुत-रम्य है। मनोविज्ञानसे अुनकी खोज कम अटपटी नही है। ये तीन विद्यायें मानव-वुद्धि-वलका अद्भुत-रम्य विलास है।

हम अुस गुफामें दूर तक चले गये। अेक जगह अूचे भी चढना पडा। पासमें ही पानीका छोटा-सा प्रपात गिर रहा था। थोडा आगे वढे तो पत्थर और चूनेसे वधी हुअी दो दीवारे देखकर कोशिश करने पर भी मैं अपना हसना रोक न सका। मानवने सोचा कि पहाडका हृदय वीधकर आरपार निकलनेवाले पानीको हम दो दीवारोसे रोक सकेंगे!

मेरी भावनाको समझते ही वह विजयी प्रपात मुझसे कहने लगा, "और मै भी अुसी कारण हसता हू।" पहाडका चीरा हुआ हृदय भग्न होने पर भी भव्य दिखायी देता था। लेकिन मानवकी टूटी हुअी दीवारे अुसके मनोरथकी तरह तिरस्कार और हास्यके भाव पैदा करती थीं। किसी अुद्दाम आदमीको तमाचा पडे और अुसका मुह मुरझाया हुआ दिखाअी दे, अिस तरह अिन दीवारोको अधिक समय तक देखनेकी अिच्छा भी नही होती थी। लबे अर्से तक किसीकी फजीहतके साक्षी भी हम कैसे रह सकते है?

अदर आगे बढनेके साथ अुस विवरकी शोभा बढती ही जाती थी। अितनेमें अुन दो दीवारोके बीच अेक बडा पत्थर गिरता गिरता अटका हुआ दिखाअी दिया। अूपरसे वह कूदा होगा। और पासकी स्नेहमयी दीवारोने अुससे कहा होगा, "अरे भाअी ठहर जा, पानीके खेलमें खलल न पहुचा।" बेचारा क्या करे! लटका हुआ वही खडा है। अुलटे सिर लटकते हुअे पानीका खेल मजबूरन देखना अुसकी किस्मतमे लिखा था। अुस पर तरस खाते हुअे हम आगे बढे तो अेक दूसरा पत्थर अुसी तरह लटकता हुआ और अपनी पीठ पर अपनेसे तीन गुने बडे पत्थरका बोझ लादे रुका हुआ दिखाअी दिया। हम अुसके नीचेसे भी गुजरे। अगर पासकी दीवारें जरा (धसकर) चौडी हो जाती, तो हमारी हड्डिया चकनाचूर हो जाती और दो-चार क्षणके लिअे पानीका रग लाल-लाल हो जाता। फिर कुदरत कहती कि मुझे कुछ भी मालूम नही है। दो-चार मानव यहा आये होगे और अुन्होने अपनी निरर्थक जिज्ञासाकी कीमत चुकाअी होगी। यह बात ध्यानमें रखनेके योग्य थोडी ही है! अुनके जैसे दूसरे मानव जब कभी यहा आ पहुचेंगे तब पत्थरोमें दबे हुअे कअी अवशेष अुनको मिलेंगे। और वे सच्ची-झूठी कल्पनाओ पर सवार होकर अेकाध प्रकरण खडा करेगे। बस और क्या?

चलते-चलते हम थके तो नही, लेकिन ठडे पानीमे नुकीले पत्थरो पर नगे पैर चलते-चलते पैर दुखने लगे अिसका अिनकार नही हो सकता। लेकिन अुस गुफा-प्रवेशकी अद्भुतताका अनुभव करते करते

हम अघा गये। अंदर आगे बढते-बढते भला कितना बढ सकते थे? आखिर आगे बढनेका हौसला मंद हो गया। लेकिन मन कहने लगा, हारकर वापस कैसे जाय? यहा तक आये है तो आरपार जाना ही चाहिये। जो दूसरा सिरा न देखे वह मानवी मन नही है।

आगे बढते ही पाट थोडा चौडा हुआ और पानीकी भीषणता कम हो गयी। असलिअे सयाने बनकर हमने मान लिया कि अब आगेका दृश्य नीरस ही होगा। वहा न गये तो चलेगा। हम वापस लौटे। फिर वही दृश्य, वही डर! वही जिज्ञासा और वही भावनायें!!

अुस गुफासे बाहर निकलते निकलते पूरे सोलह मिनट लगे!!! मैंने अपनी आदतके मुताबिक अिस यात्राके स्मारकके तौर पर दो सुन्दर मुलायम पत्थर ले लिये। और अंधेरेमें तेज कदम बढाते-बढाते घर लौटे। मनमें अेक ही सवाल अुठ रहा था: कौन समर्थ है? ये वज्रकाय पुराने पहाड या यह नम्र किन्तु आग्रही जीवनधर्मी सत्याग्रही नीर?

५३

नागिनी नदी तीस्ता

जब मैं कुछ साल पहले दार्जिलिंग और कालिंगपागकी ओर गया था, तब मैंने तीस्ता नदीका प्रथम दर्शन किया था। प्रथम दर्शनसे ही तीस्ताके प्रति असाधारण प्रेम बध गया। अगर तीस्ताके बारेमें कुछ पौराणिक कथा या माहात्म्य मैं जानता होता तो अुसके प्रति मनमें भक्ति पैदा हो जाती। लेकिन यह तूफानी नदी हिमालयके पहाडोके बीचसे अपना रास्ता निकालती, चट्टानोसे टकराती, प्रवाहके बीच पडे हुअे छोटे-बडे पत्थरोका मथन करती और तरह-तरहकी गर्जना करती हुअी जब दौडती आती है, तब अुसका अुत्साह, अुसका दृढ निश्चय और अुसका अमर्ष देखकर अुसके प्रति प्रेम और आदर बध जाते हैं, भक्ति नही।

जब तीस्ताका प्रथम दर्शन हुआ, तब मनमें संकल्प अुठा कि अिस नदीका पहाडी जीवन कुछ तो देखना ही चाहिये। जोरोंसे बहनेवाली पहाडी नदीके अूपर जो बेंतके या रस्सीके खतरनाक पुल बांधे जाते हैं, अुन पर खडे होकर प्रवाहकी ओर देखनेमें अेक विचित्र अनुभव होता है। अैसा लगता है कि यह पुल नदीके प्रवाहका मुकाबला करते हुअे अूपरकी ओर जोरोंसे दौड रहा है। जितने ज्यादा समय तक हम ध्यानसे देखते हैं, अुतनी ही यह प्रतीप-गामी भ्रांति बढती जाती है।

अेक दिन मैंने मनमें कहा कि अिसे भ्रांति क्यों मानें? यह अेक तरहकी दीक्षा है। अिस अनुभवके द्वारा निसर्ग हमें कहता है, 'जितनी बेपरवाहीसे यह पानी पहाडसे आकर मैदानकी ओर दौड रहा है और सागरको ढूंढ रहा है, अुतनी ही बेपरवाहीसे और अदम्य कुतूहलसे अिस प्रवाहके किनारे-किनारे पूरा खतरा मोल लेकर अूपरको ओर चले जाओ और अिस नदीका अुद्‌गम-स्थान ढूंढ लो।'

जब पहाडकी कोअी नदी सरोवरसे निकलकर आती है, तब अुसे सर-यू या सरो-जा कहते हैं। जब वह पर्वत-शिखरोंकी गोदमें अिकट्ठी हुअी हिमराशिसे निकलती है, तब अुसे हैमवती कहना चाहिये। यों तो पर्वतसे निकलनेवाली सब नदियोंका सामान्य नाम पार्वती है ही। हिमालय-पिताकी अिन सब लडकियोंके नाम अगर अेकत्र किये जायं तो अुनकी संख्या कभी सहस्र हो जायगी।

तीस्ताका असली नाम त्रिस्रोता है। अुत्तर-पूर्व अफ्रीकामें नील नदीके दो अलग-अलग अुद्‌गम हैं और दोनों स्रोत दूर दूरके दो सरोवरोंसे ही निकलते हैं — सफेदरंगी नील और नीलरंगी नील। दोनोंके संगमसे मिश्र देशकी माता बडी नील बनती है। अुसी तरह तीस्ता भी तीन स्रोतोंके संगमसे बनी हुअी है। अेक स्रोतका नाम है 'लाचुंग चू' (चू यानी नदी)। यह नदी 'कान् चेन् झौंगा' शिखरके दक्षिणसे निकलती है। दूसरे स्रोतका नाम है 'लाचेन् चू'। यह नदी पाव हुन् री शिखरके अुत्तरसे निकलकर तथा चो ल्हामो और गोरडामा दो सरोवरोंका जल लेकर रास्ता निकालती-निकालती प्रथम पश्चिमकी ओर बहती है, फिर धीमे-धीमे दक्षिणकी ओर मुडती है।

अिन दोनोका सगम जहा होता है, वहा चुग थागका बौद्ध-मदिर है। लाचून् चू और लाचेन् चू अिन दो नदियोके सगमसे जो नदी बनती है, अुसे पचहिमाकर (कान् चेन् झौगा), सीम् व्हो और सिनो लो चू अिन तीन गगनभेदी शिखरोकी गोदमे जो हिमराशिया हैं अुनका पानी लानेवाली तालूग चू मिलती है, तब अिन तीन स्रोतोंसे तीस्ता बनती है। और फिर वह सीधी दक्षिणकी ओर बहने लगती है। कुछ आगे जाने पर अुसे दाहिनी और बाअी ओरसे छोटी-मोटी अनेक नदिया मिलती हैं। अिनमें महत्त्वकी हैं दिक् चू, रोरो चू, रोगनी चू, रगपो चू, और बडी रगीत चू।

जहा-जहा दो नदियोके सगम होते हैं, वहा-वहा अेक बौद्ध मदिर पाया ही जाता है, जिसे यहाके लोग गोम्पा कहते हैं।

जब मैंने तीस्ताके आकर्षणसे सबसे पहले अिन पहाडोमें प्रवेश किया था, तब मैंने रगीत नदीका सगम और रगपो नदीका सगम देखा था। सगमके दोनो स्रोतोके रग यहा अलग-अलग होते हैं। अबकी बार अिन दो सगमोको तो आख भरके देखा ही, लेकिन सिक्कीमकी राजधानी गगतोकके पूर्वकी नदी रोरो चू और रोगनी नदीका सगम भी मैंने सिंगटगमें देखा। सगम यानी जीवित काव्य।

महाविजय पानेके लिअे अनेक राजाओकी सेनाअें जैसे अेकत्र होती हैं और अुनकी सकल्प-शक्ति बढती है, वैसे ही अिन सब नदियोका जल-भार पाकर तीस्ता नदी जलवती, वेगवती और सकल्पशालिनी बनती है और पहाडोसे लडते-लडते मैदानमें आ पहुचती है। यहा वह शिलीगुडी तक न जाकर जलपायगुडीके रास्ते पाकिस्तानमें प्रवेश करती है और रगपुरका दर्शन करते हुअे आखिरमें ब्रह्मपुत्रसे जा मिलती है।

हमारे पुरखोने नदियोके दो विभाग बनाये हैं। जब कोअी नदी अनेक नदियोका पानी लेकर पुष्ट होती है, तब अुसे युक्तवेणी कहते हैं। सफेद गगा, श्याम यमुना और 'मध्ये गुप्ता' सरस्वती मिलकर प्रयागराजके पास त्रिवेणी बनती है। पजाबमें सिंधु सात नदियोका पानी पाकर युक्तवेणी बनती है। बादमें जाकर जब वह नदी स्वय अनेक विभागोमे बट जाती है और अनेक मुखोंसे समुद्रमें मिलती है,

तब अुसे मुक्तवेणी कहते है। नदियोके जीवनके हम दूसरी तरहसे भी दो विभाग बना सकते है। पहाडोका बद्ध जीवन और खुले मैदानका मुक्त जीवन। गगानदीका पार्वत जीवन हरद्वारके पास खतम होता है। फिर तो जहा जमीन मजबूत है, वहा वह अेक धारा बना लेती है। लेकिन जहा भूमि बगालके जैसी बिना पत्थरवाली और समतल होती है, वहा अुसकी अनेक धारायें भी बनती है। हम कह सकते है कि नदीका पार्वत जीवन कुमारीके जीवनके जैसा अल्हड होता है। मैदानमें जाते ही अनेक खेतोको स्तन्यपान कराते-कराते वह प्रजाओकी माता बनती है। दार्जिलिंग और कालिगपागके पहाडोसे निकलनेके बाद तीस्ताको सिर्फ अेक-दो बधन सहन करने पडते है और वे है — असमकी ओर जानेवाली रेलोके पुलोके। अेक है भारतवर्षका नया बनाया हुआ असमलिकका पुल और दूसरा है हमारा ही बनाया हुआ लेकिन पाकिस्तानके हाथमें गया हुआ रगपुरके नजदीकका दूसरा पुल।

तीस्ता नदीका मैदानी जीवन कुछ विचित्र-सा है। तिब्बतकी बहुपति-प्रथाका शायद अुसे स्मरण है। अेक समय था जब तीस्ता गगा नदीसे मिलती थी। अिन सौ-दो-सौ बरसके अन्दर अुसने अनेक पराक्रम किये है और वहाके लोगोसे 'पागला' नाम भी प्राप्त किया है। आज भी अुसका अेक प्रवाह छोटी तीस्ताके नामसे पहचाना जाता है, दूसरा प्रवाह है बूढी तीस्ता और तीसरा है मरा तीस्ता। अुसने अपना जलभार करतोया नदीको देकर देखा, घाघातको भी दिया। मैदानमें तो वह युक्तवेणी भी बनती है और मुक्तवेणी भी। तीस्ताके चचल स्वभावको पहचानना और अुसका अनुनय करना मनुष्यके लिअे आसान नही है। वह अितना स्थलान्तर करती है कि अुसके अनेक प्रवाहोको स्थायी नाम देना और अुनको याद करना भी मुश्किल है। कहते है कि 'कालिकापुराण' में तीस्ताका जिक्र है। वहा कथा अैसी है कि देवी पार्वती किसी असुरसे लडती थी। वह मत्त असुर कहता था कि मैं शिवजीकी अुपासना करूगा, लेकिन पार्वतीको नही। पार्वतीका और अुस असुरका घोर युद्ध हुआ। लडते-लडते असुरको बडी प्यास लगी। अुसने शिवजीसे प्रार्थना की कि 'प्रभु, मेरी प्यास बुझा

दो! ' और कैसा आश्चर्य! प्रार्थना शिवजीके चरणो तक पहुचते ही पार्वतीके स्तनोसे स्तन्यधारा वहने लगी। वही है हमारी तीस्ता। कहते हैं असुरेश्वरकी तृष्णा बुझानेका काम अिस नदीने किया, अिसलिअे अिसका नाम हुआ तृष्णा और तृष्णाका ही प्राकृत रूप है तीस्ता। हमारे ध्यानमें नही आता कि नदीको कोअी तृष्णा कैसे कह सकता है। 'तृष्णा' का 'तण्हा' हो सकता है। लेकिन णकारका लोप ही हो जाना ठीक नही लगता है।

कुछ भी हो, तीस्ताका जीवन-क्रम शुरूसे आखिर तक आकर्षक और सस्मरणीय है। पहाडोमें जहा ये नदिया बहती हैं, वहा गरमी बहुत रहती है। अिसलिअे मलेरियाके जन्तु, दश-मशक भी बहुत होते हैं। शायद यही कारण होगा कि तीस्ताके नाम कोअी लोकगीत नही पाये जाते हैं।

लेकिन अब तो हम लोगोने विज्ञान-युगमे प्रवेश किया है। मलेरियाके मच्छरोका अिलाज हो सकता है। जहा नदी जोरोसे वहती है, वहा अुस पर यत्रका जीन कसकर अुससे काफी काम लिया जा सकता है। तीस्ताका अुद्गम शायद पाच-सात हजार फुटकी अूचाअी पर है। जब वह पहाडी मुल्क छोडती है, तब अुसकी अूचाअी समुद्रकी सतहसे सिर्फ सात सौ फुटकी होती है। देखते-देखते जो नदी छ' हजार फुटकी अूचाअी खोती है, अुसके पाससे चाहे-सो काम लिये जा सकते हैं। आरेसे लकडी चीरनेका और आटा पीसनेका काम तो ये नदिया करती ही हैं। अब अिनसे बिजली पैदा करनेका बडा काम लिया जायगा। फिर तो सारे सिक्कीम राज्यका रूप ही बदल जायगा।

हमारे धर्मप्राण पूर्वजोकी यत्रबुद्धि भी धर्मकार्यमें ही लगती थी। अेक जगह पर हमने देखा कि पहाडके स्रोतके सामने अेक चक्र रखकर अुसके जरिये 'ओम् मणिपद्मे हु' के जापका लकडीका बल्ला या जाठ घुमाया जाता है। और अिस तरह जो यान्त्रिक जाप होता है अुसका पुण्य यत्रके मालिकको मिलता है।

अैसे पुण्यका बडा हिस्सा नदीको ही मिलना चाहिये।

७-१०-'५६

५४
परशुराम कुंड

भारतकी करीव करीव अुत्तर-पूर्व सीमाके पास लोहित-ब्रह्मपुत्रके किनारे ब्रह्मकुड या परशुराम कुड नामका अेक तीर्थस्थान है। तिब्बत, चीन और ब्रह्मदेशकी सरहदके पास, वन्य जातियोके बीच, भारतीय सस्कृतिका यह प्राचीन शिविर था। पश्चिम समुद्रके किनारे सह्याद्रिकी तराअीमें जिसने ब्राह्मणोको बसाया अैसे भार्गव परशुरामने सारे भारतकी यात्रा करते करते अुत्तर-पूर्व सीमा तक पहुचकर ब्रह्मकुडके पास शाति पायी। यह है अिस स्थानका माहात्म्य।

जबसे मैं असम प्रान्तमें जाने लगा तबसे परशुराम कुड जाकर स्नान-पान-दानका सुख पानेकी मेरी अिच्छा थी। राजनैतिक, भौगोलिक और सामयिक कठिनाअियोके कारण आज तक वहा न जा सका था। लेकिन जब सुना कि महात्माजीकी चिता-भस्मका विसर्जन अन्यान्य तीर्थोके जैसा परशुराम कुडमें भी हुआ है, तब वहा जानेकी अुत्कठा बढी। अिस साल सुना कि असम प्रान्तके कअी लोकसेवक १२ फरवरीको सर्वोदय मेलेके निमित्त वहा जानेवाले हैं, तब तो मनका निश्चय ही हो गया कि अिस मौकेको छोडना नही चाहिये। पलाश-बाडीके पास कअी बरसोसे चलनेवाले मोमान आश्रमके श्री भुवनचन्द्र दासको मुझे बुलानेमे कुछ भी तकलीफ न पडी।

बार बार भू-भ्रमण करके भूगोल-विद्याको बढानेवाले हमारे जो प्रधान भूगोलविद् पुराणोमे पाये जाते है, अुनमें नारद, व्यास, दत्तात्रेय, परशुराम और बलरामके नाम सब जानते हैं। अिनमें भी व्यास और परशुराम अपनी-अपनी विभूतिकी विशेषताके कारण चिरजीवी हो गये है। भारतीय सस्कृतिके सगठन और प्रचारका कार्य महर्षि व्यासने जैसा किया वैसा और किसीने नही किया होगा। अिसीलिअे तो अुनको वेद-व्यास (organiser) का अुपनाम मिला। अुनका असली नाम था कृष्ण द्वैपायन।

और परशुराम थे अगस्त्य ऋपिके जैसे सस्कृति-विस्तारक (pioneer of culture)। प्राचीन कालमें मनुष्य-जातिको जीनेके लिअे दारुण युद्ध करना पडता था—जगलोके साथ और जगलोके पशुओके साथ। जगलोने आक्रमण करके मानव-सस्कृतिको कअी वार हजम किया है। अिसका सवूत आज भी कम्वोडियामें आन्कोर वाट और आन्कोर थॉममे मिलता है। अूचे-अूचे राजप्रासाद और बडे बडे मदिरोके शिखरो तक मिट्टीके ढेर लग गये, और जगलके महा-वृक्षोने अपनी पताका अुन पर लगा दी। हमारे यहा भी असख्य छोटे-वडे मदिर अश्वत्थ और पीपलकी जडोके जालमे फसकर टेढे-मेढे हो गये पाये जाते है।

अैसे युगमें परशु (कुल्हाडी) लेकर मानव-सस्कृतिका रक्षण और विस्तार करनेका काम किया था भगवान परशुरामने। पुराणकी कथा कहती है कि जन्मके साथ परशुरामके हाथमें परशु था। धनी मा-वापके घर जिसका जन्म हुआ है अुसके वारेमें अग्रेजीमे कहते हैं कि 'He is born with a silver spoon in his mouth'—चादीका चम्मच मुहमें लेकर ही यह लडका जन्मा है। अैसी ही वात परशुरामकी थी।

परशुराम जातिका ब्राह्मण था, लेकिन अुसके सव सस्कार क्षत्रियके थे। जगलोका नाश करनेके लिअे कुल्हाडी चलाते चलाते अुसने सम्राट् सहस्रार्जुनके हजार हाथो पर भी कुल्हाडी चलायी। और क्षत्रियोके आतकसे चिढकर अुसने अुनके विरुद्ध २१ वार युद्ध किया। क्षात्र पद्धतिसे क्षत्रियोका नाश करनेकी कोशिश अिस क्षत्रिय ब्राह्मणने २१ वार की। अुसीका अनुभव अुसके अनुगामी ब्राह्मण क्षत्रिय गौतम वुद्धने अेक गाथामें ग्रथित किया है

नहि वेरेन वेरानि समतीध कुदाचन ।

अिस परशुरामके क्रोधी पिताने अपने अन्य पुत्रोको आज्ञा दी कि 'तुम्हारी माता कुलटा है, अुसे मार डालो।' अुन्होने अिनकार किया। जमदग्निकी क्रोधाग्नि और भी वढ गयी। अुसने परशुरामकी

ओर मुडकर कहा, 'बेटा, तुम मेरा काम करो। अिस रेणुकाको मार डालो।' कुल्हाडी चलानेकी आदतवाले आज्ञाधारी पुत्रको सोचना नही पडा। अुसने माताका सिर तुरन्त अुडा दिया। पिता प्रसन्न हुअे और कहा, 'चाहे जितने वर माग। तूने मेरा प्रिय काम किया है।' पुत्रको अब मौका मिल गया। पिताकी सारी तपस्या चार वरमे अुसने निचो ली। 'मेरी माता फिरसे जीवित हो। मेरे भाअियोको आपने शाप देकर जड पाषाण बनाया है वे भी जीवित हो, अपनी हत्या और सजाकी बात वे भूल जाय। मै मातृहत्याके पापसे मुक्त हो जाअू, और चिरजीवी बनू।' पिताने कहा, 'और तो सब दे दूगा, लेकिन मातृ-हत्याका पाप धो डालनेकी शक्ति मेरी तपस्यामे भी नही है।' मायूस होकर परशुराम वहासे चला गया। आगे जाकर परशुधर रामको धनुर्धर रामने परास्त किया, क्योकि युद्धशास्त्र बढ गया था। परशुकी अपेक्षा धनुष-बाणकी शक्ति अधिक थी, और दूर तक पहुचती थी। परशुरामने भारत-भ्रमणमे सारी आयु बितायी। अनेक तीर्थोका और सतोका दर्शन किया। चित्तवृत्तिमे अुपशमका अुदय हुआ और लोहित-ब्रह्मपुत्रके किनारे ब्रह्म-कुडमें अुसके हाथकी कुल्हाडी छूट गयी। यही शस्त्र-सन्यासके अिस तीर्थस्थानका माहात्म्य है। परशु-रामकी जीवन-कथामें पश्चिम किनारेसे लेकर अुत्तर-पूर्व सिरे तकका भारतका, किसी जमानेका, सारा अितिहास आ जाता है। परशुराम कुडकी यात्रा करके कअी साधु-सतोने यहाकी वन्य जातियोको भारतकी सस्कृतिके सस्कार दिये है। अिस प्रदेशका लोक-मानस कहता है कि रुक्मिणी हमारे यहाकी ही राजकन्या थी, अिसलिअे श्रीकृष्ण हमारे दामाद होते है।

जिस तरह प्राचीन कालके सास्कृतिक अग्रदूत यहा आये, वैसे 'अवेर' का अुपदेश करनेवाले बुद्ध भगवानके शिष्य भी यहा आये होगे। बौद्ध भिक्षु हिमालय लाघकर तिब्बत भी गये थे, और जहाजके रास्ते चीन भी गये थे। अुसके बाद असम प्रान्तमे अहिंसा धर्मकी नयी बाढ आयी श्री शकरदेवके जमानेमें। श्री शकरदेव जन्मसे शाक्त थे। अुस पथके दुराचारसे अूबकर वे वैष्णव हुअे और अुन्होने सारे

असम प्रान्तमे धर्मोपदेश, नाट्य, सगीत, चित्रकारी आदि द्वारा समाज-शुद्धिका और सस्कृति-विस्तारका काम दीर्घकाल तक किया। अिसी तरह चैतन्य महाप्रभुके वैष्णव धर्मका प्रचार मणिपुरकी तरफ हुआ। शकरदेवका प्रभाव असम प्रान्तके पर्वतीय लोगोमें पडना अभी वाकी है।

अहिसा-धर्मकी ताजी और सबसे वडी वाढ महात्मा गाघीजीके सत्याग्रह-स्वराज्य-आन्दोलनसे असम प्रान्तमें पहुची। अुसका अधिकसे अधिक असर पडना चाहिये खासी, नागा, मिशमी, अवोर, डफला आदि पहाडी जातियो पर। अिसके लिअे शिलाग, कोहीमा, मणिपुर, सादिया आदि प्रधान केन्द्रोके अिर्दगिर्द अनेक आश्रमोकी स्थापना करना जरूरी है।

अिनमें सादिया अेक अैसा स्थान है जिसके आसपास ब्रह्मपुत्रको मिलनेवाली अनेक नदियो और अुपनदियोका पखा वनता है। नोआ डिहग, टेगापानी, लोहित, डिगारू, देवपाणी, कुण्डिल, डिवग, सेसेरी, डिहग, लाली आदि अनेक नदिया अपना पानी दे देकर ब्रह्मपुत्रको जलपुष्ट वनाती हैं। सादियासे अनेक रास्ते अनेक दिशामें जाकर अनेक वन्य जातियोकी सेवा करते हैं। खुद सादियाके अिर्दगिर्द जो चुलेकाटा मिशमी लोग रहते हैं वे स्वभावके सौम्य है। अिसीलिअे शायद अुनके अदर सभ्य समाजके कअी दुर्गुण और रोग फैल गये है। मूल ब्रह्म-पुत्रका अुत्तरी नाम दिहग है। अुसके भी अूपर जव वह मानस सरो-वरसे निकलकर हिमालयके समानातर पूरवकी ओर वहती आती है, तब अुसे सानपो कहते है।

अिन सव नदियोके किनारे हमारे जो पहाडी भाअी रहते हैं अुनको अपनाना हमारा परम कर्तव्य है। यह काम सरकारके जरिये पूरी तरह नही होगा। अुसके लिअे परशुराम और बुद्धके जैसे सस्कृति-धुरीण महापुरुपोकी आवश्यकता है। अर्थात् अुनके पास नयी दृष्टि, नयी शक्ति और नया आदर्श होना चाहिये।

यह सारा काम कौन करेगा ? भारतके नवयुवकोका और युव-तियोका यह काम है। अीसाअी मिशनरियोने अपनी दृष्टिसे भला-वुरा

बहुत कुछ काम किया है। अुनकी नीयत हमेशा साफ रही है, अैसा भी हम नही कह सकते। अैसी हालतमें देशके नेताओको चाहिये कि वे दीर्घ दृष्टिसे अिन सब स्थानोका निरीक्षण करे और नवयुवकोको मानवताके नामसे शुद्ध सस्कृतिकी प्रेरणा देनेके लिअे अिस प्रदेशमें भेजें।

वर्धा, २१-३-'५०

५५
दो मद्रासी बहनें

अिन दो बहनोके प्रति मेरी असीम सहानुभूति है। मद्रास शहरने जैसा अिनका महत्त्व बढाया है, वैसी ही अिनकी अुपेक्षा भी की है।

यो तो मद्रास शहरका महत्त्व भी कृत्रिम है। न अुसके पास कोअी सुन्दर पर्वत हे, न कोअी महानदीकी खाडी है। तिजारतकी दृष्टिसे या फौजी दृष्टिसे मद्रासका कोअी असली महत्त्व नही है। लेकिन अितिहास-क्रमके कारण अग्रेजोको यही स्थान पसन्द करना पडा। यहाके स्थानिक लोगोका प्रेम अिस शहरके प्रति कम था अैसा तो कोअी नही कह सकते। जिन भारतीयोने या धीवर आदिवासियोने अिस शहरका नामकरण 'चन्नपट्टनम्' यानी सुवर्णनगरी किया होगा, क्या अुन्होने अिस शहरके भाग्यके बारेमें पहलेसे सोचा होगा?

कुछ भी हो, जबसे अग्रेजोने यहा अपनी कोठी डाली तबसे अिस शहरका भाग्य और वैभव बढता ही गया है और अैसे शहरकी सेवा करनेवाली अिन दो बहनोका भाग्य भी बदलता गया है। अेकका नाम है 'कूवम्' और दूसरीका नाम है 'अड्यार'। ये दोनो नदिया पूर्वगामी होकर बगालके अुपसागरसे यानी पूर्व-समुद्रसे मिलती हैं।

मद्रास और अुसके अिर्दगिर्दकी भूमि बिलकुल समतल है। यहा छोटे-बडे अनेक तालाव व सरोवर हैं। लेकिन अव अुनकी कोअी शोभा नही रही।

तर्क-बुद्धि कहती है कि जमीन अगर समतल हो और पथरीली न हो, तो नदीको अपना पात्र सीधा खोदनेमे या चलानेमें कोअी वाधा नही होनी चाहिये। लेकिन नदियोका अैसा नही है। कुछ हद तक नदी अेक ओर झुकेगी, वहासे थककर मोड लेगी और दूसरी ओर पहुच जायगी। फिर आगे वढते हुअे दिशा बदल देगी। और अिस तरह नागमोडी वक्रगतिसे आगे बढती जायगी।

पहाडी नदियोकी तो लाचारी होती है। पर्वत और टेकरियोके बीच जहासे मार्ग मिले, अुसी मार्गसे जानेके लिअे वे वाध्य होती हैं। तीस्ता कहेगी, "मै स्वभावसे नागिनी नही हू। वक्रगति मेरा स्वभाव नही, किन्तु वह मेरा भाग्य है।" काश्मीरमें बहनेवाली वितस्ता या झेलम अपना अैसा बचाव नही कर सकेगी। करीव करीब चक्राकार घूमते जाना और आगे वढनेका तनिक भी अुत्साह नही रखना, यह है काश्मीर-तल-वाहिनी वितस्ताका स्वभाव। बिहारमे वहनेवाली असख्य नदियोके वारेमे भी यही कहा जा सकता है। किसी समय मुझे विहार प्रातमें अनेक जगह हवाअी जहाजसे मुसाफिरी करनी पडी थी। पता नही कितनी बार विहारके आकाशको मैंने अनेक दिशाओंसे वीध दिया होगा। हवाअी-जहाजकी दूर दूरकी लम्बी मुसाफिरीमे भी काफी अूचाअीसे मैंने वगाल और विहारकी नदिया देखी हैं और अुनका वक्र-मार्ग-नैपुण्य देखकर अुनका आदर किया है।

भारत-भूमिका अेक बडा मानचित्र वनाकर अुस पर अगर केवल नदियोके मार्गकी रेखाअें खीची जायें तो वह वक्र-रेखाओंका महोत्सव बडा ही चित्ताकर्षक होगा। नदीको दाहिनी ओर और वायी ओर मुडे विना सतोप ही नही होता। अेक ओरके अूचे किनारेको घिसते जाना और दूसरी ओरके निम्न किनारेको हर साल डुबोकर कुछ समयके लिअे वहा जल-प्रलयका दृश्य खडा करना यह नदियोकी वार्षिकी क्रीडा ही है।

लेकिन जब नदिया बडे-बडे शहरोकी बस्तीमे फस जाती है, अथवा दयालु होकर अपने दोनो ओर मनुष्यको बसने देती है, तब अुनका यह स्वच्छद विहार सदाके लिअे बद हो जाता है और तबसे अुनका जीवन तागा खीचनेवाले घोडेके जैसा हो जाता है। अैसी हालतमें नदिया अगर अपना मोड कायम रखे तो भी अुनकी शोभा तो नष्ट हो ही जाती है।

लदनमें टेम्स नदी, पेरिसमें सीन नदी और लिस्बनमे टेगस नदी अिन तीनोकी बधन-दुर्दशा देखकर मेरा हृदय कअी बार रोया है। और जब मानिनी और स्वच्छद विहारिणी नील-नदी लाचार होकर अल्काहेरा (कायरो) शहरके बीचसे जाती है, तब तो दु खके साथ क्रोध भी जाग्रत होता है। और नदीका अपमान करनेवाली मानव-जातिका शासन कैसे किया जाय अैसे विचार भी मनमे अुठते है।

अड्यार और कूवम् अिन दोमे से कूवम्को बधनका दु ख ज्यादा सहन करना पडा है, क्योकि वह शहरके बीचसे घूमती है। अड्यार शहरके दक्षिण किनारे पर होनेसे अुसे कुछ अवकाश मिला है।

लेकिन — यहा पर भी लेकिन आ गया है — जहा मनुष्यने अपमान नही किया, वहा अिस सरिताका सरित्पतिने अपमान किया है। विचारी अुत्साहके साथ समुद्रको मिलने जाती है और बेकदर समुद्र अूची-अूची लहरोके साथ रेत ला-लाकर अुसके मागमे अेक बहुत बडा बाध या सेतु खडा कर देता है।

देवी वासतीका ब्रह्मविद्या-आश्रम जब सबसे पहले मै देखने गया था, तब सागर-सरिता-सगमकी भव्यता देखनेके हेतु नदीके मुख तक पहुच गया था। और क्या देखता हू — खडिता अड्यार अपना पानी ला-लाकर मार्ग-प्रतीक्षा कर रही है और समुद्र अपने खडे किये हुअे बाधके अुस ओर लहरोका विकट हास्य हस रहा है। समुद्रके प्रति मनमें क्रोध तो आया ही। क्या अिसमे तनिक भी दाक्षिण्य नही है? थोडा-सा तो मार्ग देता। लेकिन सरिता और सरित्पतिके बीच फैले हुअे सेतु परसे चलते चलते मनमें यही विचार आया कि अड्यारके अपमानमें मैं भी शरीक हू। सेतु परसे अुस पार जानेके

वाद वापस तो आना ही पडा । अुसके वाद आज तक कअी बार मद्रास गया हू, भगवती अड्यारका दर्शन भी किया है, लेकिन अुस वाघ परसे जानेका जी ही नही हुआ ।

कूवम्‌के पानीसे अड्यारका पानी ज्यादा स्वच्छ मालूम होता है। वहाकी हवा स्वच्छ होनेसे पानी चमकीला भी दीख पडता है। अिस नदीके वीच अुत्तरकी ओर अेक लक्ष्मीपुत्रका सफेद प्रासाद है। वह नदीकी शोभाको भ्रष्ट नही करता। नदीके कारण वह ज्यादा अुठाव-दार हो गया है।

मै जव जव अड्यार गया हू, अुसके किनारेके नारियलका मीठा पानी मैने पिया है और अुसीको अुस लोकमाताका प्रसाद माना है। अड्यारके साथ कूवम्‌का दर्शन भी होता ही है। लेकिन अुसके लिअे तो आज तक मनमे दया ही दया पैदा हुअी है, हालाकि मद्रासके सेंट जॉर्ज फोर्टके कारण अुसकी शोभा साधारण कोटिकी नही है।

अग्रेजोने अड्यारसे लेकर कूवम् तक अेक छोटी नहर दौडायी है, जिसे अुन्होने 'वकिंगहेम केनाल' का नाम दिया है। अिस केनालसे क्या लाभ हुआ है सो तो मै नही जानता। लेकिन अुसका नाम जितनी दफा मैने सुना अुतनी दफा वह मुझे अखरा ही है।

ये नदिया मद्रास शहरके वीच न होती तो शायद अिन्हें मै श्रद्धाजलि भी नही दे पाता। लेकिन अिनका माहात्म्य और सौन्दर्य वढानेका काम मद्रासके हाथो नही हो सका। मद्रासने अिनसे सेवा ली, लेकिन अिनकी सेवा नही की, यह विषाद तो मद्रासके वारेमे मनमे रह ही जाता है।

२ जून, १९५७

५६

प्रथम समुद्र-दर्शन

पिताजीका तबादला सातारासे कारवार हो गया और हम लोगोने सातारासे हमेशाके लिअे विदा ली। घर पर नरशा नामका अेक बैल था। अुसे हमने मामाके घर बेलगुदी भेज दिया। महादूको छुट्टी देनी ही पडी। बेचारेने रो-रो कर आखे सुर्ख कर ली। नौकरानी मथुराको छोडते समय माने अुसको अपनी अेक पुरानी किन्तु अच्छी साडी दे दी और अुसने हम सबको बहुत दुआये दी। घरके बहुत सारे सामान-असबाबको ठिकाने लगाकर हम पहले शाहपुर गये और वहा कुछ रोज रहकर वेस्टर्न अिण्डिया पेनिनशुलर रेलवेसे मुरगाव गये। रास्तेमें गुजीके स्टेशन पर पानीके फव्वारे छूट रहे थे, जिन्हे देखनेमें हमें बडा मजा आया। लोंढे पर गाडी बदल कर हम डब्ल्यू० आअी० पी० रेलवेके डिब्बेमें बैठ गये।

गोवा और भारतकी सरहद पर कैसल रॉक स्टेशन है। वहा पर कस्टमवालोने हम सबकी तलाशी ली। हमारे पास चुगीके लायक भला क्या हो सकता था? लेकिन सफरमें बच्चोके खानेके लिअे डिब्बे भर-भरकर छोटे-बडे लड्डू लिये थे। अुन्हे देखकर कस्टम्सके सिपाहीके मुहमें पानी भर आया। अुसने नि:सकोच लड्डू हमसे माग ही लिये। वह बोला, "आपके ये लड्डू हमे खानेको दे दीजिये।" मैंने सोचा कि हमारे लड्डू अब यही पर खतम हो जायेगे। माका दिल पिघल गया और वह बोली, "ले भैया, अिसमे क्या बडी बात है?" लेकिन पिताजीने बीचमें दखल देते हुअे कहा, "दूसरे किसीको भी दे दो, लेकिन अिस सिपाहीको देना तो रिश्वत देने जैसा है।"

सिपाही बोला, "हम किसीसे कहने थोडे ही जायेगे? आपके पास चुगीके लायक चीजे मिली होती और हमने आपसे चुगी वसूल न की होती, तो आपका लड्डू देना रिश्वतमें शुमार हो जाता।"

पिताजीका कहना न मानकर माने अुन तीनोको अेक-अेक बडा लड्डू दिया। घीमे तले हुअे और चीनीकी चाशनीमे पगे हुअे लड्डू अुन वेचारोने शायद अुससे पहले कभी खाये न होगे। अुन्होने लड्डुओके टुकडे अपने मुहमे ठूसकर अपने गालोके लड्डू वना लिये।

पिताजीकी ओर देखकर मा बोली, "क्या मै घरके चपरासियोको खानेको नही देती थी? ये तो मेरे लडकोके समान है। अिन्हें खानेको देनेमे शर्म किस वातकी? आज तक अैसा कभी नही हुआ कि किसीने मुझसे कुछ मागा हो और मैने देनेसे अिनकार किया हो। आज ही आपकी रिश्वत कहासे टपक पडी?"

कैसल रॉकसे लेकर तिनअी घाट तककी शोभा देखकर आखे तृप्त हो गयी। यह कहना कठिन है कि अुसमें देखनेका आनन्द अधिक था या अेक-दूसरेको वतानेका। हमने दाहिनी तरफकी खिडकियोसे बायी तरफकी खिडकियो तक और फिर बायी तरफकी खिडकियोसे दाहिनी तरफकी खिडकियो तक नाच-कूदकर डिब्बेमें बैठे हुअे मुसाफिरोके नाकों-दम कर दिया।

फिर आया दूध-सागरका प्रपात। वह तो हमसे भी जोरशोरसे कूद रहा था। हमने अिससे पहले कोअी जल-प्रपात नही देखा था। अितना दूध वहता देखकर हमको बडा मजा आया। हमारी रेलगाडी भी वडी रसिक थी। प्रपातके बिलकुल सामनेवाले पुल पर आकर वह खडी हुअी और पानीकी ठडी-ठडी फुहार खिडकीमे से हमारे डिब्बेमें आकर हमको गुदगुदाने लगी। अुस दिन हम सोनेके समय तक जल-प्रपातकी ही वाते करते रहे।

हम मुरगाव पहुच गये। आजकल मुरगावको लोग मार्मागोवा कहते है। हम स्टेशन पर अुतरे और रेलकी वहुतसी पटरियोको लाघकर अेक होटलमें गये। वहा भोजन करनेके वाद मै अिधर-अुधर पडी हुअी सीपिया लेकर खेलने लगा। अितनेमें केशू दौडता हुआ मेरे पास आया। अुसकी विस्फारित आखें और हाफना देखकर मुझे लगा कि अुसके पीछे कोअी वैल पडा होगा।

अुसने चिल्लाकर कहा, 'दत्तू, दत्तू जल्दी आ! जल्दी आ! देख, वहा कितना पानी है! अरे फेंक दे वे सीपिया। समुद्र है समुद्र! चल मै तुझे दिखा दू।' बचपनमे अेकका जोश दूसरेमे आ जानेके लिअे अुसके कारणको जान लेनेकी जरूरत नही हुआ करती। मुझमे भी केशू जैसा जोश भर गया और हम दोनो दौडने लगे। गोदूने दूरसे हमको दौडते देखा तो वह भी दौडने लगा, और हम तीनो पागल जोर-जोरसे दौडने लगे।

हमने क्या देखा! सामने अितना पानी अुछल रहा था जितना आज तक हमने कभी नही देखा था। मै आश्चर्यसे आखे फाडकर बोला, 'अबबबब ! कितना पानी!' और अपने दोनो हाथोको अितना फैलाया कि छातीमे तनाव पैदा हो गया। केशू और गोदूने भी अपने अपने हाथोको फैला दिया। अगर अुस हालतमे पिताजीने हमको देख लिया होता, तो अुन्होने कैमेरा लाकर हमारी तस्वीरें खीच ली होती। 'कितना पानी है! अितना सारा पानी कहासे आया? देखो तो, धूपमे कैसा चमकता है!' हम अेक-दूसरेमे कहने लगे। बडी देर तक हम समुद्रकी तरफ देखते रहे फिर भी जी नही भरा। अब अिस पानीका किया क्या जाय? बिलकुल क्षितिज तक पानी ही पानी फैला हुआ था और अुससे चुप भी न रहा जाता था। अुसके साथ हम भी नाचने लगे और जोर-जोरसे चिल्लाने लगे, "समुद् द्र! समुद् द्र!! समुद् द्र!!!" हर वार 'समुद्र' शब्दके 'मुद्र' को अधिकसे अधिक फुलाकर हम बोलते थे। समुद्रकी विशालता, लहरोके खेल और दिगन्तकी रेखाका दृश्य पहली ही वार देखनेको मिला। अिससे हमें जो अत्यधिक आनन्द हुआ अुसे प्रकट करनेके लिअे हमारे पास अन्य कोअी साधन ही न था। जिस तरह समुद्रकी लहर अुभरकर, फूल-कर फट जाती है, अुस तरह हम समुद्रकी रट लगाकर तालके साथ नाचने लगे, लेकिन हम लहरे तो थे नही, अिसलिअे अन्तमे थक कर अिधर-अुधर देखने लगे तो अेक तरफ अेक अेक कमरे जितनी बडी अीटे चुनी हुअी हमने देखी। अुनमे से कुछ टेढी थी तो कुछ सीधी। अुस समय मुझे दुकानमें रखी हुअी साबुनकी बट्टियो और

दियासलाअीकी डिब्बियोंकी अुपमा सूझी। वास्तवमें वह मुरगावका धक्का था, जो बडी बडी अीटोंसे बनाया गया था। शिवजीके सांडकी तरह समुद्रकी लहरें आ आकर अुस धक्केके साथ टक्कर ले रही थीं।

हम घर लौटे और समुद्र कैसा दिखता है अुसके बारेमें घरके अन्य लोगोंको जानकारी देने लगे। समुद्रके नक्कारखानेमें बेचारे दूध-सागरकी तूतीकी आवाज अब कौन सुनता?

सूर्य समुद्रमें डूब गया। सब जगह अंधेरा फैल गया। हम खाना खाकर धक्केके साथ लगे हुअे जहाज पर चढ गये। लोहेके तारोंका जो कठडा जहाजमें होता है, अुसके पासकी बेंच पर बैठकर गोंदू और मैं यह देखने लगे कि अूंट जैसी गर्दनवाले भारी बोझ अुठानेके यंत्र (क्रेन) बडे-बडे बोरोंको रस्सोंमें बांधकर कैसे अूपर अुठाते हैं और अेक तरफ रख देते हैं। हमारे सामनेके क्रेनने अेक बडे ढेरमें से बोरे निकालकर हमारे जहाजके पेटको भर दिया। यंत्रोंकी घर्र घर्र आवाजके साथ मल्लाह जोर जोरसे चिल्लाते, 'आवेम! आवेम! — आऱ्या! आऱ्या!' जब वे 'आवेम' कहते तब क्रेनकी जंजीर कस जाती और 'आऱ्या' कहते तब वह ढीली पड जाती। कहते हैं कि ये अरबी शब्द हैं।

हम यह दृश्य देखनेमें मशगूल थे कि अितनेमें हमारे पीछेसे, मानो कानमें ही 'भों ओं ओं ' की बडे जोरकी आवाज आयी। हम दोनों डरके मारे बेंचमें झट कूद पडे और पागलकी तरह अिधर-अुधर देखने लगे। हमारे कानोंके परदे गोया फटे जा रहे थे। अितने नजदीक अितने जोरकी आवाज बर्दाश्त भी कैसे हो? कहां तो दूरसे सुनाअी देने-वाली रेलकी 'कू अू अू ' वाली सीटी और कहां यह भैंसकी तरह रेंकनेवाली 'भों ओं ' की आवाज! आखिरकार वह आवाज रुक गअी, लकडीका पुल पीछे खींच लिया गया, आने-जानेके रास्ते परसे निकाला हुआ कटीला कठडा फिरसे लगा दिया गया और 'धस धस' करते हुअे हमारे जहाजने किनारा छोड दिया। देखते देखते अंतर बढने लगा। किसीने रूमालको हवामें फहराकर तो किसीने सिर्फ हाथ हिलाकर अेक-दूसरेसे विदा ली। अैसे मौकों पर चंद लोगोंको

कुछ न कुछ भूली हुअी बात जरूर याद आ जाती है। वे जोर-जोरसे चिल्लाकर अेक-दूसरेको वह बताते हैं और दूसरा आदमी अुसकी तसल्लीके लिअे 'हा हा' कहता रहता है, फिर भले अुसकी समझमें खाक भी न आया हो।

जमीनसे हमारा संबंध कट गया। और हम समुद्रके पृष्ठ पर जहाजके जरिये आगे बढने लगे। यह सब मजा देखकर हम अपनी अपनी जगहों पर बैठ गये। जहाजमें सब जगह बिजलीकी बत्तियां थीं। रेलमें अलग ढंगके दीये थे। वहां खोपरेके और मिट्टीके मिले हुअे तेलमें जलनेवाली बत्तियां काचकी हंडियोंमें लटकती रहती थीं। यहां दीवारोंमें छोटे छोटे काचके गोलोंके अंदर बिजलीके तार जलकर धीमी रोशनी दे रहे थे।

समुद्रका और समुद्र-यात्राका वह हमारा प्रथम अनुभव था।

५७

छप्पन सालकी भूख

सन् १८९३ के करीब मैं पहली बार कारवार गया था। मार्मागोवा बंदरगाह परसे जब मैंने पहली बार चमकता समुद्र देखा, तब मैं अवाक् हो गया था। रातको नौ बजे हम स्टीमरमें बैठे। स्टीमरने किनारा छोडकर समुद्रमें चलना शुरू किया, और मेरा दिमाग भी अपना हमेशाका किनारा छोडकर कल्पना पर तैरने लगा। सुबह हुअी और हम कारवार पहुंचे। स्टीमरसे नावमें अुतरना आसान न था। प्रत्येक नावके साथ अुलांडियां (outriggers) बंधी हुअी थीं। मेरे मनमें सवाल अुठा कि जान-बूझकर जिस तरहकी असुविधा क्यों की होगी? बादमें मैं अुलांडियोंकी अुपयोगिताको समझ सका।

सफरकी थकान अुतरते ही हम समुद्रके किनारे फिरने जाने लगे। किनारे परसे समुद्रमें तीन पहाड दिखाअी देते थे। अुनमें से अेक देवगढका था, दूसरा मधलिंग-गढका और तीसरा था कूर्मगढका। देवगढ

पर दीप-स्तभ था। यह अुसकी विशेपता थी। अिस दीप-मीनारके पास अेक पतली ध्वज-डडी मुश्किलसे दीख पडती थी। समुद्र-किनारे खेलते-खेलते थक जानेके बाद दीप-मीनारका जलता दीया सर्व प्रथम देखनेकी हमारे बीच होड लगती थी। कभी-कभी मनमे यह विचार अुठता था कि पानीके अिसी विशाल पट परसे जब हम कारवार आये तब रातको स्टीमरमे से देवगढ क्यो न देखा?

किसी स्टीमरके आनेके वक्त देवगढकी ध्वज-डडी पर लाल ध्वज चढाया जाता था। अुसे देखकर कारवार बदरगाहके नजदीककी ध्वज-डडी पर भी ध्वज चढाया जाता था। यहाका आदमी दूरबीन लेकर देवगढकी ओर ताकता रहता था। वहा ध्वज दिखाअी देने पर वह यहा भी ध्वज चढाता था। कभी-कभी मैं दूर देवगढ पर चढा हुआ ध्वज देख सकता था और भाअू गोदूको आश्चर्यचकित कर देता था।

अेक दफा मैंने पिताजीसे पूछा, "देवगढ पर दीया कौन जलाता है? ध्वज कौन फहराता है?" अुन्होंने जवाब दिया, "वहा अेक खास आदमी रखा गया है। शाम होते ही वह दीया जलाता है। दूरसे आती हुअी आगबोटको देखकर वह ध्वज चढाता है। देवगढका दीया देखकर नाविकोको पता चलता है कि कारवारका बदरगाह आ गया। वे जानते हैं कि दीयेके नीचे चट्टान है। अिसलिअे वे दीयेके पास नही जाते।"

"दीप-मीनारकी सभाल करनेवाले मनुष्यके लिअे खानेकी क्या सुविधा होगी? वह मीठा पानी कहासे लाता होगा?" मैंने सवाल किया।

"नावमें बैठकर खाने-पीनेकी सब चीजे वह कारवारसे ले जाता है। देवगढ पर शायद टाका या कुआ होगा, जिसमे बारिशका पानी जमा कर रखते होंगे।"

"क्या हम वहा नही जा सकते? चले, हम भी अेक दफा वहा हो आये। वहा हमेशा रहनेमें तो कैसा मजा आता होगा। शाम होते ही दीया जलाना, और आगबोटकी सीटी बजते ही ध्वज चढाना। बस,

अितना ही काम? बाकीका सारा समय अपना! हम जिस तरह चाहे व्यतीत कर सकते हैं। न कोअी हमसे मिलने आवेगा, न हम किसीसे मिलने जायगे। चले, अेक दफा हम वहा हो आये।"

पिताजीने हमारे घरके मालिक रामजीसेठ तेलीसे पूछा। अुन्होने अपने जहाजके कप्तानसे बातचीत की। और दूसरे ही दिन देवगढ जाना तय हुआ। हम सब गाडीमे बैठकर बदरगाह पर गये। बडी किश्तीमे बैठने पर खूब मजा आया। पाल फैले और डोलते डोलते हम चले। जहाज सुन्दर डोलता था, लेकिन जल्दी आगे बढनेका नाम न लेता था। बहुत समय लगा तो पिताजीने रामजीसेठसे कारण पूछा। रामजीसेठने कप्तानसे पूछा। अुसने कहा, "पवन अनुकूल नही है, टेढा है। पवनकी दिशाका खयाल करके पाल चढाये गये है। जहाज आगे बढता है, लेकिन देवगढ पहुचते-पहुचते शाम हो जायेगी।" मुझे तो कोअी आपत्ति न थी। सारा दिन डोलनेका आनन्द मिलेगा और शाम होते ही दीप-मीनारका दीया नजदीकसे देखनेको मिलेगा। लेकिन अितनी अच्छी बात पिताजीके ध्यानमे न आयी। अुन्होने कहा "यह तो ठीक नही है।" कप्तानने कहा, "पवन प्रतिकूल है। अिसके सामने हम क्या करे? थोडी दूर जानेके बाद यदि यही पवन जोरसे बहने लगा तो अितना अतर काटना भी मुश्किल है।" रामजीसेठने पिताजीसे पूछा, "अब क्या करे?" पिताजीने कहा, "और कोअी अुपाय ही नही है। वापस जायेगे।"

हुक्म हुआ, "वापस चलो।" पालोकी व्यवस्था बदल दी गयी। किस तरह यह सब फेरफार किया जाता है, यह देखनेमें मैं मशगूल था। अितनेमे हमारा जहाज धक्के तक वापस आ पहुचा। अितनी दूर जानेमे अेक घटा लगा था। लेकिन वापस आनेमें पाच मिनट भी न लगे! घर लौटते वक्त सिर्फ तागेके घोडे ही जल्दी नही करते।

हम जैसे गये वैसे ही खाली हाथ लौट आये। फीके मुह मैं घर आया, मानो अपनी फजीहत हुअी हो। सहपाठियोंसे मैंने अितना भी न कहा कि हम देवगढ जानेको निकले थे।

हमारे कवि तो शास्त्रोक्त भक्तिसे हमारी प्रार्थना पूरी होनेकी प्रतीक्षा कर रहे थे। प्रार्थना पूरी होते ही अुन्होने सागरकी लहरीका अेक खलासी गीत छेडा। गीतका प्रकार चाहे खलासी ढगका हो, लेकिन अदरके भाव खलासी हृदयके न थे। अुस गीतके द्वारा भोले खलासी नही वोलते थे, वल्कि मस्तीमे आये हुअे कवि अपनी अभिजात भावनाके फव्वारे छोड रहे थे। यह सच है कि अुस दिन हमारी टोलीमें कोअी स्व-स्थ (Sober) न था। हिन्दू स्कूलके आचार्य श्री कुलकर्णी भी आनदमे आ गये थे। चि० सरोजने तो अपना स्थान छोडकर वॉयलरके आगे खडा रहना पसद किया था। अपने स्वभावके प्रतिकूल जाकर अुसने अग्रगामित्व स्वीकार किया था। यह देखकर मुझे आनन्द हुआ। मैंने अुसको मचर सरोवरमे काव्यका पान किये हुअे नारायण मलकानीकी याद दिलाअी। अितने सकेतसे ही हम दोनो सारी वस्तुस्थितिका मूल्याकन कर सके।

समुद्रके पानी परसे आने-जानेके अनेक प्रकार है और हरेक प्रकारमे अलग-अलग रस होता है। लहरोके थपेडे खाते हुअे वाहुवलसे तैरते-तैरते दूर अदर तक जानेमे अेक प्रकारका आनद है। छातीके नीचे अुछलती लहरो पर सवार होनेका लुत्फ जिसने अुठाया है वह कभी अुसको भूल नही सकता। नदीके पानीकी तरह समुद्रका पानी हमें डुवा देनेके अितजारमे नही रहता। समुद्रका पानी किसीका भोग लेगा तो निरुपाय होकर ही। नही तो अुसकी नीयत हमेशा तैराकोको तारनेकी ही रहती है।

सकरी और लम्वी नावमे वैठकर अेक ही डाडसे हरेक लहरके सामने चढ-अुतर करना अेक दूसरा आनद है। दो लहरोके वीच नाव टेढी हो जाय तो मुसीवतमे आ जायेगे। अितना अगर सभाल लिया तो समुद्रके आनदके साथ अेकरूप होनेके लिअे अिससे अधिक अच्छा साधन मिलना मुश्किल है।

वडी नावमे दो-दोकी टुकड़ीमे वैठकर वल्ले मारनेका साधिक आनद आनदका तीसरा प्रकार है। हम मौन धारण करके यह आनद

नही लूट सकते। तालका नशा अितना मादक होता है कि अुमसे गायन अचूक फूट निकलता है।

वाफरमे बैठनेका आनद अिन तीनोसे कुछ कम है। वह अिसलिअे कि अुसको चलानेमे मानवका बाहुबल बिलकुल खर्च नही होता। नियत्रण-चक्र हाथमे पकडनेवालेकी भुजाको कसरत होती है। अुतने ही पुरुषार्थका अवकाश वाफरमे मिलता है। लेकिन वाफरके द्वारा पानीको चीरते हुअे जानेका आनद सारे शरीरको मिलता है। वाफर जब सीधी दौडती जाती है तब अुसकी गति हमारी रग-रगमे पहुचती है। मोटर चलानेके आनदसे वाफर चलानेका आनद अनेक गुना बढकर है।

अिस आनदको लूटते-लूटते और यह विचार करते-करते कि समुद्रका पानी यहा कितना गहरा होगा, हम देवगढकी ओर चले। मुझे अेक विचार आया, जो पानी सबसे नीचे है वह अूपरके पानीके भारसे कुचल नहीं जाता होगा? अूपरके पानीमे नीचेका पानी अधिक गाढा और घना होना ही चाहिये। अमुक मछलिया तो अुस गाढे पानीको बीधकर नीचे अुतर ही नही सकती होगी। पारेके सरोवरमें अगर हम पडे तो लकडीके टुकडेकी तरह अुसके अूपर ही तैरते रहेगे। अमुक प्रकारकी मछलियोका भी नीचेके गाढे पानीमे यही हाल होता होगा।

ज्यो-ज्यो देवगढका बेट नजदीक आता गया, त्यो-त्यो आस-पासके छोटे-छोटे बेट और चट्टाने स्पष्ट दीखने लगी। आकाश और समुद्र जहा मिलते हैं वह क्षितिज-रेखा भी आज बहुत ही स्पष्ट थी। मानो कोअी सूअीसे दिखा रहा है कि यहा पृथ्वी पूरी होती है और स्वर्ग शुरु होता है।

दो जहाज अपने पालमे पवन भरकर सफरको रवाना हुअे थे। अुन पालोके पेटमे पवनके साथ अुगते सूर्यकी किरणे भी घुस गअी थी। अैसा महसूस होता था कि अिस भारसे पाल फट जायेगे। पाल अितने चमकते थे कि वे रेशमके है या हाथी-दातके, यह तय करना मुश्किल था। जब पवन पालमे घूमता है तब केलेके पानकी डिजाअिन अुसमें अधिक शोभती है।

अब हम देवगढके बिलकुल नजदीक आ गये थे। सारी पहाडी टेकरी छोटे-बडे पेडोसे ढकी हुअी थी। अूपरकी दीप-मीनार अपना दरजा सभालकर आकाशकी ओर अगुलि-निर्देश कर रही थी। अब बाफरके लिअे आगे जाना असभव था। बाकीका थोडा और छिछला अतर काटनेके लिअे हमारी बाफरने अपने साथ अेक नन्हा-सा किकर बाध लिया था। अुस छोटीसी नावमे हम अुतरे और बेटके किनारे पहुचे। अुतरते ही पके बेरके लाल-लाल फलोने हमारा स्वागत किया। हम अूपर चढते-चढते बडे-बडे वृक्षोकी शाखाये तथा बरगदकी जडे निहारते-निहारते दीप-मीनारकी तलहटी तक पहुचे। दीप-मीनारके दीप-कार अेक भले मुसलमान थे। अुन्होने हमारा स्वागत किया। बेट पर दीप-मीनारके कारण कुछ लोग रहते थे। अुनके कारण थोडे बकरे और मुरगे भी रहते थे (और समय समय पर बा-कायदा मरते भी थे)। समुद्र किनारेसे अुडते-अुडते आकर यहाके पेडो पर आराम करनेवाले और प्राकृतिक काव्यके फव्वारे छोडनेवाले पक्षी तो अृषि-मुनियो जैसे ही पवित्र माने जाने चाहिये।

बाफरमे बैठकर हमने सुबह आत्माकी अुपासना की थी, यहा अेक चट्टान पर बैठ कर सबोने पेटकी अुपासना की। आसपासकी शोभा अघाकर देखनेके बाद दीप-मीनारके पेटमे होकर हम अूपर गये।

दीयेमे से 'विश्वतो' निकलती किरणोको खूबीसे मोडकर पानीके पृष्ठभागके समानातर अुनका बडा प्रवाह दौडानेके लिअे अनेक प्रकारके बिल्लोरी काचसे बनायी हुअी दो ढालोको हमने सर्वप्रथम देखा। पेराबोला और हाअीपरबोलाके गणितका अुसमे पूरा अुपयोग किया जाता है। शकुछेदका* रहस्य जो जानता है वही अिसका रहस्य समझ सकेगा। अुसके बाद अुस दीयेका बुरका अेक ओर खिसकाकर हमने दूर तक सामुद्रीय शोभा निहारी और अितनेसे सतोष न पाकर हम दीयेके आसपासकी गैलरीमे जाकर स्वतत्रतासे दसो दिशाअे देखने लगे।

---

* Conic sections.

जिस दृश्यको देखनेकी अभिलाषा मैं छप्पन सालमें मेता आया था, वह दृश्य आज देखा। आखोको पारण मिला। अैसा लगता था मानो सारा बेट अेक बडा जहाज है, दीप-मीनार अुसका मस्तूल (mast) है, और हम अुस पर चढकर चारो ओर पहरा देनेवाले खलासी हैं। यह सच है कि जहाजके मस्तूलकी तरह यह दीप-मीनार डोलती न थी, लेकिन अभी-अभी वाफरका सफर किये हुअे हमारे 'पियक्कड' दिमाग अिस त्रुटिको दूर कर रहे थे।

अितनी अूचाअीसे चारो ओर देखनेमे अेक अनोखा आनद आता है। कुतुबमीनार परसे हिन्दुस्तानकी अनेक राजधानियोका स्मशान देखनेसे मनमे जो विषाद पैदा होता है सो यहा नही होता। यहासे दिखनेवाले समुद्रमे प्राचीन कालसे आजतक अनेक जहाज डूब गये होगे, लेकिन अुसकी गमगीनी यहाके वातावरणमे बिलकुल नही दीख पडती। समुद्रमे भूत और भविष्यके लिअे स्थान ही नही होता। वहा वर्तमानकाल और सनातन अनतकाल, अिन दोनोका ही साम्राज्य चलता है। जब तूफान होता है तब लगता है कि यही समुद्रका सच्चा और स्थायी रूप है। और जब आजकी तरह सर्वत्र शाति होती है तब लगता है कि तूफान तो माया है। सचमुच समुद्रका मुह बुद्ध भगवानकी शाति और अुनके अुपशमको व्यक्त करनेके लिअे ही रिखा गया है।

अितने बडे समुद्रको आशीर्वाद देनेकी शक्ति पितामह आकाशमे ही हो सकती है। आकाश शात चित्तसे चारो ओर फैल गया था और समुद्र पर रक्षणका ढक्कन ढाकता था। ढक्कन पर कुछ भी डिजाअिन न थी, यह पक्षियोसे सहन न होता था। अत वे अुस पर तरह तरहकी रेखाअे खीचनेका अस्थायी प्रयत्न करते थे। जिस तरह बच्चे किसी गभीर आदमीको हसानेके लिअे अुसके सामने टरने टरते थोडी वानर-चेष्टाअे करके देखते हैं, अुसी तरह समुद्रका नीला रग आकाशकी नीलिमाको हसानेका प्रयत्न कर रहा था।

भगवानका अैसा विराट दर्शन होते ही भगवद्गीताका ग्यारहवा अध्याय याद आना चाहिये था, लेकिन अितने प्राचीन कालमे जानेके

पहले अुत्तेजित चित्तने आरामके लिअे अेक नजदीकका ही प्रसंग पसद किया। वीस साल पहले मै लकाके दक्खिनी छोर पर देवेन्द्रसे भी आगे मातारा गया था, तव वहाकी दीप-मीनार पर चढकर दोपहरकी धूपमें अैसा ही, वल्कि अिससे भी अनेक गुना विशाल, दृश्य देखा था। वहा नजरकी त्रिज्या वनाकर मनुष्य जितना चाहे अुतना वडा वर्तुल खीच सकता था। अुस वर्तुलका दक्षिणार्ध हिन्द महासागरको दिया गया था और अुत्तरार्ध नारियलके पत्तोकी लहरे अुछालते और दोपहरकी धूपमें चमकते वनसागरको अर्पण हुआ था। यहा देवगढ परसे पूर्वकी ओर सूर्यनारायणके पादपीठकी तरह शोभायमान पर्वत दिखाअी देता था। अुसके नीचे फैला हुआ कारवारका समुद्र शातिसे चमकता था। अुस परकी नावोकी डिजाअिन विल्कुल हलकी हलकी थी। और पश्चिमकी ओर तो अरवस्तानकी याद दिलाता अेक अखड महासागर ही था। यह दृश्य हृदयको व्याकुल करनेवाला था।

'नमोऽस्तु ते सर्वत अेव सर्व'— अितने ही शव्द मुहसे निकल सके।

* * *

अिस वीच हमारे लज्जाशील चित्रकारने अेक कोनेमे वैठकर पासकी अेक वडी चट्टानका और आसपासके समुद्रका अेक चित्र खीचा। घर आते ही अुन्होने मुझे वह भेट कर दिया। आज मेरी छप्पन सालकी भूख तृप्त हुअी थी। अिस प्रसगके स्मारकके तौर पर मैंने अुसको प्रसन्नतासे स्वीकार किया।

दीप-मीनारका काव्य आखिर पूर्णताको पहुंचा।

मअी, १९४७

५८

मरुस्थल या सरोवर

किसी घटनाके नियमित हो जानेसे क्या अुसकी अद्भुतता मिट जाती है?

छ घटे पहले पानी कही भी नजर नही आता था। अुत्तरसे लेकर दक्षिण तक सीधा समुद्र-तट फैला हुआ है। पश्चिमकी ओर जहा आकाश नम्र होकर धरतीको छूता है वहा तक — क्षितिज तक — पानीका नामोनिशान नही है, अेक भी लहर नही दीखती। यह स्थान पहली बार देखनेवालेको लगेगा कि यह कोअी मरुस्थल है। वारिशके कारण केवल भीग गया है। या यो लगेगा कि यह कोअी दलदल है, जिस पर केवल घास नही है। जहा तक दृष्टि पहुच सकती है वहा तक सीधी समतल जमीन देखकर कितना आनद मालूम होता है। अैसी समतल जमीन तैयार करनेका काम किसी अिजीनियरको सौंपा जाय, तो अुसे बेहद मेहनत करनी पडेगी। मगर यह है कुदरतकी कारीगरी। अूचे अूचे पहाडोमे भव्यता होती है, जब कि अैसे समतत* प्रदेशोमे विशालता, विस्तीर्णता होती है। हम अिस विशालताका पान करनेमे मग्न थे, अितनेमे दूर क्षितिज पर जहाजके जैसा कुछ नजर आया। जमीन पर जहाज? क्या बात है? अितनेमे दक्षिणसे लेकर अुत्तर तक फैली हुअी अेक भूरी रेखा गहरी होने लगी। बीच बीचमे अुस पर सफेद लहरे दिखाअी देने लगी। पानीका कटक आया। सेनापतिके हुक्मके अनुसार 'अेक-कतार' में लहरे आगे बढ़ने लगी। आया, आया, पानी आगे आया। वह आधे पट पर फैल गया। सूरज आकाशमे चढता जाता था, धूप बढती जाती थी और लहरोका अुन्माद भी बढता जाता था। क्या ये लहरे अीश्वरका गीता

* सम-तत = stretched evenly अुदाहरणके लिअे, गगामुखके पासका सुन्दरवनका प्रदेश समतत कहलाता था।

हुआ कोअी असाधारण कार्य करनेके लिअे चली आ रही है? वे यमदूत जैसी नही, बल्कि देवदूतके जैसी मालूम होती है। जगलमे जैसे भेडियोकी टोलिया छलाग मारती, कूदती-फादती आती है, वैसे ही लहरे आगे बढने लगी। जहा नीरव भीगा हुआ मरुस्थल था, वहा अुछलती गरजती लहरोका सागर फैल गया। ज्वार पूरे जोशमे आ गया। लहरे आती है और किनारेसे टकराती है। जरा ताककर अुनकी ओर घटे आधे घटे तक देखते रहिये, तुरन्त मनमे स्फुरित होगा कि लहरे जड नही बल्कि सचेतन है। अुनका भी स्वभाव-धर्म है। चारो ओर पानी ही पानी दिखाअी देता था। बायी ओरके ताड-वृक्ष पानीमे डोलने लगे। मालूम होता था मानो अभी डूब जायेगे। भानजेको लम्बे अर्सेके बाद मिलने आया हुआ देखकर समुद्रकी मौसी मरजाद-वेल स्नेहसे तर हो गअी है। और लहरोका मद तो अुतरता ही नही है। हाथीके समान दौड रही है, और किनारे पर वप्र-क्रीडाका अनुभव कर रही है। कितना अद्भुत दृश्य है! जमीन ढालू हो, अुतार हो, और पानी नदीकी तरह बहता हो, तब कोअी आश्चर्य नही मालूम होता। नीचेकी ओर बहते रहना तो पानीका स्वभाव-धर्म है। मगर समतल भूमि पर, जहा पानी नही था वहा बारिश या बाढके बिना पानी दौडता हुआ आये और जमीन पर फैलता जाये, यह कितने अचरजकी बात है! जहा अभी अभी हम दौडते और घूमते थे वहा पाव न जम सके अैसी जलाकार स्थिति कैसे हुअी होगी? अितने थोडे समयमे अितना बडा विपर्यास! जहा हवामे हाथ हिलाते हुअे हम घूम रहे थे, वहा अब अुछलती हुअी लहरोके बीच हाथकी पतवारे चलाकर तैरनेका आनद लूट रहे हैं। मानो घोडे पर बैठकर सैर करने निकले हो। अिस ज्वारके समय यदि कोअी यहा आकर देखे तो अुसे लगेगा कि खारे पानीका यह छलकता हुआ सरोवर हजारो वर्षोसे यहा अिसी तरह फैला हुआ होगा। किन्तु थोडी देर खडे रहकर देखनेकी तकलीफ कोअी अुठाये तो अुसे मालूम होगा कि अितने बडे महायुद्धके जैसे आक्रमणका भी अत आता है। लहरोने अपनी लीला जिस तरह फैलाअी, अुसी तरह अुसे समेटनेका भी समय आया। अीश्वरका कार्य मानो

समाप्त हुआ। अीश्वरने मानो अपनी प्राणशक्ति वापस खींच ली। अब अेक अेक लहर किनारेकी ओर दौडती आती है, फिर भी यह साफ दिखाअी दे रहा है कि पानी पीछे हट रहा है।

चला, पानी हटने लगा। क्या समुद्रके अुस पार बडा गड्ढा है, जिसे भर देनेके लिअे यह सारा पानी दौडता जा रहा है? आगेकी लहरोंको वापस लौटते देखकर बादमें आयी हुअी लहरें बीचमें ही विरस हो जाती हैं, और दौडते दौडते ही ढ़ह पडती हैं। सागरके पानीका अंदाज भला कौन लगाये? अुसे किस तरह नापे? अितना पानी आया क्यों और जा क्यों रहा है? क्या अुसे कोअी पूछनेवाला नहीं है? या कोअी पूछनेवाला है अिसीलिअे वह अितना नियमित रूपमें आता है और जाता है? ज्यों-ज्यों सोचने लगते हैं, त्यों-त्यों अिस घटनाकी अद्‌भुतताका असर मन पर होने लगता है। ज्वार और भाटा क्या चीज है? समुद्रका श्वासोच्छ्‌वास? अुनका अुपयोग क्या है? ज्वार और भाटा यदि न होते तो समुद्रका क्या हाल होता? समुद्र-जीवी प्राणियोंके जीवनमें क्या क्या परिवर्तन होता? चंद्र और सूर्यका आकर्षण और पृथ्वीकी सतहसे सागरका विभाजन आदि चर्चाअें तो ठीक हैं, मगर अिनके पीछे अुद्देश्य क्या है यह जाननेकी ओर ही मन अधिक दौडता है। पर यह जिज्ञासा अभी तक तृप्त नहीं हुअी है।

जितनी बार हम ज्वार और भाटा देखते हैं, अुतनी ही बार वे समान रूपसे अद्‌भुत लगते हैं। और अिस बातकी प्रतीति होती है कि अीश्वरकी सृष्टिमें चारों ओर वह ज्ञानमय प्रभु सनातन रूपमें विराजमान है।

'सर्वं समाप्नोषि ततोऽसि सर्वः' कहकर हृदय अुसे प्रणाम करता है। सृष्टि महान है तो अुसका सिरजनहार विभु कैसा होगा? अुसे कौन पहचानेगा? क्या खुद अुसे अिस बातकी परवाह होगी कि कोअी अुसे पहचाने?

बोरडी, १ मअी, १९२७

५१

चांदीपुर

मुझे डर था कि पिछली बार चांदीपुरमें जो दृश्य मैंने देखा था वह अबकी बार देखनको नहीं मिलेगा। अतः मनको समझाकर कि विशेष आशा नहीं रखनी चाहिये, चांदीपुरके लिअे हम चल पड़े। फिर भी चांदीपुर तो चांदीपुर ही है! अुसकी सामान्य शोभा भी असामान्य मानी जायगी।

कलकत्ता-कटकके रास्ते पर बालासोर या बालेश्वर नामका अेक कस्बा है। चांदीपुर वहांसे आठ मील पूर्वकी ओर समुद्र-किनारे बसा हुआ है। सरकारके फौजी विभागने अिस स्थानका कुछ अुपयोग किया है। मगर अिससे अुसका महत्त्व बढ़ा नहीं है। यहांसे तीन मीलकी दूरी पर जहां बूढ़ी-बलंग नदी समुद्रसे मिलती है, वहां सुन्दर बन्दरगाह बनाया जा सकता है। हवा खानेका सुन्दर स्थान भी वह बन सकता है। मगर अभी तक वैसा बन नहीं पाया है। आज चांदीपुरका महत्त्व अुसकी सनातन प्राकृतिक शोभाके कारण ही है। अिसीलिअे मैंने अुसे पूर्व दिशाकी बोरडीका नाम दिया है।

बम्बअीके अुत्तरमें घोलवड़ स्टेशनसे डेढ़ मील पर बोरडी नामक जो स्थान है, वहांका समुद्र जब भाटेके समय पीछे हटता है, तब डेढ़ दो मीलका पट खुला छोड़ देता है और अुसका पानी लगभग क्षितिजके पास पहुंच जाता है। सारा समुद्र-तट मानो देवताओंका या दानवोंका भीगा हुआ टेनिस-कोर्ट हो, अितना सीधा और समतल मालूम होता है। और जब ज्वारके समय पानी बढ़ने लगता है तब देखते ही देखते सारा तट पानीसे भरकर सरोवरकी तरह छलकने लगता है। मुहूर्तमें गीला मरुस्थल और मुहूर्तमें छिछला सरोवर, अैसी यह प्रकृतिकी लीला देखकर मुझे विस्मय हुआ था। अुसका वर्णन जब मैंने लिखा तब स्वप्नमें भी यह खयाल नहीं हुआ

कि ठीक अिसी प्रकारके अेक स्थानका सर्जन प्रकृतिने पूर्वकी ओर भी कर रखा है।

राष्ट्रभापा-प्रचारके सिलसिलेमें जब मैं अिसके पहले कलकत्तासे अुत्कल आया था, तब वालासोरका काम पूरा करके चादीपुर देखनेके लिअे खास तौर पर यहा आया था। रास्तेमें जगह-जगह पानीके गड्ढोमे अुगे हुअे नील-कमल देखकर मेरे हर्पका पार नही रहा था। कमल यानी प्रसन्नताका प्रतीक। सुन्दरता, कोमलता, ताजगी और पवित्रता जब अेकत्र हुअी तब अुन्होंने कमलका रूप धारण किया। कमल जब सफेद होता है तब वह तपस्विनी महाश्वेताका स्मरण कराता है। वही कमल जब लाल होता है तब गधर्व-नगरी पर राज्य करनेवाली कादवरीकी शोभा दिखलाता है। किन्तु नील-कमल तो प्रत्यक्ष कुजविहारी श्रीकृष्णकी ही भूमिका अदा करता मालूम होता है। सभव है हमारे देशमे नील-कमल अधिक देखनेको नही मिलते, अिसलिअे मुझे अैसा लगा हो। मगर अिस मार्ग पर नील-कमलोंको देखकर मुझे अपार आनद हुआ अिसमें कोअी सदेह नही।

वालासोरसे चादीपुरका रास्ता लगभग सीधा है। किनारेके डाक-बगलेके दरवाजे तक पहुच जाते हैं तब तक भी समुद्रका दर्शन नही होता। मगर जब होता है तब वह अपनी विशालतासे चित्तको हर लेता है। पिछली वार जब हम गये थे तब ज्वार धीरे धीरे बढ रहा था, और नाजुक लहरें क्षितिजके साथ समानान्तर रेखा बनाकर धीमे धीमे आगे बढ रही थी। क्षितिजसे किनारे तक आते समय लहरें अितनी सीधी और समानान्तर आती थीं, मानो कोअी दो-तीन मील लम्बी तनी हुअी रस्सीको खींचकर आगे ला रहा हो। मेरे साथ यदि कोअी विद्यार्थी होता तो मैं अुसे समझा देता कि नोटवुकमें जो रेखायें खींचते हैं, वे अिसी तरह सुन्दर और समानान्तर खींचनी चाहिये। जमीन जब सब ओरसे समतल होती है तब अंग्रेज लेखक अुसे टेनिस-कोर्टकी अुपमा देते हैं। मगर कहा टेनिस-कोर्ट और कहा मीलो तक फैली हुअी लम्बी और चौडी सिकता-स्थली!

यह सारा दृश्य जी भरकर देखा। मन तृप्त होने पर भी देखा। सामनेंसे देखा, बाजूसे देखा। हम कितने पुण्यशाली है, अिस धन्यताके भानके साथ देखा। और फिर मनमे विचार आया : अब अिसका क्या करना चाहिये? अुसके बारेमें लिखना तो था ही। राजाको जब रत्न मिलता है तब वह अुसे अपने खजानेमे पहुचा ही देता है। रमणियोके हाथमे जब फूल आते है तब वे अपने जूडेमे जब तक अुन्हें लगा नही लेती तब तक अुन्हे सतोप नही होता। प्रकृतिके अुपासक लेखकको जब कोअी दृश्य पान करनेके लिअे मिलता है, तब वह जब तक अुसे लेख-बद्ध या कविता-बद्ध नही करता तब तक अुसे चैन नही पडता। मगर यह तो घर जानेके बाद ही हो सकता है। अभी यहा क्या करना चाहिये? प्रकृतिका विस्तार चौडा हो या अूचा, अुसका आस्वाद केवल आखोसे नही लिया जा सकता। पांवोको भी अुनका हिस्सा देना ही पड़ता है।

हम डाक-बंगलेकी अूचाअीसे खिसकती और हंसती हुअी बालू पर दौडते हुअे नीचे अुतरे। अितनेमे अिधर-अुधर दौडते और पृथ्वीके अुदरमें लुप्त होते हुअे बडे बड़े माणिक हमने देखे। कैसा सुन्दर अुनका लाल चमकीला तरल रग था! मखमलमें जैसी फीकी और गहरी लाली होती है, वैसी ही छटा प्रकाशके कारण माणिकमें भी दिखाअी देती है। यही लावण्य हमने अिन दौडनेवाले रत्नोमें देखा। ये केकडे जितने आकर्षक थे, अुतने ही भयावने भी थे। डर लगता था कि आकर कही काट लेंगे तो अुनके जैसा ही लाल खून पांवोमें से निकलने लगेगा। मगर वे जितने डरावने थे अुतने ही डरपोक भी थे। मनुष्योको देखकर झट अपने घरोमे छिप जाते थे। हम अुनके पीछे दौडे और अुनकी दौडधूप देखनेका आनद प्राप्त किया।

दौडते-दौडते हमने डिब्बियोके जैसी छोटी-बडी सीपें देखी। अुनके अूपरकी आकृतियां देखकर मुझे विश्वास हो गया कि अिनके आकार देखकर ही यहाके मदिरोके कलश तैयार किये गये होगे। सुपारीके आकारकी अपेक्षा यह आकार कलाकी दृष्टिसे कही ज्यादा सुन्दर है।

चि० मदालसाने अैसी कओी डिब्बिया चुन ली। अुनके आकार सुराख होनेसे अुनकी माला बनानेकी कल्पना सहज सूझ सकती थी।

समुद्रका तट, अुसकी लहरे, लाल केकडे और ये सीपें अिन सबकी बातें करते करते हम वापस लौटे। कुछ नील-कमल भी हमने साथ ले लिये और भारतवर्षके दर्शनमें अेक और कीमती वृद्धि हुआी अैसे संतोषके साथ घर लौटे।

अबकी जब फिरसे बालासोर आये, तब अिस सारे दृश्यका प्रत्यक्ष स्मरण हो आया और अुसे श्रद्धाकी अजलि अर्पण करनेके लिअे फिर चादीपुर जानेका कार्यक्रम हमने तय किया।

आकाशमे बादल घिरे हुअे थे। फिर भी हमने यह आशा रखी थी कि चादीपुर पहुचने पर पानीमे से निकलते हुअे सूर्यके दर्शन करेगे। अत साढे तीन बजे अुठकर नित्यविधि पूरी की, चार बजे डॉ० भुवनचद्रजीकी मोटर मगवाअी और मोटर-वेगसे आठ मीलका अतर तय किया। रास्तेमे न तो खड्डे थे, न श्रीकृष्णकी आखोसे होड करनेवाले नील-कमल थे। मुझे लगभग यही विश्वास था कि वे लहरे भी हमे देखनेको नही मिलेगी। अष्टमीका चाद आकाशमे फीका चमक रहा था। अत: मैंने माना था कि यहा सिर्फ छलकता हुआ शात सरोवर ही दिखाअी देगा। हम अपने परिचित डाक-बगलेके आगनमे आये और मैंने देखा कि पानी तो कबका वापस लौट चुका है। दूर मटियाला पानी बालूके ढेरके समान मालूम होता था। सिर्फ बालूका पट अधिकाधिक खुलता जा रहा था। यदि हम चार-छह ही मिनट पहले पहुचे होते, तो सूर्यको पानीमे पाव रखते हुअे देख पाते। आसमानमें बादल थे, पर सूर्यके पासका क्षितिज स्वच्छ और सुन्दर था। बादलोके धब्बे सूर्यकी शोभाको बढा रहे थे। सूर्यको देखकर अपना हमेशाका श्लोक भी बोलना मुझे नही सूझा। मैंने केवल अजलि बनाकर अर्घ्य अर्पण किया और दूर समुद्रमे निकले हुअे सूर्यनारायणका अुपस्थान किया। मनमे मनुका श्लोक प्रकट हुआ

आपो नारा अिति प्रोक्ता आपो वै नर-सूनव:।
ता यदस्य अयन जातम् अिति नारायण स्मृत:॥

अितनेमें चि० अमृतलालने गीत गाया :

'प्रथम प्रभात अुदित तव गगने।'

नीचे बालू पर पहुचते हमे देर न लगी। शरमीले केकडोने अपने-अपने बिलोमे घुसकर हमारा स्वागत किया।

समुद्रके लौटनेवाले पानीने दूरसे ही हमे अिशारेसे पूछा 'यहा तक आना है?' पानीके निमत्रणका अिनकार भला कैसे किया जाय?

हम आगे बढे। बीच बीचमे दो-चार अगुल गहरा पानी देखकर पैर छपछपाते हुअे चलने लगे। कभी सूर्यको देखनेका मन हो जाता, तो कभी पीछे मुडकर किनारेकी ओर देखनेका जी हो जाता। थोडे सरोके पेड, अेक-दो कुटिया और जकात-विभागका झडा चढानेका अूचा स्तभ — अिनसे अधिक आकर्षक वहा कुछ नही था। अिससे तो पावतलेके पानीमे प्रतिबिंबित बादलोकी शोभा ही अधिक आनद देती थी। पीछे हटनेवाले पानीकी मोहिनीके पीछे पीछे हम कितने ही दूर चले जाते। किन्तु हम यह बात भूले नही थे कि हमारे सामने दूसरा भी कार्यक्रम है, और समयके बजटके बाहर यहा अधिक मौज नही की जा सकती। किनारेसे कितनी दूर आ गये, अिसका हिसाब लगानेके लिअे कदम गिनते गिनते हम वापस लौटे। दो दो फुटके कदम भरते हुअे हमने अेक हजार कदम गिने और दौडते हुअे माणिकोकी रत्नभूमि तक पहुंचे। अूपर चढकर देखते है तो नटखट पानी धीरे-धीरे हमारे पीछे आ रहा है और पानीको आता हुआ देखकर कुछ मछुअे बालूके पटमें अपना जाल खभोके सहारे फैला रहे हैं।

पुरानी कहानिया समाप्त होती हैं, 'खाया, पिया और राज किया' वाक्यसे। हमारे वर्णन ज्यादातर पूरे होते है अिन शब्दोके साथ: 'प्रार्थना की और बादमे नाश्ता किया।' अेक भाअीने बताया कि आजकल यहा जब फौजी आदमी तोपे छोडते हैं तब भूकपकी तरह सारी बस्ती काप अुठती है। तैयार हुआ जानलेवा माल अच्छी तरह अुतर गया है या नही, यह जाचनेका स्थान यही है। आवाज चाहे जितनी बड़ी हो, क्रातिके बाद जिस प्रकार शातिकी स्थापना होती

है, अुसी प्रकार आवाज आकाशमें विलीन हो जाती है और अनमें नीरवता ही बाकी रहती है।

ॐ शान्ति शान्ति. शान्ति.।

मअी, १९४१

६०

सार्वभौम ज्वार-भाटा

हरेक लहर किनारे तक आती है और वापस लौट जाती है। यह अेक प्रकारका ज्वार-भाटा ही है। वह क्षणजीवी है। बडा ज्वार-भाटा बारह बारह घटोके अतरसे आता है। वह भी अेक तरहकी बडी लहर ही है। बारह घटोका ज्वार-भाटा जिसकी लहर है, वह ज्वार-भाटा कौनसा है? अक्षय-तृतीयाका ज्वार यदि वर्षका सबसे बडा ज्वार हो, तो सबसे छोटा ज्वार कब आता है?

हम जो श्वास लेते है और छोडते है वह भी अेक तरहका ज्वार-भाटा ही है। हृदयमे धडकन होती है और अुसके साथ सारे शरीरमे खून घूमता है, वह भी अेक तरहका ज्वार-भाटा ही है। बाल्यकाल, जवानी और बुढापा भी बडा ज्वार-भाटा है। अिस प्रकार ज्वार-भाटेका क्रम विशालसे विशालतर होकर सारे विश्व तक पहुच सकता है। जहा देखे वहा ज्वार-भाटा ही ज्वार-भाटा है। राष्ट्रोका ज्वार-भाटा होता है। सस्कृतियोका ज्वार-भाटा होता है। धार्मिकतामे भी ज्वार-भाटा होता है। हरेक भाटेके बाद ज्वारको प्रेरणा देनेवाले तो है रामचद्र और कृष्णचद्र जैसे अवतारी पुरुष। समुद्रके ज्वार-भाटेको प्रेरणा देनेवाले चद्र परसे ही क्या राम और कृष्णको चद्रकी अुपमा दी गअी होगी? कवि कहते है कि दोनोका रूप-लावण्य आह्लादक था, अिसी परसे अुन्हे चंद्रकी अुपमा दी गअी है। और कवि जो कहते है वह ठीक ही होना चाहिये। मगर अैसा क्यो न कहा जाय कि

धर्मके भाटेको रोकनेवाले और नये ज्वारको गति देनेवाले वे दोनो धर्मचद्र थे, अिसीलिअे अुन्हे चद्रकी अुपमा दी गअी है? यह कारण अब तक भले न बताया गया हो, मगर आजसे तो हम यही मानेंगे कि धर्म-सागरके चद्रके नाते ही अुनका नाम रामचद्र और कृष्णचद्र रखा गया है।

जलके स्थान पर स्थल और स्थलके स्थान पर जल जो कर सकती है, वह 'अघटित-घटना-पटीयसी' अीश्वरकी माया कहलाती है। अिस मायाका यहा हमे रोज दर्शन होता है। फिर भी हम भक्ति-नम्र क्यो नही होते? अद्भुत वस्तु रोज होती है, अिसलिअे क्या वह नि सार हो गअी? मेरे जीवन पर तीन चीजोने अपने गाभीर्यसे अधिकसे अधिक असर डाला है हिमालयके अुत्तुग पहाड, कृष्ण-रात्रिका रत्नजटित गहरा आकाश और विश्वात्माका अखड-स्तोत्र गानेवाला महार्णव। तीन हजार साल पहले या दो हजार साल पहले (हजारका यहा हिसाब ही नही) भगवान बुद्धके भिक्षु तथागतका सदेश देश-विदेशमे पहुंचाकर अिसी समुद्र-तट पर आये होगे। सोपारासे लेकर कान्हेरी तक, वहासे घारापुरी तक और थाना जिले व पूना जिलेकी सीमा पर स्थित नाणाघाट, लेण्याद्रि, जुन्नर आदि स्थानो तक, कार्ला और भाजाके प्राचीन पहाडों तक और अिस तरफ नासिककी पाडव-गुफाओ तक शाति-सागर जैसे बौद्ध भिक्षु जिस समय विहार करते थ, अुस समयका भारतीय समाज आजसे भिन्न था। अुस समयके प्रश्न आजसे भिन्न थे। अुस समयकी कार्य-प्रणाली आजसे भिन्न थी। किन्तु अुस समयका सागर तो यही था। अुन दिनो भी यह अिसी प्रकार गरजता होगा। होगा क्या, गरजता था। और 'दृश्यमात्र नश्वर है, कर्म ही अेक सत्य है; जिसका सयोग होता है अुसका वियोग निश्चित है; जो सयोग-वियोगसे परे हो जाते है, अुन्हीको शाश्वत निर्वाण-सुख मिलता है।'—यह सदेश आजकी तरह अुस समय भी महासागर देता था। आज वह जमाना नही रहा। महासागरका नाम भी बदल गया। मगर अुसका सदेश नही बदला। ज्वार-भाटेसे जो परे हो गये, अुन्हीको शाश्वत शाति

मिलनेवाली है। वे ही बुद्ध हैं। वे ही सु-गत हैं। वे सदाके लिये चले गये। ज्वार फिरसे आयेगा। भाटा फिरसे आयेगा। परन्तु वे वापस नही आयेंगे। तथागत सचमुच सु-गत है।

वोरडी, ७ मअी, १९२७

६१

अर्णवका आमंत्रण

समुद्र या सागर जैसा परिचित शब्द छोडकर मैंने अर्णव शब्द केवल आमत्रणके साथ अनुप्रासके लोभसे ही नही पसन्द किया। अर्णव शब्दके पीछे अूची-अूची लहरोका अखड ताडव सूचित है। तूफान, अस्वस्थता, अशाति, वेग, प्रवाह और हर तरहके बधनके प्रति अमर्ष आदि सारे भाव अर्णव शब्दमें आ जाते हैं। अर्णव शब्दका धात्वर्थ और अुसका अुच्चारण, दोनो अिन भावोमें मदद करते हैं। अिसीलिअे वेदोमे कअी बार अर्णव शब्दका अुपयोग समुद्रके विशेषणके तौर पर किया गया है। खास तौरसे वेदके विख्यात अघमर्षण सूक्तमें जो अर्णव-समुद्रका जिक्र है, वह अुसकी भव्यताको सूचित करता है।

अैसे अर्णवका सदेश आजके हमारे ससारके सामने पेश करनेकी शक्ति मुझे प्राप्त हो, अिसलिअे वैदिक देवता सागर-सम्राट् वरुणकी मैं वदना करता हूं।

जहा रास्ता नही है वहा रास्ता बनानेवाला देव है वरुण। प्रभजनके ताडवसे जब रेगिस्तानमें बालूकी लहरें अुछलती हैं, तब वहां भी यात्रियोको दिशा-दर्शन करानेवाला वरुण ही है। और अनत आकाशमें अपने पखोकी शक्ति आजमानेवाले मिस्टके यात्री पक्षियोको व्योममार्ग दिखानेवाला भी वरुण ही है। और वेदकालके शुरूसे लेकर कल ही जिसकी मूछे अुगी है अैसे खलासी तक हरेकको समुद्रका रास्ता दिखानेवाला जैसे वरुण है, वैसे ही नये नये अज्ञात क्षेत्रोमें

प्रवेश करके नये नये रास्ते वनानेवाले यमराज या अगस्तिको हिम्मत और प्रेरणा देनेवाला दीक्षागुरु भी वरुण ही है।

वरुण जिस प्रकार यात्रियोंका पथ-प्रदर्शक है, अुसी प्रकार वह मनुष्य-जातिके लिअे न्याय और व्यवस्थाका देवता है। 'अृतम्' और 'सत्यम्' का पूर्ण साक्षात्कार अुसे हुआ है, अिसलिअे वह हरेक आत्माको सत्यके रास्ते पर जानेकी प्रेरणा देता है। न्यायके अनुसार चलनेमे जो सौदर्य है, समाधान है और जो अतिम सफलता है, वह वरुणसे सीख लीजिये। और यदि कोअी लोभी, अदूरदृष्टि मनुष्य वरुणकी अिस न्यायनिष्ठाका अनादर करता है, तो वरुण अुसको जलोदरसे सताता है, जिससे मनुष्य यह समझ ले कि लोभका फल कभी भी अच्छा नही होता।

अपना मूल्य घट न जाये अिस खयालसे जिस प्रकार परम-मगल, कल्याणकारी, सदाशिव रुद्ररूप धारण करते है, अुसी प्रकार रत्नाकर समुद्र भी डरपोक मनुष्यको अट्टहास्य करनेवाली लहरोसे दूर रखता है। कोमल वनस्पति और गृह-लपट मनुष्य अपने किनारे पर आकर स्थिर न हो जाये, अिसलिअे ज्वार-भाटा चलाकर वह सव लोगोको समझाता है कि तुम लोगोको मुझसे अमुक अन्तर पर ही रहना चाहिये।

समुद्रके किनारे खडे रहकर जव लहरोको आते और जाते देखा, अमावस्या और पूर्णिमाके ज्वारको आते और जाते देखा, और वुद्धि कोअी जवाब नही दे सकी तब दिल वोल अुठा, 'क्या अितना भी समझमे नही आता? तुम्हारे श्वासोच्छ्वासकी वजहसे जिस प्रकार तुम्हारी छाती फूलती है और वैठती है, अुसी प्रकार विराट सागरके श्वासोच्छ्वासकी यह धडकन है; अुसका यह आवेग है। जमीन पर रहनेवाले मनुष्यने जो पाप किये और अुत्पात मचाये है, अुनको क्षमा करनेकी शक्ति प्राप्त हो अिसीलिअे महासागरको अितना हृदयका व्यायाम करना पड़ता है।

जो लहरे दुर्वल लोगोको डराकर दूर रखती है, वही लहरे विक्रमके रसियोको स्नेहपूर्ण और फेनिल निमत्रण देती है और कहती

है 'चलिये! अिस स्थिर जमीन पर क्यों खडे है? अिस तरह खडे रहेंगे तो आप पर जग चढने लगेगा। लीजिये, अेक नाव, हो जाअिये अुस पर सवार, फैला दीजिये अुसके पाल और चलिये जहा जहा पवनका प्राण आपको ले जाय। हम सब है तो सागरके बच्चे, किन्तु हमारा शिक्षागुरु है पवन। वह जैसे नचाये वैसे हम नाचते है। आप भी यही व्रत लीजिये, और चलिये हमारे साथ।' जिन दिलमें अुमग होती है, वह अैसे निमत्रणको अस्वीकार नही कर सकता।

बचपनमे सिंदबादकी कहानी आपने नही पढी? सिंदबादके पास विपुल धन था, जमीन-जागीर आदि सब कुछ था। अपने प्रेमसे अुसका जीवन भर देनेवाले स्वजन भी अुसके आसपास बहुत थे। फिर भी जब समुद्रकी गर्जना वह सुनता था तब अुससे घरमे रहा नही जाता था। लहरोंके झूलेको छोडकर पलग पर सोनेवाला पामर है। दिलने कहा 'चलो!' और सिंदबाद समुद्रकी यात्राके लिअे चल पडा। अुसमे काफी हैरान हुआ। अुसे मीठे अनुभवोंकी अपेक्षा कडवे अनुभव अधिक हुअे। अत सही-सलामत वापस लौटने पर अुसने सौगन्द खाअी कि अब मैं समुद्र-यात्राका नाम तक नही लूगा।

किन्तु अतमें यह था तो मानवी सकल्प। अिस सकल्पको सम्राट् वरुणका आशीर्वाद थोडे ही मिला था! कुछ दिन बीते। गृहस्थी जीवन अुसे फीका मालूम होने लगा। रातको वह सोता था, किन्तु नीद नही आती थी। लहरें अुसके साथ लगातार बातें किया करती थी। अुत्तर-रात्रिमें जरा नीदका झोका आ जाता तो स्वप्नमे भी लहरें ही अुछलती और अपनी अगुलिया हिलाकर अुसे पुकारती। बेचारा कहा तक जिद पकडकर रहे? अनमना होकर जरा-सा घूमने जाता तो अुसके पैर अुसे बगीचेका रास्ता छोडकर समुद्रकी सफेद और चमकीली बालूकी ओर ही ले जाते। अतमें अुसने अच्छे अच्छे जहाज खरीदे, मजबूत दिलवाले खलासियोंको नौकरी पर रखा, तरह तरहका माल साथमे लिया और 'जय दरिया पीर' कहकर सब जहाज समुद्रमे आगे बढा दिये।

यह तो हुअी काल्पनिक सिंदबादकी कहानी। किन्तु हमारे यहांका सिंहपुत्र विजय तो अैतिहासिक पुरुष था। पिता अुसे कही जाने नही देता था। अुसने बहुत आजिजी की, किन्तु सफल नही हुआ। अंतमें अूबकर अुसने शरारत शुरू की। प्रजा त्रस्त हुअी और राजाके पास जाकर कहने लगी: 'राजन्, या तो आपके लडकेको देशनिकाला दे दीजिये या हम आपका देश छोड़कर बाहर चले जाते हैं।' पिता बडे बडे जहाज लाया। अुनमें अपने लडकेको और अुसके शरारती साथियोको बिठा दिया और कहा, 'अब जहा जा सकते हो, जाओ। फिर यहा अपना मुह नही दिखाना।' वे चले। अुन्होने सौराष्ट्रका किनारा छोडा, भृगुकच्छ छोडा, सोपारा छोडा, दाभोळ छोडा; ठेठ मंगलापुरी तक गये। वहा पर भी वे रह नही सके। अत हिम्मतके साथ आगे बढे और ताम्रद्वीपमे जाकर बसे। वहाके राजा बने। विजयके पिताने अपने लडकेको वापस आनेके लिअे मना किया था; किन्तु अुसके पीछे कोअी न जाये, अैसा हुक्म नही निकाला था। अत अनेक समुद्र-वीर विजयके रास्ते जाकर नयी नयी विजय प्राप्त करने लगे। वे जावा और बालिद्वीप तक गये। वहाकी समृद्धि, वहाकी आबहवा और वहांका प्राकृतिक सौदर्य देखनेके बाद वापस लौटनेकी अिच्छा भला किसे होती? फिर तो घोघाका लड़का सारा पश्चिम किनारा पार करके लकाकी कन्यासे विवाह करे यह लगभग नियम-सा बन गया।

अिधर बगालके नदीपुत्र नदी-मुखेन समुद्रमें प्रवेश करने लगे। जिस बंदरगाहसे निकलकर ताम्रद्वीप जाया जा सकता था, अुस बंदरगाहका नाम ही अुन लोगोने ताम्रलिप्ति रख दिया। अिस प्रकार ताम्रद्वीप — लकामे अंग-वंगके बगाली, अुडीसाके कलिंग और पश्चिमके गुजराती अेकत्र हुअे। मद्रासकी ओरके द्रविड़ तो वहा कबके पहुंच चुके थे। अिस प्रकार पूर्व, पश्चिम और दक्षिण भारत अब अपने-अपने अर्णवोंके आमंत्रणके कारण लकामे अेक हुआ।

भगवान बुद्धने निर्वाणका रास्ता ढूढ निकाला और अपने शिष्योको आदेश दिया कि 'अिस अष्टागिक धर्मतत्त्वका प्रचार दसो दिशाओंमें

करो।' खुद अुन्होने अुत्तर भारतमे चालीस साल तक प्रचार-कार्य किया। अपना राज्य आसेतु-हिमाचल फैलानेके लिअे निकले हुअे सम्राट् अशोकको दिग्विजय छोडकर धर्म-विजय करनेकी सूझी। धर्म-विजयका मतलब आजकी तरह धर्मके नाम पर देश-देशातरकी प्रजाको लूटकर, गुलाम बनाकर, भ्रष्ट करना नही था, बल्कि लोगोको कल्याणका मार्ग दिखाकर अपना जीवन कृतार्थ करनेका अष्टागिक मार्ग दिखाना था। जो भगवान बुद्ध खुद गैंडेकी तरह अकुतोभय होकर जगलमे घूमते थे, अुनके साहसिक शिष्य अर्णवका आमत्रण सुनकर देश-विदेशमे जाने लगे। कुछ पूर्वकी ओर गये, कुछ पश्चिमकी ओर। आज भी पूर्व और पश्चिम समुद्रके किनारो पर अिन भिक्षुओंके विहार पहाडोमे खुदे हुअे मिलते है। सोपारा, कान्हेरी, घारापुरी आदि स्थल बौद्ध मिश-नरियोकी विदेश-यात्राके सूचक है। अुडीसाकी खड-गिरि और अुदय-गिरिकी गुफाये भी अिसी बातका सबूत दे रही है।

अिन्ही बौद्ध-धर्मी प्रचारकोमे प्रेरणा पाकर प्राचीन कालके ओसाअी भी अर्णव-मार्गसे चले और अुन्होने अनेक देशोमे भगवद्-भक्त ब्रह्मचारी ओशुका सदेश फैलाया।

जो स्वार्थवश समुद्र-यात्रा करते है, अुन्हे भी अर्णव सहारा देता है। किन्तु वरुण कहता है, "स्वार्थी लोगोको मेरी मनाही है, निषेध है। किन्तु जो केवल शुद्ध धर्म-प्रचारके लिअे निकलेगे, अुन्हें तो मेरे आशीर्वाद ही मिलेगे। फिर वे महिन्द या सघमित्ता हो या विवेकानद हो। सेट फ्रान्सिस जेवियर हो या अुनके गुरु अिग्नेशियस लोयला हो।"

अब अर्णवकी मदद लेनेवाले स्वार्थी लोगोके हाल देखे। मिस-रानी लोग बलूचिस्तानके दक्षिणमे रहकर पश्चिम भागरके तटकी यात्रा करते थे। अिसलिअे हिन्दुस्तानकी तिजारत अुन्हीके हाथमे थी। आग्रहके साथ वे अुसको अपने ही हाथोमें रखना चाहते थे। अत अेक वरुणपुत्रको लगा कि हमें दूसरा दरियाअी रास्ता ढूढ निकालना चाहिये। वरुणने अुससे कहा कि अमुक महीनेमे अरबस्तानसे तुम्हारा जहाज भर-समुद्रमें छोडोगे तो सीधे कालीकट तक पहुच जाओगे। अैसा करनेसे

महीनों तक तुम हिन्दुस्तानमे व्यापार करना और वापस लौटनेके लिअे तैयार रहना, अितनेमे मै अपने पवनको अुलटा बहाकर जिस रास्ते तुम आये अुसी रास्तेसे तुम्हे वापस स्वदेशमे पहुचा दूगा। यह किस्सा ओी० स० पूर्व ५० सालका है।

प्राचीन कालमे दूर दूर पश्चिममे वाअिकिग नामक समुद्री डाकू रहते थे। वे वरुणके प्यारे थे। ग्रीनलैड, आअिसलैड, ब्रिटेन और स्कैन्डि-नेवियाके बीचके ठडे और शरारती समुद्रमे वे यात्रा करते थे। आजके अंग्रेज लोग अुन्हीके वशज है। समुद्र किनारे पर स्थित नॉर्वे, ब्रिटेन, फ्रास, स्पेन और पुर्तगाल देशोने बारी बारीसे समुद्रकी यात्रा की। अिन सब लोगोको हिन्दुस्तान आना था। बीचमे पूर्वकी ओर मुसल-मानोके राज्य थे। अुन्हे पारकर या टालकर हिन्दुस्तानका रास्ता ढूढना था। सबने वरुणकी अुपासना शुरू की और अर्णवके रास्तेसे चले। कोअी गये अुत्तर ध्रुवकी ओर, कोअी गये अमरीकाकी ओर। चद लोगोने अफ्रीकाकी अुलटी प्रदक्षिणा की और अतमे सब हिन्दुस्तान पहुचे। समुद्र यानी लक्ष्मीका पिता। अुसमे जो यात्रा करे वह लक्ष्मीका कृपा-पात्र अवश्य होगा। अिन सब लोगोने नये नये देश जीत लिये, धन-दौलत जमा की। किन्तु वरुणदेवका न्यायासन वे भूल गये। वरुणदेव न्यायका देवता है। अुसके पास धीरज भी है, पुण्यप्रकोप भी है। जब अुसने देखा कि मैने अिनको समुद्रका राज्य दिया, किन्तु अिन लोगोने राजाके अुचित न्याय-धर्मका पालन नही किया, तब वरुणराजाने अपना आशीर्वाद वापिस ले लिया और अिन सब लोगोको जलोदरकी सजा दी। अब ये देश हिन्दुस्तान और अफ्रीकासे जो सपत्ति लाये थे, अुसका अुपयोग आपसमे लडनेके लिअे करने लगे है और अपने प्राणोके साथ वह सारी सपत्ति जलके अुदरमे पहुचा रहे है। समुद्र-यान हो या आकाश-यान हो, अंतमे अुसे समुद्रके जलके अुदरमें पहुचना ही है। अब वरुणराजा क्रुद्ध हुअे है। अुन्हे अब विश्वास हो गया है कि सागरसे सेवा लेनेवालोमे यदि सात्विकता न हो तो वे ससारमें अुत्पात मचानेवाले हो जाते है। अब तक अुन्होने विज्ञान-शास्त्रियो और ज्योतिषशास्त्रियोको, विद्यार्थियो और लोकसेवकोको

समुद्र-यात्राकी प्रेरणा दी थी। अब वे हिन्दुस्तानको नये ही किस्मकी प्रेरणा देना चाहते है हिन्दुस्तानके सामने अेक नया 'मिशन' रखना चाहते है। क्या अुसे सुननेके लिअे हम तैयार है?

हम पश्चिम समुद्रके किनारे पर रहते है। दिन-रात पश्चिम सागर[1]का निमत्रण सुनते है। अब तक हम बहरे थे। यह सदेश हमारे कानो पर जरूर पडता था, किन्तु अदर तक नही पहुच पाता था। अब यह हालत नही रही है। युरोपकी महाप्रजाने हमारे अपर राज्य जमाकर हमे मोहिनीमे डाल रखा था। अब यह मोहिनी अुतर गयी है। अब हमारे कान खुल गये है। ससारके नक्शेको ओर हम नयी दृष्टिसे देखने लगे है। अब हम समझने लगे है कि महासागर भूखडोको तोडते नही, बल्कि जोडते है। अफ्रीकाका सारा पूर्व किनारा और कलकत्तासे लेकर सिंगापुर आल्बनी (ऑस्ट्रेलिया) तकका पूर्वकी ओरका पश्चिम किनारा हमे निमत्रण देता है कि "अीश्वरने तुम्हे जो ज्ञान, चारित्र्य और वैभव दिया है, अुसका लाभ यहाके लोगोको भी पहुचाओ।" अेक ओर अफ्रीका है, दूसरी ओर जावा है बाली है, ऑस्ट्रेलिया है, टास्मानिया है और प्रशात महासागरके असख्य टापू है। ये सब अर्णवकी वाणीसे हमे पुकार रहे है। अिन सब स्थानोमे सागरसे प्रेरणा लेकर अनेक मिशनरी गये थे। किन्तु वे अपने साथ सब जगह शराब ले गये, वश-वशके बीचका अूच-नीच भाव ले गये। अीसा मसीहको भूलकर सिर्फ अुनका बायबल ले गये। और अिस बायबलके साथ अुन्होने अपने अपने देशका व्यापार चलाया। अर्णव अुन्हें जरूर ले गया था। किन्तु वरुण अुन पर नाराज हुआ है। हम भारतवासी प्राचीन कालमें चीन गये, यवनोके देश ग्रीस तक गये, जावा और बालीकी ओर गये। हमने 'सर्वे सन्तु निरामया' की

---

[1] हमारे अिस पडोसीको हम 'अरबी समुद्र' के नामसे पहचानते है, यह विचित्र बात है! विलायतसे आनेवाले गोरे लोग अुसे 'अरबी समुद्र' भले कहें। हमारे लिअे तो वह बम्बअी समुद्र या पश्चिम सागर है। यही नाम हमें चलाना चाहिये।

सस्कृतिका विस्तार किया। किन्तु हमने अुन स्थानोमे अपने साम्राज्यकी स्थापना करनेकी दुर्बुद्धि नही रखी। दूसरोके मुकाबलेमे हमारे हाथ साफ है। अत. वरुणका हमे आदेश हुआ है — अर्णव हमे आमत्रण दे रहा है और कह रहा है, "दूसरे लोग विजय-पताका लेकर गये; तुम अहिंसा धर्मकी तिरगी अभय-पताका लेकर जाओ और जहा जाओ वहां सेवाकी सुगध फैलाते रहो। शोपणके लिअे नही, वल्कि पिछडे हुअे लोगोके पोपण और शिक्षणके लिअे जाओ। अफ्रीकाके शालिग्राम वर्णके तुम्हारे भाअी तुम्हे पुकार रहे है। पूर्वकी ओरके केतकी सुवर्ण वर्णके तुम्हारे भाअी तुम्हारी राह देख रहे है। अिन सव लोगोकी सेवा करनेके लिअे जाओ और सव लोगोसे कहो कि अहिंसा ही परम धर्म है। अुच्चनीच भाव, अभिमान, अहकार जैसी हीन वृत्तियोको अिस धर्ममे स्थान नही हो सकता। भोग और अैश्वर्य, दोनों जीवनके जग है (जीवनको दूपित करनेवाले है)। सयम और सेवा, त्याग और वलिदान, यही जीवनकी कृतार्थता है। यह धर्म जिन लोगोने समझा है, वे सव निकल पडो। पूर्व सागर और पश्चिम सागरके वीचमे दक्षिणकी ओर घुसनेवाला हजारों मीलका किनारा तैयार करके हिन्दुस्तानको हिन्द महासागरमे जो स्थान दिया गया है, वह समुद्र-विमुख होनेके लिअे हरगिज नही है। वह तो अहिंसाके विश्वधर्मका परिचय सारे विश्वको करानेके लिअे है।"

युरोपके महायुद्धके अतमे दुनियाका रूप जैसा वदलनेवाला होगा वैसा वदलेगा। किन्तु असख्य भारतीय प्रवास-वीर अर्णवका आमत्रण सुनकर, वरुणसे दीक्षा लेकर, धीरे-धीरे देश-विदेशमें फैलेगे, अिसमें कोअी सदेह नही है। सागरके पृष्ठ पर हमारे अनेकानेक जहाज डोलते हुअे देख रहा हूं। अुनकी अभय-पताकाओको आकाशमें लहराते देख रहा हू और मेरा दिल अुछल रहा है। अर्णवके आमत्रणको अव मै खुद शायद स्वीकार नही कर सकता, फिर भी नौजवानोके दिलो तक अुसे पहुचा सकता हूं, यही मेरा अहोभाग्य है। वरुण-राजाको मेरा नस्मकार है! जय वरुणराजकी जय!!

अक्तूबर, १९४०

६२

दक्षिणके छोर पर

१

धनुष्कोटीमे मै पहले-पहल आया अुसको अब करीब बीस साल हो चुके है। जहा तक मुझे स्मरण है, श्री राजाजीने मेरे साथ श्री वरदाचारीजीको भेजा था। वरदाचारी ठहरे रामायणके भक्त। रास्ते भर रामायणकी ही रसिक बाते चली। हम धनुष्कोटी पहुचे और वरदाचारीजीकी सनातनी आत्मा श्राद्ध करनेके लिअे तडपने लगी। अेक योग्य ब्राह्मणका पता लगाकर वे अिस विधिमे मशगूल हो गये और हम लोग आमने-सामने गरजनेवाले रत्नाकर और महोदधिकी भव्य शोभा देखनेके लिअे स्वतत्र हो गये।

दो नदियोका सगम या प्रयाग अनेक स्थानो पर देखनेको मिलता है। सगमका काव्य आर्योंके हृदय या मस्तिष्क तक पहुचा कि तुरन्त अुन्हे वहा यज्ञ-याग करनेकी सूझी ही है। यज्ञ-यागके लिअे अैसे प्रकृष्ट या प्रशस्त स्थानको वे प्र-याग कहते है।

जब दो नदिया मिलती है तब अधिकतर अग्रेजी Y के जैसी आकृति बनती है। महाराष्ट्रमें कह्राडके पास दो नदिया आमने-सामने आकर मिलती है और बादको समकोणमें अेक ओर बहती है। अुनकी अग्रेजी T जैसी पाच किनारोकी आकृति बनती है। दो नदिया आमने-सामने आकर अेक-दूसरेको गले लगाती है, अिसलिअे अुसे प्रीति-सगम कहते है।

गगामे जहा यमुना मिलती है वहा पर भी लगभग T के जैसी ही आकृति बनती है। सिर्फ अुसमे गगा सीधी जाती है और यमुना किसी आग्रहके बिना और कुछ सभ्रम (घुमाव)के साथ गगासे मिलती है।

यमुना प्रथम तो 'आत्मनि अप्रत्यय' दिखाअी देती है। किन्तु गगासे मिलते ही दोनो बहनें अुल्लासके अुन्मादमे आ जाती है, और

अिस डरसे कि यदि अेक-दूसरेमे झट ओतप्रोत हो गअी तो मिलनेका आनद मिट जायगा, दूर दूर तक दोनो कम-ज्यादा मिला ही करती है। धर्मकवियोने अिस स्थानको 'प्रयाग-राज' जैसा गौरवभरा नाम यो ही नही दिया है।

किन्तु जब कोअी नदी सागरसे मिलती है तब यह सागर-सरिता-सगमका अुन्माद शिव-पार्वतीके मिलनके समान अद्‌भुत-रम्य होता है। अिसका वर्णन भक्तवृत्तिसे या सतानकी भाषामें हो ही नही सकता। मनुष्यको यह भूल कर कि वह मनुष्य है, और अपनी शक्तिसे भी अधिक अूचे अुडकर सागर-सरिताके अिस अ-समान सगमका वर्णन करना होगा।

मगर धनुष्कोटीमे तो विष्णु और महादेवके मिलनके समान दो समुद्रोका सागर-सगम है। रत्नाकर मानार (Manar)की ओरसे आता है। महोदधि पाल्क (Palk) की सामुद्रधुनीका प्रतिनिधि है। अिन दोनोको झट कैसे मिलने दिया जाय? पृथ्वीने मानो राम-धनुषकी कमानदार कोटि बीचमे आड़ी डालकर अेक कोस तक अिन दोनोको मिलनेसे रोका है। अिधर रत्नाकर अुछलता है तो अुधर महोदधि गरजता है और पवनकी सूचनाके अनुसार वे अपने-अपने प्रवाहको दौडाते है।

और अिन दोनोका सलाह-मशविरा कैसा अनोखा होता है! महोदधि यदि हरा रग धारण करता है तो रत्नाकर पूरा नीला हो जाता है; और जब रत्नाकर पर हरा रग चढता है तब महोदधि आकाशको भी दीक्षा दे सके अैसा गहरा नीला रग बहाने लगता है।

जब तक अुन्हें लगता है कि मिलनेकी अिच्छा होने पर भी मिला नही जा सकता, तब तक दोनो क्रोधसे तमतमाते रहते है। क्षण क्षणमें नया क्रोध जताते है। और अेक बार मिलनेकी छूट मिली कि अैसी शाति और सहजता चेहरे पर दिखाकर दोनों मिलते है, मानो मिलनेकी दोनोको कोअी अुत्सुकता ही नही थी। मिलना था अिसलिअे मिल लिये! व्याकुलताको मानो दूर ही छोड दिया।

जहा दोनोका प्रत्यक्ष मिलन होता है, वहां तो सर्वत्र शांति ही फैली रहती है। और अिसमे आश्चर्य क्या है? अद्वैतमें आनंदकी परिसीमा ही हो सकती है, अुन्मादको स्थान कैसे हो सकता है?

धनुष्कोटीके छोर पर खडे खडे अेक बार गोल चक्कर लगाकर देख लेना चाहिये। जहासे चलकर आते है अुतनी जमीनकी रेखाको छोड दे तो सब ओर महासागरकी विशाल जलराशिका क्षितिजके साथ बनता वलय ही देखनेको मिलता है।

रगून या कराची जाते समय बीच समुद्रमे चारो ओर समुद्र-वलय और क्षितिज-वलय मिलकर अेक हो जाते है, अुनकी मस्ती कुछ कम नही होती। मनमे यह कल्पना आये बिना नही रहती कि पानीके अिस क्षितिज-विस्तार पर आकाशका अुतना ही बडा किन्तु अनत गुना अूचा ढक्कन रखा हुआ है, और अिस बडे भारी डिब्बेमें अेक छोटे जहाज पर बैठे हुअे 'तुच्छ' हम मोतियोकी तरह सगृहीत किये गये है। ज्यो-ज्यो अिस परिस्थिति पर हम अधिक सोचते है, त्यो-त्यो मनमें अपनी तुच्छताका अधिकाधिक भान हमे होने लगता है।

धनुष्कोटीकी बात अिससे अलग है। पृथ्वीके साथ हम अनुबद्ध है, पैर तले मजबूत जमीन है और यह जमीन धीरे धीरे फैलकर अेक विशाल देश और खडकी ओर ले जा सकती है — यह खयाल हमें न सिर्फ आश्वासन देता है, बल्कि प्रचड आत्म-विश्वासके अधिकारी बनाता है। धनुष्कोटीके छोर पर मैं जितनी बार पहुचा हूं, अुतनी बार मुझे मनुष्यके आत्म-गौरवका भान विशेष रूपसे हुआ है। अिसीलिअे वहा अपनी 'भूमिका' पर स्थिर रहकर मैं सागरकी अुपासना कर सका हू।

जब जब मै मडपम् छोडकर पुल परसे पामबन गया हू, तब तब अिस प्रदेशका 'रघुवश' में लिखा हुआ कालिदासका वर्णन मुझे याद आया है। कालिदासकी वर्णन-शक्ति मुझमे भले न हो,

किन्तु अिस वारेमे मेरे मनमे तनिक भी सदेह नही कि मै अुनका समान-धर्मा हू। मै 'कवियश प्रार्थी' थोडे ही हू कि कालिदासके साथ अपना नाम देनेमे सकोच करू? मुझ पर हसनेवाले टीकाकारोको मै अेक टीकाकार कविका ही वचन सुना दूगा. 'पर्वते परमाणौ च पदार्थत्व प्रतिष्ठितम्।'

मगर मै जब धनुष्कोटीके पास आता हूं, तव कालिदासको भूल जाता हू और लकामे किस तरह पहुचा जाय अिस अुधेड़वुनमे पडे हुअे हनुमानकी दृष्टिसे दक्षिणकी ओर देखने लगता हू। जिन जिन वानर-यूथ-मुख्योने सेतुकी कल्पना की और अुसे कार्यरूपमे परिणत किया, अुनकी दृष्टिसे तलाअीमानारकी दिशामे देखने लगता हू। और अिस प्रकार कल्पनाको दौडाते दौडाते जव थक जाता हू, तव चारो धामकी यात्रा पूरी करके रामेश्वर पहुचे हुअे वृद्ध यात्रियोका हृदय धारण करके कल्पना करता हूं "अेक पूर्ण जीवन लगभग पूरा करके मैने भारत-वर्षके जितने ही विशाल जीवन-प्रदेशकी यात्रा कर ली। अव वापस लौटकर क्या करना है? अिहलोकका काम ज्यो त्यो पूरा कर लिया। सफलता मिली हो या विफलता, वही जीवन फिरसे नही विताना है। अव तो यह सारा जीवन पीठके पीछे रहे यही अच्छा है। मुडकर अुसकी ओर देखनेका स्मरण-रस भी अव नही रहा है। अव तो साम्प-रायका, परजीवनका परमार्थकी दृष्टिसे विचार करनेमे ही श्रेय है।" जब अिस प्रकारकी विचार-परपरा मनमें अुठती है, तव मन अेक प्रकारसे वेचैन हो अुठता है, और दूसरे प्रकारसे परम शातिका अनुभव करता है।

अबकी वार जव मै धनुष्कोटी आया, तो परपराके अनुसार मैने महोदधिमे स्नान किया। महासागरसे क्षमा भी मागी। किन्तु मनमे तो अेक ही विचार आया कि यहां अव फिरसे नही आना होगा। सीलोन कभी जाना है। मगर धनुष्कोटीके जो दर्शन किये, वे अतिम है। यह विचार मनमे क्यो आया, कहना मुश्किल है। किन्तु अिसमे संदेह नही कि मनमें तृप्तिका विचार अिसी वार अुत्पन्न हुआ।

२

रामेश्वर-धनुष्कोटीके बाद कन्याकुमारी। अेक स्थान यदि भव्य है तो दूसरा भव्यतर है। यहा दो नही बल्कि तीन सागरोंका सगम है। सगमका यह वायुमडल अभेद-भक्तिके आनदके समान है। 'यहा हिन्द महासागर पूरा होता है,' 'यहा बम्बओका यानी पश्चिम समुद्र शुरू होता है' और 'यहा बगालका पूर्व समुद्र शुरू होता है' — यो न तो यहा कह सकते है, न मान सकते है। यहा भारतवर्षका दक्षिणका छोर है और तीनो सागर अुसको तीनो ओरसे लिपटे हुअे पडे है। सगम तो हम कहते है। सागरोके लिअे यहा सगमके जैसा कुछ भी नही है। सगमकी कल्पना हमारी है। सागरोसे यदि पूछेगे तो वे कहेगे कि जिस भेदका अस्तित्व ही नही है, अुसके मिट जानेकी बात भी भला कैसे करें? 'स-गम' की कल्पना ही बिलकुल गलत है। कहना ही हो तो अुसको 'स-भवन' कहिये। जहा पूर्ण अेकता है वहा किसी भी हिस्सेको चाहे जो नाम दे सकते है। नाम और रूपका द्वैत यहा फीका पड जाता है, धुल जाता है, और फिर शुद्ध अद्वैत ही अपनी अखड मस्तीमें गर्जना करता है।

कन्याकुमारीमें मैने जिस भव्यताका अनुभव किया है, वैसी भव्यता हिमालयको छोडकर और गाधीजीके जीवनको छोडकर अन्यत्र कही भी अनुभव नही की है।

कन्याकुमारीका महत्त्व मैने पहले-पहल गाधीजीके ही मुखसे सुना था। वे शायद ही किसी दृश्यका वर्णन करते है। किन्तु कन्याकुमारीसे आश्रममे लौटनेके बाद अुन्होने मेरे सामने जिस स्थानका अुत्साहपूर्वक वर्णन किया था।

सन् १९२७ मे जब मैने अुनके साथ दक्षिण हिन्दुस्तानकी यात्रा की थी, तब नागर-कोयिल पहुचते ही अुन्होने अपने मेजबानसे खास तौर पर सिफारिश की कि 'काकाको कन्याकुमारी जाना है; मोटरका बदोबस्त कर दीजिये।' अुस दिन अुन्होने दो बार पूछताछ की कि काकाके कन्याकुमारी जानेका प्रबध हुआ या नही।

पू० वाको ललचानेमे मुझे कोअी कठिनाअी नही हुअी। दूसरे दो भाअी भी हमारे साथ हो गये।

जिस दृग्यकी प्रगसा पू० वापूजीके मुहसे सुनी थी, वह दृश्य देखनेकी मेरी अुत्कठा वहुत वढ़ गअी थी। यहा पहुचनेके वाद तो अुसका नगा ही चढ गया। अुसके वाद जितनी वार यहा आया हू, वही नशा मुझ पर चढा है।

और आश्चर्यकी वात तो यह है कि अिस नशेके साथ ही मनमे व्रह्मचर्यके वारेमे भी गहरे विचार अुठे विना नही रहते। देवी कन्याकुमारीका यह स्थान है, अिसीलिअे ये विचार मनमे अुठते हो, अैसी वात नही है। मैंने तो अैसा कभी नही माना। स्वामी विवेकानदने अिस स्थान पर वही नगा अनुभव किया था, यह जाननेके कारण भी यहा आते ही मेरे मनमे व्रह्मचर्यके विचार नही अुठते। गाधीजीकी भव्यताकी भव्य साधनाके साथ भी ये विचार सलग्न नही है। किन्तु ये विचार स्वयभू रूपसे मनमे अुठते ही हैं।

अिस समय (ता० ५-१-१९४७) तीसरी दफा मैं यहा आया हूं। आते ही सवसे पहले समुद्रकी लहरे, आकाशके वादल, पूर्व-पश्चिमके क्षितिज और पीछेकी पहाडियां — सव स्नेहियोको मैंने देख लिया।

आज पौपका महीना है और शुक्ल पक्षकी त्रयोदगी है। आज चंद्र रोहिणीमे या मृगमे होना चाहिये। हम मजिल-व-मंजिल मोटरकी रफ्तारसे कन्याकुमारीकी ओर जव दौड रहे थे, तभीसे चद्र आकाशमें अूचा चढकर अिस ताकमें वैठा था कि कव सूर्यास्त हो और कव मैं आकाग पर अधिकार करू। सध्याको अपना वर्ण-विलास फैलानेके लिअे अुसने अधिक अवकाश नही दिया। फिर भी जितना अवकाश मिला अुतनेमे ही सध्याने रगोके अनेक सुन्दर दृग्य दिखला दिये।

सूर्यास्त देखनेकी हमारी वडी अभिलाषा थी। किन्तु पश्चिमके वादलोने कुछ अुलाहना देते हुअे हमसे कहा, 'क्या किसीका अस्त देखनेकी अुत्कंठा रखी जा सकती है? वास्तवमें सूर्यका अस्त होता ही नही है। आपकी दृष्टिसे ही प्रकाशका अस्त होता है। अुसके लिअे

सूर्यको देखनेके बदले अुदय या अस्तके अवसरों पर वह जो अेक-रूपता धारण करता है अुसके रगको ही क्यों नहीं देख लेते ? '

अुदये सविता रक्तो रक्तश्चास्तमने तथा।
सपत्तौ च विपत्तौ च महताम् अेक-रूपता ॥

यह श्लोक बादलोंने भी बचपनमें कठस्थ कर लिया होगा!

सूर्य जब क्षितिजके नीचे गया, तब बादलोंके गवाक्षोंमें से सूर्य-प्रकाशकी लाल किरणें अूपर तक फैली। और अूपर फैली अुनसे भी अधिक दक्षिण तथा अुत्तरकी ओर फैल गअीं। गवाक्ष अधिक नहीं थे, किन्तु जो थे वे बहुत बडे थे। अत किरणें अैसी दीखती थीं मानों लाल रगके पट्टे खीचे गये हों। और आकाश अपने वैभवमें प्रतिष्ठित मालूम होता था। मैंने माना था अुससे कुछ अधिक समय तक यह शोभा कायम रही; अिससे अुसीको देखते रहनेकी अभिलाषा रखने-वाला मन कुछ तृप्त-सा हुआ।

जहा कुमारीके न-हुअे-विवाह-के अक्षत बिखरे हुअे हैं, अुस ओरकी शिला पर हम लहरोंका ताडव देखनेके लिअे जा बैठे। देखते ही देखते संध्या पश्चिममें विलीन हो गअी और चद्रका राज्य आरम्भ हुआ। बादलोंने आकाशको घेर लेनेका मनसूबा अभी पूरा नहीं किया था, अितनेमें दक्षिणकी ओरके बादलोंमें से अेक बडा सितारा चमकने लगा। वह दूसरा कौन हो सकता था ? स्वय अगस्त्ति महाराज दक्षिण-पूर्व दिशा पर आरूढ हो रहे थे। सौभाग्यसे यमुना और ग्रामगत्स्य भी तिरछी रेखामें आकाशमें दिखाअी दिये। दक्षिण दिशाका ध्यान करनेका फल मिला। सतुष्ट हुअी आखोंसे हमने अुत्तरकी ओर दृष्टि डाली। वहा आकाशमें देवयानी (कॅसियोपिया) का M अूपर तक चढा हुआ था। अुसके नीचे लगभग क्षितिजके पास अेक ताडके जितनी अूचाअी पर अुसी ताडके पत्तेका आसन बनाकर ध्रुवकुमारने हमें अपना सुभग दर्शन दिया। देवयानी और ध्रुवको देखते देखते दृष्टि पश्चिमकी ओर मुडी, वहा हसने बताया कि श्रवण तो कबके अस्त हो गये हैं। अत पूर्वकी ओर देखा। ब्रह्महृदयने कहा कि ब्रह्ममडलका विस्तार अितनेमें ही कहीं होना चाहिये।

हमने फिर दक्षिणकी ओर मुह किया। अगस्ति अितना अूचा नही आया था कि हम अुसकी कुटियाकी कल्पना कर सके। किन्तु व्याध तो दिखना ही चाहिये। व्याध चाहे जितना तेजस्वी हो, तो भी बादलोके मोटे स्तरको वह किस तरह वीध सकता है? फिर हमने अपनी दृष्टिसे बादलोका स्तर भेदनेका प्रयत्न किया। सदेह हुआ कि बादलोका जो हिस्सा कुछ विशेष अुजला मालूम होता है अुसीके पीछे व्याध होना चाहिये। बादलोके अुस पार व्याधका प्रकाश और अिस पार हमारी दृष्टि — दोनोके हमलेसे बादल पतले हुअे; और जिस प्रकार पतले परदेके पीछेसे नाटकके पात्र दिखाअी देते है, अुसी प्रकार व्याध दिखाअी देने लगा। देखते ही देखते व्याध पूर्ण रूपमे सामने आया और अुसके बाद व्याध, अगस्ति, यमुना और याममत्स्यकी शोभा तेलुगु अक्षरोकी शिरोरेखा जैसी दिखाअी देने लगी।

अभी मृग दिखाअी देगा, रोहिणी चमकेगी, ब्रह्मन झाकेगा, अैसी आशासे हम आकाशकी ओर ताक रहे थे, अितनेमे रजनीनाथने अपने आसपास कुडल फैलाया और अिस सुवर्ण-वलयके साथ आकाशमें बादल भी बढे। आकाशमे चद्रिका फैली हो तो भी क्या? रातके बादल हमारा ध्यान बहुत आकर्षित नही कर सकते थे। अत· हमने अत्यन्त काले समुद्रके गभीर जल पर नाचते सफेद फेनकी चमकती हुअी रेखाओकी पक्तियां देखकर ही आखोको तृप्त किया।

समुद्रके जल पर और आकाशके बादलो पर विविध रगोके नाच जी भरकर देखनेके बाद यह गभीरता अितनी तृप्तिदायक मालूम हुअी कि अिस तृप्तिके साथ स्थितप्रज्ञका आदर्श गानेमे और सध्याकी अुपासना करनेमे अनोखा आनद आया। यह सागर पूर्ण है। अुस पर फैला हुआ आकाश पूर्ण है। अिन दोनोके दर्शनमे जीवनकी सध्याके समय हृदयमे अुद्भूत हमारा शाति-प्रधान आनद भी पूर्ण है। अब अिस त्रिविध पूर्णतामे से कुछ भी निकाल लीजिये या कुछ भी अुनमे जोड दीजिये, पूर्णत्वमे कोअी कमी नही होगी। पायी हुअी पूर्णता कम हो सकती है, क्योकि वह सच्ची पूर्णता नही है। सावी हुअी पूर्णता स्थायी है, क्योकि अिस विरासतके साथ ही

हम पैदा हुअे थे। वहा तक पहुचनेमे विलब हुआ यही दोष है। जो पूर्णता साधी वह आत्मसात् हो गयी। अब वहासे चढने-अुतरनेका प्रश्न ही नही है।

जो विराट् है, अनन्त है, बृहत्तम है, अुसके साथ अेकरूप होनेके बाद जो जीवन स्वाभाविक रूपमे जिया जा सकता है, वही सच्चा ब्रह्मचर्य है। वासनाको दबा देने पर वह फिर कभी अुछल सकती है। वासनाको मार डालने पर वह भूतकी तरह हैरान कर सकती है। वासनाको तृप्त करनेके अुपाय किये जाय तो व्यसनकी तरह वह सदाके लिअे चिपक जायगी और बढेगी। वासनाका स्वागत किया जाय तो दिमागमे वह मडराने लगेगी। वासनाका तो मुकाबला करके अुससे पूछना चाहिये कि तू कौन है? मित्रके रूपमे शत्रुता करने आयी है या जीवनको समृद्ध करनेकी साधनाके रूपमें आयी है? वासना जब तक स्पष्ट और खुली नही होती, तब तक ही वह मोहक मालूम होती है। मोह अस्पष्टताका होता है, अेकागी दर्शनका होता है। वासनाके वश होनेमे मुख्य मदद अधेपनकी ही होती है। वासनाका अधा विरोध भी अुसको मजबूत ही बनाता है। दो आखोसे देखकर हम वासनाको पहचान नही सकते। अुसकी ओर महादेवजीकी तरह तीन आखोसे देखना चाहिये। फिर अुसकी शत्रुता अपने-आप खतम हो जाती है।

वासनाका सामना केवल तपस्यासे नही हो सकता; सच तो यह है कि प्रज्ञाके स्थिर होनेके बाद वासनाका विरोध ही नही करना पडता।

जीवनमे जब तक हमें अपूर्णताका भान है, तब तक हम यह नही कह सकते कि ब्रह्मचर्य सिद्ध हुआ है। अपूर्णता स्वय बाधक नही है। बालकमे अपूर्णता कम नही होती। वह निर्मल भावसे जीवन जीता रहता है और अुसकी अपूर्णता स्वाभाविक क्रमसे कम होती जाती है। अपूर्णताका भान हुआ कि तुरत मनुष्य पामर बन जाता है। सागरकी तरह पूर्ण होनेके बाद लहरे चाहे अुतनी अुछलती-कूदती रहे, पानीका जत्था चाहे वहा दौडता रहे, किन्तु सागरको बहनेकी आवश्यकता नही रहती। वह 'आत्मनि तृप्त' है, जिसलिअे अुसको सारी मर्यादा

छोड़नेकी जरूरत नही होती। अुसको अपनी मर्यादाका भान ही नही है; अिसीलिअे अनायास, अभावित रूपमे मर्यादाका पालन अुसके द्वारा होता रहता है। यही सच्चा ब्रह्मचर्य है।

प्रार्थना पूरी की और पिछले चार दिनके सस्मरण लिखनेकी अूर्मि जागी। कुछ लिखनेके वाद ही नीद आ सकी।

दूसरे दिन ब्राह्म-मुहूर्तमे भूतकी तरह मै समुद्र-तट पर जा बैठता, किन्तु वारिशने रोक दिया। प्रार्थनाके समय समुद्र-तट पर जाते-जाते फिरसे आकाशकी ओर देखा। दक्षिण दिशा अितनी साफ, सुन्दर और पारदर्शक थी कि पूर्वकी ओर जमे हुअे वादलो पर मनमें गुस्सा आया। अुन्होने यदि दक्षिणका अनुकरण किया होता तो अुनका क्या विगड जाता?

दक्षिण दिशामे त्रिशकु बराबर खडा था। जय-विजय अुसके द्वारपालोका काम कर रहे थे। 'कैरीना' या झूठा क्रॉस अेक ओर जाकर पडा था। अुन दोनोके वीच कुछ अैसे सुन्दर तारे चमक रहे थे, जो वर्धा या वंवअीके लोगोको जीवनमें कभी भी देखनेको नही मिलते।

अुत्तरकी ओर सप्तर्षि पूर्ण नम्रताके साथ फैले हुअे थे। ध्रुव रातकी तरह करीव करीव जमीनको छूने जा रहा था। स्वाति और चित्रा सिर पर चमक रहे थे। हस्त कुछ टेढा हो गया था। पश्चिमकी ओर चद्र अस्त हो चुका था, किन्तु चद्रिका अभी अपना अस्तित्व वता रही थी। पुनर्वसुकी नावमे से केवल प्रश्वन ही वादलोको भेदकर झाक रहा था। अकेला तारा अेकाकी अपने स्वभावके अनुसार प्रश्वन और मघासे किट्टी करके दूर जा कर खडा हो गया था। मघाका हसिया फाल्गुनीके चौकोनको सभाल रहा था। पूर्वकी ओर विशाखाके नीचे गुरु और शुक्र शोभायमान थे। और ये दोनो काफी अूचे चढ आये थे, अिसलिअे पतली अनुराधा, टेढ़ी ज्येष्ठा और नुकीला मूल अुनको सहारा दे रहा था। गुरु और शुक्र जव पारिजातके पास आते है, तव अिन तीनोकी तुलना सुन्दर होती है। और मगलके अुनके पास न होनेका दुःख नही होता।

मुझे हिन्दुस्तानकी अेक ज्योतिर्मयी व्याख्या सूझी है। कन्या-कुमारीके दक्षिणमें यदि हम जाये तो ध्रुव दिखाओ नही देता, और कश्मीरके अुत्तरकी ओर जायें तो दक्षिण दिशामे अगस्ति दिखाओ नहीं देता। अत. मैंने यह व्याख्या बनाओ है कि जिस प्रदेशमे ध्रुव और अगस्ति दोनो दिखाओ पडते है वही हमारा भारत देश है।

प्रार्थनाके बाद, सब प्राणियोंको जो अुदर-भरण नामक यज्ञकर्म करना पडता है अुसे हमने भी पूर्ण किया और नहानेके लिअे तैयार किये हुअे कुडमे अुतरे। नये ढगसे बनाये हुअे अिस कुडमें समुद्रका पानी निरन्तर आता रहता है। आधा कुड चार फुट गहरा है। बाकीका आठ फुट गहरा है। कपडे बदलनेके लिअे दो कमरे भी बनाये गये है। अिस तरहकी सुघड व्यवस्था धार्मिक पुण्यको कम करती है, अैसा नही मानना चाहिये। नहाकर हम कन्याकुमारीके दर्शन करने गये। यह मदिर त्रावणकोरके हिन्दू राज्यमे है, अत हरिजनोंके लिअे वह बहुत समयसे खुला कर दिया गया है। मदिरके द्वार पर सरकारका घोषणापत्र लगा है कि जो जन्म या धर्मसे हिन्दू है, वे ही अिस मदिरमे प्रवेश कर सकते है।

मदिरका स्थापत्य सादा किन्तु प्रशस्त है। पत्थरके खभो पर छतके तौर पर पत्थर ही आडे रखनेके कारण अन्दरसे सारा मदिर तह-खानेकी तरह मालूम होता है। देवीकी मूर्ति पूर्व दिशाकी ओर देखती है। किन्तु अुस ओरका बाहरका दरवाजा बद होनेसे देवीको समुद्रका दर्शन नही होता, न समुद्रको देवीका दर्शन होता है! बेचारे रत्नाकर-सागरने कभी यह दावा नही किया होगा कि वह जन्म या धर्मसे हिन्दू है! और समुद्र होनेके कारण मर्यादाका अुल्लघन करके भी वह मदिरमे प्रवेश कर नही सकता!!

कन्याकुमारीकी कथा बडी करुण है। यहाके किनारे पर बिखरी हुअी अक्षतके जैसी सफेद मोटी रेत, माणिक्यके चूर्ण जैसी लाल रेतका गुलाल और स्याहीचूसके तौर पर अुपयोगमें लाओ जानेवाली काली रेत — ये सब प्राकृतिक चीजे अुस करुण कहानीको और भी करुण बनानेमें मदद करती है। ससारके सभी महाकाव्य यदि करुणान्त होते है,

तो हिन्द महासागरकी अधिष्ठात्री देवी कन्याकुमारीकी कथा भी करु-णान्त हो यही अुपपन्न है। करुण रसमे जो गहराअी होती है, अुसीके द्वारा जीवनकी प्रतीति हो सकती है।

दु:ख सत्य सुख माया; दु:खं जन्तो: परं धनम्।
. . . . दु:खं जीवन-हृद्गतम्॥

छिछला जीवन मानता है कि सुख ही जीवनकी अनुभूति है, जीवनका सार-सर्वस्व है। अिस भ्रमको मिटानेका काम दु:खको सौंपा गया है। दु:खसे परास्त न होकर जो मनुष्य जीवनकी साधनाके तौर पर दु:खको स्वीकार करता है, वही सुख-दु:खसे परे होकर जीवन-समृद्धिका आनंद भोग सकता है। यह आनंद सुख-दु:खातीत होनेके कारण सागरके जैसा गभीर और आकाशके जैसा अनंत होता है।

अिस आनंदके भाग्यमें किसीके साथ विवाह-बद्ध होना नहीं लिखा है!

दिसम्बर, १९४७

६३

कराची जाते समय

[अेक पत्रसे]

बम्बअीके जागरणका ऋण अदा करनेके लिअे मैं जल्दी सो गया था। सुबह चार बजे अुठा। स्टीमर डोलती हुअी आगे बढ रही थी। यहां कहीं भी जमीन दिखाअी नहीं देती। अूपर आकाश और नीचे पानी। पानी पर मनुष्यका कितना विश्वास है! जमीनके नजरसे ओझल रहते हुअे भी दिनरात वह समुद्र पर यात्रा कर सकता है। संस्कृतमें पानीको जीवन कहते हैं। 'प्यासके समय जो पेटमें अुतरता है वह है जीवन, और तूफानके समय जिसके पेटमें हमें अुतरना पड़ता है वह है मरण।' अैसे पानीके लिअे हमारे पूर्वजोंने दो भिन्न शब्दोंकी कल्पना नहीं की।

प्रार्थनाके लिअे साथियोको जगाअू या नही, अिसका विचार थोडी देर मनमे चला। फिर मनके साथ तय किया कि जहाजके डिब्बोमे सोये हुअे अिन बच्चोको जगानेके बजाय सबकी ओरसे अकेले ही धीमी आवाजमे प्रार्थना कर लेना अच्छा है। लेकिन अिसको सामुदायिक प्रार्थना कैसे कहे? मनमे आया, चलो समीपके कैनवासके मोटे पर्दे हटाकर देख लू कि प्रार्थनामे साथ देनेके लिअे कोअी तारे जागते है या नही? अनुराधाने कहा कि 'हम अभी अभी जागे है। कृष्णचद्रके आनेकी तैयारी है।'

अितनेमे अपने दो सीग अूचे करके चद्र बोला, 'तैयारीको कोअी सीग अुगने बाकी नही है। मै आ ही गया हू।' अुसने बायें हाथमे पारिजात धारण किया था, अिससे वह विशेष सुदर मालूम होता था। अुसने ही देखते अभिजितने क्षितिज परसे सिर अूचा किया और बादमे स्वाति, अभिजित और पारिजातके त्रिकोणका अेक बडा पिरामिड पूर्व-क्षितिज पर खडा हो गया। अिन सबको साथमे लेकर मैने अपनी प्रार्थना पूरी की।

अितनेमे चद्र कुछ अूपर आया और हमारे जहाजसे लेकर चद्रके पावो तक अेक सुनहरी पट्टी पानी पर चमकने लगी। मुझे लगा, चद्रलोक जानेके लिअे यह कितना आसान और सीधा रास्ता है! जहाजसे अुतरकर चलनेकी ही देर है। किन्तु पाश्चात्य लोग कहते है कि चद्रलोकमे पागल लोग ही रहते है। अब फिर सोचा कि अितनी मेहनतके बाद यदि वहा अपने समान-धर्मा और जाति-भाअी ही मिलनेवाले हो, तो यह तकलीफ क्यो अुठाअी जाय?

* * *

मुझे आकाशके बादल बहुत पसद है। छोटा हो या बडा, सफेद हो या काला, पूरा हो या टूटा-फटा, बादल मुझे आनद ही देता है। मगर रातके बादल मुझे बिलकुल पसद नही। अुनका आकार और रग आकर्षक भले ही हो, मगर तारोके बीच वे भूतोकी तरह — या हत्यारोकी तरह — लुकते-छिपते जाते है, यही मुझे पसद नही है।

अुप कालके पहले आकाश कितना सात्त्विक स्वर्गीय मालूम होता था! चादनीमे समुद्रकी लहरे — लहरे काहेकी? तारुण्य की निस्तब्धता

या हल्का स्मित करने पर सागरबाबाके चेहरे पर पडी हुअी शिकने ——ठीक गिनी जा सके अितनी स्पष्ट थी। मगर अिन विघ्नसतोषी बादलोने बीचमे आकर सब कुछ चौपट कर दिया।

हम जोरोसे आगे बढ रहे थे। पूर्वकी ओर, यानी हमारे दाहिनी ओर, जमीन दिखाअी दे रही है या केवल भ्रम है, अिस अुधेडबुनमें मैं पडा था। अितनेमे यकायक दीये दिखाअी दिये। विश्वास हुआ कि हम श्रीकृष्णकी द्वारिकाके समीप पहुचे है। थोडे अतर पर दीयोका दूसरा झुड चमक रहा था। अुसमे अेक दीपस्तभका प्रकाश किसी वृद्धकी स्मृतिकी तरह बीच-बीचमे स्पष्ट हो अुठता था। अुसके बाद अेक मिलकी चिमनीसे धुअेकी अेक शात नदी क्षितिजके साथ समानातर बहने लगी।

आकाशके तारोको देखा और तेरा स्मरण हुआ। पता नही, सुबहकी अुषाके साथ तेरी क्या दोस्ती है? हम मिले अुससे पहले ही बोरडीमे मैंने पूर्व दिशाको अनसूया नाम दे दिया था। 'जीवननो आनद' (जीवनका आनन्द) मे 'अनसूया प्राची' वाली टिप्पणी अवश्य देख लेना।

* * *

३०-१२-'३७

६४
समुद्रकी पीठ पर

[कल्कत्तासे रगून जाते हुअे]

शामके चार बजे होगे। हमारा जहाज रवाना हुआ। धूप सौम्य हो गअी थी। मद-मद हवा बह रही थी। पानी पर नाचनेवाली सूर्यकी चमकमे पीलापन आने लगा था। लाल लाल 'बोया' से कतराकर जहाज आगे बढने लगा। दोनो किनारो पर जहाज दिखाअी देते थे, छोटी छोटी नावे दिखाअी देती थी। सेंट विलियमका किला छोडकर हम आगे बढे। कुछ बदरोमें छोटे-मोटे जहाज बनाये जा रहे थे। दोनो ओरकी जमीन पानीकी सतहसे बहुत अूची न थी। अत दोनो ओर दूर दूरका प्रदेश दिखाअी देता था। किन्तु चित्तको तृप्ति हो

अैसा कोअी दृश्य न था। अिस तरहकी बडी नदिया जहा समुद्रसे मिलने जाती है, वहाके किनारे बहुत गदे होते है। ज्वार-भाटेके कारण भीगे हुअे कीचडमे दौडधूप करनेवाले कीडोंके सिवा और कुछ दिखायी ही नही देता।

ज्यो ज्यो हम आगे बढते गये, नदी चौडी होती गअी। दूरके किनारे पर जब सफेद बालू दिखाअी दी, तभी जाकर मनको कुछ शाति महसूस हुअी। सुन्दरवनका प्रदेश पार किया; रात होनेसे पहले हम डायमड हार्बरके पास आ पहुचे। हमारा जहाज अब लहरोंके साथ डोलने लगा। जरा देर तक जहाजके डेक पर खडे रहकर हमने हिन्दुस्तानके किनारेको लुप्त होते देखा। किन्तु बादमे तो चक्कर आने लगे। अत खाना खाकर हम सो गये। सोनेके पहले प्रार्थनाके अतमें गिरधारीने रवीन्द्रनाथका 'आगुनेर परशमणि छोआओ प्राणे' यह सुन्दर गीत गाया। अुसे सुननेके लिअे कअी लोग जमा हो गये। और अुस गीतके प्रतापसे हमारे बिस्तर अच्छी तरह फैलानेमें किसीको अीर्ष्या नही हुअी।

सुबह सबसे पहले मैं जागा। अरुणोदय भी नही हुआ था। आकाशमें जिस प्रकार चाद चलता है, अुसी प्रकार जहाज अकेला अकेला पानी काटता हुआ चला जा रहा था। अुस समयकी शाति कैसी अनोखी थी! जहाजके पेटमें यत्ररूपी हृदय यदि अपनी धडकन न सुनाता, तो बाहरकी शाति अितनी सुन्दर न मालूम होती। चारो ओर समुद्र मानो लोहे या सीसेके ठडे रसके समान फैला हुआ था। मैं जहाजके छत पर जा खडा हुआ। ज्यो ज्यो जहाज डोलता था, त्यो त्यो पानी अूपर चढता या नीचे जाता था। चारो ओर लहरें ही लहरें! लहरे जब अेक-दूसरेसे टकराती है तब अुनमें से फेन निकलता है। अधेरेमें भी यह फेन चमकता है, और अिस तरहकी टेढी-मेढी रेखाओंसे विचित्र प्रकारकी आकृतिया तैयार होती है। जहाज जब डोलता है, तब अुनका असर हमारे दिमाग पर होता है। अुनमें यदि हम लहरोंके अखड और सनातन नृत्यकी लीला निहारने लगें तब तो अुनका नशा ही चढने लगता है।

आगे जाकर लहरे अुठनी बंद हो गअी। सागरका हृदय जगह जगह अूपर अुठता और नीचे बैठता था। सामान्यत लहरोको अूपर अुठते और फूटते हुअे देखनेमे अेक तरहका आनन्द मालूम होता है। किन्तु अुसमे अुतना गाभीर्य नही होता। ध्वनिकाव्यका रहस्य जिस प्रकार शब्दोमे स्पष्ट करनेसे कम हो जाता है, अुसी प्रकार लहरोके फूटनेसे होता है। किन्तु जब लहरे अदर ही अदर अुछलती है और समा जाती है, तब अुनका सूचन विविध, अनत और अस्पष्ट या अव्यक्त रहता है। अधेरा होते हुअे भी हवा जब साफ होती है तब व्योम और सागरका मिलन-वर्तुल हमारा ध्यान खीचे बिना नही रहता। क्षितिजके पास लहरोका सवाल ही नही होता। समुद्रके कालेपनकी तुलनामे अधेरा आकाश भी अुजला मालूम होता है। वेदकालके अृषियोको जिस प्रकार जीवन-रहस्य दिखाअी दिया होगा, अुसी प्रकार क्षितिज रातके समय दिखाअी देता है। अृषियोको अनत कालके आध्यात्मिक तत्त्व अनत आकाशमें चमकनेवाले तारोके समान स्पष्ट मालूम होते है, जब कि पार्थिव जीवनका भविष्यकाल अुनकी आर्ष दृष्टिके सामने भी सागरकी वारि-राशिके समान अज्ञात और अव्यक्त ही रहता है।

अिस प्रकार ध्यान और कल्पनाका खेल चल रहा था, अितनेमें

'आधारेर गाये गाये परश तव
सारा रात फोटाक तारा नव नव।'

यह शोभा कम होने लगी और अरुणोदयने पूर्व दिशा निश्चित कर दी। मैंने यह काव्य देखनेके लिअे जीवतराम (कृपालानी) को जगाया। किन्तु अुनके अुठनेके पहले ही गिरधारी जागा और कहने लगा, 'मुझे बताअिये, क्या है, मुझे बताअिये।' मै भला अुसको क्या बताता? वहा कोअी पक्षी या जहाज थोडे ही था जो अुगली दिखाकर कुछ बताता? मैंने अुससे कहा, 'वह जो लाल आकाश दिखाअी पडता है अुसे देखो। थोडी देरमे वहा सूरज अुगेगा।'

अब समुद्रने अपना रग बदला। पूर्वकी ओरसे मानो लाल जामुनी रगका प्रपात बहता चला आ रहा था। और आश्चर्य तो

यह था कि पश्चिमकी ओर भी अुसी रंगकी प्रतिक्रिया हुअी थी। हां, पश्चिमकी ओर समुद्रसे अधिक आकाशने ही अुस रंगको ग्रहण कर लिया था। पूर्वकी प्रसन्नता बढने लगी। लाल रंगमें चमक आ गअी। कुंकुमका सिंदूर बना, और सिंदूरसे सुवर्ण बना। बम्बअीकी ओर रहनेवाले हम लोग पश्चिम किनारेके समुद्रमें होनेवाले सूर्यास्तकी शोभा कअी बार देख सकते हैं, किन्तु सागर-मथनसे निकली हुअी लक्ष्मीके समान अुदय हो रही अुषाकी वर्धमान शोभा देखनेका आनंद अनोखा ही होता है। आकाश ज्यों ज्यों हसने लगा, समुद्रके मुख पर आनंद और लज्जाकी रेखाअें बढने लगी, मानो दो हमअुम्र नौजवानोंके बीच विनोद चल रहा हो।

अेक ओर प्रभातका यह विकास देखनेके लिअे दिल ललचाता था, तो दूसरी ओर जहाजके डोलनेसे सिरमें चक्कर आने लगे थे। मनमें आया, थोडी देरके लिअे लहरें रुक जायं और जहाज स्थिर हो जाय तो कितना अच्छा हो। मगर समुद्रकी लहरें और मनुष्यके मनोरथ कभी रुके हैं? अूबकर आरामकुर्सी पर लेटनेका मैं सोच रहा था, अितनेमें बालसूर्यका बिम्ब पानीमें नहाकर बाहर निकला। अुगते हुअे सूर्यके बिंब पर अेक विशिष्ट तरलता होती है मानो सूर्य ठंडे पानीमें से कांपता हुआ बाहर निकल रहा हो। और पानीमें जो प्रकाश बिखरा होता है वह अैसा दीखता है मानो सूर्यका धुला हुआ अंगराग हो। सूर्यका बिंब पूरा बाहर निकला कि मैंने सविता-नारायणका ध्यानमंत्र गाया 'ध्येय सदा सवितृ-मण्डल-मध्यवर्ती' अित्यादि।

जीवतरामसे अिस प्रकारकी गंभीरता जरा भी सहन नहीं होती। वे यकायक बोल अुठे, 'बस कीजिये। यैसी वानर-भाषा बोल रहे हैं!' मैंने अुनसे कहा, 'आप गलती कर रहे हैं। यह वानरी भाषा नहीं है, यह तो संस्कृत है।' विनोदमें भक्तिका शृंगार नष्ट हो गया। प्रार्थना ज्यों त्यों पूरी की। और जहाजमें रोज जिनमें से पार होना पडता है अुन भयंकर विघ्नकी चिन्ता करने लगे। नोचेके लिअे जहाजके डेक परसे नीचे जाना होता है। नीचेका हिस्सा यैसे भी हमेशा गंदा रहता है। किन्तु सुबहके समय तो वह मानो नरकके

साथ मुकाबला करता है। वहाकी हवा गदी और खारी होती है। जगह जगह लोग कै कर देते है। अेजिनकी भापसे निकलनेवाली अेक तरहकी दुर्गंध और खलासियोके रसोडेसे ठीक अुसी समय निकली हुअी प्याज और मछलीकी बदबू—दोनोंके मिश्रणमे से पार होकर शौचकूपमे प्रवेश करनेकी अपेक्षा समुद्रमें कूदना मुझे कम कष्टदायी मालूम होता। हमारे बसकी बात होती तो तीन दिन तक हम शौच जाना ही छोड देते। किन्तु—

जा तो आये, पर हम तीनोके चेहरे अैसे हो गये थे कि अेक-दूसरेकी ओर देखनेकी भी अिच्छा नही होती थी। कोअी टोली झगडा करनेके लिअे जाये ओर काफी मार खाकर वापस लौटे, तब जिस प्रकार अपने सर्वसाधारण अनुभवका कोअी जिक्र तक नही करता, अुसी प्रकार हमने अिस दिव्यका नाम तक नही लिया।

मैंने गिरधारीसे कहा, 'चलो, खाने बैठो।' अुसने कहा, 'मुझे भूख नही है।' जीवतरामने भी खानेसे अिनकार कर दिया। मैंने कहा, 'भले आदमी, धूप बढेगी तब चक्कर आने लगेगे। फिर खाना असभव हो जायगा। अभी ठडा पहर है। पेट भरकर खा लो। धूपके पहले सब हजम हो जायगा।' गिरधारी पूछने लगा, 'कसरत किये बिना हजम हो जायगा?' मैंने जवाब दिया, 'हम सब लोगोकी ओरसे यह जहाज ही कसरत कर रहा है। अत तुम अुसकी फिक्र मत करो।' गिरधारी मेरी बात समझ नही पाया। वह मेरा मुह ताकता रहा। हम तीनोने पेटभर खा लिया। तीनोमे जीवतराम पक्के थे। अुन्होने केवल रसवाले फल ही खाये। मैंने अपनी पसदकी चीजे खायी और अूपरसे अेक पूरा नीबू चूस लिया। बेचारे गिरधारीको अुत्तम केलोका स्वाद लग गया। अुसने पेट भर कर केले ही खाये। लेकिन अेक दो घटोके भीतर ही वह अितना पछताया कि बादमें सारी यात्रामें अुसने केलेका कभी नाम तक नही लिया।

दोपहर हुअी। मै अपनी कमजोरी जानता था। मैंने अपना बिस्तर बिछाकर हाथ-पाव फैला दिये। हाथमें दूसरा नीबू लिया और आखे मूदकर लेट गया। मद्रासकी ओरका कोअी जहाज

कलकत्ता जा रहा होगा। अुसे दूरसे देखकर लोग कहने लगे, 'वह देखो जहाज, वह देखो जहाज।' अितनेमें दोनों जहाजोंने 'भों ओ ' करके अेक-दूसरेका अभिवादन किया। किन्तु मैंने तो आगे सूदकर कल्पनाके द्वारा ही यह सारा दृश्य देख लिया। गिरधारीसे रहा नही गया। वह चटसे अुठकर खड़ा हो गया। ज्यों ही वह खड़ा हुआ, अुसके केलोंने पेटमें रहनेसे अिनकार कर दिया। वह घबरा गया। मैंने लेटे लेटे ही अुसे पानी दिया। अदरकका टुकड़ा दिया। थोड़ा शांत होनेके बाद वह मेरे बिस्तर पर आकर लेट गया। किन्तु अेक बार बिलोया हुआ पेट क्या तुरन्त शांत हो सकता है?

हम डेक पर लेटे थे। वहां अेक ओर अूपरकी कैबिनमें दो देशी अीसाअी बैठे थे। अुनमें से अेकको कै होने लगी। वह ज्यों-ज्यों जोरसे कै करता था, त्यों-त्यों अुसका मित्र अुसका मजाक अुड़ाता था। 'वन हिगिन्स, अुल्टी करोअिंग' आदि मित्रके अुद्गार अुसकी कै से भी अधिक जोरोंसे निकलने लगे। गिरधारी घड़ीभर हंसता था और फिर पछताता था।

अैसा करते करते शाम हो गअी। शामको मुझमें कुछ जान आगी। हमने फिरसे कुछ खा लिया, किन्तु वह किसीको अनुकूल नहीं आया। शामकी शोभा मैंने बैठे बैठे ही निहारी। लोग कहते थे, 'अब हम काले पानीमें आये हैं।' और सचमुच पानीका रंग डर पैदा करे अितना काला था। लोग कहते, 'अब अंदमान दिखाअी देगा।' कोअी कहता, 'नहीं, हमारा जहाज अुससे काफी दूर है। वह टापू नहीं दिखाअी देगा।'

सन्ध्याकी शोभा कुछ निराली ही थी। प्रातःकालके रंग और सन्ध्याके रंग समान नहीं होते। अुदय और अस्त समान हो ही कैसे सकते हैं? अुदय वर्धमान बाल्यकाल है, जब कि अस्त विजयी वीरके निर्गमके समान शोकपूर्ण होता है। अुषाके मुख पर मुग्ध हास्य होता है, जब कि सन्ध्याकी मुखमुद्रा पर क्षणजीवी अल्पसमय और विस्मय होता है। समुद्रके रंग फिर बदलने लगे। सूर्य अस्त हुआ और देखते ही देखते धीरे धीरे तारोंका पारिजात खिलने लगा।

जहाज पर बिजलीके सौम्य दीये तो कभीके चमकने लगे थे। मुझे ये दीये बचपनसे ही बहुत पसद है। वे अितने सौम्य होते है कि समीपका सब कुछ दिखाअी देता है; फिर भी वे आखोको चौंधिया नही पाते। अधेरेको नष्ट करके अपना साम्राज्य जमानेकी महत्त्वाकाक्षा अुनमे नही होती। अधेरेके साथ मीठा समझौता करके 'तुम भी रहो, हम भी रहेगे' की जीवन-नीति वे पसद करते हैं। शहरोके बिजलीके दीये नये अध्यापककी तरह अपना सारा प्रकाश अुडेल देना चाहते है, जहाजके दीये योगियोके समान 'आत्मन्येव सतुष्ट' होते है।

बिस्तर पर लेटे लेटे हम अिन दीयोकी बाते कर रहे थे। अितनेमे हमारा जहाज 'भों ओं. . .' करके रभाया। मै तुरत समझ गया कि अुसने कहीं दूसरी भैंस देखी है। अितनेमे दूरसे रभानेकी आवाज आअी। मै अुठकर बैठ गया। रातके समय समुद्रमे जहाज देखना मुझे बहुत पसद है। बिजलीकी बत्तियोकी अेक लम्बी पक्ति और अूचे मस्तूल पर लगे दो लाल बडे दीये भूतकी तरह जब अधेरेमे दौडते है, तब अैसा लगता है मानो हमने परियोके ससारमे प्रवेश किया है। जहाज ज्यो-ज्यो अपना रुख बदलता जाता है, त्यो-त्यो सामनेका दृश्य भी नये नये ढगसे खिलता जाता है। और जहाज जब दूर चला जाता है और लुप्त होने लगता है, तब तो यह दृश्य नीदके कारण चलनेवाली स्मृति-विस्मृतिके बीचकी आखमिचौनीके समान ही मालूम होता है। आकाशके तारोकी ओर देखता देखता मै सो गया।

तीसरे दिन सुबह पानी बरसने लगा। जहाजके अेक अीसाअी कारकुनने आकर हम सबको नीचे जानेको कहा। लोग अिसका कारण तुरन्त न समझ पाये। अुसने कहा, 'अेक बडा बवडर आग्नेय दिशासे अिस ओर आता मालूम हो रहा है।' अिसको साअिक्लोन कहते है। साअिक्लोनमे यदि जहाज फस जाय तो वह बहुत बडी आफत मानी जाती है। बहुतसे जहाज साअिक्लोनमे फसकर डूब गये है। अुस कारकुनने कहा, 'यदि यही डेक पर आप लोग बैठे रहेगे तो शायद आधीसे अुड भी जाय।' लोग डरके मारे अेकके बाद अेक नीचे चले गये। हमने नीचे जानेसे साफ अिनकार कर दिया। अुसने हमे समझानेकी

कोशिश की। हमने कहा, 'आंधी आयेगी तो अिन बड़े बड़े खम्भोंको पकड़कर पड़े रहेंगे।'

'किन्तु बारिशसे आप भीग जायेंगे।'

'भीग जायेंगे तो सूख भी जायेंगे।'

हमारी जिद देखकर वह चला गया। पानी आया। अच्छा खासा आया। आंधीका घेरा तीन चार मीलका होता है। सौभाग्यसे वह हमारे जहाज तक नही आयी। धूमकेतुकी तरह अुसके चारों ओर पूंछें होती हैं। अैसी अेक पूंछका तमाचा हमारे जहाजको भी कुछ लगा। हम काफी भीग गये। अत. नीचे जानेके बदले अूपर कैबिनमें जा बैठे।

आखिर रंगून आया। बंदरगाह पर अुतरनेवाले लोगोंकी और अुन्हें लेने आये हुअे अिष्टमित्रोंकी भीड़का पार नहीं था। डॉ० प्राणजीवन मेहता खुद हमें लेनेके लिअे बंदरगाह पर आये थे। हमने देखा कि रंगूनमें जगह जगह रबरके रास्ते हैं। अत गाड़ियां दौड़ती हैं तब सिर्फ घोड़ोंके टापोंकी ही आवाज सुनाअी देती है।

अुस दिन हमें अैसा लगता रहा, मानो हमारे पांवोंके नीचेकी जमीन डोल रही है। अेक दिनके आरामके बाद ही दिमागसे तीन दिनका समुद्र अुतर सका।

मार्च, १९२७

६५

सरोविहार

हमें रंगूनके समीपका प्रख्यात सरोवर देखना था। युरोप खडकी आकृतिके जैसा अिस सरोवरका आकार भी टेढा-मेढा है। अुसमे कअी खाडिया, अतरीप तथा जलडमरूमध्य हैं। रगून कोकणके ही अक्षाश पर है तथा समुद्रके पास है, अिसलिअे वहाकी वनश्री भी मुझे कोकणके जितनी ही खुशनुमा मालूम हुअी। चारो ओर बड़े बडे वृक्ष। सृष्टिने मानो अपना सारा ही वैभव दिखानेके लिअे बाहर निकाला हो। वनश्री और जलदेवताका जहा मिलन होता है, वहा लक्ष्मी बिना बुलाये आ ही जाती है। हम तीसरे पहर अुस सरोवरके पास जा पहुचे। काफी समय तक अुसके किनारे किनारे घूमे। सरोवरका सौंदर्य हर कोनेसे भिन्न भिन्न प्रकारका मालूम होता था। कुछ रूप-गर्वित वृक्ष सारे समय सरोवरके दर्पणमे अपना दर्शन किया करते थे।

घूमते-घूमते हमारा धीरज खतम हुआ। सरोवर तो ओश्वरने नौका-विहारके लिअे ही बनाया है। हबसी जॉनको बुलाकर हम अुसकी नावमे जा बैठे और बिना किसी अुद्देश्यके अनेक दिशाओमे घूमते रहे। बीचमे अेक टापू था। अुससे मुलाकात किये बिना भला वापस कैसे लौटा जा सकता था? टापू पर अेक सुदर आराम-गृह बना हुआ था। अुसकी सीढियोकी दोनो दीवारो पर सीमेटके बनाये हुअे दो भयानक अजगर लम्बे होकर पडे थे। नाव चलाते चलाते अेक मोड लेते ही श्वेडेगॉन पॅगोडा अपने अूचे शिखरके साथ दर्शन देता है। आगरेके किलेसे ताजमहल देखनेमे जो मजा आता है, वैसा ही मजा यहा मालूम होता था। वस्तुके समीप जाने पर अुसका सम्पूर्ण सौंदर्य प्रकट होता है, किन्तु अुसका काव्य तो दूरसे ही खिलता है। यह खूबी जाननेसे ही क्या चाद, सूरज तथा अगणित सितारे हमसे अितने दूर दूर विचरते होगे?

शाम हुअी अिसलिअे हमें मजबूरन वापस लौटना पडा। सरोवरने शकुतलाकी तरह हमें वापस आनेका निमत्रण तो दिया ही था। अत दूसरे

दिन नहानेका कार्यक्रम तय करके हमारी अेक बडी टोली वहा जानेके लिअे रवाना हुअी। वहा पहुचने पर हमारे साथके लोगोंने बताया, 'गोरे लोगोके बोटिंग क्लबके कारण सरोवरमे नहानेकी मनाही है।' सुबह होते ही जिस प्रकार कुमुद बद हो जाता है, असी प्रकार मेरा अुत्साह मिट गया। अितनी मेहनतके बाद रसपूर्ण सरोवरमे तैरनेके आनदसे वंचित रहना भला किसको पसद होगा? मगर हमारे साथी सत्याग्रही थोडे ही थे! वे खुलेआम कानूनका विरोध करनेके बजाय चुपचाप कानून तोडना ही अधिक पसद करनेवाले थे। अुन्होंने अेक असा अेकान्त स्थान बहुत पहलेसे ढूढ लिया था, जहा न तो गोरे लोगोंकी नावे पहुच सकती थी, न अुनकी दृष्टि। मैंने यहा आते ही देखा कि जिस स्थानका सौंदर्य अन्य स्थानोंसे कतअी कम नही है। अेकातमे चोरीसे नहानेमे कुछ अनोखा ही आनन्द आया। गिरधारीको तैरना नहीं आता था, अुसका श्रीगणेश भी यही हुआ। पानीमे तैरते रहनेका अनुभव पहले-पहल होने पर मनुष्यको जो आनद होता है, अुसको यदि कोअी अुपमा देनी हो तो अडा तोडकर बाहर आये हुअे पक्षीके आनदकी ही दी जा सकती है। धूप तेज हो गअी फिर भी गिरधारी बाहर आनेका नाम नही लेता था। आधा घटा और पानीमे रहने देनेके लिअे वह मुझसे अग्रेजीमे विनती करने लगा। अुसे न मानता तो वह बगलामे विनती करता, मानो भाषा बदलनेसे विनतीमे अधिक जोर आता हो। अुसको मैं नाराज कैसे करता? हमने मनसोक्त जल-विहार किया।

यदि ययातिको भी जीवनका आनद छोडना पडा, तो फिर हमारे तैरनेके आनंदका अत हुआ अिसमे आश्चर्य ही क्या? थके हुअे किन्तु हल्के बदन हम वापस लौटे। रास्तेमे अननासके बगीचे थे। असा मालूम होता था मानो दूर दूर तक कटीले अननासोंके फव्वारे ही जमीनसे से अूपर अुड रहे हो। अननासका अितना बडा बगीचा मैंने पहले कभी नही देखा था। अत पेटमे भूख होते हुअे भी और यहा अननासकी प्राप्तिकी कोअी अुम्मीद न होते हुअे भी काफी देर तक हम वहां देखते खडे रहे।

मार्च, १९२७

६६

सुवर्णदेशकी माता अैरावती

औरावती कहे या अैरावती? मै समझता हू कि औरा नामकी घास परसे ही नदीका नाम औरावती पडा होगा। अिसके किनारेकी पौष्टिक घास खाकर मदमत्त वने हुअे हाथीको अैरावत कहते होगे, या फिर अिद्रके अैरावत जैसी महाकाय और गजगतिसे चलनेवाली अिस नदीको देखकर किसी वौद्ध भिक्षुको लगा होगा, 'चलो, अिसीको हम अैरावती कहे।'

परन्तु अैतिहासिक कल्पना-तरगोमे वहना वैठे-ठाले लोगोका काम है। मुसाफिरको यह नही पुसाता।

अैरावती नदी हिन्दुस्तानमे होती तो सस्कृत कवियोने अुसके वारेमे अैरावती जितना ही लंबा-चौडा काव्य-प्रवाह वहा दिया होता। व्रह्मदेशके कवियोने अपनी अिस माताके विपयमें अनेक काव्य यदि लिखे हो तो हमे पता नही। व्रह्मी भापा न तो हमारी जन्मभापा है, न शास्त्रभापा या राजभापा है। अपने पडौसीकी भाषा सीखनेकी प्रवृत्ति हममें है ही कहा? वरसो तक परदेशमे रहे तो हम वहाकी भापा वोल सकते है, किन्तु अुस भापाके साहित्यका आस्वाद लेनेका श्रम हम कभी नही करते। कोअी अग्रेज व्रह्मी भापा सीखकर व्रह्मी कविताका अग्रेजी अनुवाद हमे दे दे तो ही शायद हम अुसे पढेगे।

कोअी भी देश अैरावती जैसी नदी पर गर्व कर सकता है या अुसका कृतज्ञ हो सकता है। व्रह्मदेशमे रगूनसे अुत्तरकी ओर ठेठ मडाले तक हम ट्रेनमे यात्रा कर चुके थे। वहासे नजदीकके अमरापुरा जाकर हमने अैरावतीके प्रथम दर्शन किये। यदि पहलेसे हमे मालूम हो जाता कि अमरापुराके समीप प्रचड वौद्ध मूर्तिया है, तो हमने भगवान वुद्धके दर्शनसे ही अैरावतीके विहारका आरभ किया होता।

यहा पर भी नदीका पाट खूब चौडा है। नदीका प्रवाह धीरोदात्त गजगतिसे चलता है। अैसी नदीकी पीठ पर नाव या 'बाफर' (स्टीमर) मे बैठकर यात्रा करना जीवनका अेक बडा सौभाग्य ही है।

अमरापुरासे मडाले वापस जाकर हम 'बाफर' मे बैठे। समुद्रकी यात्रा अलग है और नदीकी यात्रा अलग। नदीमें लहरे नही होती। दोनो ओरका किनारा हमारा साथ देता रहता है। और हमे अैसा नही मालूम होता कि जीवनका नाम धारण किये हुअे किन्तु जान लेनेवाले अेक महाभूतके शिकजेमें हम फसे हुअे है। पृथ्वीके गोलेकी हवामे चलनेवाली सनातन यात्राके समान ही नदीकी यात्रा शात और आह्लादक होती है। आज भी जब अिस अैरावतीकी यात्राका मै स्मरण करता हू, तब मुझे द्रौपदीके जैसी मानिनी नर्मदाकी चाणोद-कर्नाली तरफकी यात्रा, सीताके जैसी ताप्तीकी सागर-सगम तककी यात्रा, काशी-तल-वाहिनी भारतमाता गगाकी यात्रा, मथुरा-वृदावनकी कृष्णसखी कालिदीकी यात्रा, कश्मीरके नदनवनमे पार्वती वितस्ताकी यात्रा और वनश्रीके पीहर-सदृश गोमतक प्रदेशकी और केरलकी जलयात्रा, सभी अेकसाथ याद आ जाती है। अिनमें भी मन तृप्त हो जाय अितनी लबी यात्रा तो वितस्ता और अैरावतीकी ही है। अैरावती नदी सिंधु, गगा, ब्रह्मपुत्रा और नर्मदाकी बराबरी करने-वाली है। अैरावतीका पाट और प्रवाह देखते ही मनमें अैसा भाव अुठता है, मानो यह किसी महान साम्राज्य पर राज्य करनेवाली कोअी सम्राज्ञी हो! आराकान और पेगुयोमा अैरावतीकी रक्षा अवश्य करते है, किन्तु अुसकी प्रतिष्ठा बनाये रखनेके लिअे वे आदरपूर्वक दूर ही खडे रहते है।

हमारा जहाज चला। शाम होते ही जिस प्रकार कामधेनुके वत्स माके पास दौडे आते है, अुसी प्रकार आसपासके विस्तीर्ण प्रदेशके श्रमजीवी कृषीवलोके ठटके ठट अैरावतीके किनारे अिकट्ठा होते है। हमारा जहाज मानो अेक चलता-फिरता बाजार ही था। कोअी छोटा-मोटा बदरगाह आने पर वह लोगोको न्योता देनेके लिअे सीटी बजाता। बस, अुमडती हुअी चीटियोंकी तरह लोग दौडते दौडते आते और तरह तरहकी खाने-पीनेकी चीजे, कपडे, बेतके बनेन कारीगरीकी वस्तुअे तथा अन्य चीजें जहाज पर फैल जाती। जहाजमें

भी चद व्यापारी अपना अपना माल लिये हुअे तैयार ही रहते। पक्षियोके कलरवकी तरह लेन-देनका शोरगुल शुरु हो जाता। भाषा यदि हम समझते तो अिस शोरगुलसे अूब जाते। किन्तु यहा तो लोग लडे-झगडे या रोये-चिल्लाये, हमारे लिअे सब अेक-सा ही था। मानो अेक बडा नाटक खेला जा रहा हो। विनिमय पूरा होते ही जहाज छूटता था। ब्यानेकी तैयारीमे हो अैसी भैंसकी तरह हमारा जहाज डोलता डोलता चलता था। जहाजके अेक कमीने गोरे अधिकारीके साथ हमारा कुछ झगडा हो जानेसे यात्राके आरभमे ही सारा मजा किरकिरा हो गया था। किन्तु मद मद पवनमे यह सब अुड गया, और हम कुदरतकी तरह प्रसन्न हो गये।

फिर अेक बदरगाह आया। यहा कुछ विशेष व्यापार चलता होगा। छोटी-बडी असख्य नावे नदीके किनारे कीचडमे लोट रही थीं। ढोरोकी पीठ पर जिस प्रकार मक्खिया भिनभिनाती है, अुसी प्रकार देहाती बच्चे अिन नावोके बीच कूद और खेल रहे थे। ब्रह्मी लोग गोदन गुदानेके बडे शौकीन होते है। अुनके केवडेके रग जैसे चमडे पर लाल और हरे गोदने बडे ही सुन्दर मालूम होते है। महाराष्ट्रके गावोमे लोगोका यह विश्वास है कि अिस जन्ममे शरीर पर जेवरोकी आकृति गोदनेसे अगले जन्ममे सोनेके जेवर मिलते है और ललाट पर टीका या चन्द्रमा गोदनेसे स्त्रीको अखड सौभाग्य मिलता है। कुछ अिसी तरहका विश्वास शायद यहाके लोगोमे भी होगा, क्योकि यहाके बहुतसे देहाती कमरसे घुटनो तक सारे शरीरमे तरह तरहकी आकृतियोवाली लुगी गुदाते है। अिसीलिअे जब वे नहानेके लिअे नदीमे नगे घुस पडते है, तब बगैर कपडोके भी नगे नही मालूम होते है। जहाज कही अधिक समय तक ठहरता, तब हम किनारे पर अुतरकर आसपासके गावोमे घूम आते थे। ब्रह्मी घरो और मोहल्लोसे हमारी आखे अच्छी तरह परिचित हो चुकी थीं। अुनकी भाषा यद्यपि हम समझ नही पाते थे, फिर भी अिन निर्व्याज देहातियोका जीवन हमारे लिअे परिचित-सा हो गया था। राजनीतिज्ञ और व्यापारी लोगोके राग-द्वेषोको यदि हम अलग कर दे और धार्मिक तथा अधार्मिक लोगोकी कल्पना-सृष्टिको अेक ओर रख

दे, तो मनुष्य-जाति सर्वत्र समान ही है। मै समझता हूं कि दुनियाभरमें सारे गाव रूप और स्वभावमे समान ही होगे।

प्रवाहके साथ मानो ताल देनेवाले स्तूप और मदिर भी बीच बीचमे मिल जाते थे। अूची अूची टेकरियां और शिखर मनुष्योंको हमेशा ही प्रिय लगते है। अुसमे भी नील नदी जैसी अैरावती जब चारो दिशाओमे अपनी कृपाका अुत्पात फैलाती है, तब ये अूंचे अूंचे स्थान ही मनुष्यके लिअे आश्रय-स्थान बन जाते है। मनुष्य अुनके प्रति अपनी कृतज्ञता यदि मदिर बनवाकर प्रकट न करे तो भला किस प्रकार करे? प्रकृतिने हमे सिखाया है कि हरे पत्तोमे पीले परिपक्व फल अपनी सारी मस्ती दिखा सकते है। अिस सबकको सीख कर यहाके लोगोने पेडोके बीचमे मदिर बनवाकर अुन पर आकाशकी अनतताका दर्शन करानेवाली सोनेकी अुगलिया अूची अुठा रखी है। जो लोग यह मानते है कि प्रकृतिकी शोभाको मनुष्य बढा नही सकता, अुन्हे अेक बार यहा आकर ये शिखर जरूर देखने चाहिये।

दोपहरका समय था। अग्रेजी जाननेवाले अेक ब्रह्मी कॉलेजियनके साथ हम बाते कर रहे थे। अितनेमे अेक शात आवाज सुनाअी दी। छिदवीन नदी अपना कर-भार लेकर अैरावतीसे मिलने आयी थी। कितना भव्य था दोनोका प्रेम-सगम! वह दृश्य अैसा था मानो रामदास और तुकाराम अेक-दूसरेसे मिल रहे हो अथवा भवभूति रानरज खेलनेवाले कालिदासको अपना 'अुत्तर-रामचरित' सुना रहे हो।

कल्पना द्वारा तो मै छिदवीनके अज्ञात प्रदेशमे शान-राज्यों तककी सैर कर आया। हाथमे तीर-कमान या कुल्हाडी लेकर घूमनेवाले कअी निश्चित और निर्भय वनवासी मुझे वहा मिले। जरा-सा सदेह होने पर जान लेनेवाले और विश्वास बैठ जाने पर जान न्यौछावर करनेवाले अिन प्रकृतिके बालकोंका दर्शन सभ्यताके मैलको धो डालनेवाले मगल-स्नान जैसा था। जहाजका पक्षी कितना ही क्यो न अुडे, अतमे जिस प्रकार वह जहाज पर ही लौट आता है अुसी प्रकार कल्पना भी जगलकी सैर करके फिर जहाज पर आ गयी। क्योकि हम पकोकु बदरगाह पर आ पहुचे थे।

पकोकुके पास कीचड़वाली नदीमे नहाकर और ब्रह्मी आतिथ्य स्वीकार करके हम फिर जहाज पर सवार हुअे और मिट्टीके तेलके कुअे खनेके लिअे येननजाव तक गये। कहा जा सकता है कि यहा पर अमेरिकन मजदूरोका राज चलता है। आसपास वनश्री नहीके बराबर है। यहा अेक ओर अिन मिट्टीके तेलके कुओका आधुनिक क्षेत्र और दूसरी ओर टेकरी पर स्थित छोटेसे प्राचीन बौद्ध मदिरका तीर्थक्षेत्र, दोनोको देखकर मनमे कअी विचार अुठे। मदिरकी कारीगरीमें हाथीके मुहवाला अेक पक्षी खुदा हुआ था। वैसे ही अन्य अनेक मिश्रण यहा दिखाअी दिये। निकटके मठमे कुछ बौद्ध साधु आलापके साथ सायकालकी प्रार्थना या अैसी ही कोअी दूसरी विधि कर रहे थे। अैरावती मानो बिना किसी पक्षपातके मिट्टीके तेलके कुओके पपोका शोरगुल भी अपने हृदय पर वहन करती है और 'अनिच्चा वत संखारा अुप्पादव्यय-धम्मिणो' का श्रांत या चिरतन संदेश भी वहन करती है। अमेरिकाका सामर्थ्य भले बेजोड हो, लेकिन वह भूखड अभी बच्चा ही कहा जायगा न? अुसको जीवनका रहस्य अितनी जल्दी कैसे हाथ लगेगा? अुसे तो नदीके किनारे तीन तीन हजार फुट गहरे कुअे खोदकर मिट्टीका तेल निकालनेकी ही सूझेगी। ससारके सब सृष्ट पदार्थ पैदा होते है और मिट जाते हैं। सभी नश्वर और व्यर्थ हैं, असार है। सार तो केवल अिससे बचकर निर्वाण प्राप्त करनेमे है — अिस बातको कौनसा अमेरिकन मान सकता है? किन्तु अैरावती नदी नव-अुत्साहके कारण कभी ज्ञानसे अिनकार नही करेगी, और न ज्ञानके भारसे अुत्साहको खो बैठेगी। अुसे तो महासागरमें विलीन होना है और अिस विलीनताके आनदको सदा जाग्रत और बहता रखना है।

येननजावसे हम प्रोम तक गये और वहा अैरावतीसे विदा हुअे। यहासे आगे चलकर यह महानदी अनेक मुखोसे सागरको मिलती है। अैरावती सचमुच सुवर्णदेशकी माता है।

मार्च, १९२७

६७

समुद्रके सहवासमें

[अफ्रीका जाते समय]

वम्बअीसे मार्मागोवा तक हिन्दुस्तानका पश्चिमी किनारा दिखाअी देता था। मा जब तक आखोसे ओझल नही होती तब तक बच्चेको जिस प्रकार यह विश्वास रहता है कि मैं माके साथ ही हू, अुसी प्रकार हिन्दुस्तानका किनारा दिखता रहा तब तक अैसा नही लगा कि हमने हिन्दुस्तान छोड दिया है। मार्मागोवा छोडकर हमारे जहाज 'कपाला' ने स्वदेशके साथ समकोण बनाते हुअे सीधे विशाल समुद्रमें प्रवेश किया। देखते देखते हिन्दुस्तानका किनारा आखोसे ओझल हो गया और चारो ओर केवल पानी ही पानी दिखाअी देने लगा। रात हुअी और आकाशकी आबादी बढी। परिणामस्वरूप अकेलापन बहुत कम महसूस होने लगा। किन्तु जैसे जैसे हम भूमध्य-रेखाकी ओर बढने लगे, वैसे वैसे हवा और बादलोकी चंचलता बढने लगी। मौसम अच्छा होनेसे समुद्र शात था। लहरे जरा जरा-सी हसकर बैठ जाती थी। कुछ लहरे कच्ची छीककी तरह अुठते-अुठते ही शात हो जाती थी। समुद्रका रग कभी आसमानी स्याहीकी तरह नीला हो जाता, तो कभी कालास्याह। और जहाज पानी काटता हुआ जब आगे बढता, तब दोनो ओर अुनका जो सफेद फेन फैलता, अुसके अनेक अबरी बेलबूटे बन जाते। नीले रगके साथ अुनकी शोभा अेक किस्मकी मालूम होती, काले रगके साथ दूसरे किस्मकी। शुरू शुरूमें समुद्रके चेहरे पर लहरोके अलावा चमडे पर पडी हुअी झुर्रियोकी-सी स्पष्ट छाप दिखाअी देती। कभी कभी ये झुर्रिया लुप्त हो जाती और पानी चमकते हुअे बर्तनोकी तरह सुन्दर दिखाअी देता। जहाज आहिस्ता आहिस्ता डोलता हुआ चल रहा था। जहाज जब कदमें छोटे होते हैं, तब अधिक डोलते हैं। बडे जहाज अपनी धीरगभीरता आसानीसे नही छोडते। सामनेसे जब लहरे आती है, तब जहाज डोलनेके

अलावा घुडसवारकी तरह आगे-पीछे भी हिलता है, जिसे अग्रेजीमे 'पिचिग' कहते है। यह 'पिचिग' लम्बे समय तक जारी रहे तो मनुष्यको अच्छा नही लगता, वह अनुकूल भी नही आता। किन्तु अुसे रोका कैसे जाय? झूलते-झूलते अुकता जाने पर झूला बंद करके अुस परसे अुतरा जा सकता है। किन्तु यहा तो अेक बार जहाजमे बैठे कि आठ दिन तक अुसका हिलना और डुलना स्वीकार किये सिवा कोअी चारा ही नही रहता। कभी कभी मनमे सदेह पैदा होता है कि दोनो गतियोके मिश्रणसे कही चक्कर तो न आने लगेगे? मनमे यह डर भी पैठ जाता है कि चक्करकी शका मनमे अुठी अिसीलिअे अब चक्कर भी आने लगेगे। खाते समय स्वादपूर्वक खाते हो, तो भी मनमें यह सदेह बना रहता है कि खाया हुआ पेटमे रहेगा या नही? अिस सदेहको मिटाना आसान बात नही है। खैर जो हो, हमने तो अपने आठो दिन खूब आनदमे बिताये। लोगोने हमे डरा दिया था कि अन्तके चार दिन बडे कठिन जायगे, किन्तु वैसा कुछ भी नही हुआ। हा, भूमध्य-रेखा जिस दिन पार की अुस दिन कुछ समय तक हवा खूब तेज चली। किन्तु अुससे हम गमगीन नही हुअे।

चारो ओर जब पानी ही पानी होता है तब कुछ समय तक मजा आता है। बादमे सारा वायुमडल गभीर बन जाता है। यह गभीरता जब कम हो जाती है तब आखोको अकुलाहट मालूम होती है। हमारी पूरी सृष्टि मानो अेक जहाजमे ही समा जाती है। विशाल समुद्रकी तुलनामे वह कितनी छोटी और तुच्छ लगती है! समुद्रकी दया पर जीनेवाली! अुसे छोडकर चारो ओर पानी ही पानी होता है। अितने सारे पानीका आखिर अुद्देश्य क्या है? जमीन पर होते है तब हम चाहे अुतना विशाल खड क्यो न देखे, मनमे कभी यह खयाल नही आता कि अितनी सारी जमीन किसलिअे बनाअी गयी है? विशाल और अनत आकाशको देखकर भी अैसा नही लगता कि अितने बडे आकाशका निर्माण किसलिअे हुआ है? किन्तु समुद्रका पानी देखकर यह विचार मनमे अवश्य अुठता है। जमीनकी अभ्यस्त आखे पानीका अखड विस्तार देखते देखते अकुला जाती है, और

अंतमें थककर क्षितिजमें छाये हुअे बादलोंको देखकर विश्राम पाती है। मगर ये बादल तो अवसर बिना आकारके और अर्थहीन होते है। आकाश जब मेघाच्छन्न हो जाता है तब अुसकी अुदासी असह्य हो अुठती है। अीश्वरकी कृपा है कि अिस अकुलाहटका भी अन्तमें अंत आता है और खुली आंखे भी अंतर्मुख हो जाती हैं तथा मन गहरे विचारमें डूब जाता है।

रातके समय और खास कर बडे तडके तारे देखनेमें बड़ा आनंद आता था। किन्तु 'पूरा आकाश तो नहीं ही देखने देंगे' अैसा कहकर बादल बच्चोंकी तरह आकाशके चेहरे पर अपने हाथ घुमाते रहते थे। अुनकी दयासे जिस समय आकाशका जितना हिस्सा दिखाअी देता, अुसीको पढ लेना हमारा काम रहता था। गुरुवारका प्रातःकाल होगा। जहाज सीधा चल रहा था। अुसके मुख्य स्तंभके ठीक पीछे शर्मिष्ठा थी। स्तंभकी आडमें भाद्रपदाकी चौकोन आकृति जैसे वैसे जम गयी थी। नीचे अुतरते हुअे ध्रुवकी बगलमें देवयानी निकल रही थी। पौने पांच बजे और त्रिकाण्ड श्रवण सिर पर खस्वस्तिककी जगह लटकने लगा। हंस, अभिजित और पारिजात, तीनोंका मिलकर अेक सुन्दर चंदोवा बन गया था। बाअीं ओर गुरु, चंद्र और शुक्र अेक कतारमें आ गये थे। चंद्रकी चांदनी अितनी मंद थी कि अुसे छाछकी अुपमा भी नहीं दी जा सकती थी। सामने देखा तो बाअीं ओर वृश्चिक अपने अनुराधा, ज्येष्ठा और मूलके साथ लटक रहा था, जब कि दाअीं ओर स्वाति अस्त हो रही थी। बेचारा ध्रुवमत्स्य लगभग क्षितिजमें मिल गया था।

दूसरे दिन चंद्रका पक्षपात ध्रुवकी ओर हो गया। सप्तर्षिके दर्शन करके हम सोने जा रहे थे, अुस समय आकाशमें पुनर्वसुकी नावको हमारे साथ दक्षिणकी यात्रा पर रवाना हुअी देखकर बड़ी खुशी हुअी। पुनर्वसुकी नावमें बैठनेकी तिष्याकी अभिलाषा अभी तक अतृप्त ही रही है। शायद मघा नक्षत्रकी अीर्ष्या अिसमें रुकावट डालती होगी। शनिवारके दिन चंद्र और तारोंकी युति सुन्दर मालूम हुअी। आखिर आसिरमें अिन दोनोंने कुछ तीरा-सा रंग धारण कर

लिया था। भाद्रपदाकी चौडी नाली यहा खूब अूची चढी हुअी दिखती थी।

ध्रुव कलसे लुप्त हो गया था।

सुवह जव अुपा स्वागत करनेके लिअे स्मित करती है, तव सारे क्षितिज पर चादीके जैसी चमकीली किनारी बन जाती है। अिसके वाद समुद्र प्रसन्नताके साथ हसने लगता है और अुषाके प्रगट होनेके लिअे गुलावी अवकाश देता है।

शनिवारको सामनेसे आता हुआ अेक जहाज दिखाअी दिया। अपने दीयेका प्रकाश चमकाकर अुसने हमारे जहाजका अभिवादन किया। हमारे जहाजने भी अुसका अभिवादन किया ही होगा। दोनो जहाज यदि वहुत समीप आ जाते, तो दोनो भोपू बजाते। किन्तु जहा आवाज नही पहुचती, वहा प्रकाशके द्वारा बाते करनी पडती है। पूरे चार दिनके अेकान्तके वाद हमारे जहाजके जैसी ही दूसरी अेक सृष्टिको जीवन-पट पर विहार करते देखकर अत्यत आनद हुआ। हमारे जहाजके लोग अफ्रीकाके सपने देख रहे थे। सामनेवाले जहाजके यात्री हिन्दुस्तानके सपने देख रहे थे। हरेक जहाजके यात्रियोके मनोव्यापारोका योग लगाया जाय तो कैसा मजा आये!

जहाज परके यात्रियोकी तीन जातिया होती है। प्रतिष्ठाकी अस्पृश्यता भोगनेवाले होते है पहले वर्गके यात्री। अुन्हे अधिक सुविधाये मिलती है, यह वात छोड दीजिये। किन्तु अुनका वडप्पन अिस वातमे है कि अुनके राज्यमे दूसरा कोअी प्रवेश नही कर पाता। अूपरी डेकका वहुत-सा हिस्सा अुनके आराम और खेल-कूदके लिअे सुरक्षित रखा जाता है। दूसरे वर्गके यात्रियोको भी अच्छी खासी सुविधाये मिलती है। लेकिन तीसरे वर्गके यात्रियोकी गिनती तो मनुष्योमे होती ही नही। अुनके झुड भेड़-वकरियोकी तरह कही भी ठूस दिये जाते है। लगातार आठ दिन तक मनुष्यको पशु-जीवन बिताना पडे, यह कोअी मामूली मुसीबत नही है।

और अब दूसरे और तीसरे वर्गके बीचमें अेक 'अिन्टर' का वर्ग बनाया गया है। वह पशु और मनुष्यके बीचका वानर-वर्ग कहा जा सकता है। अुसमें काफी भीड होते हुअे भी अितनी गनीमत है कि यात्री मनुष्यकी तरह सो सकते हैं।

हम जहाज पर हैं, यह मालूम होते ही अनेक लोग हमसे बातें करनेके लिअे आने लगे। अुसमें भी हमारे सुबह-शाम प्रार्थना करनेके समाचार जब जहाजके खलासियों तक पहुंचे, तब अुन्होंने हमें नीचेके डेक पर शामकी प्रार्थना करनेके लिअे बुलाया। करीब सभी खलासी सूरत जिलेके थे। भजनके पूरे रसिया। वे अनेक भजन जानते और ताल-स्वरके साथ गा सकते थे। अुनकी भजन-मंडली जब जमती तब वे सारे दिनकी थकावट और जीवनकी सारी चिन्तायें भूल जाते थे। यह जानते हुअे भी कि नीले रंगकी पोशाक पहनकर सारे दिन यंत्रकी तरह काम करनेवाले लोग यही हैं यह सच नहीं मालूम होता था। अुनके समक्ष मैंने अनेक प्रवचन किये। मैंने अुन्हें यह समझानेकी कोशिश की कि अुनका जीवन अेक तरहकी साधना ही है। मैंने यह भी बताया कि जमीन पर ही दीवारें खड़ी की जा सकती हैं, समुद्र पर नहीं। अतः खलासियोंके समाजमें जात-पातकी दीवारें नहीं होनी चाहिये। अुन्हें तो दरिया-दिल बनना चाहिये।

हम लोग अिस प्रकार भजनमें तल्लीन रहते थे, अुसी बीच जहाज परके कअी गोवानी लोगोंने अेक रातको स्त्री-पुरुषोंके अेक नाचका आयोजन किया। अिसके लिअे अुन्होंने जो चंदा अिकट्ठा किया, अुसमें हमको भी शरीक किया। अिसलिअे हम हकदार प्रेक्षक बने।

गोवाके अीसाअी लोगोंमें युरेशियन नहींके बराबर हैं। धर्मसे अीसाअी किन्तु रक्तसे शुद्ध हिन्दुस्तानी लोगोंने पश्चिमके जो संस्कार अपनाये हैं, अुनका असर देखने लायक होता है। कुछ युगल नृत्य-कलाका संयमपूर्वक आनंद ले रहे थे, कुछ अैसे गंभीर, अलिप्त और यांत्रिक ढंगसे नाच रहे थे, मानो कोअी सामाजिक रस्म अदा कर रहे हों; जब कि कुछ युगल नृत्यके निराग मजूर की अपनी पूरी छूट लेकर नृत्यमें तथा अेक-दूसरेमें लीन हो रहे थे। अेक दो सज्जनोंको

अुम्र और अूचाअी अितनी असमान थी कि मनमें यही विचार आता कि अितनी वडी विडवनाका भोग अुन्हे कैसे वनना पड़ा। सकरी जगहमें अितने सारे लोगोका नृत्य जैसे तैसे पूरा हुआ। अत तक जागनेकी अिच्छा न होनेसे ग्यारह वजनेसे पहले ही हम लोग सो गये।

हमारा जहाज पश्चिमकी ओर यानी पृथ्वीकी दैनदिन गतिसे अुलटी दिशामे चल रहा था। अत लगभग हररोज हमे घडीके काटे घुमाने पडते थे। जहाजकी ओरसे हमें सूचना मिलती थी कि 'मध्यरात्रिमे आधा घटा कम करो' या 'अेक घटा कम करो।' सृष्टिके नियमको समझकर हम अितना नुकसान अुठानेको तैयार हो जाते थे। अफ्रीका पहुचने तक हमने कुल मिलाकर ढाअी घटे खोये थे। (वेल्जियन कागो जाने पर अेक घंटा और खोना पड़ा था।)

भूगोलके तथ्य न जाननेवाले पाठकोको अितना कह देना आवश्यक है कि रेखाशकी हर पद्रह डिग्री पर अेक घटा वढाना या खोना पडता है। और प्रशात महासागरमे जब जहाज अेशिया और अमेरिकाके बीच १८० रेखाश पर होते है, तब अुन्हे आते या जाते अेक पूरा दिन वढाना या घटाना पडता है। अिस रेखाशको अग्रेजीमे 'डेट लाअिन' कहते है। हमारे यहा जिस तरह अधिक मास आता है, अुसी तरह 'डेट लाअिन' पर जाते हुअे अेक अधिक दिन आता है, जब कि आते हुअे अेक दिनका क्षय होता है।

आठ दिनमे न तो कोअी अखबार देखनेको मिला, न डाक, न मुलाकाती, न कोअी शहर या गांव — यहा तक कि सौगद खानेके लिअे कोअी पहाड़ या टापू भी देखनेको नही मिला। अैसी स्थितिमें जब घटेके घंटे और दिनके दिन चुपचाप चले आते है, तब वार और तारीखका भी ठिकाना नही रहता। हमारे जहाजकी अूचाअीका हिसाव करते हुअे जब मैने अिस वातकी जाच की कि हमारे अिर्दगिर्द क्षितिज तक कितना समुद्र फैला हुआ है, तब जहाजवालोंसे मालूम हुआ कि हमारी आखे २५० वर्गमीलका समुद्र अेक चक्करमें पी सकती थी।

कैसी महाशांति थी! वह भी डोलती, झूलती, बहती किन्तु स्थिर शांति आकाशके आशीर्वादके नीचे अुमड रही थी। Swelling and rolling peace—abiding and abounding पता नहीं किस तरह, अिस शांतिके सेवनके साथ मुझमे मानव-प्रेम अुमड रहा था और सारी मनुष्य-जातिसे स्वस्ति, स्वस्ति, स्वस्ति कह रहा था। मानव-जातिका अितिहास आज भी कुल मिलाकर सुन्दर नहीं बन पाया है। अिसी समुद्रने कितने ही अन्याय और अत्याचार देखे होंगे। कितने ही गुलामोंकी आहें यहाकी हवामे मिली होंगी। और कितनी ही प्रार्थनायें सूर्य, चद्र और तारो तक पहुच कर भी व्यर्थ गअी होंगी। अैसा होते हुअे भी यदि मनुष्य-रक्तके कारण समुद्रमें लाली नहीं आअी, दुःखियोंकी आहोसे यहाकी हवा कलुषित नहीं हुअी और लोगोंकी निराशासे आकाशकी ज्योतिया मद नही पडी, तो मनुष्य-जातिका थोडासा अितिहास पढकर मेरा मानव-प्रेम किसलिअे सकुचित या कम हो? यदि मैं अपने असख्य दोषोको भूलकर अपने आप पर प्रेम कर सकता हू, और अपने विषयमे अनेक तरहकी आशायें बाध सकता हू, तो मेरे ही अनत प्रतिबिंबरूप मानव-जातिको मेरा प्रेम कम क्यों मिले?

अैसी भावनाके साथ अफ्रीकाकी भूमि पर विषम स्पर्श करानेवाले मनुष्य-जातिके त्रिखड सहकारको देखनेके लिअे मैं मोम्बासा पहुचा।

अिन आठ दिनोमे खूब पढने-लिखनेकी जो अुम्मीद मैंने रखी थी, वह पूरी नही हुअी। किन्तु ये आठ दिन जीवनके दर्शन, चिंतन और मननसे भरपूर थे।

नवंबर, १९५०

६८

रेखोल्लंघन

भूमध्य-रेखा (equator) पृथ्वीकी कटि-मेखला है। सीलोनके दक्षिणमे पहुचा था तब यह सोचकर मन कितना अस्वस्थ हुआ था कि यहा तक आये फिर भी भूमध्य-रेखा तक नही पहुंच सके! सीलोनके दक्षिणमे गाल, देवेन्द्र और मातारा तक गये तब भी छठी डिग्रीसे ज्यादा दक्षिणमे नही जा सके। कन्याकुमारी गया तब मुश्किलसे आठवी डिग्री तक ही पहुचा था। चि० सतीश सिंगापुर था तब वहां जानेकी अेक बार अिच्छा हुअी थी — अुसे मिलनेके लिअे नही, परतु भूमध्य-रेखा लाघ सकूगा अिस लोभसे। फिर जब नक्शेमें देखा कि सिंगापुर भी भूमध्य-रेखाके अिस ओर ही है तब वह अुत्साह नही रहा।

लेकिन भूमध्य-रेखामें अैसा क्या है? जमीन पर या पानी पर सफेद, काली या पीली लकीर नही खीची गअी है। फिर भी भूमध्य-रेखाका प्रदेश काव्यमय है अिसमे कोअी शक नही।

अुस प्रदेशका स्मरण करता हूं और मुझे शान्तादुर्गा और अर्ध-नारी नटेश्वरका स्मरण होता है। शान्तादुर्गा अेक ओर शुभकरी शान्ता है, तो दूसरी ओर भयकरी दुर्गा है। महादेवका भी अैसा ही है। अुनका दक्षिण मुख सौम्य शिव है और वाम मुख अुग्र रुद्र है। अर्ध-नारी नटेश्वर अेक ओर स्त्रीरूप है, तो दूसरी ओर पुरुषरूप हैं। हमारे समन्वयवादी पूर्वजोने हरि-हरेश्वरकी कल्पना अिसी तरह की है। शिव और विष्णु दोनोके मिलनेसे हरि-हरेश्वर बने हैं।

भूमध्य-रेखा पर अिसी तरह परस्पर विरोधी ऋतुओका मिलन है। अुत्तर गोलार्धमें जब गर्मीका मौसम होता है तब दक्षिण गोलार्धमें जाडेका। अेकमें जब वसत होता है तब दूसरेमें शरद्। भूमध्य-रेखा

अेक अैसा प्रदेश है जहा गर्मी और जाडेके मौसम हस्तांदोलन कर सकते है। और प्रौढा शरद् भी बाल वसतका खेला सकती है।

अैसी जगह अगर अखड शान्ति ही रहे तो वहाका जीवन अलोना हो जाय! खिलाडी कुदरतसे यह कैसे सहा जाय? गगा-यमुनाके धवल-श्यामल पानीका सगम तो हमेशा नाचा करे, और अुत्तर-दक्षिणका मिलन नृत्य न करे, यह कैसे चले?

आज भूमध्य-रेखा पर आये है। यहा पवन अमन्द रूपसे नाचता है। चचलता कही स्थिर हुअी हो तो यही। यहाकी कुदरत अेक हाथसे गर्मीकी पीठ पर थपकिया देती है, तो दूसरा हाथ जाडेकी पीठ पर फेरती है।

भूमध्य-रेखा यानी तराजूमें तौला हुआ पक्षपात-रहित न्याय। अुत्तर-ध्रुव दीख पडे और दक्षिण-ध्रुव नही, अैसा यहा नही चल सकता। यहाके आकाशमे मृग नक्षत्रके पेटमे पहुचा हुआ बाण अिधर या अुधर झुक या ढल नही सकता। सीधा पूर्वमे अुग कर खस्वस्तिक (Zenith) को छूकर वह पश्चिममे डूबेगा। यही अेक धन्य प्रदेश है जहा खस्वस्तिक विषुववृत्त पर विराजमान हो सकता है। जैसे भूमि पर भूमध्य-रेखा होती है, वैसे आकाशमे विषुववृत्त (celestial equator) होता है। अितना लिखते है वहा हमारा रगीन अभिनदन करनेके लिअे अेक अिन्द्र-धनुष आगे दाहिनी ओर निकल आया है। अब तृप्ति हुअी। लेकिन समस्त मानव तृप्तियोकी तरह वह अगर अल्पजीवी न हो तो पेट फट जाय। और पेट नही तो आखे फूट जाये। यह कैसे पुसा सकता है? अब दक्षिण गोलार्धमे क्या क्या देखने-जाननेको मिलेगा, क्या क्या अनुभव होगा, अैसी अुत्सुकता जाग्रत होने लगी है। भूमध्य-रेखा पहली बार लाघ सके अुसकी धन्यता सदा साथ रहेगी।

मअी, १९५०

नीलोत्री

(१)

अफ्रीकाकी यात्रा करनेमे अेक अुद्देश्य था अुत्तर-पूर्व अफ्रीकाकी माताके समान अुत्तर-वाहिनी नील नदीके अुद्गम-स्थान नीलोत्रीके दर्शनका। गगोत्री और जमनोत्रीकी यात्रा करनेके वाद अभी अभी अैसा लगने लगा था कि नीलोत्रीकी यात्रा करनी ही चाहिये। वह दिन अव निकट आ गया था। जुलाअीकी पहली तारीखको सुवह ही हमने कपाला छोडकर जिजाके लिअे प्रस्थान किया। अपने जरूरी कामके कारण श्री अप्पासाहव आज नैरोवी वापस चले गये और हम मोटर लेकर अपने रास्ते चल पडे।

कपालासे जिजा तकका रास्ता सुन्दर है। अनेक छोटी-छोटी और चौडी पहाडिया चढती-अुतरती हमारी मोटर हमारे और नीलोत्रीके वीचका वावन मीलका फासला काटती गअी और हमारी अुत्कठा वढाती गअी। यह कितने वडे सौभाग्यकी वात थी कि जिजा तक पहुचनेके पहले ही हमारा सकल्प पूरा हुआ और हमे नीलोत्रीके दर्शन हो गये! दाअी ओर विक्टोरिया या अमरसरका सरोवर दूर तक फैला हुआ है। अुसमें से सहज-लीलासे छलाग मारकर नील नदी जन्म लेती है! हम नदीके पुल पर पहुचे। मोटरसे अुतरे और दाअी ओर मुडकर रिपन फॉल्सके नामसे मशहूर अेक छोटे-से प्रपातमे हमने नील नदीके दर्शन किये।

प्रपातके तुषारोमे पैर ढक गये है। सिर पर मुकुट चमक रहा है। और पीछे अेक हरा-भरा वृक्ष मुकुटको अधिक सुशोभित कर रहा है। देवीके दोनो हाथोमे धानकी पूलिया है और मुह पर प्रसन्न वात्सल्य खिल रहा है — अैसी मूर्ति कल्पनाकी नजरमे आअी। मूर्ति नीले रगकी नही थी, वल्कि श्यामवर्णकी ओर जरा झुकती हुअी गोरी ही थी। सारे वदन पर पानीकी धाराये वह रही थी। अिससे देवीके मुख परका हास्य अधिक सुन्दर मालूम हो रहा था।

जी भरकर दर्शन करनेके बाद हमने बाओी ओर देखा। दाओी ओरका पानी हमारी दिशामे दौडा चला आ रहा था। बाओी ओरका पानी हमसे दूर दूर दौडा जा रहा था। दोनोका असर बिलकुल भिन्न था। हमें मालूम था कि दाओी ओर रिगन प्रपात है, और बाओी ओर जरा दूर ओवेन प्रपात है। हमारे देशमें अैसे कोओी प्रपात हरगिज नही कहेगा। पानीकी सतहमे कुछ फुटका अतर पैदा हो जानेसे ही क्या प्रपात बन जाता है? प्रपात तो तभी कहा जा सकता है जब पानी धब-धब गिरता हो, जितना गिरे अुतना ही फिर अुछलता हो और फेन तथा तुषारके बादल अिर्दगिर्द नाचते हो।

यात्राके अतमे लोग तुरन्त जाकर मदिरोमे जो देवताका दर्शन करते है, अुसे यात्रियोकी परिभाषामे 'धूल-भेट' कहते है। यात्रा पैदल की हो, सारे शरीर पर धूल छाओी हो और अुत्कठाके कारण अुसी स्थितिमे दौडकर अिष्ट देवताके चरणोमे गिर रहे हो या मिल रहे हो, तो अुसे धूल-भेट कहते हैं। हम तो मोटरकी रफ्तारसे आये थे। सुबह थोडा-सा पानी गिरा था, अिससे रास्ते पर भी धूल नही थी। अत. अिस प्रथम दर्शनको 'भीनी-भेट' ही कह सकते थे। यदि 'भाव-भीनी' कहे तो वह और अधिक यथार्थ वर्णन होगा। मनि गीली, जमीन गीली, आखें गीली और अनेक मिश्र-भावोसे ओतप्रोत हृदय भी गीला। 'अद्य मे सफल जन्म, अद्य मे सफला क्रिया' यह पक्ति जिसने प्रथम गाओी होगी, वह मेरे जैसे असख्य यात्रियोका प्रतिनिधि ही होगा।

नीलमाताके अिस प्रथम दर्शनको हृदयमें सग्रह करके हमने जिजामे प्रवेश किया। गुजरात विद्यापीठके किसी समयके विद्यार्थी अेग्रोनॉमिस्ट श्री चदुभाओी पटेलके यहा हमारा डेरा था। पुराने विद्यार्थियोके यहा आतिथ्य अनुभव करना जितना आनद-दायक होता है, अुतना ही नाजुक और कठिन भी होता है। घरकी अच्छीसे अच्छी सुविधाये हमें देकर खुद अडचन भोगनेमें वे आनद मानते होगे, किन्तु हमें सकोच अनु-भव हुअे बिना कैसे रह सकता है?

अब हम नीलोत्रीके विधिवत् दर्शनके लिअे निकल पडे। हम वहा पहुचे जहा अमरसरका जल शिलाओकी किनार परसे नीचे अुतरता है और नील नदीको जन्म देता है। जल्दी जल्दी पानीके पास जाकर पहले पैर ठडे किये। आचमन करके हृदय ठडा किया और क्षणभरके लिअे अुस स्थानका ध्यान किया। मेरी आदतके अनुसार अीशोपनिषद्, माडुक्य अुपनिषद् या अघमर्षण सूक्त मुहसे निकलना चाहिये था। किन्तु अेकाअेक यह श्लोक निकला.

ध्येय. सदा सवितृ-मडल-मध्यवर्ती
नारायण. सरसिजासन-सन्निविष्ट.।
केयूरवान् मकर-कुडलवान् किरीटी
हारी हिरण्मय-वपुर् धृत-शख-चक्र ।।

नील नदीके तट पर भिन्न भिन्न समय पर और भिन्न भिन्न स्थान पर तीन बार नीलाम्बाका ध्यान किया और हर बार मुहसे अचूक रूपमें यही श्लोक निकला। अब मुझे मिश्र देशकी सस्कृतिके पुराणोमे यह खोज करनी है कि क्या नील नदीका भगवान् सूर्य-नारायणके साथ कोअी खास सबध है ?

मै यदि सस्कृतका कवि होता तो अिस नदीके पानीमे रहने-वाली मछलियो, पानी पर अुडनेवाले वाचाल पक्षियो और अुसके किनारे लोटनेवाले किब्रोका (हिपोपोटेमस) की धन्यताके स्तोत्र गाता। नील नदीके किनारे जो वॉटर वर्क्स है, अुसकी देखभाल करनेके लिअे नियुक्त अेक गुजराती सज्जनके भाग्यसे अुन्हीकी भाषामे अीर्ष्या प्रकट करके मैंने सतोष माना: "आप कितने धन्य है कि आपको अहोरात्र नीलोत्रीके दर्शन होते रहते है, और यहासे न हटनेके लिअे आपको तनख्वाह दी जाती है!" यह देखने या पूछनेके लिअे मै वहा रुका नही कि अुनको अिस तरहकी धन्यता महसूस होती है या नही।

मेरी दृष्टिसे नदिया दो प्रकारकी होती है। पहाडसे निकलनेवाली और सरोवरसे निकलनेवाली। पहलीको मै शैलजा या पार्वती कहूगा; और दूसरीको सरोजा। (आशा है ससार भरके कमल मुझे क्षमा

करेंगे।) शैलजा नदियोका अुद्गम वहुत छोटा, पतला और लगभग तुच्छ जैसा होता है। अत अुनके प्रति आदर अुत्पन्न करनेके लिअे वडे-वडे माहात्म्य लिखने पडते है। गगोत्रीके पास गगाका प्रवाह कभी-कभी अितना छोटा हो जाता है कि सामान्य मनुष्य भी अुसके अेक किनारे अेक पैर और दूसरे किनारे दूसरा पैर रख कर खडा हो सकता है। सरोजा नदियोकी वात अलग है। विशाल और स्वच्छ वारि-राशिमें से जीमें आये अुतना पानी खीचकर वे वहने लगती है। और अुनके चलने-वोलनेमे जन्मसे ही धनी श्रीमन्त होनेका आत्मभान होता है।

नीलोत्रीकी यात्रा करनेका अेक और भी अदम्य आकर्षण था। महात्मा गाधीके पार्थिव शरीरको दिल्लीके राजघाट पर अग्निसात् करनेके पश्चात् अुनकी अस्थि और चिता-भस्मका विसर्जन हिन्दुस्तान तथा ससारके अनेकानेक पुण्य-स्थानोमे किया गया था। अुनमें से अेक स्थान नीलोत्री है।

हम जिजा नगरीके सार्वजनिक मेहमान थे। अत यहाके लोगोने हमारी अुपस्थितिसे 'लाभ अुठाने' की ठानी और जहा चिता-भस्मका विसर्जन किया गया था, अुसके पास अेक कीर्तिस्तभ खडा करनेकी वात तय हो चुकनेसे अुसका शिलान्यास मेरे हाथो करानेका प्रबन्ध किया।

२ जुलाअी, १९५० को अधिक आपाढ कृष्ण तृतीयाके दिन सुवह सैकडो लोगोकी अुपस्थितिमे मैंने यह विधि पूरी की। अिस अुत्सवके लिअे गाधीजीका अेक वडा चित्र सामने रखा गया था। अुसकी नजर मुझ पर पडते ही मै वेचैन हो अुठा। वैदिक विधि पूरी होनेके पश्चात् मैंने गाधीजीके जीवनके वारेमे थोडासा प्रवचन किया और वताया कि अफ्रीका ही अुनकी तपोभूमि है। फोटो वगैरा खीचनेकी आधुनिक विधिसे मुक्त होते ही किनारेके अेक पत्थर पर बैठकर नील-माताके सुभग जल-प्रवाह पर मैंने टकटकी लगाअी और अन्तर्मुख होकर ध्यान किया। अुस समय मनमें विचार आया कि यूरोप, अफ्रीका और अेशिया, अिन तीनो महाखडोंके वल्कि अमेरिकाके भी महान और सामान्य आवालवृद्ध स्त्री-पुरुष यहा आवेंगे, सर्वोदयके ऋषि महात्मा

गाधीके जीवन, जीवन-कार्य और अंतिम बलिदानका यहां चिन्तन करेंगे और मनुष्य मनुष्यके बीचका भेदभाव भूलकर विश्व-कुटुबकी स्थापना करनेका व्रत लेंगे। भविष्यके अिन सारे प्रवासियोको मैंने वहासे अपने प्रणाम भेजे।

(२)

नील नदीकी दो शाखाये है। श्वेत और नील। जिजाके समीप जिसका अुद्गम होता है वह श्वेत शाखा है। नीलशाखा भी सरोजा ही है। अीथियोपिया (जिसे हम हब्शियाना (अेबिसीनिया) कहते है) देशमे ताना नामक अेक सरोवर है। अिस सरोवरमे से नील शाखा निकलती है। ये शाखाये लाखो वरससे बहती रही हैं और अपने किनारे रहनेवाले पशु-पक्षी और मनुष्योको जलदान देती रही है। मगर युरोपियन लोगोको जिस चीजका पता न हो वह अज्ञात ही कही जायगी। अेक दृष्टिसे अुनका कहना सही भी है। दूसरे लोग नदीके किनारे रहते हुअे भी यदि अिसकी खोज न करें कि यह नदी असलमें आती कहासे है और आगे कहा तक जाती है, तो यह नही कहा जा सकता कि अुन लोगोको सारी नदीका ज्ञान है। मसलन्, तिब्बतके लोग मानसरोवरसे निकलनेवाली सानपो (विशाल प्रवाह) नदीको जानते हैं। वे लोग अधिकसे अधिक अितना ही जानते है कि यह नदी पूर्वकी ओर बहती बहती जगलमें लुप्त हो जाती है। अिधरसे हमारे लोग ब्रह्मपुत्रका अुद्गम खोजते खोजते अुसी जगलके अिस ओरके सिरे तक पहुचे। आगेका वे कुछ नही जानते। जब कअी अंग्रेजोंने प्रतिकूल परिस्थिति होते हुअे भी अिन जगलोको पार किया, तभी वे यह स्थापित कर सके कि तिब्बतकी सानपो नदी ही अिस ओर आअी है और अन्य कअी छोटी-बडी नदियोका पानी लेकर ब्रह्मपुत्र बनी है।

नील नदीका अुद्गम खोजनेवालोमे मि० स्पीक अतमें सफल हुअे और अुन्होंने यह सिद्ध किया कि जिजाके पास सरोवरसे जो नदी निकलती है वही मिश्र-माता नील है।

ये स्पीक साहब हिन्दुस्तान सरकारकी नौकरीमें थे। अुन्हे पता चला कि प्राचीन हिन्दू लोग मिश्र यानी आजके जिजिप्तके बारेमें काफी जानकारी रखते थे। अुन्होंने जाच करके यह मालूम किया कि सस्कृत पुराणोमे कहा गया है कि नील नदीका अुद्गम मीठे पानीके सरोवरसे हुआ है, अिसी प्रदेशमे चद्रगिरि है, ठेठ दक्षिणमे मेरु पर्वत स्थित है, आदि। पुराणोमे से कुछ सस्कृत श्लोकोंका अुन्होंने अनुवाद करवा लिया और अुसके सहारे नीलके अुद्गमकी खोज करनेका निश्चय किया।

वे पहले झाझीबार गये और वहासे सब तैयारी करके केनिया प्रदेश पार करके युगान्डा गये। वहा अुन्हे अगरमरवाला 'अच्छोद' सरोवर मिला। (अच्छ – सुअच्छ = स्वच्छ। अुद – अुदक = पानी। मीठे पानीके सरोवरको अच्छोद कह सकते हैं।) और वहासे निकलनेवाली नील नदी भी मिली। अुन्होंने यह सिद्ध किया कि सुडान और अिजिप्तमे बहनेवाली नदी यही है। अिस बातको अभी पूरे सौ साल भी नही हुअे हैं।

अफ्रीका खड सचमुच वहा रहनेवाली अनेक अफ्रीकन जातियोका देश है। अिस प्रदेशके बारेमे युरोपियन लोगोको पूरी जानकारी नही थी, यह कोअी वहाके लोगोका दोष नही है। युरोपके और खास करके अरबस्तानके लोग अफ्रीकाके किनारे जाकर वहाके लोगोको पकड लेते थे और अपने अपने देशमे ले जाकर अुन्हें गुलामके तौर पर बेचते थे। पकडे हुअे लोगोमे स्त्रिया भी होती थी और बच्चे भी होते थे। किन्तु लुटेरे अुनका मनुष्यके नाते खयाल क्यो करने लगे?

कुछ मिशनरी लोगोको सूजा कि असे जगली लोगोकी आत्माके अुद्धारके लिअे अुन्हे अीसाअी बनाना चाहिये। जिस गहन प्रदेशमें लोभी व्यापारी भी जानेकी हिम्मत नहीं कर पाते, वहा ये अुत्साही धर्म-प्रचारक पहुच जाते और वहाकी भाषा सीखकर लोगोको अीसा मसीहका 'शुभ-सदेश' सुनाते।

आगे चलकर युरोपके राजाओंने अफ्रीका खडको आपसमे बाट लिया। अिसमे नियम यह रखा कि जिन देशके मिशनरियोंने जितना

प्रदेश ढूढ निकाला (।) हो अुतना प्रदेश अुस देशके राजाकी मिलकियत माना जाय। अिसमे अेक वार अैसा हुआ कि स्टेन्ली नामक किसी मिशनरीने अिंग्लैडके राजासे कागो नदीके विस्तारका प्रदेश 'ढूढने' के लिअ मदद मागी। अिंग्लैण्डके राजाने यानी पार्लियामेन्टने यह मदद नही दी। अत वह वेल्जियमके राजाके पास गया। राजा लिओपोल्ड लोभी और अुत्साही था। अुसने अुसे सब तरहकी मदद दी। परिणाम-स्वरूप जब अफ्रीका खडका वटवारा हुआ तब कागो नदीके विस्तारका प्रदेश वेल्जियमके हिस्सेमे गया। वेल्जियम कागोका यह प्रदेश करीव हिन्दुस्तान जितना वडा है। वहासे रबड प्राप्त करनेके लिअे गोरे लोगोने वहाके वाशिंदो पर जो जुल्म गुजारे , अुनका वर्णन पढकर रोगटे खडे हो जाते है, अैसा कहना अल्पोक्ति ही होगी। भावनाशील मनुष्य यदि ये वर्णन पढे तो अुसका खून जम जायगा। फिर भी गोरे लोगोने यहाके वाशिंदोको धीरे धीरे 'सुधारा' अवश्य है। अब ये लोग कपडे पहनते है, वालोमे तरह तरहकी मागे निकालते है और शराव भी पीते है। अिस प्रकार अुनमे से वहुतसे ओसाओ वन गये है।

हमारे यहाके लोगोने युगान्डामे जाकर कपासकी खेती वढाओ। राज्यकर्ताओकी मददसे वहा वडी वडी 'अेस्टेटे' वनाओ और करोडो रुपये कमाये। हमने भी वहाके लोगोको सुधारा है; दरजी-काम, वढओगीरी, राजकाम, रसोओ-काम आदि धधोमे हमने अुनकी मदद की, अिसलिअे वे लोग धीरे धीरे अिसमे प्रवीण हो गये। हिन्दुस्तानके कपडो और विलायतसे आनेवाली शराव आदि अनेक प्रकारकी चीजे वेचनेकी दुकाने खोली और अुन लोगोको जीवनका आनद भोगना सिखाया।

गोरे और गेहुअे रगके लोगोके अिस पुरुषार्थकी साक्षी नील नदी यहा चुपचाप वहती रहती है और अपना परोपकार अपने दोनो तटो पर दूर दूर तक फैलाती रहती है।

हमारे देशमे गगा नदीका जो महत्त्व है, वही महत्त्व अधिक अुत्कट रूपमे अुत्तर-पूर्व अफ्रीकामे नील नदीका है। अिजिप्तकी मिश्र या मिस्र सस्कृतिका स्थान दुनियाकी सवसे महत्त्वपूर्ण पांच-छ प्राचीन

सस्कृतियोमे है। अुसका असर युरोपके अितिहास पर ही नही, बल्कि अुसके धर्म पर भी पडा है। हमारे यहा जैसी चार वर्णोवाली सस्कृति विकसित हुअी, वैसी ही सस्कृति प्राचीन मिस्र देशमे भी देखनेको मिलती है और अुसका प्रतिबिंब यूनानी दार्शनिक अफलातूनकी 'समाज-रचना' पर पडा हुआ मिलता है। चार वर्णोवाली सस्कृति अुस कालके लिअे चाहे जितनी अनुकूल और भव्य मानी गअी हो, फिर भी तूफानी युरोप अुसे हजम नही कर सका। युरोपमे जो अीसाअी धर्म फैला है, अुसका पालन-पोषण अिजिप्तमे कुछ कम नही हुआ है। किन्तु वहा विकसित हुअे वैराग्य, तपस्या तथा देह-दमनको काफी आजमानेके बाद युरोपने अुसे छोड दिया। फिर भी युरोपकी सस्कृतिकी जडे ढूढनी हो तो अिजिप्तके अितिहासमे प्रवेश करना ही पडता है और अिस अितिहासका निर्माण कुछ हद तक नील नदीका ऋणी है।

जिस तरह नदीका पानी आगे ही आगे बहता है, पीछे नही जा सकता, अुसी तरह अिजिप्तकी सस्कृति नील नदीके अुद्गमकी ओर युगान्डा प्रदेशमे नही पहुच सकी, यह बात हमारा ध्यान आकर्षित किये बिना नही रहती। अिजिप्तके लोग यदि अमरसरके आसपास आकर बसे होते, तो अफ्रीकाका ही नही बल्कि दुनियाका अितिहास भिन्न प्रकारसे लिखा जाता।

हमारे देशमे नदियोके जितने अुद्गम हम देखते है, वे सब जगलोमे या दुर्गम प्रदेशोमे होते है। और ये अुद्गम छोटे भी होते है। नील नदीका अुद्गम विशाल है, अिसकी तो कोअी बात नही। किन्तु अुद्गमके काव्यमे कमी अिस बातसे आ गअी है कि वहा अेक शहर बसा हुआ है। हमारे यहा कृष्णा और अुसकी चार सखिया सह्याद्रिके जिस प्रदेशसे निकलती है, वह प्रदेश दुर्गम और पवित्र था। सतोने वहा शिवजी महाबलेश्वरकी स्थापना की थी। किन्तु लोगोने अुसको अपना ग्रीष्म-नगर बनाकर अुस तपोभूमिको विहार-भूमि या वलास-भूमि बना डाला, अिस बातका स्मरण मुझे किअे बिना नही रहा।

और अब तो वहा ओवेन फॉल्सके सामने अेक बडा बाध बाधकर बिजली पैदा की जायगी। ससारका यह अेक अद्भुत बाध होगा। असकी शक्ति युगाडामे ही नही, सुदान और अिजिप्त तक पहुचनेवाली है। अिससे अनाज बढेगा। अकाल दूर होगा। असख्य अश्वत्थामाओ (हॉर्स-पावर) जितनी शक्ति मनुष्यकी सेवाके लिअे मिलेगी। अत अैसी प्रवृत्तिको तो आशीर्वाद ही देना चाहिये। फिर भी हृदय कहता है कि मनुष्य-जाति अिसके बदले कुछ अैसी चीज खोनेवाली है, जिसकी पूर्ति बड़ेसे बडे वैभवसे भी नही हो सकेगी।

नील नदी माता थी, देवी थी। अब वह वर्तमानकालकी लोकधात्री दाअी बननेवाली है!

नवबर, १९५०

७०

वर्षा-गान

कालिदासका अेक श्लोक मुझे बहुत ही प्रिय है। अुर्वशीके अतर्धान होने पर वियोग-विह्वल राजा पुरूरवा वर्षा-ऋतुके प्रारभमे आकाशकी ओर देखता है। अुसको भ्राति हो जाती है कि अेक राक्षस अुर्वशीका अपहरण कर रहा है। कविने अिस भ्रमका वर्णन नही किया, किन्तु वह भ्रम महज भ्रम ही है, अिस बातको पहचाननेके बाद, अुस भ्रमकी जडमे असली स्थिति कौनसी थी, अुसका वर्णन किया है। पुरूरवा कहता है — "आकाशमे जो भीमकाय काला-कलूटा दिखाअी देता है, वह कोअी अुन्मत्त राक्षस नही किन्तु वर्षाके पानीसे लबालब भरा हुआ अेक बादल ही है। और यह जो सामने दिखाअी देता है वह अुस राक्षसका धनुष नही, प्रकृतिका अिन्द्र-धनुष ही है। यह जो बौछार है, वह बाणोकी वर्षा नही, अपितु जलकी धाराअे है और बीचमे यह जो अपने तेजसे चमकती हुअी नजर आती है, वह

मेरी प्रिया अुर्वशी नही, किन्तु कसौटीके पत्थर पर सोनेकी लकीरके समान विद्युल्लता है।"

कल्पनाकी अुडानके साथ आकाशमें अुडना तो कवियोंका स्वभाव ही है। किन्तु आकाशमें स्वच्छन्द विहार करनेके बाद पक्षी जब नीचे अपने घोसलेमें आकर अितमीनानके साथ बैठता है, तब अुसकी अुस अनुभूतिकी मधुरिमा कुछ और ही होती है। दुनियाभरके अनेकानेक प्रदेश घूमकर स्वदेश वापस लौटनेके बाद मनको जो अनेक प्रकारका संतोष मिलता है, स्थैर्यका जो लाभ होता है और निश्चिन्तताका जो आनन्द मिलता है, वह अेक चिर-प्रवासी ही बता सकता है। मुझे अिस बातका भी संतोष है कि कल्पनाकी अुडानके बाद जल-धाराओंके समान नीचे अुतरनेका संतोष व्यक्त करनेके लिअे कालिदासने वर्षा-अृतुको ही पसन्द किया।

* * *

आजकल जैसे यात्राके साधन जब नहीं थे और प्रकृतिको परास्त करके अुस पर विजय पानेका आनन्द भी मनुष्य नहीं मनाते थे, तब लोग जाडेके आखिरमें यात्राको निकल पडते थे और देश-देशान्तरकी संस्कृतियोंका निरीक्षण करके और सभी प्रकारके पुरुषार्थ साधकर वर्षा-अृतुके पहले ही घर लौट आते थे।

अुस युगमें संस्कृति-समन्वयका 'मिशन' (जीवन-कार्य) अपने हृदय पर वहन करनेवाले रास्ते अनेक खण्डोंको अेक-दूसरेसे मिलाते थे। जीवन-प्रवाहको परास्त करनेवाले पुलोंकी संख्या बहुत कम थी —जो थे, वे सेतु ही थे। अुन सेतुओंका काम था, जीवन-प्रवाहको रोक लेना और मनुष्योंके लिअे रास्ता कर देना। लेकिन जब जीवनको यह बंधन असह्य-सा मालूम होने लगता था, तब सेतुओंको तोड डालना और पानीके बहावके लिअे रास्ता साफ कर देना बरसातका काम होता था। यह था पुराना क्रम। यही कारण था कि नदी-नालोंका बढा हुआ पानी रास्तों और सेतुओंको तोडे, अुसके पहले ही मुसाफिर अपने-अपने घर लौट आते थे। अिसीलिअे वर्षा-अृतुको वर्षकी 'महिमामयी अृतु' माना है।

असलमें 'वर्ष' नाम ही वर्पासे पडा है। 'हमने कुछ नही तो पचास वरसातें देखी हैं!' अिन शब्दोसे ही हमारे बुजुर्ग प्राय अपने अनुभवोंका दम भरते हैं।

*   *   *

बचपनसे ही वर्पा-ऋतुके प्रति मुझे असाधारण आकर्षण रहा है। गरमीके दिनोमें ठण्डे-ठण्डे ओले वरसानेवाली वर्पा सबको प्रिय होती है। लेकिन वादलोंके ढेरोंसे लदी हुअी हवाअें जब बहने लगती हैं, बिजलिया कडकती हैं और यह महसूस होने लगता है कि अब आकाश तडक कर नीचे गिर पडेगा, तबकी वर्पाकी चढाअी मुझे बचपनसे ही अत्यन्त प्रिय है। वर्पाके अिस आनन्दसे हृदय आकण्ठ भरा हुआ होने पर भी अुसे वाणीके द्वारा व्यक्त न कर पाअूगा और व्यक्त करने जाअूगा तो भी अुसकी तरफ हमदर्दीसे कोअी ध्यान नही देगा, अिस खयालसे मेरा दम घुटता था।

*   *   *

आसपासकी टेकरियो परसे हनुमानके समान आकाशमें दौडनेवाले वादल जब आकाशको घेर लेते थे, तब अुसे देखकर मेरा सीना मानो भारसे दब जाता था। लेकिन सीने परका यह बोझ भी सुखद मालूम होता था। देखते-देखते विशाल आकाश सकुचित हो गया, दिशाअें भी दौडती-दौडती पास आकर खडी हो गअी और आसपासकी सृष्टिने अेक छोटेसे घोंसलेका रूप धारण किया। अिस अनुभूतिसे मुझे वह खुशी होती थी जो पक्षी अपने घोसलेका आश्रय लेने पर अनुभव करता है।

लेकिन जब हम कारवार गये और पहली बार ही समुद्र-तट परकी वर्पाका मैंने अनुभव किया, तबके आनन्दकी तुलना तो नयी सृष्टिमें पहुचनेके आनन्दके साथ ही हो सकती है।

*   *   *

बरसातकी बौछारोंको मैंने जमीनको पीटते बचपनमें देखा था। लेकिन अुसी वर्पाको मानो बेतसे समुद्रको पीटते देखकर और

समुद्र पर अुसके साट अुठे देखकर अितने बड़े समुद्रके बारेमें भी मेरा दिल दया और सहानुभूतिसे भर जाता था। बादल और वर्षाकी धाराअें जब भीड करके आकाशकी हस्तीको मिटाना चाहती थी तो अुसका मुझे विशेष कुछ नही लगता था, क्योंकि बचपनसे ही मैं अिसका अनुभव करता आया था। लेकिन वर्षाकी धाराअें और अुनके सहायक बादल जब समुद्रको काटने लगते थे तब मैं बेचैन हो जाता था। रोना नही आता था, लेकिन जो-कुछ अनुभव करता था अुसे व्यक्त करनेके लिअे 'फूट-फूटकर' यह शब्द काममें लेनेकी अिच्छा होती है। वर्षा चाहे तो पहाडो पर धावा बोल सकती है, चाहे खेतोंको तालाब और रास्तोको नाले बना सकती है, लेकिन समुद्रको अपनी दरी समेटनेके लिअे बाध्य करना मर्यादाका अतिक्रमण-सा मालूम होता था। अवज्ञाके अिस दृश्यको देखनेमें भी मुझे कुछ अनुचित-सा प्रतीत होता था।

* * *

मेरी यह वेदना मैंने भूगोल-विज्ञानसे दूर की। मैं समझने लगा कि सूर्यनारायण समुद्रसे लगान लेते हैं और अिसीलिअे तप्त हवामें पानीकी नमी छिपकर बैठती है। यही नमी भापके रूपमें अूपर जाकर ठण्डी हुअी कि अुसके बादल बनते हैं, और अन्तमें अिन्हीं बादलोसे कृतज्ञताकी धाराअें बहने लगती है, और समुद्रको फिरसे मिलती है।

गीतामें कहा गया है कि यह जीवन-चक्र प्रवर्तित है जिसीलिअे जीवसृष्टि भी कायम है। अिसी जीवन-चक्रको गीताने 'यज्ञ' कहा है। यह यज्ञ-चक्र यदि न होता तो सृष्टिका बोझ भगवानके लिअे भी असह्य हो जाता। यज्ञ-चक्रके मानी ही है परस्परावलम्बन द्वारा रचा हुआ स्वाश्रय। पहाडो परसे नदियोंका बहना, अुनके द्वारा समुद्रका भर जाना, फिर समुद्रके द्वारा हवाका आर्द्र होना; सूर्यका ताप तृप्त होते ही अुसका अपनी समृद्धिको बादलोंके रूपमें प्रकाशित करना और फिर अुनका अपने जीवनका अवतार-कृत्य प्रारम्भ करना — जिस

भव्य रचनाका ज्ञान होने पर जो सतोष हुआ वह अिस विशाल पृथ्वीसे तनिक भी कम नही था।

तबसे हर बारिश मेरे लिअे जीवन-धर्मकी पुनर्दीक्षा बन चुकी है।

* * *

वर्षा-ऋतु जिस तरह सृष्टिका रूप बदल देती है, अुसी तरह मेरे हृदय पर भी अेक नया मुलम्मा चढाती है। वर्षाके बाद मै नया आदमी बनता हू। दूसरोके हृदय पर वसन्त-ऋतुका जो असर होता है, वह असर मुझ पर वर्षासे होता है। (यह लिखते-लिखते स्मरण हुआ कि साबरमती जेलमे था तब वर्षाके अन्तमे कोकिलाको गाते हुअे सुनकर 'वर्षान्ते वसत' शीर्षकसे अेक लेख मैने गुजरातीमें लिखा था।)

* * *

गरमीकी ऋतु भूमाताकी तपस्या है। जमीनके फटने तक पृथ्वी गरमीकी तपस्या करती है और आकाशसे जीवन-दानकी प्रार्थना करती है। वैदिक ऋषियोने आकाशको 'पिता' और पृथ्वीको 'माता' कहा है। पृथ्वीकी तपश्चर्याको देखकर आकाश-पिताका दिल पिघलता है। वह अुसे कृतार्थ करता है। पृथ्वी बालतृणोसे सिहर अुठती है और रक्षावधि जीवसृष्टि चारो ओर कूदने-विचरने लगती है। पहलेसे ही सृष्टिके अिस आविर्भावके साथ मेरा हृदय अेकरूप होता आया है। दीमकके पख फूटते है और दूसरे दिन सुबह होनेसे पहले ही सबकी-सब मर जाती है। अुनके जमीन पर बिखरे हुअे पख देखकर मुझे कुरुक्षेत्र याद आता है। मखमलके कीडे जमीनसे पैदा होकर अपने लाल रगकी दोहरी शोभा दिखाकर लुप्त हुअे कि मुझे अुनकी जीवन-श्रद्धाका कौतुक होता है। फूलोकी विविधताको लजानेवाले तितलियोके परोको देखकर मै प्रकृतिसे कलाकी दीक्षा लेता हू। प्रेमल लताअे जमीन पर विचरने लगी, पेड पर चढने लगी और कुअेकी थाह लेने लगी कि मेरा मन भी अुनके जैसा ही कोमल और 'लागणी' (लगीला) बन जाता है। अिसलिअे बरसातमें जिन

तरह बाह्य सृष्टिमें जीवन-समृद्धि दिखाओी देती है, अुसी तरहकी हृदय-समृद्धि मुझे भी मिलती है। और बारिश शेष होकर आकाशके स्वच्छ होने तक मुझे अेक प्रकारकी हृदय-सिद्धिका भी लाभ होता है। यही कारण है कि मेरे लिअे वर्षा-अृतु सब अृतुओंमें अुत्तम अृतु है। अिन चार महीनोंमें आकाशके देव भले ही सो जाय, मेरा हृदय तो सतर्क होकर जीता है, जागता है और अिन चार महीनोंके गान में तन्मय हो जाता हू।

'मधुरेण समापयेत्' के न्यायसे वसन्त-अृतुका अन्तमें वर्णन करनेके लिअे कालिदासने 'अृतुसहार' का प्रारभ ग्रीष्म-अृतुसे किया। मैं यदि 'अृतुम्य' की दीक्षा लू और अपनी जीवन-निष्ठा व्यक्त करने लगू, तो वर्षा-अृतुसे अेक प्रकारसे प्रारभ करके फिर और ढगसे वर्षा-अृतुमें ही समाप्ति करूगा।

जुलाओी, १९५२

अनुबन्ध

[सामाजिक जीवनके लिअे अत्यत अुपयोगी अुद्योग-हुनर सीखते या चलाते हुअे कदम-कदम पर जिस ज्ञानकी या जानकारीकी जितनी जरूरत हो, अुतना पूरा ज्ञान अुम वक्त ढूढ लेना और अुसे अपनाना यह जीवनको समृद्ध करनेका स्वाभाविक तरीका है। जीनेके लिअे जो भी प्रवृत्ति करनी पडे, अुसके साथ सम्बन्ध रखनेवाली अिधर-अुधरकी सव जानकारी हासिल करनेसे बडा सतोष होता है और बा-मौके हासिल की हुअी जानकारी आसानीसे हजम होती है और जीवनमे घुलमिल जाती है।

यह सव देखकर शिक्षाशास्त्रियोने पढाअीका यह नया तरीका चलाया है कि जीवन जीते हुअे अेव जीविकाका हुनर सीखते और चलाते हुअे जो भी जरूरी ज्ञान लेना या देना पडे, अुसीको शिक्षाका जरिया बनाया जाय। अिस पद्धतिको अनुबंध या 'को-रिलेशन' कहते है।

सस्कृत ग्रथोके प्राचीन टीकाकार अिसी शैलीका सहारा लेकर किसी भी ग्रथको समझाते समझाते अनेक विषयोकी जानकारी दे देते है। और अगर मूल लेखक अनेक विद्या-विशारद रहा और अुसके ग्रथमें अुन विद्याओके तत्त्वोका जिक्र आया, तो टीकाकार अुन सव विद्याओका जरूरी ज्ञान अपनी टीकामें भर ही देते है।

आजकलकी पढाअीकी पाठ्य-पुस्तकोके साथ नोट्स या टिप्पणियां दी जाती है। किताबें अग्रेजीमें और टिप्पणिया भी अग्रेजीमे। अिस तरह परभाषा द्वारा पढनेकी कृत्रिम स्थितिके कारण विद्यार्थी लोग नोट्स रटने लगे और रटी हुअी चीज अिम्तहानमे लिखकर परीक्षा पास करने लगे। अिस परिस्थितिके कारण नोट्स देनेकी प्रथा काफी बदनाम हो चुकी है और अच्छे-अच्छे शिक्षाशास्त्री दर्सी किताबों पर नोट्स देना अपनी शानके खिलाफ मानते है। और कभी-कभी अैसे नोट्स निन्दाके पात्र भी होते है।

लेकिन अगर अनुबंधकी दृष्टिसे टिप्पणी लिखी जाय और मौका पाकर जरूरी विविध ज्ञान देनेकी कोशिश की जाय तो यह पद्धति हर तरहसे अिष्ट और लाभदायी ही है।

मेरे कअी अध्यापक-मित्रोंने मेरी चंद किताबें अपनी टिप्पणियों द्वारा विभूषित की है। अिसमें मैंने अुन्हें अपना सहयोग भी दिया है। जहा विद्यार्थियोको और अध्यापकोंको बड़े पुस्तकालयकी सहूलियत नहीं मिलती, वहा तो अिन टिप्पणियोंके द्वारा ही किताबकी पढ़ाअी सफल-कारक हो सकती है। किताबोंके अूपर स्वभाषामें लिखी टिप्पणिया देनेमें अनुबंधका बहुतसा काम हो जाता है। अिसलिअे शिक्षा-कलाके प्रवीण अध्यापकोंके द्वारा दी हुअी टिप्पणियोंको मैंने 'अनुबंध' के जैसा ही माना है। मुझे आशा है कि अगर किसी अध्यापकको यह किताब पढ़ानेका मौका आ जाय, तो वे अिन टिप्पणियोंका अनुबन्धके खयालसे ही अुप-योग करेंगे। अध्यापककी मददके विना जो नवयुवक अिस किताबको टिप्पणियोंके साथ पढ़ेंगे, अुन्हे अिनके द्वारा अनुबन्धका कुछ खयाल आ जायगा। का० का०]

मुखपृष्ठका श्लोक

विश्वस्य मातरः० 'अिस प्रकार जितनी नदियोंका स्मरण हुआ अुनके नाम मैंने सुना दिये। ये सब विश्वकी मातायें हैं, और सभी शक्तिशाली है तथा महान फल देनेवाली है।'

धृतराष्ट्रके प्रश्नके अुत्तरमें संजय जब भारतवर्षका वर्णन करता है, तब भारतकी नदियोंके नाम सुनानेके बाद अुपसंहारमें यह अुक्त वचन कहता है। महाभारतके भीष्मपर्वके नवें अध्यायके ३७वें तथा ३८वें श्लोकोंके पहले दो-दो चरण लेकर यह श्लोक बनाया गया है।

यथास्मृति: भाव यह है कि नदिया है तो अनेक, किन्तु जितनी मुझे याद आयी अुतनोंके नाम मैंने सुना दिये। ३७वें श्लोकके अंतके दो चरणोंमें यह स्पष्ट कहा गया है

> तथा नद्यस्त्वप्रकाशाः शतशोऽथ सहस्रशः ।

अिसी तरह जो ज्ञात नहीं है अैसी तो सैकड़ों और सहस्रों नदिया है।

[अिसमे संजयकी (और लेखककी भी ?) अपने देशके प्रति भक्ति दिखाओी देती है। 'सुजला सुफला' माताओकी विपुलता कोओी कम न समझ बैठे, अैसी अतिस्नेहसे पैदा होनेवाली पापशका भी क्या अिसमें होगी ?]

जीवनलीला

पृ० ३ ग्राम्य: गावमें रहनेवाले। अृग्वेदमें अिस शब्दका अिस अर्थमें प्रयोग किया गया है।

पृ० ५ डलयोः सावर्ण्यम्: ड तथा ल समान वर्ण है। 'डलयोरभेदः' भी कहते हैं।

पृ० ७ लिम्पतीव ० अवेरा मानो अगोको लीपता है और नभ मानो अजनकी वर्षा करता है।

पृ० ९ देशका मतलब . . . भी हैं: अपभ्रश भाषाके निम्न पद्यसे तुलना कीजिये:

सरिहिं न सरेहिं न सरवरेहिं नहि अुज्जाणवर्णेहिं।
देस रवण्णा होन्ति वढ निवसन्तेहिं सुअणेहि ॥

[हे मूढ, देश न सरितासे रमणीय वनता है, न सरोसे; न सरोवरोसे वनता है, न अुद्यान-वनोसे। वलिक अुसमें वसनेवाले सुजनोंसे रमणीय वनता है।]

सरिता-संस्कृति

पृ० ११ क्षेमेन्द्र: ग्यारहवी सदीके अेक काश्मीरी पंडित कवि। कहते हैं कि अिन्होने चालीससे अधिक ग्रंथोकी रचना की थी, जिनमें 'भारतमंजरी', 'वृहत्कथामजरी', 'नृपावलि, 'सुवृत्ततिलक', 'औचित्य-विचारचर्चा', 'कविकंठाभरण' आदि ग्रंथ प्रसिद्ध है।

पृ० १२ मीनलदेवी: कर्णाटककी चद्रावती नगरीकी राजकन्या, कर्णदेव सोलंकीकी पत्नी, सिद्धराज जयसिहकी माता; धोलकाका विख्यात 'मलाव' तालाव तथा वीरमगामका 'मुनसर' तालाव अिसीने वनवाये थे। अिसने सोमनाथके दर्शनके लिअे जानेवाले हर यात्री पर लगाया गया कर बद करवा दिया था। यह वडी प्रजावत्सल रानी थी।

अुर्वंशी : 'अुर्' देशकी अुर्वंशी।

नदी-मुखेनैव समुद्रम् आविशेत्

पृ० १४ कूल-मर्यादा : कूल=किनारा। किनारेकी मर्यादा। 'कुल-मर्यादा' शब्द परसे यह शब्द बनाया गया है।

नामरूपको त्यागकर . . . जाती है. मुण्डकोपनिषद्का निम्न वचन याद कीजिये

यथा नद्य स्यन्दमाना समुद्रे
अस्त गच्छन्ति नामरूपे विहाय।

[जिस प्रकार बहती हुअी नदियां नामरूपको त्यागकर समुद्रमें अस्त हो जाती हैं।]

अुपस्थान

पृ० १५ अुपस्थान : वंदना, पूजा, अुपासना। जैसे, सूर्यका या संध्याका अुपस्थान।

हमारे पूर्वजोंकी नदी-भक्ति : लेखक सरस्वतीपुत्र सारस्वत हैं, अिस बातका यहां स्मरण हुअे बिना नहीं रहता।

भक्तिके अिन अुद्गारोंका श्रवण करके : भक्तिका श्रवण करके; श्रवण-भक्ति करके। अुद्गार=वचन। (प्रेम और आदरपूर्वक सुनना भी भक्तिका ही अेक पुण्यप्रद प्रकार है।)

संस्कृति-पुष्ट : संसारकी बहुतसी संस्कृतियोंका विकास नदियोंके किनारों पर ही हुआ है। अुदाहरणके लिअे, अिजिप्त (मिस्र)की संस्कृति नील नदीके किनारे विकसित हुअी है। खाल्डिया (अिराक) की संस्कृति युफ्रेटिस और टैग्रिसके किनारे, चीनकी संस्कृति यांग्त्सीक्यांग तथा होआंगहोके किनारे, मध्य अेशियाकी संस्कृति अमु और सरके किनारे और भारतकी संस्कृति पंचसिंधु, गंगा-यमुना, तापी-नर्मदा और कृष्णा-गोदावरीके किनारे विकसित हुअी है।

पृ० १६ भगवान सूर्यनारायणके प्रेमके बारेमें : तापी—तपती सूर्यकी पुत्री मानी जाती है। वह संवरण राजाकी पत्नी और कुरुकी

माता थी। गुजराती कवि प्रेमानदके नामसे चलनेवाले 'तपत्यास्थान' में जिसकी कथा है।

पृ० १७ 'अितिहासका अुषाकाल' · सामान्य तौरसे 'अुष·काल' शव्द अुपयोगमे लाया जाता है। किन्तु यहा जान-वूझ कर 'अुषाकाल' शव्दका प्रयोग किया गया है। स्थानीय अितिहासमे कहा गया है कि व्रह्मपुत्रके अुत्तर किनारे पर तेजपुरके पास वाणासुर और अुषा रहते थे।

अुषा-अनिरुद्धकी कथा भागवतके दशम स्कधके ६२–६३ वें अव्यायमें आती है। वलिके पुत्र वाणासुरकी कन्या अुपाका अेक वार स्वप्नमे किसी सुदर युवकसे समागम हुआ। स्वप्नके अुड जाने पर वह अुसके वियोगसे वड़वडाने लगी। अुसकी सखी चित्रलेखाने यह वडवडाहट सुनी। पूछने पर अुपाने स्वप्नकी बात कह सुनायी और कहा कि अिस पुरुपसे विवाह किये वगैर मै जीवित नही रह सकती। चित्रलेखाने अेकके वाद अेक अनेक चित्र खीचकर अुसे दिखाये। अतमें कृष्णके पौत्र अनिरुद्धकी तस्वीर देखकर अुसने कहा, यही है वह पुरुष जिसको मैने स्वप्नमे देखा था।

अिसके अनतर चित्रलेखा योगवलसे द्वारका जाती है। वहासे सोते अनिरुद्धको पलंगके साथ अुठाकर ले आती है। अुपा-अनिरुद्ध गाधर्व विधिसे विवाह कर लेते है और चार महीने साथमे विताते है। अुपाके पिताको जव पता चलता है कि अुषाके मदिरमे कोअी पुरुप रहता है, तव वह क्रोवके मारे वहा जाकर अनिरुद्ध पर टूट पड़ता है। दोनोके वीच युद्ध होता है। अिसमे वाणासुर अनिरुद्धको नागपाशसे वाधकर गिरफ्तार कर लेता है।

अिधर द्वारकामें अनिरुद्धकी खोज शुरू होती है। नारदने आकर खवर दी कि अनिरुद्धको तो शोणितपुर (आजकलके तेजपुर)में वाणासुरने कैद कर रखा है। अिससे क्रुद्ध होकर यादव शोणितपुर पर हमला करते है और वाणको हराकर अुपा-अनिरुद्धके साथ वडी धूमधामसे द्वारका वापस लौटते है।

सभूय-समुत्थानका सिद्धान्त : अेकत्र होकर अुन्नति करनेका सिद्धान्त। Joint Stock का सिद्धान्त। स्मृतियोमें यह शव्द मिलता है।

पृ० १८ समुद्रसे मिलने जाते . . . रुक जानेवाली : दक्षिण गुजरातमें वलसाडके पासकी 'वाकी' नदी भी अपने नामकी ही तरह टेढ़ी-तिरछी होती हुअी ठेठ समुद्रके पास आकर अैसी टेढ़ी होती है कि दो तीन मील अुत्तर दिशाकी ओर बहकर औरंगामें मिलती है और अुसीके साथ समुद्रसे जा मिलती है।

पृ० २० गति देनी होगी : वासना-पीडित भूतोंको सात्त्विक गति देते हैं अुस प्रकार।

१. सखी मार्कण्डी

पृ० ३ मार्कण्डी : बेलगावसे नौ मीलकी दूरी पर लेखकके गांव बेलगुदीके पास बहनेवाली छोटीसी नदी।

वैजनाथ : (स० वैद्यनाथ) बेलगांवका अेक पहाड़। वैद्योंके कहे अनुसार अिस पहाड पर मूल्यवान वनस्पतियां हैं।

हमारे तालुकेका : कर्णाटकके बेलगाव तालुकेका।

पृ० ४ मार्कण्डेय : मृकण्डु मुनिका पुत्र, मार्कण्ड।

साधू सुंदर ० मध्यकालके अेक कवि द्वारा रचित मार्कण्डेय अुपाख्यानमें ये पंक्तियां आती हैं। मराठी स्त्रियोंमें कवियोंको ये मुखाग्र होती हैं।

मृत्युंजय : महादेवजीका नाम। यह अलुक् समास है। जिसमें विभक्तिके प्रत्ययका लोप नहीं होता। तुलना कीजिये धनजय, नगि-तिजय, गणजय (dictator)।

अुसकी आयुधारा : कथामें कहा गया है कि अुसे सात या चौदह कल्पका आयुष्य मिला था। अिस परसे जब किसीको दीर्घ-जीवी होनेका आशीर्वाद दिया जाता है, तब 'मार्कण्डेयभव' कहा जाता है। किन्तु अिस लेखमें अिसका अर्थ है यह नदीरूपी आयुष्मान। यह लेखककी कल्पना है।

पृ० ५ भाअी-दूज : कार्तिक सुदी दूज। अिस दिन यमुनाने अपने भाअी यमको अपने घर बुलाकर अुनकी पूजा की थी तथा अुनको खाना खिलाया था। अिसलिये अिस दिनको यम-द्वितीया भी कहते हैं। अिस

दिन वहन अपने भाअीकी पूजा करती है और खाना खिलाते समय नीचेका मंत्र बोलकर अुसे आचमन करवाती है:

भ्रातस् तवानुजाताऽहं भुंक्ष्व भक्तम् अिदम् शुभम्।
प्रीतये यमराजस्य यमुनाया विशेषत.॥

[हे भैया, मैं आपकी छोटी बहन हूं। मेरा पकाया हुआ यह शुभ अन्न आप भक्षण कीजिये, जिससे कि यमराज और खास करके अुनकी बहन यमुना प्रसन्न हो जायं।]

बहन बडी हो तो 'भ्रातस्तवाग्रजाताह' कहती है।

मृगनक्षत्र : भाअी-दूज जाडोंमें आती है। अुन दिनों मृगनक्षत्र सारी रात आकाशमें होता है। अैसी 'मृगनीता रात्रयः'।

लावण्य : (सं० लवण+य) मिठास, झलक यौवनकी कांति। अुसका लक्षण :

मुक्ता-फलेषु छायाया. तरलत्वम् अिवान्तरा।
प्रतिभाति यद् अंगेषु तल्लावण्यम् अिहोच्यते॥

२. कृष्णाके संस्मरण

पृ० ५ सातारा : कृष्णाके किनारे स्थित नगर। लेखकका जन्म-स्थान। यह शाहु आदि महाराष्ट्रके राजाओंकी राजधानी था।

श्री शाहु महाराज : शिवाजीका पौत्र। संभाजीका पुत्र। अुसका नाम शिवाजी था। औरंगजेबने अुसका नाम शाहु रखा था। छुटपनमें अुसको दिल्लीके दरबारमें कैद रहना पडा था। वहांके भोगे हुअे अैश-आरामके कारण अुसने राज्यका कारोबार अपने प्रधान — पेशवाको सौंप दिया था और स्वयं सातारामें रहता था।

पृ० ६ हम बच्चे : लेखक तथा अुनके भाअी।

'वासुदेव' : मोरपंखोंकी टोपी पहनकर भजन गाते हुअे भीख मांगनेवाले अेक याचक संप्रदायके लोग।

वेण्या : साताराकी अेक छोटीसी नदी।

'नरसोबाची वाडी' : कृष्णाके किनारे कुरुंदवाडके समीप यह स्थान है। यह दत्तात्रेयका तीर्थस्थान है।

पृ० ७ अमृत-खेत: अमृत जैसे मीठे फल देनेवाले खेत।

जिसने अेकाध बार . . . अिच्छा करेगा: सिक्खोंके गुरु नानकशाके संबंधमें अेक लोककथा प्रचलित है। कहते हैं कि वे स्वर्गमें गये, किन्तु वहा पर भी वे अुदास रहने लगे। भगवानने अिसका कारण पूछा, तो जवाब मिला: 'स्वर्गमें सब कुछ है। किन्तु मक्कीके भुट्टे नही है, न सरसोंकी सब्जी है। यह खानेके लिअे पृथ्वी पर वापस जानेकी अिच्छा होती है।'

लोक-मानस ही अैसी कथाअें गढ सकता है।

सांगली: कृष्णाके तट पर स्थित अेक शहर। स्वातन्त्र्यपूर्व कालकी अेक रियासत।

अेकश्रुति: यह वैदिक शब्द है। अिसका अर्थ है, 'जिसमें विविधता न हो अैसा।' वेदोमें तीन प्रकारके अुच्चार बताये गये हैं: अुदात्त, अनुदात्त और स्वरित। अिनमे से किसी अेकको लेकर बिना किसी प्रकारका फर्क किये लगातार अुच्चारण करना 'अेकश्रुति' अुच्चार या आवाज है। अंग्रेजी 'मोनोटोनस'।

श्रीसमर्थ: स्वामी रामदास। श्री शिवाजी महाराजके गुरु। वे ब्रह्मचारी थे। अुन्होंने अनेक मठोंकी स्थापना की तथा धर्म-प्रचार किया। 'दासबोध', 'मनोबोध' आदि प्रख्यात ग्रंथोंके रचयिता।

पृ० ८ घोरपडे: संताजी। शिवाजीके अेक सेनापति। राजारामके समयमें धनाजी और संताजी घोरपडे अिन दो सेनापतियोंके बीच बहुत बडा विरोध था। घोरपडे मुरारराव (१७०४–१७७७) भी शाहुके मुख्य सरदारोंमें से अेक थे। अपने पराक्रमसे सारा कर्नाटक जीतकर अिन्होंने गुत्तीमें राजधानीकी स्थापना की थी, अिसलिअे अुन्हे 'गुत्तीकर घोरपडे' भी कहते थे। नन्दा साहबके साथ पेशवाओंका त्रिचिनापल्लीमें जो घोर युद्ध हुआ, अुसमे अिन्होंने पेशवाओंको विजय दिलायी। अिसलिअे शाहुने अुन्हे कर्णाटककी 'सरदेशमुखी' और त्रिचिनापल्लीके किलेकी 'सूबेदारी' दे दी थी। अन्तमें हैदरने अुन्हें कैद करके चांदीकी हथकडी-बेडी पहनाकर कपालदुर्गमें रखा था। वहीं अुनका अंत हुआ।

पटवर्धन: परशुराम भाअू (१७३९–१७९९) सवाअी माधवराव पेशवाके समयके वड़े सेनापति। वडे शूरवीर तथा बहादुर थे। हैदरके साथ जो युद्ध हुआ, अुसमे अिनके अेकके पीछे अेक तीन घोड़े मारे गये, किन्तु वे घवड़ाये नही। १७८१ में अुन्होने अग्रेज सेनापति गोडार्डको परास्त किया। १७९६ में नाना फडनवीससे अिनकी कुछ अनवन हो गअी। अिसलिअे फडनवीसने अिनको कैद कर लिया। १७९८ में वे रिहा हुअे। किन्तु फौरन पट्टणकुडीके युद्धमें शामिल हुअे और वही लडते लड़ते मारे गये।

नाना फडनवीस : (१७४२–१८००) मराठाशाहीके अतिम कालके अेक महान चतुर राजनीतिज्ञ।

रामशास्त्री प्रभुणे: (१७२०–१७८९) पेशवाअी जमानेके अेक प्रख्यात न्यायशास्त्री। वीस सालकी अुम्र तक वे निरक्षर ही थे। जिस साहूकारके यहा वे नौकरी करते थे, अुसने अिनसे कुछ मर्मभेदी वचन कहे। अत ये पढनेके लिअे काशी चले गये और वड़े विद्वान धर्मशास्त्री वने। १७५१ में पेशवाओके दरवारमें अुन्होने सेवा स्वीकार की और १७५९ मे मुख्य न्यायाधीश वने। वे अत्यंत नि स्पृह थे। वड़े माधवराव अिनकी सलाहके अनुसार चलते थे। नारायणरावके खूनके लिअे राघोवाको देहात प्रायश्चित्त लेनेकी वात अुन्होने विना किसी हिचकिचाहटके कही थी।

देहू: अिन्द्रायणी नदीके किनारे स्थित अेक गाव। पूनाके पास है। महाराष्ट्रके संत तुकारामका गाव होनेसे पवित्र माना जाता है।

आळंदी: अिन्द्रायणी नदीके किनारे वसा हुआ अेक गाव। पूनासे अधिक दूर नही है। यहां श्री ज्ञानेश्वरने जीवित अवस्थामें समाधि ली थी। देहू-आळंदीकी नदी अिन्द्रायणी भीमा नदीसे मिलती है। यह भीमा पढरपुरके पास टेढी वहती है, अिसलिअे वहा अुसे चद्रभागा कहते हैं। अिसके वाद ही वह वड़ी होकर कृष्णासे मिलती है।

तुंगभद्रा: तुगा और भद्रा, ये दो नदिया मिलकर तुगभद्रा वनती है। देखिये. 'मुळा-मुठाका सगम' (पृ० ११)। तुगभद्राके किनारे हंपीके पास कर्णाटक साम्राज्यकी राजधानी विजयनगर वसा हुआ था।

तेलगण : त्रिलिंगका प्रदेश। 'जिसके पेटमें कृष्णाकी अेक बूंद भी पहुच चुकी है, वह अपना महाराष्ट्रीयपन कभी भूल नहीं सकता।' और 'कृष्णामें पक्षपाती प्रातीयता नही है।'—क्या अिन दो वचनोंके बीच विरोध है? लेखकका कहना है कि महाराष्ट्रके सद्गुणोंके प्रति मनमें आदरभाव तो रहने ही वाला है, किन्तु तीनों प्रान्तोंके प्रति आत्मीयता जाग्रत होने पर मनमें सकीर्णता आ ही नही सकती।

पहाड़की अस्थियां : पत्थर।

पृ० ९ जीवनकी लीला : जीवन यानी जल और जीवन यानी जिंदगी। यहा अुसका दोनो अर्थोमें प्रयोग किया गया है।

अनतबुआ मरढेकर : काकासाहबके प्रिय सुहृद, जिनकी पवित्र स्मृतिमे काकासाहबने अपनी 'हिमालयकी यात्रा'* पुस्तक अर्पण की है।

श्रीसमर्थ रामदास स्वामी तथा अुनके शिष्योने जो अनेक मठ स्थापित किये है, अुनमे 'मरढे मठ' भी अेक है। अिस मठके गृहस्था-श्रमी मठपतियोके वशमे अनतबुआका जन्म हुआ था। अिनके पिता पुराणिक तथा कीर्तनकार थे। अनतबुआ प्रथम मराठी ट्रेनिंग कालेजमें शिक्षक थे। बादमें वे काकासाहबसे पहले बडौदाके 'गंगनाथ विद्यालय' में शरीक हुअे। अिस विद्यालयके लिअे चदा अिकट्ठा करनेके हेतुसे वे बडौदा राज्यमे सर्वत्र घूमते थे। अुनका मासिक खर्च कभी भी दस रुपयेसे अधिक नही हुआ। संस्थाके नियमके अनुसार अुन्हें खर्चके अलावा जेबखर्चके लिअे पाच रुपये अधिक लेने पडते थे। वे अिन पाच रुपयोका अुपयोग विद्यार्थियोके लिअे अथवा हिसाबमें गलती हुअी हो तो अुसमें जोडनेके लिअे करते थे। [illegible]में अिनकी तुलना गुजरातके प्रसिद्ध रचनात्मक कार्यकर्ता श्री [illegible] महाराजसे की जा सकती थी। अुनके पवित्र जीवनको देखकर कअी लोग अुनसे कठी मागते थे। किन्तु अुन्होंने कभी किसीको कठी नहीं दी। वे कहा करते थे कि 'मुझमे यह योग्यता नहीं है।'

---

* हिन्दीमें 'हिमालयकी यात्रा' नवजीवन प्रकाशन मन्दिरकी ओरसे प्रकाशित हो चुकी है। कीमत २–०–० डा० खर्च ०–१५–०।

हृदयकी भावनासे : आदरभावसे। लेखकके प्रति वे असाधारण आदरभाव रखते थे अिसलिअे।

बड़े भाअी : राष्ट्रीय शिक्षाका कार्य वे लेखकके पहलेसे करते आ रहे थे और लेखककी दृष्टिमे अधिक त्यागी थे अिसलिअे।

गंगोत्री : हिमालयका अेक तीर्थस्थान। गगा यहीसे निकलती है। असलमे गगाका अुद्गम होता है 'गोमुख' से, जो गगोत्रीसे करीब चौदह मील दूर है।

अमरनाथ : यह तीर्थस्थान काश्मीरमे है। यहां अेक गुफामें वर्फका स्वयभू शिवलिग पाया जाता है।

अमर हुअे : स्वर्गवासी हुअे।

वाअी : कृष्णाके किनारे पर स्थित पवित्र तीर्थस्थान। यहा सस्कृत विद्याकी परपरा अुत्तम रूपमे सुरक्षित है।

वाअीके . . . गंगाका : वाअीके लोग प्रेमभक्ति-पूर्वक कृष्णाको गगा कहते है।

शिरस्नान : वर्षाअृतुमे वाअीके कुछ मंदिर नदीके पानीमें कलश तक पूरे डूब जाते है।

स्वराज्य-अृषि : स्वराज्यका 'ध्यान' करनेवाले, स्वराज्यके लिअे 'तपश्चर्या' करनेवाले और स्वराज्यका 'मत्र' देनेवाले। 'स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है' लोकमान्यका यह वचन प्रसिद्ध है।

पृ० १० पट-वर्धन : पट=वस्त्र, वर्धन=वृद्धि करनेवाले। द्रौपदी वस्त्र-हरणका किस्सा याद कीजिये।

चरखे भी . . . अुतनी ही सख्यामें : वीस लाख चरखे चलानेकी वात तय हुअी थी।

वेजवाड़ा : आंध्र प्रातका अेक मुख्य शहर। यह भी कृष्णाके तट पर ही है।

श्री अब्बास साहव : (१८५४–१९३६) नित्य-युवा देशभक्त श्री अब्वास तैयवजी। तीसरी महासभा (काग्रेस) के प्रमुख श्री वदरुद्दीन तैयवजीके भतीजे। वादमे अुन्हीके दामाद। पूर्व जीवनमे आप वड़ौदा राज्यकी वडी अदालतके न्यायाधीश थे। अुत्तर जीवनमें आप

पर गांधीजीका असर हुआ। अुस समय गुजरातके सार्वजनिक जीवनमें आपने महत्त्वका हिस्सा अदा किया था। पंजाबके हत्याकाण्डकी तहकीकातमें, असहयोग आंदोलनमें, तिलक-स्वराज्य-फंड अिकट्ठा करनेमें, सरकारी शालाओं तथा परदेशी कपड़ोंकी दुकानों पर चौकी करनेमें, खादी-फेरीमें, हिन्दू-मुस्लिम-अेकताके प्रयत्नोंमें, बाढ़-संकट-निवारणमें, रानीपरज लोगोंकी मदद करनेमें, बारडोलीके आन्दोलनमें तथा नमक-सत्याग्रहके समय धरासणाके आगर पर हुअे सत्याग्रहका नेतृत्व करनेमें आपकी अनेकविध देशसेवाको प्रगट होते हमने देखा है।

श्री पुणतांबेकर: बम्बअीके राष्ट्रीय महाविद्यालयके अेक समयके आचार्य। आप बैरिस्टर थे। बादमें बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयमें अितिहासके मुख्य अध्यापकके तौर पर तथा नागपुर विश्वविद्यालयमें राजनीति-विभागके मुख्य अध्यापकके तौर पर आपने काम किया था।

गिदवाणीजी: गुजरात विद्यापीठके पहले कुलनायक (वाअिस-चान्सलर) और गुजरात महाविद्यालयके पहले आचार्य। पूरा नाम असुदमल टेकचंद गिदवाणी। गुजरातमें आनेके पहले आप दिल्लीके रामजस कॉलेजके प्रिन्सिपाल थे।

कृष्णाम्बिका: कृष्णामैया।

रामशास्त्री: रामशास्त्री प्रभुणे वाअीके पास कृष्णाके तट पर रहे थे अिसलिअे।

नाना फडनवीस: वाअीके पास मेणवलीमें रहते थे अिसलिअे।

'राष्ट्रीय' हिन्दी: शुद्ध हिन्दी तो है प्रान्तीय हिन्दी। अनेक भाषाओंके असरसे बनी हुअी हिन्दीका नाम है राष्ट्रीय हिन्दी!!

जन्मकालका: लेखकके जन्मकालका।

३. मुळा-मुठाका संगम

पृ० ११ अपवादके बिना . . . नहीं चलते: Exception proves the rule 'अुत्सर्गाः सापवादाः'।

मिसिसिपी-मिसौरी: जिनकी लंबाअी ५९३१ मील की है। ये दोनों नदियां जहां मिलती हैं, वहांका पट ५००० फुट चौड़ा है।

द्वन्द्व समासमें : दोनो पद समान कक्षाके होते है, अिस बात पर यहां जोर दिया गया है।

सीता-हरणसे लेकर . . . तकका अितिहास : कहते है कि रावण जब सीताको अुठाकर ले गया था, तब सीताकी साडीका पल्ला हपीके पास अेक बड़ी शिला पर घिस गया था, जिसकी रेखाये अुस शिला पर अब तक दिखाअी देती है! विजयनगरके साम्राज्यका कारोबार भी तुगभद्राके तट पर ही चलता था। अिस साम्राज्यकी स्थापना सन् १३४६ मे हुअी थी। अिसका विस्तार कृष्णासे लेकर कन्याकुमारी तक था। सवा दो सौ साल तक मुसलमानोके हमलोका सामना करके सन् १५६५ में अिस साम्राज्यका अत हुआ। अिसका पूरा अितिहास 'अे फरगॉटन अेम्पायर' नामक अग्रेजी पुस्तकमे तथा 'विजयनगरके साम्राज्यका अितिहास' नामक हिन्दी पुस्तकमें दिया गया है।

खडक-वासला : पूनासे सिहगढ जाते समय बीचमे यह स्थान है। यहां पूनाका जलागार (वॉटर वर्क्स) है। स्वतत्र भारतके 'राष्ट्ररक्षा विद्यालय' के लिअे भी यही स्थान पसद किया गया है। देखिये पृ० १३

मुंडी टेकरियां : सन्यासीके जैसी; जिनके सिर पर अेक भी पेड नही है अैसी।

चिन्ताजनक : मनुष्य जब चितामें रहता है तब अुसकी आखें बार-बार खुलती-बन्द होती रहती हैं। सितारे भी सारी रात अिसी तरह झिलमिलाते रहते हैं। यहा अर्थ है पानीके हिलनेसे होनेवाली झिलमिलका प्रतिबिब।

बांग : यह फारसी लफ्ज है। मस्जिदमें नमाजके पहले 'नमाजका समय हुआ है, नमाज पढनेके लिअे आअिये,' अैसा बतानेके लिअे बडे जोरकी जो आवाज दी जाती है अुसको बाग कहते हैं। अरबीमें अिसीको अजान कहते हैं। यहा बाग शब्दका सामान्य अर्थ पुकार है।

लकडी-पुल : शायद पहले यह पुल लकडीका रहा हो या अिसके पासमें ही लकडी बेची जाती रही हो। अहमदाबादके लोहेके 'अेलिसब्रिज' को भी 'लकड़िया पुल' कहते हैं।

पृ० १२ ओंकारेश्वर : यहां अेक श्मशान है। दूसरा श्मशान लकडी-पुलके पास है।

कॅप्टन मॅलेट : पेशवाओीको नष्ट करनेके लिअे षड्यंत्र रचनेवाला अंग्रेज।

भांडारकर : डॉ० सर रामकृष्ण गोपाल भांडारकर। संस्कृत विद्या और प्राच्य विद्याके संशोधनमें पारंगत। प्रार्थना समाजके नेता।

गुजरातके अेक लक्ष्मीपुत्र : कर्वे विश्वविद्यालयके साथ जिनका नाम जोडा गया है वे सर विठ्ठलदास दामोदरदास ठाकरसी।

अुत्तुंग-शिरस्क : अूंचे सिरवाली।

नम्रनामधेय : नम्र नामवाली। मकान तो बडे राजमहलके जैसा है, किन्तु अुसका नाम है 'पर्णकुटी'। अिसी मकानमें गांधीजीने दो बार अनशन किया था।

यरवडाका कैदखाना : छोटे-बडे असंख्य देशवीरोंके और खास तौरसे गांधीजीके कारावासके कारण तथा वहां हुअे हरिजनोंके मताधिकार संबंधी करारके कारण यह कैदखाना देशमें और समस्त दुनियामें प्रसिद्ध हो चुका है। गांधीजी अिसको 'यरवडा मंदिर' कहते थे।

प्राणहरणपटु : प्राण लेनेमें कुशल।

भिक्षाधीश : भिक्षाके अधिकारी भिखारी। लक्ष्माधीशके साथ तुक मिलानेके लिअे अिस शब्दकी योजना की गअी है।

पृ० १३ निसर्गोपचार भवन : सन् १९४४ में जेलसे रिहा होनेके बाद गांधीजीने निसर्गोपचारका प्रचार किया था। अुसी दरमियान वे कुछ समय तक अिस निसर्गोपचार भवनमें रहे थे। अुरुळीकांचनमें भी अुन्होंने अेक नया निसर्गोपचार केंद्र खोला था, जो अब तक चल रहा है।

सिंहगढका निवास : लेखकको क्षयरोग हुआ था, तब वे काफी समय तक सिंहगढमें रहे थे। अुस बातका यहां जिक्र है।

४. सागर-सरिताका संगम

पृ० १४ सरोका वन : लेखककी 'स्मरण-यात्रा' में 'सरो पार्क' नामक प्रकरण देखिये। (यह पुस्तक हिंदीमें नवजीवन प्रकाशन मंदिरसे

ओरसे प्रकाशित हुअी है; की० ३–८–०, डा० खर्च १–२–०।) अिसमे काकासाहबकी छठे बरससे लेकर अठारह बरस तककी जीवन-यात्राका वर्णन है।

जब कि अपनी मर्यादाको . . . सामने हो जाता है : चद्रके असरके कारण जब सागरमे भाटा आता है तब पानी रास्ता बना देता है; और ज्वारके समय अुभरकर जब नदीमे घुस जाता है तब सामने हो जाता है।

पृ० १६ जमनोत्री : हिमालयमे अुत्तराखंडका अेक तीर्थस्थान। यहीसे यमुना निकलती है।

महाबलेश्वर : यह कृष्णाका अुद्गम-स्थान है। यह स्थान सातारामे है।

त्र्यंबक : नासिकके पासका स्थान। यह गोदावरीका अुद्गम-स्थान है।

अुद्गमकी खोज : "मेरी धारणा है कि गंगोत्री, जमनोत्री, केदार, बदरी, अमरनाथ, खोजरनाथ, मानसरोवर, राकसताल, परशुराम कुंड, अमरकटक, महाबलेश्वर, त्र्यबक आदि सारे तीर्थस्थान नदीका अुद्गम खोजनेकी प्राकृतिक जिज्ञासाके ही परिणाम है। अुत्तरी ध्रुवके आसपास रहनेवाले आर्य लोग जिस प्रकार अिस बातकी खोज करनेके लिअे बाहर निकले कि हमे अुष्णता देनेवाला सूर्य कहासे अुदय होता है और कहा अस्त होता है, और चारो महाद्वीपोमें फैल गये, अुसी प्रकार हिन्दुस्तानकी संतानें अपने-अपने ढोर-बछेरू लेकर, या अकेले ही, नदीके अुद्गमकी खोज करती हुअी घूमी हो तो कोअी आश्चर्य नही।"— 'हिमालयकी यात्रा', प्रकरण २१, पृ० १०९।

अजताकी गुफाओके पास भी अेक छोटीसी नदीका अुद्गम है।

शंकरराव गुलवाड़ीजी : कारवारकी ओरके अेक सर्वोदय कार्यकर्ता।

कवि बोरकर : गोवाके कोकणी तथा मराठी भाषाके प्रसिद्ध कवि।

५. गंगामैया

पृ० १७ देवव्रत भीष्म : शातनु और गंगाके आठवें पुत्र देवव्रत। अपने पिता शांतनु सत्यवती नामक धीवर-राजकी कन्यासे विवाह कर सके, अिसलिअे अुन्होने आजीवन ब्रह्मचारी रहनेकी भीषण प्रतिज्ञा

ली थी और अुसे पाला था। अिसलिअे वे भीष्मके नामसे प्रसिद्ध हुअे। अिसी कारण आज भी जब कोअी बड़ी प्रतिज्ञा करता है, तब अुस प्रतिज्ञाको हम 'भीष्म प्रतिज्ञा' कहते हैं। भीष्म=भीषण, भयानक।

आर्योंके बड़े-बड़े साम्राज्य : हर्यक, मौर्योंका आदि।

कुरु पांचाल : दिल्लीके आसपासका प्रदेश कुरु और गंगा-यमुनाके बीचका प्रदेश पांचाल कहा जाता था।

अंग-बंगादि : गंगाके दायें तट पर जो प्रसिद्ध राज्य था अुसका नाम था अंग। चंपा अुसकी राजधानी थी। यह नगरी आजकलके भागलपुरके स्थान पर या अुसके आसपास कहीं थी। बंग कहते हैं पूर्व बंगालको। अिसमें बंगालके समुद्र-तटका भी समावेश होता था। अुत्तर बंगालका नाम था गौड़ या पुंड्र।

पृ० १८ जब हम गंगाका दर्शन करते हैं . . . स्मरण हो आता है : गंगाके तट पर सिर्फ खेती और व्यापारका ही विकास नहीं हुआ है, बल्कि काव्य, धर्म, शौर्य और भक्ति — सबोंमें पूर्ण संस्कृतिका विकास हुआ है।

श्री जवाहरलाल नेहरूने अपनी 'डिस्कवरी ऑफ अिंडिया' नामक पुस्तकमें भारतकी नदियोंके बारेमें लिखते हुअे गंगाके सिलसिलेमें अिस प्रकार लिखा है

"... and the Ganga, above all *the* river of India, which has held India's heart captive and has drawn uncounted millions to her banks since the dawn of history. The story of the Ganga, from her source to the sea, from old times to new, is the story of India's civilization and culture, of the rise and fall of empires, of great and proud cities, of the adventure of man and the quest of the mind which has so occupied India's thinkers, of the richness and fulfilment of life as well as its denial and renunciation, of ups and downs, and growth and decay, of life and death." p. 43

". . . और गंगा तो खास तौर पर भारतकी नदी है। जिसने हजारों सालसे वह भारतके हृदय पर अपनी सत्ता जमाती आयी

है और अपने तटों पर असंख्य लोगोंको आकर्षित करती आयी है। गंगाके उद्गमसे लेकर सागरके साथके उसके संगम तककी और प्राचीन कालसे लेकर अर्वाचीन काल तककी उसकी कहानी, भारतकी संस्कृतिकी और उसकी सभ्यताकी कहानी है — साम्राज्योंके उत्थान और पतनकी, विशाल और गौरवशाली नगरोंकी, मानवके साहसोंकी तथा भारतके चिंतकोंको व्यग्र रखनेवाले तत्त्वोंके अन्वेषणकी, जीवनकी समृद्धि और सफलताकी तथा निवृत्ति और संन्यासकी, उतार और चढ़ावकी, वृद्धि और क्षयकी, जीवन और मरणकी कहानी है।"

उत्तरकाशी : गंगोत्रीसे निकलनेके बाद गंगा जहां सर्वप्रथम उत्तर-वाहिनी होती है वह स्थान। देखिये : 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० ३५।

देवप्रयाग : भागीरथी और अलकनंदाका संगमस्थान। देखिये 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० २५।

लक्ष्मणझूला : हृषीकेशके पास गंगा नदी पर यह स्थान है। यहां पहले छींकोंका पुल था। अब वहां लोहेकी सांकल और सीखचोंका झूलनेवाला पुल है। यहीं लक्ष्मणजीका मंदिर है। देखिये : 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० २३।

विकराल दंष्ट्रा : विकराल दाढ़। तुलना कीजिये : 'बहूदरं बहु-दंष्ट्राकरालम्'। गीता, ११–२४; 'दंष्ट्राकरालानि च ते मुखानि'। गीता, ११–२५

त्रिवेणी संगम : गंगा, यमुना और (गुप्त) सरस्वतीका संगम। प्रयागमें तीनों नदियोंके प्रवाह अेकत्र हो जाते हैं, अिसलिअे वहां उनको 'युक्तवेणी' कहते हैं। बंगालमें अेक प्रवाहमें से अनेक प्रवाह बन जाते हैं, अिसलिअे वहां उनको 'मुक्तवेणी' कहते हैं। देखिये पृ० १५४ की टिप्पणी।

वर्धमान : बढ़ती हुअी।

गंगा शकुन्तला जैसी . . . दीखती है : देखिये पृष्ठ २१।

शर्मिष्ठा और देवयानीकी कथा : दैत्यगुरु शुक्राचार्यकी कन्या देवयानीके साथ दैत्यराज वृषपर्वाकी कन्या शर्मिष्ठाकी मित्रता थी। अेक दिन दोनों जलक्रीडाके लिअे गयीं। नहानेके बाद देवयानी पहले

बाहर आयी और गलतीसे अुसने शर्मिष्ठाके कपड़े पहन लिये। अिस पर दोनोंके बीच झगड़ा शुरू हुआ। शर्मिष्ठाने देवयानीको अेक कुअेंमें धकेल दिया। थोड़ी देरमें मृगयाके लिअे निकला हुआ राजा ययाति पानीकी खोजमें वहां आ पहुंचा। अुसने देवयानीको कुअेंसे बाहर निकाला। देवयानीने घर जाकर सारा किस्सा अपने पिताको सुनाया। शुक्राचार्य गुस्सा हुअे और वृषपर्वाका राज्य छोड़नेके लिअे तैयार हो गये। अंतमें राजा शर्मिष्ठाको देवयानीकी दासीके तौर पर रखनेके लिअे तैयार हुअे तभी जाकर शुक्राचार्य शान्त हुअे। अिसके बाद देवयानीने राजा ययातिसे विवाह किया और अपनी दासी शर्मिष्ठाको साथमें लेकर वह ससुराल गयी। शर्मिष्ठाके रूप-गुण पर मुग्ध होकर ययातिने अुसके साथ गुप्त विवाह किया। अंतमें अुसीका सबसे छोटा पुत्र राज्यका अुत्तराधिकारी बना।

अिसीलिअे देवयानीकी कहानी सुनते समय यहांके 'बड़ी कठिनाअीके साथ' मिलते हुअे गंगा और यमुनाके प्रवाहोंका स्मरण होता है।

पृ० १९ प्रयाग-राज : [प्र (अच्छी तरहसे) + यज् (पूजा करना) + अ (अधिकरण) = जहां अुत्तम रूपमें पूजा हुअी अैसा स्थान।] याग = यज्ञ। यज्ञके लिअे पवित्रतम स्थान, गंगा, यमुना और सरस्वतीका संगम-स्थान, अिलाहाबाद।

सरयू : कैलास पर्वत पर स्थित मानस सरसे जिसका अुद्गम हुआ है वह नदी। सर यानी सरोवर। सरोवरमें से निकली अिसलिअे वह 'सरयू' कहलायी। अयोध्या अुसके तट पर है। अुसीको घाघरा भी कहते हैं।

चंबल : देखिये पृ० १७१

रंतिदेव : देखिये पृ० १७२

शोणभद्र : देखिये पृ० १६८

गजग्राह : देखिये पृ० १६८

पाटलीपुत्र : बिहार राज्यका आजका पटना शहर। अिसीको कुसुमपुर भी कहते थे। चन्द्रगुप्त मौर्य, अशोक, आदि सम्राटोंकी यह राजधानी था। गुरु गोविन्दसिंहके जन्मस्थानका गुरुद्वारा यहीं है।

मगध साम्राज्य : समुद्रगुप्तके समय अिस साम्राज्यका विस्तार सिन्धुसे लेकर कावेरी तक था।

'दाक्षिण्य' : संस्कृत भाषामें दाक्षिण्य शब्दके दो अर्थ होते हैं — दक्षिण दिशा और विनयी स्वभाव। लेखकने यहां दोनों अर्थ सूचित किये हैं। 'दाक्षिण्य धारण कर' अिन शब्दोंमें अुन्होंने अिस बातका वर्णन किया है कि यहांसे ये दोनों नदियां दक्षिणकी ओर बहने लगती हैं, और यह भी बताया है कि वे विनय धारण करती हैं। विनयके अर्थमें दाक्षिण्यका लक्षण अिस प्रकार दिया गया है :

दाक्षिण्यं चेष्टया वाचा परचित्तानुवर्तनम्।

[केवल सद्भावके कारण वाणी और वर्तनसे दूसरेकी वृत्तिके अनुकूल होना — यही दाक्षिण्य है।]

पृ० २० सगरपुत्र : सूर्यवंशी राजा बाहुने शत्रुओंसे पराजित होने पर राजपाट छोड़ दिया और वह हिमालयके जंगलोंमें भाग गया। वहीं अुसका अवसान हुआ। अुस समय अुसकी अेक रानी यादवी सगर्भा थी। अुसकी सौतने गर्भका नाश करनेके हेतुसे यादवीको खुराकमें जहर खिला दिया। परन्तु गर्भनाश नहीं हुआ और अुसे पुत्र हुआ। वह 'गर' नामक जहरके साथ पैदा हुआ अिसलिअे 'सगर' कहलाया। सगर बड़ा हुआ तब अुसने अपने पिताका राज्य शत्रुसे वापिस ले लिया। अुसकी शैब्या नामक अेक रानी थी। अुसने असमंजस् नामक अेक पुत्रको और अेक पुत्रीको जन्म दिया। अुसकी दूसरी रानी थी वैदर्भी। अुसने अेक मांसपिंडको जन्म दिया, जिसमें से साठ हजार पुत्र पैदा हुअे। सगरने ९९ यज्ञ करनेके बाद जब सौवां यज्ञ शुरू किया और घोड़ेको छोड़ा, तब अिन्द्रने अुसकी चोरी की और पातालमें जाकर कपिल मुनिके आश्रममें अुसे बांध आया। अिधर सगरके साठ हजार पुत्रोंने घोड़ेकी खोज शुरू की। अुन्होंने सारी पृथ्वी खोद डाली, जिससे अुसमें पानी भर गया। अिसीलिअे यह पानीवाला स्थान सगरके नाम परसे 'सागर' कहलाने लगा। काफी प्रयत्नोंके बाद वे पातालमें पहुंचे। वहां अुन्होंने कपिल मुनिके आश्रममें घोड़ेको

देखा। मुनिको ही चोर मानकर अुन्होंने मुनिका बड़ा अपमान किया। अिस पर मुनिने शाप देकर अुनको भस्म कर डाला। अिसके बाद असमजस्का पुत्र अंशुमान मुनिको प्रसन्न करके घोड़ा ले आया। अिस प्रकार यज्ञ संपन्न हुआ। मुनिने प्रसन्न होकर अुसको अपने साठ हजार पूर्वजोंके अुद्धारका मार्ग भी बतलाया और कहा कि यदि कोअी स्वर्गमें बहनेवाली गंगाको पृथ्वी पर अुतार दे और अुसके जलका अुन्हें स्पर्श करा दे तो अुनका अुद्धार होगा। अिसलिअे अंशुमानने अपना शेष जीवन तपश्चर्यामें बिताया। अंशुमानके पुत्र दिलीपने भी यह तपश्चर्या चालू रखी और अंतमें अुसके पुत्र भगीरथने बड़ी कड़ी तपश्चर्या करके गंगाको पृथ्वी पर अुतारा और अुसका प्रवाह अपने साठ हजार पूर्वजोंकी भस्म परसे बहा कर अुनका अुद्धार किया। यहां अिसीका अुल्लेख है। भगीरथने गंगाको अुतारा, अतः गंगा भागीरथी कहलाअी।

[अिस प्रकार भगीरथको नहर बांधनेमें निष्णात मानकर **Irrigation** के लिअे लेखकने अेक सुन्दर पारिभाषिक शब्द प्रचलित किया है — भगीरथ-विद्या।]

६. यमुना रानी

पृ० २१ भव्यताकी भव्यताको कम करते रहना : अपार भव्यता बिखेर कर 'अतिपरिचयाद् अवज्ञा' के न्यायसे भव्यताका महत्त्व कम करना।

अूर्जस्विता : भव्यता।

गगनचुंबी और गगनभेदी : अिन दो शब्दोंके बीचका भेद ध्यानमें लीजिये।

असित ऋषि : व्यासजीके अेक शिष्य। देखिये 'हिमालयकी यात्रा' के प्रकरण २३ का अंतिम भाग। असित = काला।

देवाधिदेव : महादेव। स्वर्गमें से अुतरी हुअी गंगाको महादेवजीने अपनी जटाओंमें धारण किया था।

पृ० २२ अेक काव्यहृदयी ऋषि : लेखकने अुसका नाम रखा है — 'यामुन ऋषि'। देखिये 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० ३१।

अंतर्वेदी : पुराने समयमें गगा और यमुनाके वीचके प्रदेशको अंतर्वेदी कहते थे। अिस परसे आजकल दो नदियोके वीचके किसी भी प्रदेशको अतर्वेदी (दो-आव) कहते हैं।

श्रीनगर : काश्मीरका श्रीनगर नही। यह स्थान केदार जाते वीचमे आता है। यह सिद्धपीठ कहलाता है। यहा की हुअी साधना व्यर्थ नही जाती और शीघ्र फलदायी होती है। देखिये 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० २६ और 'जीवनका काव्य' नामक लेखककी दूसरी पुस्तकमें शकराचार्यसे सम्वन्धित प्रकरण।

ब्रह्मावर्त : कुरुक्षेत्रके समीपका दृषद्वती और सरस्वतीके वीचका प्रदेश। आजकल ब्रह्मावर्तको 'विठूर' कहते हैं।

हत्यारे भूमिभागको : क्योकि यहा अनेक भीषण युद्ध हुअे थे।

पृ० २३ सचिववाणी : सचिव = मित्र या मत्री। यहा दोनों अर्थ लिये जा सकते हैं — मित्रतापूर्ण सलाह और सुलहकी वातें। कौरव-पाडवोके वीच सुलह हो अिसलिअे भगवान श्रीकृष्णने हस्तिनापुरमें ही सन्धिकी वातचीत की थी।

रोमहर्षण : रोगटे खडे कर देनेवाली। 'संवादम् अिमम् अश्रौषम् अद्‌भुत रोमहर्षणम्।' गीता, १८–७४।

यमराजकी वहनका भाअीपन : यम तथा यमुना अथवा यमी और अश्विनीकुमार सूर्य और अुसकी पत्नी सज्ञाकी संतान माने जाते हैं। अेक वार सज्ञाको अपने पिता विश्वकर्माके घर जानेकी अिच्छा हुअी, किन्तु सूर्यने अिजाजत न दी। अत अुसने अपनी मायाके वलसे छाया नामक अेक स्त्रीका सर्जन किया और अुसको सूर्यके पास रखकर स्वय पीहर चली गअी। छाया सज्ञासे अितनी मिलती-जुलती थी कि सूर्यको पता ही नही चला कि वह सज्ञा नही है। छायाने ही यमकी परवरिश की। किन्तु वादमे अुसमे सौतेली माकी भावना जाग्रत हुअी और अुसने यमकी अुपेक्षा शुरू की। अिससे यम गुस्सा होकर अुसे लात मारनेको तैयार हुआ। तव छायाने अुसे शाप दिया, जिससे यमके दोनो पैरोमें घाव हो गये और अुसमें कीड़े विलविलाने लगे।

यमने सारी बात सूर्यसे कही। सूर्यने अुसे अेक कुत्ता दिया, जो अुसके घावमें से पीव व कीड़े चाटने लगा।

कहते हैं कि यमने दक्ष-प्रजापतिकी तेरह कन्याओंके साथ विवाह किया था। अिसमें अुसे श्रद्धासे सत्य, मैत्रीसे प्रसाद, दयासे अभय, शांतिसे शम, तुष्टिसे हर्ष, पुष्टिसे गर्व, क्रियासे योग, अुन्नतिसे दर्प, बुद्धिसे अर्थ, मेधासे स्मृति, तितिक्षासे मंगल, लज्जासे विनय और मूर्तिसे नर और नारायण नामक पुत्र पैदा हुअे।

वह जीवके पाप-पुण्योंका न्याय करता है। अिनमें चित्रगुप्त नामक अुसका अेक मंत्री पाप-पुण्यकी बही रखकर अुसकी मदद करता है। दंड अुसका हथियार है और पाडा अुसका वाहन है।

सारी सृष्टि पर शासन करनेवाले अैसे भाअीकी बहन भी अुतनी ही प्रतापी होगी। अिसलिअे अुसका भाअी बननेके लिअे मनुष्यमें असाधारण योग्यता होनी चाहिये। कोअी मामूली आदमी यह स्थान नहीं ले सकता।

पारिजातके फूलके समान : सुंदर और सुकोमल।

ताजबीबी : मुमताजमहल बड़ा भारी नाम मालूम होता है, अिसलिअे यह नाजुक-सा नाम लिया है। आगराके लोगोंमें 'ताज-बीबीका रोजा' नामसे ही यह अिमारत प्रख्यात है।

जमे हुअे आंसू : शुभ्रमूर्ति ताजमहल। लेखकने अपने ताजमहलके वर्णनमें लिखा है 'यह मकबरा नहीं है, बल्कि अेक अैसा स्थान है जहां अेक रसिक सम्राट्का दुःख जमकर बर्फके जैसा सफेद हो गया है।' कविवर रवीन्द्रनाथने अिसको कालके कपोल (गाल) पर पडा हुआ अश्रुबिंदु कहा है

अे कथा जानिते तुमि भारत-अीश्वर शा-जाहान,
कालस्रोते भेसे जाय जीवन यौवन धनमान।
शुधु तव अन्तरवेदना
चिरन्तन हये थाक, सम्राटेर छिल अे साधना।
राजशक्ति वज्रसुकठिन

सन्ध्या-रक्तराग-सम तन्द्रातले हय होक लीन,
केवल अेकटि दीर्घश्वास
नित्य-अुच्छ्वसित हये सकरुण करुक आकाश
अेअि तव मने छिल आश।
हीरा-मुक्ता-माणिक्येर घटा।
जेन शून्य दिगन्तेर अिन्द्रजाल अिन्द्रधनुच्छटा
जाय जदि लुप्त हये जाक,
शुधु थाक
अेकविन्दु नयनेर जल
कालेर कपोलतले शुभ्र समुज्ज्वल
अे ताजमहल ॥

जिस प्रकार पानी जमकर सफेद बर्फ हो जाता है, या घी जमने पर सफेद हो जाता है, अुसी प्रकार सम्राट्के आसुओके जमने पर अुन्होने सफेद संगमरमरका रूप ले लिया है — अैसा सूचन यहा है।

चर्मण्वती : देखिये प्रकरण ४१।

सिन्धु : मालवा होकर वहनेवाली अिस नामकी छोटीसी नदी। अिसका अुल्लेख 'मेघदूत' के २९ वे श्लोकमे आता है।

वेणीभूत-प्रतनु-सलिला सावतीतस्य सिधु
पाण्डु-च्छाया तट-रुह-तरुभ्रंशिभिर् जीर्णपर्णै।
सौभाग्य ते सुभग विरहावस्थया व्यजयन्ती
कार्श्यं येन त्यजति विधिना स त्वयैवोपपाद्य ॥

महाकवि भवभूतिके 'मालतीमाधव' के चौथे अकके अंतिम विभागमे मकरद माधवसे कहता है 'अुठो, पारा और सिंधु नदीके सगममे स्नान करके हम नगरमे ही प्रवेश कर ले।' — तदुत्तिष्ठ पारासिन्धुसभेदमवगाह्य नगरीमेव प्रविशाव।

कालिदासके 'मालविकाग्निमित्र' नाटकके पाचवे अंकके १४वें तथा १५वें श्लोकके नीचे अेक पत्र आता है, जिसमे अिस नदीका अुल्लेख है "योऽसौ राजसूययज्ञदीक्षितेन मया राजपुत्रशतपरिवृत वसुमित्र

गोप्तारम् आदिश्य सवत्सरोपावर्तनीयं निरर्गलन्तुरगो विसृष्टः, स सिन्धोर्दक्षिणरोधसि चरन्नश्वानीकेन यवनाना प्रार्थितः ।"

[राजसूय यज्ञकी दीक्षा लिये हुअे मैंने सौ राजपुत्रोंके साथ वसुमित्रको रक्षण करनेका आदेश देकर अेक वर्षमें वापस लानेकी शर्त कहकर जो घोडा छोडा था, वह सिन्धुके दक्षिण तट पर घूम रहा था। वहा यवनोंके अश्वदलने अुसकी अिच्छा की (अुसको रोका)।]

वहाकी मिश्रीसे मुह मीठा बनाकर : कालपीमें मिश्री बनती है, अिस बातका यहा सूचन है।

अक्षयवट : प्रयाग, भुवनेश्वर, गया आदि तीर्थस्थानोंमें बोये हुअे वटवृक्ष। कहते है कि अिस वटकी पूजा करनेसे, अिसे पानी पिलानेसे अक्षय पुण्यकी प्राप्ति होती है, अिसलिअे अुसे अक्षयवट कहते है। देखिये 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० २।

बूढा अकबर : अकबरने यहा किला बनवाया है अिस बातका सूचन। देखिये 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० २।

पृ० २४ अशोकका शिलास्तंभ : अिस पर अशोकका धर्मलेख खुदा हुआ है। देखिये 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० २।

सरस्वती : वाणी। गुप्तस्रोता सरस्वतीका भी यहा सूचन है।

कादंब : कलहंस।

धवल-शीला : जिसका शील (चारित्र्य) शुभ्र है।

अिन्दीवर-श्यामा : नीलकमलके जैसी श्याम। अिन्दीवर = नील-कमल।

संस्कृत कवियोंकी अेक पुरानी कल्पना है कि अिन्दीवर-श्याम और गौरवर्णके संगमसे अेक-दूसरेकी शोभाके कारण सौन्दर्य अुत्पन्न होता है। देखिये

अिन्दीवर-श्यामतनुर् नृपोऽसौ त्व रोचना-गौर-शरीर-यष्टिः ।
अन्योन्य-शोभा-परिवृद्धये वा योगस् तडित्तोयदयोर् अिवास्तु ॥

—रघुवंश, ६-६५

सुधा-जला : सुधा = अमृत। अमृत जैसे जलवाली। कहते हैं कि अमृतका रंग शुभ्र होता है। अिसलिअे यहा 'शुभ्र जलवाली' भी न

अर्थमे भी यह शब्द लिया जा सकता है। फिर, सुधाका दूसरा अर्थ होता है चूना। और चूनेका रग सफेद होता ही है। अिस अर्थमें भी 'सफेद जलवाली' ही कह सकते हैं। तुलना कीजिये 'सुधाधवल।

जाह्नवी : गगा। सगरपुत्रोंके अुद्धारके लिअे भगीरथ गगाको लेकर जा रहा था। मार्गमे जह्नु नामक अेक राजर्षिकी यज्ञ-सामग्री अुसमें वह गयी। अिससे क्रुद्ध होकर ऋषि अपने तपोवलसे गगाको पी गये। मगर भगीरथने अुनकी बहुत स्तुति की, तब अुन्होंने अपने कानमें से (कअी लोगोंके मतके अनुसार जाघमे से) गगाको निकाला। अिस परसे गगाको जाह्नवी नाम भी प्राप्त हुआ।

७. मूल त्रिवेणी

पृ० २५ ब्रह्मकपाल : हिमालयमे बदरीनारायण तीर्थमें अिस नामकी अेक शिला है। शास्त्रोंमें लिखा है कि अिस शिला पर बैठकर श्राद्ध करनेसे मनुष्यके सभी पूर्वज अेकसाथ मोक्ष पाते है और वह पितरोंके ऋणसे सदाके लिअे मुक्त होता है। देखिये 'हिमालयकी यात्रा', प्रक० ४२।

पृ० २६ हरिके चरण : हरिकी पैडीका सूचन है।

८. जीवनतीर्थ हरिद्वार

पृ० २६ त्रिपथगा : तीन मार्गोंसे बहनेवाली, स्वर्गगामिनी मंदाकिनी, मर्त्यवाहिनी गगा और पातालगामिनी भोगवती।

पृ० २७ प्रशम-कारी : शातिदायक। प्रशमका अर्थ निर्वाण और वैराग्य भी है।

पृ० २८ 'महोल्ला' : सिख गुरुओंके भजनोंके अतमे नानकका ही नाम आता है। अिससे कौनसा भजन किस गुरु द्वारा लिखा गया है, यह नाम परसे मालूम नहीं हो सकता। 'ग्रंथसाहबका' जब सग्रह किया गया, तब ये सब भजन गुरुके क्रमके अनुसार अलग किये गये और हरअेक गुरुके भजनोंका 'महोल्ला' अलग माना गया। अिस परसे अब कौनसा भजन किस गुरुका है यह मालूम किया जा सकता है।

आसा-दि-वार : आसावरी राग।

मुक्तिफौज : 'साल्वेशन आर्मी' नामक फौजी ढंगसे संगठित खिस्ती लोगोंकी अेक संस्था है, जिसके सदस्य गेरुअे वस्त्र पहनते हैं।

पृ० २९ दीपदानका अिसी तरहका काव्यमय वर्णन लेखकने 'हिमालयकी यात्रा' में 'गंगाद्वार' शीर्षक लेखमें किया है। अुसे देखिये।

पृ० ३० वाजिनीवती अुषा : ऋग्वेदके अुषासंबंधी सूक्तोंमें अुसको वाजिनीवती कहा गया है। वहां अुसका अर्थ 'बलवती' या 'समृद्धिशाली' होता है।

अुषस् तत् चित्रमा भर अस्मभ्यं वाजिनीवति।
येन तोकं च तनय च धामहे॥

[हे बलवती और समृद्धिशालिनी अुषा, हमें सुन्दर (बल या संपत्ति) दे, जिससे हम पुत्र और प्रपौत्रको धारण कर सकें।] मंडल १, सूक्त ९२–१३

'वाज' का अर्थ है बल, वीर्य, वेग। अिस परसे 'वाजिन्' कहते हैं बलवान, वीर्यवान, वेगवानको। फिर, अिसका अर्थ हुआ — जिसमें ये सब गुण हैं असा युद्धके रथका घोड़ा। अिसीका स्त्रीलिंगी रूप है 'वाजिनी' = घोडी। अिस परसे 'वाजिनीवत्' कहते हैं वेगवान घोडी हांकनेवालेको या अुनके मालिकको। अिसीका स्त्रीलिंगी रूप है — 'वाजिनीवती'। जब यह विशेषण अिन्द्र या सरस्वतीको लगाते हैं तब अुसका अर्थ होता है — बलवान, वेगवान घोड़ोंसे युक्त।

बल और वीर्य समृद्धिका मूल है। अिसलिये समृद्धिका अर्थ भी अिसमें आ जाता है। और धान्य तो अेक प्रकारकी समृद्धि है ही। अिससे अिस शब्दमें यह अर्थ भी समाया हुआ है। कभी कभी 'वाजिनीवती' का अर्थ 'अन्नवाली' भी होता है।

स्वश्वा सिन्धुः सुरथा सुवासा हिरण्ययी सुकृता वाजिनीवती।
ऊर्णावती युवतिः सीलमावत्युताधि वस्ते सुभगा मधुवृधम्॥
मं० १० सू० ७५–८

[अुत्तम अश्वोंवाली, अच्छे रथोवाली, सुन्दर वस्त्रोंवाली, हिरण्यवाली, सुघटित, अन्नवती, अूनवाली, स्तनवाली, युवती और सुभगा सिन्धु मधुवृधको (मधु वढानेवाले पौधेको) धारण करती है।]

कठोपनिषद्मे 'वाजस्त्रवस्' का अुल्लेख है। वहा 'वाज' का अर्थ है अन्न। अुसके दान आदिके कारण जिसको 'स्त्रवस्'=यश मिला है वह है 'वाजस्त्रवस्'।

'वाजीकर' औषधि यानी शक्तिवर्धक दवाअी। 'वाजीकरण' प्रयोग यानी शक्ति बढानेका प्रयोग। ये शब्द भी अिसके साथ सबद्ध है।

९. दक्षिणगंगा गोदावरी

अुठोनियां० 'प्रात कालमे अुठकर मुहसे चद्रमौली शिवका नाम लो। श्रीविंदुमाधवके पास गंगामे स्नान करो, गोदावरीमे स्नान करो . . । कृष्णा, वेण्णया, तुगभद्रा, सरयू, कालिंदी, नर्मदा, भीमा, भामा, — अिन सब नदियोंमे गोदावरी मुख्य है, अिस गगामे स्नान करो।'

श्री रामचंद्रके अत्यंत सुखके दिन: सीता और लक्ष्मणके साथ बिताये हुअे वनवासके दिन।

जीवनका दारुण आघात: सीताके हरणका।

पृ० ३१ वाल्मीकिकी अेक कारुण्यमयी वेदनामें से: क्रौंचवध जैसे अेक छोटेसे प्रसगमे से करुणाकी भावना जाग्रत होकर जिस प्रकार रामायणके जैसा महाकाव्य पैदा हुआ अुस प्रकार।

पृ० ३२ सहनवीर रामचन्द्र और दुःखमूर्ति सीतामाता: अिन विशेषणोंकी योग्यता ध्यानमे लीजिये। तुलना कीजिये 'दु ख-संवेदनायैव रामे चैतन्यनम् आहितम्।' — अुत्तररामचरित

कषाय: कसैले।

कल्पांतिक: कल्प = ब्रह्माका अेक दिन = १००० युग = ४३२० लक्ष मानवी वर्ष। सृष्टिकी आयु अितनी मानी जाती है। सृष्टिके अत तक जो बना रहे वह है कल्पातिक दु:ख। (कल्प + अत + अिक)

जनस्थान: दडकारण्यका अेक हिस्सा, जहा गोदावरीके तट पर श्री रामचद्र रहते थे। वहा राक्षसोका अुपद्रव कम था, अिसलिअे

मनुष्य वहा रह सकते थे। मनुष्योंके रहनेके योग्य स्थान होनेसे वह 'जनस्थान' कहलाता था।

जटायु: अरुणका पुत्र, सम्पातिका छोटा भाई, दशरथ राजाका परम मित्र। रावण जब सीताको लेकर जा रहा था, तब सीताके मुंहसे 'राम', 'राम' की पुकार सुनकर जटायुने सीताको छुड़ानेके बड़े प्रयत्न किये। किन्तु वह असफल रहा। अुसको मरणासन्न स्थितिमें छोड़कर रावण सीताको लेकर चला गया। अिधर जब राम सीताकी खोज करते हुअे वहा पहुचे, तो जटायुने अुन्हें खबर दी कि सीताको रावण अुठा ले गया है, और फिर प्राण छोड़े।

पृ० ३३ सीतामाताकी कातर तनु-यष्टि: तुलना कीजिये —

अस्मिन्नेव लतागृहे त्वमभवस्तन्मार्गदत्तेक्षण
सा हंसै कृतकौतुका चिरम् अभूद् गोदावरीसैकते।
आयान्त्या परिदुर्मनायितमिव त्वा वीक्ष्य बद्धस्तया
कातर्याद् अरविन्दकुड्मलनिभो मुग्ध प्रणामाञ्जलि ॥

विट्ठलपतको धमकाकर वापस गृहस्थ-जीवन वितानेके लिअे भेज दिया। अिनके चार सतान हुअी निवृत्तिनाथ, ज्ञानदेव, सोपानदेव और मुक्ताबाअी।

किन्तु शास्त्रोमे सन्यासीको फिरसे ससारी बननेकी अनुज्ञा नही है। अिसलिअे समाज अिस कुटुबको सताने लगा। अिनके बच्चोको जनेअू देनेके लिअे कोअी तैयार नही हुआ। अतमे विट्ठलपत पैठण गये और वहाके ब्राह्मणोके पावोमे पडकर अुन्होने कहा, 'मेरे लिअे कोअी भी प्रायश्चित्त बता दो, किन्तु मुझे शुद्ध करो और मेरे बच्चोको अुपवीत सस्कार देनेकी अनुज्ञा दो।' ब्राह्मणोको शास्त्रोमें कोअी आधार नही मिला। अुन्होने कहा, 'तुम्हारा पाप ही अितना बडा है कि तुम्हारे लिअे देहत्याग ही अेक अुपाय है। और तुम्हारे बच्चोको अुपवीत दिया ही नही जा सकता।' विट्ठलपत और अुनकी पत्नीने प्रयाग जाकर गगामे जल-समाधि ले ली।

अिसके बाद अिन चारो बच्चोने आळदीके ब्राह्मणोंसे प्रार्थना की कि 'हम ब्राह्मणके बच्चे है, हमे अुपवीत सस्कार मिलना चाहिये।' किन्तु ब्राह्मणोने जवाब दिया कि पैठणके ब्राह्मणोसे शुद्धि-पत्र लाने पर अुपवीत दिया जा सकेगा।

बच्चे पैठण गये। वहाके ब्राह्मणोके सामने अुन्होने अपनेको समाजमे लेनेकी माग पेश की। किन्तु ब्राह्मणोने कहा, 'सन्यासीके बच्चोको अुपवीतका अधिकार किसी भी शास्त्रमे नही है। अिसके लिये कोअी प्रायश्चित्त भी नही है। अत तुम सर्वत्र अीश्वरभाव रखकर जितेन्द्रिय बनो, विवाह मत करो और सदा हरिभजनमे मग्न रहो।'

निर्णय देकर सभा समाप्त होनेवाली थी, अितनेमे अिन चारो बच्चोको किसीने अुनके नामोके अर्थ पूछे। निवृत्तिनाथने कहा, 'मेरा नाम निवृत्ति है। मै कभी प्रवृत्तिमे पडनेवाला नही हू।' ज्ञानदेवने कहा, 'मैं ज्ञानदेव हू। सकल आगमोको जाननेवाला हू।' सोपानदेवने कहा, 'मै भक्तोको अीश्वर-भजन सिखाकर वैकुठ प्राप्त करानेवाला सोपान हू।' मुक्ताबाअीने कहा, 'मै विश्वकी लीला दिखानेके लिये प्रकट हुअी अीश्वरकी लीलारूपी मुक्ति हूं।'

यह जवाब सुनकर अुस आदमीने कहा, 'नाम तो चाहे जैसे रखे जा सकते हैं। यह जो पाडा जा रहा है अुसका नाम भी ज्ञानदेव है।'

ज्ञानदेव फौरन बोल अुठे, 'बेशक! अुस पाडेमें और मुझमें कोअी भी भेद नहीं है। अुसमें भी मेरी ही आत्मा है।'

अुसी समय किसीने अुस पाडे पर तीन चाबुक लगाये और अिधर अुसी क्षण ज्ञानेश्वरकी पीठ पर चाबुकके निशान अुठ आये!

चारों बच्चे ब्राह्मणोंको नमस्कार करके अपने गाव वापस जानेके लिअे निकले। रास्तेमें गोदावरीके तीर पर वे बैठे थे। वहां कुछ नौजवान अिकट्ठे हुअे थे। अुन्होंने मजाकके तौर पर ज्ञानदेवसे कहा, 'तुम यदि शुद्धिपत्र चाहते हो, तो अिस पाडेके मुंहसे वेदका पाठ करा दो।' तुरन्त ज्ञानेश्वर पाडेके पास गये और अुसके सिर पर हाथ रखकर अुन ब्राह्मणोंसे कहने लगे: 'आप तो भूदेव हैं। आपका वचन कभी निष्फल नहीं जा सकता। देखिये, यह पाडा अब वेदोंका पाठ करेगा।'

और सचमुच वह पाडा वेदोंकी ऋचायें बोलने लगा!!

ज्ञानेश्वरने गीता पर 'भावार्थ दीपिका' लिखी है, जिसको 'ज्ञानेश्वरी' कहते हैं। अिसके अलावा अुनकी अेक स्वतंत्र रचना है, जिसका नाम है 'अमृतानुभव'। ये दोनों भारतीय साहित्यके अनमोल रत्न हैं।

दशग्रंथी: ऋग्, यजुर्, साम और अथर्व ये चार वेद तथा शिक्षा (स्वरोच्चारण संबंधी), छंद, व्याकरण, निरुक्त (व्युत्पत्ति और अर्थ संबंधी), ज्योतिष और कल्प (सूत्र) ये छह वेदांग — अिन दस ग्रंथोंको कंठ करनेवाले।

पृ० ३४ शंकराचार्यके अुपर किये . . . अत्याचार: शंकराचार्यकी माता अुन्हें संन्यास लेनेकी अिजाजत नहीं देती थी। अेक बार शंकराचार्य नहानेके लिअे नदीमें अुतरे। वहां मगरमच्छने अुनका पांव पकडा। शंकराचार्यने पुकार कर मांसे कहा, 'अब तो मुझे संन्यास लेनेकी अिजाजत दो।' मांने अिजाजत दी कि शंकराचार्य मगरके जबडेमें से मुक्त हुअे। वे पूरे-पूरे मातृभक्त थे। किन्तु संन्यास-

धर्मके अनुसार वे माताके साथ रह नही सकते थे, माताका दर्शन तक नही कर सकते थे। तो भी अुन्होने घर छोडकर जाते समय मातासे कहा, 'सकटके समय मुझे बुलाओगी तो मैं आ जाअूगा।' और वे चले गये। कुछ समयके बाद मा बीमार पडी। अुसे पुत्रसे मिलनेकी अिच्छा हुअी। वचनके अनुसार शंकराचार्य आये और माताके अवसान तक अुन्होने अुसकी सेवा की। माताने सुखसे प्राण छोडे।

किन्तु मुसीबत अब शुरू हुअी। शवको स्मशानमें ले जानेके लिअे गावके ब्राह्मण तैयार नही थे। न अपने स्मशानमें अुस शवको जलानेकी अिजाजत देते थे। लकडी भी किसीने नही दी। ब्राह्मणोने तय किया कि जो संन्यास लेनेके बाद अपनी पूर्वाश्रमकी मासे मिलने आता है अुसका दह कार्य शास्त्रविरुद्ध है, अुसका बहिष्कार ही होना चाहिये। शंकराचार्यने अपनी माके शवके चार टुकडे किये, केलेके पेड काटकर ले आये, अुन पर ये टुकडे रखकर अुन्होने अपनी माताके घरके आगनमे ही योगाग्नि जलायी और अपने तपस्तेजसे अुसको सद्गति दी।

शकराचार्यका गाव जिस राज्यमे था, वहाका राजा अुनका शिष्य था। अपने पूज्य गुरु पर गुजरे हुअे अिस जुल्मकी खबर पाते ही अुसने अपने राज्यके नाबुद्री ब्राह्मणोको सजा दी कि वे अपने घरके लोगोके शव स्मशानमे नही ले जा सकते, बल्कि घरके आगनमे ही अुसके चार टुकडे करके जलावे। राजाने अिस सजाका अमल कठोरताके साथ करवानेका निश्चय किया। ब्राह्मण घबडा गये। अुन्होने माफी मागी। तब राजाने शवके चार टुकडे करनेके बदले शवके अूपर चार रेखाये खीचनेकी और बादमे स्मशानमे ले जानेकी अिजाजत दी।

अष्टवक्रा : जिसके आठो अग टेढे हो — खूब मोडवाली।

पृ० ३५ जीवन-वितरण : जीवन = पानी, वितरण = बाटना।

यानाम : गोदावरीके मुखके पास यह स्थान है। फ्रेंच कपनीने सन् १७५० मे अिसका कब्जा लिया था और दो सालके बाद फ्रेंच सरकारको सौंप दिया था। अब यह स्वतंत्र भारतमें मिल गया है।

पृ० ३६ चंचल कमलोंके बीच : कमलोंको गतिमान बनाकर दृश्यकी शोभा बढ़ानेके लिअे।

भवभूतिका स्मरण : भवभूतिने अपने 'अुत्तररामचरित' में गोदावरीके विविध सौंदर्यका वर्णन किया है अिसलिअे। अुदाहरणके तौर पर देखिये :

> अेतानि तानि गिरि-निर्झरिणी-तटेषु
> वैखानसाश्रित-तरूणि तपोवनानि।
> येष्वातिथेयपरमा शमिनो भजन्ते
> नीवार-मुष्टि-पचना गृहिणो गृहाणि॥
>
> अुत्तररामचरित १-२५

> स्निग्ध-श्यामाः क्वचिद् अपरतो भीषणा भोग-रूक्षा
> स्थाने स्थाने मुखर-ककुभो झाङ्कृतैर्निर्झराणाम्।
> अेते तीर्थाश्रम-गिरि-सरिद्-गर्त-कान्तार-मिश्राः
> सदृश्यन्ते परिचित-भुवो दण्डकारण्य-भागाः॥
>
> अु० रा० २-१४

> अिह समदशकुन्ताक्रान्तवानीरमुक्त-
> प्रसवसुरभिशीतस्वच्छतोया वहन्ति।
> फलभरपरिणामश्यामजम्बू-निकुञ्ज-
> स्खलनमुखरभूरिस्रोतसो निर्झरिण्यः॥
>
> अु० रा० २-२०

> 'अेते त अेव गिरयो विरुवन्मयूरास्-
> तान्येव मत्तहरिणानि वनस्थलानि।
> आमञ्जुवञ्जुललतानि च तान्यमूनि
> नीरन्ध्रनीपनिचुलानि सरित्तटानि॥
>
> अु० रा० २-२३

> मेघमालेव यश्चायमारादिव विभाव्यते।
> गिरिः प्रस्रवणः सोऽयं यत्र गोदावरी नदी॥
>
> अु० रा० २-२४

अस्यैवासीन्महति शिखरे गृध्रराजस्य वासस्
तस्याधस्ताद्वयमपि रतास्तेपु पर्णोटजेषु।
गोदावर्या पयसि विततश्यामलानोकहश्रीर्
अन्त. कूजन्मुखरशकुनो यत्र रम्यो वनान्त ॥

अु० रा० २–२५

गुञ्जत्कुञ्जकुटीरकौशिकघटाघुत्कारवत्कीचक–
स्तम्बाडम्बरमूकमौकुलिकुल क्रौचावतोऽय गिरिः।
अेतस्मिन्प्रचलाकिना प्रचलतामुद्वेजिता कूजितैर्
अुद्वेल्लन्ति पुराणरोहिणतरुस्कन्धेषु कुम्भीनसा ।

अु० रा० २–२९

अेते ते कुहरेषु गद्गदनदद्गोदावरीवारयो
मेघालम्बितमौलिनीलशिखरा क्षोणीभृतो दाक्षिणा ।
अन्योन्यप्रतिघातसकुलचलत्कल्लोलकोलाहलैर्
अुत्तालास्त अिमे गभीरपयस. पुण्या सरित्सगमा.॥

अु० रा० २–३०

यत्र द्रुमा अपि मृगा अपि वन्धवो मे
यानि प्रियासहचरश्चिरमध्यवात्सम्।
अेतानि तानि वहुकन्दरनिर्झराणि
गोदावरीपरिसरस्य गिरेस्तटानि॥

अु० रा० ३–८

वैदिक प्रभात : वेदकालमे जहा आर्य रहते थे, वहाका प्रभात कुहरेके कारण धूसर होता था अिसलिअे, अितिहासमे वेदकाल अुप कालके जैसा धुधले प्रकाशवाला माना गया है अिसलिअे तथा वेदकालमे ही धर्मज्ञानका अुप काल हुआ था अिसलिअे भी।

पृ० ३७ कविकी प्रतिभाके समान : प्रतिभाकी व्याख्या अिस प्रकार है 'प्रज्ञा नवनवोन्मेपशालिनी प्रतिभा मता।'—नये नये स्फुरण जिस प्रज्ञा (वुद्धि)से निकलते है, वह प्रतिभा कही जाती है।

चरित्र : [चर् (चलना) + त्र (साधन) = चलनेका साधन = पैर।] चाल; आचरण। वेदोंमें 'चरित्र' शब्द पैरके अर्थमें आया है। (पैरोंके निशान — चरित्र — देखकर चलनेवालोंको यह पता मिल जाता है कि बगुला किस दिशामें गया है। इसके अर्थमें, सज्जनोंमें भला आचरण करनेवाले बगलाभगतको बगला दिशा बताता है।)

१०. वेदोंकी धात्री तुंगभद्रा

पृ० ४१ 'द्वंद्वः सामासिकस्य च' : समासोंमें मैं द्वंद्व हूं। गीता, १०–३३।

११. नेल्लूरकी पिनाकिनी

पृ० ४२ नेल्लूर : (नेल्ल = धान + ऊर = गांव) धानका गांव। यह गांव मद्रासकी अुत्तर दिशामें है।

१२. जोगका प्रपात

पृ० ४४ होन्नावर : अुत्तर कर्णाटकमें पश्चिम समुद्रतट पर स्थित अेक शहर।

पृ० ४५ कारकल : दक्षिण कर्णाटकमें मंगलूर और अुडुपीके बीच स्थित अेक शहर। यहां हैदरके द्वारा स्थापित हनुमानका मंदिर है। समीपकी टेकरी पर बाहुबलीकी अेक भव्य मूर्ति खड़ी है।

सज्जना० मनमें सोचते हैं अेक बात और करते हैं दूसरी ही बात

स्थितधीः ० स्थितप्रज्ञ कैसे बोलता है, कैसे बैठता है और कैसे चलता है? गीता, २–५४।

कुलशिखरिणः ० पूरा श्लोक अिस प्रकार है

> विरम विरमायासाद् अस्माद् दुरध्यवसायतो
> विपदि महता धैर्य-ध्वंस यद् अीक्षितुम् अीहसे।
> अयि जडमते! कल्पापाये व्यपेत-निजक्रमा
> कुल-शिखरिण क्षुद्रा नैते न वा जलराशय ॥

[अपनी मर्यादा कभी न छोडनेवाला सागर और अपने स्थान पर सदा स्थिर रहनेवाले कुलपर्वत भी जब प्रलयकाल आता है तब चलित होते हैं। किन्तु महात्माओंमें अैसी क्षुद्रता नही होती। वे तो संकट जितना अधिक होता है अुतने ही अधिक अडिग रहते है। अिस तरह समझाते हुअे कवि कहता है:

हे जडमते! विपद् कालके समय महात्माओंका धैर्यनाश देखना यदि चाहते हो तो यह झूठा प्रयास है। अुसको छोड दो। ये महात्मा तुम्हारे क्षुद्र कुलपर्वत नही है, न पामर सागर है, जो प्रलयकाल आते ही अपने स्वधर्म-कर्मके नियमोंको भी तोड देते है।]

पृथ्वी पर चाहे जितना अुत्पात हो जाय, फिर भी पृथ्वीकी समतुला सभालनेवाले कुलपर्वत अपनी जगहसे हटते नही है। अिसीलिअे किसीके धैर्यकी अुपमा देते समय कहा जाता है कि अिसका धैर्य तो कुलपर्वतके समान है।

अिसी प्रकार नदियोंमें चाहे जितनी बाढ आ जाय, तो भी अुनके पानीसे समुद्र या महासागर अुभर नही आता। महासागर अपनी मर्यादाको छोडते नहीं, अिसलिअे महासागर भी कवियोंकी सृष्टिमे धैर्य और मर्यादाके लिअे आदर्श अुपमान बन गये है।

प्रस्तुत श्लोकमें महात्माओंकी अचल स्थिरताका वर्णन करते समय कवि कहता है कि अुनके सामने कुलपर्वत भी क्षुद्र होते है और जलराशि महासागर भी तुच्छ है। क्योंकि हजारों और लाखों साल तक अपनी मर्यादाका अुल्लंघन न करनेवाली ये विभूतिया प्रलयकालके

समय अपना स्वधर्म-कर्म छोड देती है। महात्माओंकी बात अैसी नहीं है।

आदर्श अुपमानको तुच्छ मानकर अुपमेय वस्तु अुपमानसे भी श्रेष्ठ है, यह दिखानेवाली पद्धतिको संस्कृतमें प्रतीप अलंकार कहते हैं। असमें अत्युक्ति अवश्य होती है।

पृ० ४७ खंडाला घाट : पूना और बम्बओीके बीचका घाट।

पृ० ४८ प्रतीप : [प्रति = विरुद्ध + अप् = पानी] प्रवाहके विरुद्ध, अुलटी।

पृ० ४९ तमाशा : यहां फजीहतके अर्थमें।

पृ० ५० नमः पुरस्तात् ० हे सर्व! तुम्हें आगेसे, पीछेसे, सभी ओरसे नमस्कार है। तुम्हारा वीर्य अनंत है। तुम्हारी शक्ति अपार है। सब कुछ तुम्हीं धारण कर रहे हो, अतः तुम सर्व हो। गीता, ११–४०

सुदुर्दर्शम् अिदम् ० मेरा जो रूप तुमने देखा है, अुसका दर्शन बडा दुर्लभ है। देवता भी अिस रूपके दर्शनकी आकांक्षा रखते हैं। गीता, ११–५२

स्वप्न था ० तुलना कीजिये.

स्वप्नो नु माया नु मतिभ्रमो नु? — शाकुन्तल, ६–१०

पृ० ५१ व्यपेतभीः ० डर छोडकर शांतचित्त हो जा और यह मेरा परिचित रूप फिरसे देख ले। — गीता, ११–४९

देवदास : देवदास गांधी।

मणिबहन : सरदार पटेलकी पुत्री।

लक्ष्मी : राजाजीकी पुत्री, बादमें देवदास गांधीकी पत्नी।

पृ० ५२ अण्णा : राजाजी।

पत्रं नैव यदा० वसन्त ऋतुमें जब सब वृक्ष-वनस्पतियोंको नये पत्ते आते हैं, तब यदि केवल करीलके वृक्षको ही पत्ते न हों, तो असमें वसंतका भला क्या दोष है? घुग्घू यदि दिनमें देखे ही नहीं, तो अिसमें सूर्यका क्या दोष है?

भर्तृहरिके अिस श्लोकके शेप दो चरण अिस प्रकार है:

धारा नैव पतन्ति चातकमुखे मेघस्य कि दूपणम् ?
यत् पूर्वं विविना ललाट-लिखित तन् मार्जितु क. क्षम ?

[चातकके ही मुहमे यदि पानीकी धारा गिरे नही तो अुसमे भला मेवका क्या दोप है? विधिने ललाटमे जो लिख रखा है, अुसको मिटानेके लिअे कौन समर्थ हे?]

'अुच्छिष्ट:' [अुन्+शिप्ट] जूठा नही, वल्कि किसानके फसल काट कर ले जानेके वाद वचा हुआ।

रवीन्द्रनाथ अथर्ववेदके अेक मत्रका आधार लेकर वताते है कि सारी कलाओका और मनुष्यकी सारी अुच्चतर प्रवृत्तियोका मूल 'अुच्छिप्ट' है। नीचे अुनके वचन दिये जा रहे है

ऋत सत्य तपो राष्ट्रं श्रमो धर्मश्च कर्म च।
भूत भविष्यत् अुच्छिष्टे वीर्यं लक्ष्मी-वल वले॥

"Righteousness, truth, great endeavours, empire, religion, enterprize, heroism and prosperity, the past and the future dwell in the surpassing strength of the surplus"

The meaning of it is that man expresses himself through his super-abundance which largely overleaps his absolute need

The renowned vedic commentator Sayanacharya says

"The food offering which is left over after the completion of sacrificial rites is praised because it is symbolical of Brahma, the original source of the universal"

According to this explanation, Brahma is boundless in his superfluity which inevitably finds expression in the eternal world process. Here we have the doctrine of the origin of the arts Of all living creatures in the world man has his vital and mental energy vastly in excess of his need which urges him to work in various lines of creation for

its own sake Like Brahma himself, he takes joy in productions that are unnecessary to him, and therefore represent his extravagance and not his hand-to mouth penury. The voice that is just enough can speak and cry to the extent needed for everyday use, but that which is abundant sings; and in it we find our joy Art reveals man's wealth of life, which seeks its freedom in forms of perfection which are ends in themselves.

भावार्थ :

'ऋत, सत्य, तप, राष्ट्र, श्रम, धर्म, कर्म तथा भूत और भविष्य, वीर्य और लक्ष्मी अुच्छिष्टके बलमें निवास करते हैं।'

अिसका अर्थ यह है कि अपनी आवश्यकताओंकी पूर्ति करनेके बाद मनुष्यके पास जो अतिशय शक्ति अधिक रहती है, अुसीके द्वारा वह अपनेको व्यक्त करता है।

वेदोंके प्रसिद्ध टीकाकार सायणाचार्य कहते हैं

'यज्ञविधिके बाद, बचे हुअे (अुच्छिष्ट रहे) अन्नबलिको पवित्र अिसीलिअे कहा गया है कि वह अखिल विश्वके मूल कारणरूप ब्रह्मका प्रतीक है।'

अिस धारणाके अनुसार ब्रह्मकी अुच्छिष्ट शक्ति अपरम्पार है, और वह सनातन विश्व-प्रक्रियाके रूपमें प्रकट होती है। यहां हमें कलाओंके अुद्भवसे संबंध रखनेवाला सिद्धांत देखनेको मिलता है। संसारके सभी जीवोंकी तुलनामें मनुष्यमें प्राण और मनकी शक्ति अुनकी आवश्यकतासे अधिक भरी है, और वह अुसे अनेकविध निर्हेतुक सर्जक प्रवृत्तियां करनेके लिअे प्रेरित करती है। स्वयं ब्रह्मकी तरह, वह भी जो सर्जन अुसके लिअे अनावश्यक है, और जो अुसके अकिंचनत्वके नहीं बल्कि अुसके अुड़ाअूपनके सूचक हैं, अुनमें आनन्द लेता है। जो आवाज केवल आवश्यकता भरकी ही है, वह रोजके कामकाजके जितनी ही बोल सकती है या रो सकती है, किन्तु जो आवाज अधिक होती है, वह गाने लगती है — और अिसीमें हमारा आनन्द है। कला मनुष्यके

जीवनकी समृद्धिको प्रकट करती है। यह समृद्धि निर्हेतुक सर्वांग-संपूर्ण स्वरूपोंमें मुक्तिका आनन्द मनानेके लिअे प्रयत्न करती रहती है।

'परिग्रहो भयायैव': परिग्रहमें भय रहता ही है। लेखकका यह अपना सूत्र है।

पृ० ५३ 'निस्' कोटिके: (Gneiss) सतहवाले पत्थर जिनमें अभरक, चकमक वगैराका समावेश होता है।

पृ० ५४ भगिनी निवेदिताकी प्रख्यात तुलना: मूल अिस प्रकार है:

Beauty of place translates itself to the Indian consciousness as God's cry to the soul Had Niagara been situated on the Ganges, it is odd to think how different would have been its valuation by humanity. Instead of fashionable picnics and railway pleasure-trips, the yearly or monthly incursion of worshiping crowds Instead of hotels, temples Instead of ostantatious excess, austerity. Instead of the desire to harness its mighty forces to the chariot of human utility, the unrestrainable longing to throw away the body and realize at once the ecstatic madness of Supreme Union. Could contrast be greater?

—*The Web of Indian Life* —241

भैरवजाप: "पहाड पर जहां अूचेमें अूचा शिखर हो और पास ही नीचे अेकदम सीधा कगार हो, अुस स्थानको भैरवघाटी कहते हैं। प्राचीन कालसे और आज भी भैरव सम्प्रदायके लोग प्राय अैसे स्थान पर भैरवजीका जाप करते-करते अूपरसे नीचे कूद पड़ते हैं। माना यह जाता है कि अिस तरह आत्महत्या करनेमें पाप नहीं, अपितु पुण्य है। यह मान्यता आजके कानूनके अनुसार गलत भले ही हो, किन्तु मानस-शास्त्री असी आधारभूत तत्त्वको सहज ही समझ सकते हैं। दुनियासे सब तरह निराश होकर कायरतावश किसी मनुष्यका आत्महत्या करना और प्रकृतिके विशाल, अुच्च, अुदात्त तथा स्वर्गीय सौन्दर्यको देख, तल्लीन होकर प्रकृतिके साथ अेकरूप होनेकी

अिच्छाका प्रवल हो अुठना, किसी तरह प्रकृतिका वियोग सहा ही न जाना, और अैसेमे किसी मनुष्यका अिस क्षुद्र देहके वधनको भग्न कर सात्म्य प्राप्त करनेके लिअे अनन्तमें कूद पड़ना — ये दो बातें नितात भिन्न हैं। दोनोका परिणाम चाहे अेक ही हो। हर तरहके विनाशको हम मृत्युके अेक ही नामसे पुकारते हैं; परन्तु वस्तु अेक ही नही होती। कअी वार मरण जीवन-रूपी नाटकका आरम्भक होता है, और कअी वार वह अुस नाटकका भरत-वाक्य — जीवन-साफल्य — होता है।" —'हिमालयकी यात्रा', प्रक० १६, पृ० ९१-९२

पृ० ५५ विभव-तृष्णा : देखिये पृ० १४८ पर 'लहरोंका नाट्य-योग' शीर्षक लेख।

नाभिनंदेत० न मृत्युका स्वागत करना, न जीवनका।

— मनुस्मृति।

हॉर्स पावर : अिसके लिअे लेखक 'अश्वत्थामा' शब्द पारिभाषिक शब्दके तौर पर सुझाते हैं। [अश्व = घोड़ा + स्थामन् = शक्ति।] समासमे 'स्थामन्' मे से 'स्' का लोप हो जाता है।

अुपवन : 'न्यू फॉरेस्ट' नामक प्रदेश।

नीरो : रोमका अेक बादशाह (सन् ५४–६८)। माके भड़कानेसे पिताका खून होनेके बाद रोमकी गद्दीके अधिकारी ब्रिटेनिकसको हटाकर खुद गद्दी पर बैठा। पाच साल तक अच्छी तरह राज चलानेके बाद वह तानाशाह बन गया। अुसने ब्रिटेनिकसकी, अपनी माकी और पत्नीकी हत्या की। रोमको जलानेके झूठे अिल्जाम पर अुसने ख्रिस्तियोंके अूपर तरह तरहके अत्याचार किये। अपने गुरु और मत्री सेनेकाकी तथा अपनी दूसरी पत्नीकी भी हत्या की। अिसके बाद रोममें बगावत हुअी, जिनसे वह भाग गया और अुसने आत्महत्या कर ली। अैसी दंतकथा है कि अुसने रोमको जलाया था और खुद जलते हुअे रोमको देख कर फिड्ल बजाता था। किन्तु अितिहासमें अिसके लिअे कोअी समर्थन प्राप्त नहीं है। किन्तु अिसमें कोअी सदेह नहीं कि वह अत्यन्त निर्दय था।

पृ० ५६ आर्तिनाश : तुलना किजिये

न त्वह कामये राज्य, न स्वर्ग नापुनर्भवम्।
कामये दुःख-तप्ताना प्राणिना आर्ति-नाशनम्॥

[अपने लिअे मैं न राज्य चाहता हू, न स्वर्गकी अिच्छा करता हू, और न मोक्ष चाहता हू। दुःखसे तपे हुअे प्राणियोकी पीडाका नाश हो, बस अितना ही मैं चाहता हूं।]

पृ० ५७ वीरभद्र : दक्ष प्रजापतिके यज्ञका संहार करनेवाले शिवगण।

अंग्रेजोको हम पहचान गये हैं तो : अंग्रेज भी भारतका खून चूसते हैं, परन्तु मालूम ही नही होता कि वे चूस रहे हैं। अंग्रेजोका यह स्वरूप हम पहचान गये हैं तो —

काकदृष्टि : कौवेके जैसी चकोर दृष्टि। ['काका' की दृष्टि, यह अर्थ भी है।]

पृ० ५८ प्रायः कन्दुक० आर्यजन गिरते हैं तो भी अक्सर गेंदकी तरह गिरते हैं, यानी गिरने पर फिर अूचे अुछलते हैं।

भर्तृहरिका पूरा श्लोक अिस प्रकार है

प्रायः कन्दुक-पातेन पतत्यार्यः पतन्नपि।
तथा त्वनार्यः पतति मृत्पिण्ड-पतन यथा॥

न हि कल्याणकृत्० कल्याण करनेवाला कोअी भी दुर्गतिको प्राप्त नहीं होता। गीता, ६–४०

पृ० ६० मानो महादेवजी संहारकारी तांडव-नृत्य . . हों : रावणके शिव-ताण्डव-स्तोत्रका यहा स्मरण होता है। नीचे दो श्लोक दिये जा रहे हैं

जटा-कटाह-संभ्रम-भ्रमन्निलिम्प-निर्झरी–
विलोल-वीचि वल्लरी-विराजमान मूर्धनि।
धगद्-धगद्-धगज्ज्वलल्-ललाट-पट्ट-पावके
किशोर-चन्द्र-शेखरे रतिः प्रतिक्षण मम॥१॥

[जिसका सिर जटारूपी कडाहेमें वेगसे घूमनेवाली सुर-सरिता (गंगा) की चचल तरग-लताओंसे सुशोभित हो रहा है, ललाट-

टाग्नि धग धग धग जल रही है, सिर पर बालचंद्र विराजमान है, अुन (शिवजी) में मेरा निरंतर अनुराग बना रहे।]

जयत्वदभ्र-विभ्रम-भ्रमद्भुजंगम-श्वसद्
विनिर्गमत्क्रम-स्फुरत्कराल-भाल-हव्यवाट्।
धिमिद् धिमिद् धिमिद् ध्वनन्-मृदंग-तुंग-मंगल-
ध्वनि-क्रम-प्रवर्तित-प्रचण्ड-ताण्डव शिव ॥१०॥

[सतत हिलते रहनेवाले भुजंगके निःश्वाससे जिनके भालकी कराल अग्नि अुत्तरोत्तर अधिक स्फुरित होती जाती है और धिमिद् धिमिद् धिमिद् जैसी मृदंगकी अुच्च मंगल ध्वनिकी तरह जो प्रचण्ड ताण्डव खेल रहे हैं, अुन शिवजीकी जय हो।]

पृ० ६१ देवेन्द्र: लंकाका दक्षिण छोर। Dundra Head

नारायणका ही सरोवर: सिन्ध और कच्छके बीच स्थित सरोवर।

पृ० ६३ पुनरागमनाय च: धार्मिक प्रसंगों पर पूजाके अन्तमें देवताका विसर्जन करते समय अिस वचनका प्रयोग होता है। अिसका अर्थ है—'फिर आनेके लिअे।' भाव यह है कि विदाअी हमेशाके लिअे नहीं है, बल्कि फिरसे मिलनेके लिअे ही है।

लेखककी अिस अिच्छाकी या संकल्पकी पूर्ति कअी सालोंके बाद किस प्रकार हुअी, अिसका वर्णन अगले प्रकरणमें देखिये।

१३. जोगके प्रपातका पुनर्दर्शन

पृ० ६४ अेतावान् अस्य महिमा० अितनी तो अुसकी महिमा है, पुरुष तो अिससे भी बड़ा है। यह वचन ऋग्वेदके पुरुषसूक्तसे लिया गया है।

पृ० ६६ अनुदरी: छोटे पेटवाली। मंदोदरी, कृशोदरीकी तरह।

विश्वजित् यज्ञ: 'सर्ववेदस्', वह यज्ञ जिसमें जीवनकी सारी कमाअी देनी होती है। तुलना कीजिये:

स्थाने भवान् अेक-नराधिप सन्
अकिंचनत्वं मखजं व्यनक्ति।
पर्याय-पीतस्य सुरैर् हिमांशोः
कला-क्षयः श्लाघ्यतरो हि वृद्धेः॥ रघुवंश, ५-१६

[आप चक्रवर्ती राजा होकर विश्वजित् यज्ञके कारण अुत्पन्न हुआ अकिंचनत्व दर्शाते हैं, यह योग्य है। देवताओंके बारी बारीसे पीनेके कारण चन्द्रकी कलाका क्षय वृद्धिसे अधिक बधाओीके योग्य है।]

पृ० ६७ अलकेश्वर: (अलका + अीश्वर) कुबेर।

प्रति-धनुष: आकाशमें अिन्द्रधनुपके कुछ अूपर दूसरा फीका धनुप अक्सर दिखाओी देता है, अुसको प्रति-धनुप कहा गया है। अुसके रंग मूल धनुपके ठीक अुलटे क्रममें होते हैं।

सुरधनु: देवोंका धनुप, 'अिन्द्रधनु'।

सुरधुनी: स्वर्गकी नदी। यहां केवल नदी।

किसी भी नदीको गंगा कहा जाता है अिसलिअे।

प्रतिक्षण हमारा पुण्य . . . है: याद कीजिये

क्षीणे पुण्ये मर्त्य-लोकं विशन्ति।

—गीता, ९–२१

पृ० ७० रोमें रोलां: (१८६६–१९४४) फ्रान्सके विश्व-विख्यात मानवतावादी साहित्यकार और कला-विवेचक। अुनका अुपन्यास 'जां क्रिस्तॉफ' अुनकी सर्वश्रेष्ठ कृति माना जाता है। सन् १९१६ में अुन्हें अिसके लिअे 'नोबल पारितोपिक' मिला था। अुन्होंने गांधीजी, रामकृष्ण परमहंस और स्वामी विवेकानन्दकी जीवनियां लिखकर भारतकी विचारधारा पश्चिमके संसारको समभावपूर्वक समझायी थी। गांधीजी जब गोलमेज परिपद्में शरीक होनेके लिअे विलायत गये थे, तब लौटते समय अुनसे खास तौर पर मिले थे। अुनकी भारत-सम्बन्धी डायरी फ्रेन्च भाषामें प्रसिद्ध हुआी है। अुसमें भी गांधीजी, रवीन्द्रनाथ, श्री अरविंद आदिके सम्बन्धमें काफी बातें हैं। वे युद्धके विरोधी थे और मानते थे कि कला सर्व-लोक-गम्य होनी चाहिये।

पृ० ७१ मानवकृत कलाकृति: सृष्टिमें जो सौन्दर्य होता है अुसको कला नहीं कहते। कला तो मानवीय ही होती है। प्रकृतिका सौन्दर्य कलाकी अुत्पत्तिका अेक प्रेरक कारण जरूर है।

'अल्पस्य हेतोः' ० अल्प हेतुके लिअे बड़ी वस्तुका नाश करनेकी अिच्छावाले। कवि कालिदासके 'रघुवंश' में यह वचन है। दिलीप जब

गायके बदलेमें अपना शरीर सिंहको देनेके लिअे तैयार होता है, तब अुसे समझानेके लिअे सिंह कहता है

अेकातपत्रं जगतः प्रभुत्वं,
नवं वयः, कान्तम् अिदं वपुश्च।
अल्पस्य हेतोर् बहु हातुम् अिच्छन्
विचारमूढः प्रतिभासि मे त्वम्॥ रघुवंश, २-४७

[संसारका अेक-छत्र राज्य, जवान अुम्र और यह सुंदर वपु (शरीर), थोडेके लिअे अितना बडा त्याग करनेके लिअे तुम तैयार हो गये हो! तुम मुझे विचारमूढ मालूम होते हो।]

१४. जोगका सूखा प्रपात

पृ० ७२ राक्षसी दुष्टता : याद कीजिये

बुभुक्षितः किं न करोति पापम्
क्षीणा नरा निष्करुणा भवन्ति।

पृ० ७३ रावणकी तरह रावण पैदा हुआ तब महारव करता ही पैदा हुआ था। अिस परसे अुसके पिताने अुनका नाम रावण रख दिया था।

तपस्विनी : गरमीका ताप सहती थी अिसलिअे।

संभाजीकी आंखें : १६८९ में संभाजीको गिरफ्तार करनेके बाद औरंगजेबने अुसको अिस्लाम स्वीकार करनेकी बात कही। किन्तु संभाजीने अिस्लाम स्वीकार करनेके बदले बादशाहका अपमान किया। अिसलिअे औरंगजेबने अुसकी जीभ कटवा डाली, आंखें निकलवा डालीं और अुसे मरवा डाला।

पृ० ७४ नदीमुखेनेव समुद्रमाविशत् : नदीके मुखसे समुद्रमें प्रवेश करना। महाकवि कालिदासने 'रघुवंश' में रघुके विद्याभ्यासका वर्णन करते समय लिखा है :

लिपेर् यथावद् ग्रहणेन वाङ्मयं
नदी-मुखेनेव समुद्रम् आविशत्॥ रघु० ३-२८

[जिस प्रकार नदीके मुखसे समुद्रमें प्रवेश करते हैं, अुसी प्रकार लिपिके यथावत् ग्रहणके द्वारा अुसने साहित्यमें प्रवेश किया।]

अिस परसे गुजरात विद्यापीठके द्वारा चलनेवाले गुजरात महाविद्यालयकी द्वैमासिक पत्रिका 'साबरमती' के लिअे जब ध्यानमंत्रकी आवश्यकता मालूम हुअी, तब श्री काकासाहबने 'नदीमुखेनैव समुद्रमाविशेत्' वचन दिया था। तबसे शायद अुनके मनमें यह खयाल दृढ हो गया होगा कि यही वचन कालिदासका मूल वचन है। मूलमें है 'आविशत्'=अुसने प्रवेश किया। अुस परसे काकासाहबने बना लिया आविशेत्=प्रवेश करना चाहिये।

पृ० ७५ कालपुरुष : 'कालोऽस्मि लोकक्षयकृत् प्रवृद्ध.' कहनेवाला गीताका विराट्-पुरुष।

'तत्रका परिदेवना' : अुसमें शोक क्या? याद कीजिये :

अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्त-मध्यानि भारत।
अव्यक्त-निधनान्येव तत्र का परिदेवना॥ गीता, २–२८

पृ० ७७ अुष्मपा : गरम गरम पीनेवाले, पितर। अन्न खाकर नहीं, अपितु केवल अुष्णता पीकर रहनेवाले पितर और देवता। गीतामें यह शब्द आया है। ११–१२

१५. गुर्जर-माता साबरमती

पृ० ७९ वनस्पति-अुपासक श्री शिवशंकर : प्रसिद्ध गुजराती लेखक और अनुवादक स्व० श्री चन्द्रशंकर शुक्लके छोटे भाअी। आपने वनस्पतिका काफी गहरा अभ्यास किया है। हरिपुरा कांग्रेसके समय आपके आग्रह और परिश्रमसे वनस्पति-प्रदर्शनका आयोजन किया गया था। आपने 'गुजरातनी लोकमाताओ' नामक गुजराती पुस्तक लिखी है।

पृ० ८० ब्राह्मणोंने तप किया है : कहते हैं कि शौनक, वसिष्ठ, वामदेव, गौतम, गालव, गार्गेय, भरद्वाज, अुद्दालक, जमदग्नि, कश्यप, [illegible], भृगु, जाबालि आदि ८८ सहस्र ऋषियोंने साबरमतीके किनारे तपश्चर्या की थी।

पृ० ८१ 'वौठा' का मेला : प्रतिवर्ष कार्तिकी पूर्णिमाको गुजरातमें धोलका तालुकेके पास वौठामें यह मेला लगता है, जिसमें करीब लाख-डेढ़ लाख लोग अिकट्ठे होते हैं। यहां पर मेस्वो, माझम, वात्रक और शेढीमें

बनी हुअी वात्रक नदीका खारी, हाथमती और मावरने बनी हुअी साबरमतीके साथ संगम होता है।

साबरमतीके पुराने नाम : भिन्न भिन्न युगोंमे साबरमती भिन्न भिन्न नामोंसे पुकारी गयी है। सत्ययुगमें अुसको कृतवती, त्रेतामें गिरि-कर्णिका और द्वापरमें विधुवती या चदना या चदनावती कहते थे। कलियुगमे अुसको साभ्रमती कहते है।

कश्यपगगा : अेक कथा अिस प्रकार है :

किसी समय लगातार सात बार जब अकाल पडा, तब ऋषियोंने कश्यपसे प्रार्थना की और अुमने शकरजीकी आराधना की। शकरजी साभ्रमती गगाको लेकर अर्बुदारण्यमें आये, जहासे अिसकी धारायें अरण्यमें होकर गुजरातकी ओर बहने लगी। तब समुद्रने प्रकट होकर कश्यपसे प्रार्थना की 'भगवन्, कुछ भी करके अिस नदीका पानी मेरे जलमे मिला दीजिये। क्योंकि अगस्त्य ऋषिने मेरा सारा पानी पीकर लघुशकाके रूपमें वह पानी मुझे वापस दिया, अिसलिअे जल अपवित्र हो गया है। अिस नदीके स्पर्शसे वह पावन हो जायगा।'

साबरमती दूसरी नदियोंके साथ समुद्रमें जा मिली और समुद्र पावन हुआ।

दूसरी कथा अिस प्रकार है कि पार्वतीके रूपमें गगा अिधर अुधर भटक रही थी — 'सा भ्रमति'। मुनि कश्यप अपनी जटाओंमे डालकर अर्बुदारण्यमे ले आये। यहा आनेके बाद अुन्होंने अपनी जटायें पछाडी, अिसलिअे अुस गगामे से सात प्रवाह बहने लगे। अुसका मुख्य प्रवाह साबरमती कहलाया और बाकीके छ: प्रवाहोंसे अुसको पास मिलनेवाली छ नदिया बनी।

कश्यप अुसको ले आये, अत: वह कश्यपगगा कहलायी।

पृ० ८२ **दधीचिने तप किया :** वृत्रासुर यज्ञकुंडमें से पैदा हुआ और क्षण-क्षणमे अितना बढने लगा कि देखते ही देखते अुसने सारा लोकको ढंक दिया। अिससे भयभीत होकर देवताओंने अुसके विरुद्ध अपने सारे दिव्य शस्त्रास्त्रोंका अुपयोग किया। किन्तु सब व्यर्थ गये। अिसलिअे अिन्द्र-सहित सब देवता आदिपुरुष अतर्यामीकी शरणमें गये।

अतर्यामीने कहा, 'महर्षि दधीचिके पास तुम जाओ और विद्या, व्रत अेव तपसे बलवान बने हुअे अुनके शरीरकी माग करो। वे अिनकार नही करेगे। फिर अुस शरीरकी हड्डियोसे विश्वकर्मा तुम्हे अेक अुत्तम आयुध बनाकर देगे। अुसीसे अिस वृत्रासुरका नाश हो सकेगा।'

साबरमती और चद्रभागाके सगमके पास दधीचि अृषि तप करते थे। वहा जाकर देवताओने अुनसे अुनके शरीरकी माग की। तब अुन्होने जवाब दिया .

"हे देवो, जो पुरुष अवश्य नाश होनेवाले अपने शरीरसे प्राणियो पर दया करके धर्म तथा यशको प्राप्त करना नही चाहता, वह स्थावर प्राणियो द्वारा भी शोक करने योग्य है। दूसरे प्राणियोके दु खसे दुखी होना और दूसरे प्राणियोके आनन्दसे आनन्द मनाना, यही धर्म अविनाशी है। . अिसलिअे मै अपने क्षणभगुर तथा कौवे-कुत्तोके भक्ष्यरूप शरीरको छोडता हू। आप अुसे ग्रहण करें।"

यह निश्चय करके अृषिने परब्रह्मके साथ आत्माको अेकाग्र किया और शरीरका त्याग किया।

अिसके बाद देवताओंने कामधेनुको बुलाया। वह अृषिके शरीरको चाटने लगी। चाटते चाटते केवल हड्डिया रह गअी। अिन हड्डियोका वज्र बनाकर विश्वकर्माने अिन्द्रको दिया, जिसके द्वारा अिन्द्रने वृत्रासुरका नाश किया।

दधीचि अृषिने जहा देहार्पण किया था, वहा कामधेनुका दूध गिरा था। अत. वहा दूधेश्वर महादेवजीकी स्थापना हुअी।

खादीकी प्रवृत्ति : गाधीजीने स्वदेशी तथा खादीका प्रचार शुरू किया, अिसलिअे आश्रममें खादी-अुत्पादनका काम भी शुरू हुआ। आज भी यह प्रवृत्ति वहा चल रही है।

खेती और गोशाला : खेतीकी और गायोकी नस्ल सुधारनेकी प्रवृत्ति आश्रममे शुरू हुअी थी। गोशाला तथा खेतीकी प्रवृत्ति विविध प्रयोगोकी दृष्टिसे अब भी वहा चल रही है।

राष्ट्रीय शाला : आश्रमकी शाला। अिसमे श्री काकासाहब, नरहरि परीख, किशोरलाल मशरूवाला, विनोबा आदि शिक्षक

प्रयोग करते थे। अिन प्रयोगोकी बुनियाद पर ही बादमे गुजरात विद्यापीठकी स्थापना हुअी।

आज 'बुनियादी तालीम' के नामसे पहचानी जानेवाली गांधीजीकी शिक्षा-पद्धतिकी नींव भी अिसी प्रवृत्तिको कह सकते हैं।

राष्ट्रीय त्यौहार : देखिये 'नवजीवन' द्वारा प्रकाशित श्री काकासाहबकी 'जीवनका काव्य' नामक पुस्तक।

लोक-संगीत तथा शास्त्रीय संगीत : आश्रमवासी पंडित नारायण मोरेश्वर खरे संगीतशास्त्री थे। अुन्होंने गुजरातके कुछ लोकगीतोंकी स्वरलिपि तैयार करके 'लोक-संगीत' नामक पुस्तक लिखी थी। शास्त्रीय संगीतके प्रचारके लिअे अुन्होंने 'राष्ट्रीय संगीत मंडल' की भी स्थापना की थी। अहमदाबाद कांग्रेसके समय 'अखिल भारत संगीत परिषद्' का अधिवेशन भी यहीं हुआ था। अुसमें गांधीजीकी प्रेरणा तथा पंडित खरेके प्रयत्न मुख्य थे।

'नवजीवन' तथा 'यंग अिण्डिया' : सन् १९१९ में जब गांधीजीने रौलेट बिलके विरुद्ध आंदोलन चलाया, तब अुन्हें अपने विचारोंके प्रचारके लिअे अखबारोंकी आवश्यकता महसूस होने लगी। श्री अिन्दुलाल याज्ञिक तथा अुनके मित्र गुजरातीमें 'नवजीवन अने सत्य' नामक मासिक चला रहे थे और अुसके द्वारा 'होमरूल' का प्रचार करते थे। गांधीजीने यही पत्र अपने हाथमें ले लिया और अुसको साप्ताहिक बनाकर 'नव-जीवन' के नामसे चलाया। यह पत्र गुजरातीमें चलता था।

फिर, सारे देशमें प्रचार करनेके लिअे अेक अंग्रेजी अखबारकी आवश्यकता महसूस होने लगी। श्री शंकरलाल बैंकर, जमनादास द्वारकादास आदि 'यंग अिण्डिया' नामक अेक अखबार चलाते थे। गांधीजीने अिस पत्रको भी अपने हाथमें ले लिया।

दोनों साप्ताहिक सन् १९३३ तक चले। फिर हरिजन-प्रवृत्तिको चलानेके लिअे गांधीजीने जेलसे पत्र शुरू किये, जिनके नाम थे 'हरिजन' (अंग्रेजी), 'हरिजनबन्धु' (गुजराती) और 'हरिजनसेवक' (हिन्दुस्तानी)। सन् ४२ से ४५ तकका काल यदि छोड़ दें, तो ये अखबार गांधीजीकी मृत्यु तक अुनके विचारोंके वाहन रहे।

गाधीजीकी मृत्युके वाद ये साप्ताहिक स्व० श्री किशोरलाल मशरूवालाने चलाये। अुनकी मृत्युके वाद श्री मगनभाअी देसाअी अुनके सम्पादक रहे। १९५६ के मार्चसे वे हमेशाके लिअे वद कर दिये गये।

सत्याग्रह : चपारन, खेडा, नागपुर, वोरसद, वारडोली आदि।

मिल-मालिकोके साथका मजदूरोका झगडा : यह झगडा सन् १९१८ मे अहमदावादके मिल-मालिक तथा मजदूरोके वीच हुआ था। मजदूरोका पक्ष न्यायका था, अिसलिअे गाधीजीने अुनका पक्ष लिया था। विशेप जानकारीके लिअे देखिये नवजीवन द्वारा प्रकाशित श्री महादेवभाअी देसाअीकी हिन्दी पुस्तक 'अेक धर्मयुद्ध'।

दांडीकूच : लाहौर काग्रेसमे 'पूर्ण स्वराज्य' का प्रस्ताव पास होनेके वाद अुसको अमलमें लानेके लिअे गाधीजीने नमकका कानून तोडनेका निश्चय किया था। भारतके स्वातन्त्र्य-सग्रामके अितिहासका यह अेक अुज्ज्वल प्रकरण है।

कूचके लिअे अपने ७९ साथियोके साथ जव गाधीजी सत्याग्रहाश्रम सावरमतीसे निकले, तव अुन्होने प्रतिज्ञा ली थी कि 'जव तक स्वराज्य नही मिलेगा, मै आश्रममे वापस नही लौटूगा।' अिस कूचने सारे देशमे विजलीकी गतिसे नवजीवन और नअी शक्तिका सचार किया था।

गाधीजीके वर्धा और सेवाग्राम जानेका यह भी अेक कारण था।

पृ० ८३ जलियांवाला वाग : रौलेट अेक्टके खिलाफ गांधीजीने जव आन्दोलन छेडा, तव अुन्होने ६ अप्रैल, १९१९ के दिन सारे देशमे हडताल करने और अुपवास करनेका आदेश दिया था। सारे देशने अुसका अपूर्व अुत्साहके साथ पालन भी किया था। किन्तु तीन दिनके बाद, १० अप्रैल १९१९ के रोज, अमृतसरके डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेटने वहाके काग्रेसी नेता डॉ० किचलू और सत्यपालजीको गिरफ्तार करके किसी अज्ञात स्थान पर भेज दिया। अिससे शहरमे हुल्लड हुआ और शहरको फौजके हाथमे सौप दिया गया। पजाबमें अन्यत्र भी अैसी ही घटनाये घटी, जिनमें जानमालको बड़ी हानि पहुची। अिसके सिवा

गाधीजीकी गिरफ्तारीके कारण देशके अन्य भागोंमें भी हुल्लड़ हुअे, परन्तु वहा शाति हो गअी। १३ अप्रैल हिन्दुओंका वर्षारम्भका दिन था। अुस दिन अमृतसरके जलियावाला बागमें आम सभा होनेकी घोषणा की गअी थी। यह जगह अैसी थी जिसके चारों ओर मकान ही मकान थे और बागके अन्दर जानेके लिअे केवल अेक ही सकरा रास्ता था। वहा शामके समय बीस हजार स्त्री, पुरुष और बच्चे अिकट्ठे हुअे थे। अितनेमें जनरल डायर १०० देशी और ५० विदेशी फौजी सिपाहियोंको लेकर आया और दो-तीन मिनटके अन्दर ही अुसने गोली चलानेका हुक्म दिया। स्वय डायरके कथनके अनुसार १६०० गोलिया छोडी गअी थी और जब गोलिया खतम हो गअीं तभी गोलिया चलाना बद किया गया था। करीब ८०० लोग मारे गये और दो हजार घायल हुअे थे।

गुजरात विद्यापीठ : १९२० में जब असहयोगका आंदोलन शुरू हुआ, तब गाधीजीने देशके विद्यार्थियोंको सरकारी स्कूल-कालेज छोडनेका आदेश दिया था। अिस आदेशका पालन करके जिन विद्यार्थियोंने सरकारी शिक्षण-सस्थाओंका बहिष्कार कर दिया, अुनमें से कुछ विद्यार्थी रचनात्मक कार्योंमें लग गये। किन्तु बाकी विद्यार्थियोंके लिअे शिक्षाका स्वतत्र प्रबध करना आवश्यक था। अिनके लिअे देशभरमें राष्ट्रीय सस्थाये स्थापित हुअी — जैसे बिहारमें बिहार विद्यापीठ, काशीमें काशी विद्यापीठ, पूनामें तिलक विद्यापीठ वगैरा। गुजरातके गुजरात विद्यापीठका भी अिसीमें समावेश होता है। अिसकी स्थापना १९२० में हुअी थी। अिसके शिक्षकों और विद्यार्थियोंने गुजरातके सार्वजनिक जीवनमें तथा साहित्यिक और सास्कृतिक प्रवृत्तियोंमें बडे महत्त्वका भाग लिया है। आज भी यह सस्था शिक्षा और साहित्य-प्रकाशनका कार्य कर रही है।

१६. अुभयान्वयी नर्मदा

पृ० ८४ अुभयान्वयी : भारतके दक्षिण और अुत्तरके दोनों विभागोंको जोडनेवाली।

अमरकंटक तालाव : विलासपुरके पासके मेखल, मेकल या माअिकाल पर्वतका अेक हिस्सा अमरकटकके नामसे मशहूर है। अुसकी तलहटीमे जो तालाव है अुसको भी अमरकटक ही कहते है। यहीसे नर्मदा और शोणका अुद्गम हुआ है। अिसी परसे नर्मदाको मेकल-कन्यका भी कहते है। अमरकटक श्राद्धके लिअे अुत्तम स्थान माना जाता है।

पृ० ८५ विन्ध्य : मशहूर पर्वतश्रेणी। अगस्ति ॠषि अिसीको पार करके दक्षिणकी ओर जाकर वसे थे। अिसके अूपर विन्दुवासिनीका प्रख्यात मदिर है। अिसके थोडे आगे अष्टभुजा योगमायाका मदिर है, जो शक्तिका पीठ माना जाता है।

सातपुड़ा : नर्मदा और ताप्तीके वीच सात पुडो (folds) की पर्वतश्रेणी। ताप्ती यहीसे निकलती है।

भृगुकच्छ : आजकलका भडौच। कच्छ = नदी या समुद्रका किनारा।

पृ० ८६ आदिम निवासी : अिस प्रदेशके मूल निवासी भील आदि लोग, जो आज भी गरीवी और अज्ञानमे डूवे हुअे है।

पृ० ८७ सबिन्दु सिन्धु ० ये नर्मदाष्टककी पक्तिया है। यह आद्य शकराचार्यका लिखा माना जाता है। अिसका प्रारभ अिस प्रकार है ·

सबिन्दु–सिन्दुर–स्खलत्–तरग–भग–रजितम्
द्विपत्सु पापजातजातकारिवारि–सयुतम्।
कृतान्तदूत–काल–भूत–भीतिहारि–वर्मदे
त्वदीय पाद-पकज नमामि देवि नर्मदे ।।

पृ० ८८ गतं तदैव ० पूरा श्लोक अिस प्रकार है :

गत तदैव मे भय त्वदम्वु वीक्षित यदा
मृकुण्डसूनुशौनकासुरारिसेवि सर्वदा।
पुनर्भवाव्धिजन्मज भवाव्धिदु खवर्मदे
त्वदीय पाद-पकज नमामि देवि नर्मदे ।। ४ ।।

पंचगौड़ : सरस्वतीके किनारेका प्रदेश, कन्नौज, अुत्कल, मिथिला और गौड — यानी वगालसे लेकर भुवनेश्वर तकका प्रदेश। विन्ध्यके

अुत्तरमे स्थित अिन पाच प्रदेशोंमें रहनेवाले ब्राह्मण। अिन प्रदेशो परसे वे अनुक्रमसे सारस्वत, कान्यकुब्ज, अुत्कल, मैथिल और गौड़ कहलाते हैं।

पंचद्रविड़ : विन्ध्याचलके दक्षिणमें रहनेवाले पाच जातिके ब्राह्मण: महाराष्ट्र, तैलग, कर्णाट, गुर्जर और द्रविड।

विक्रम संवत् : विक्रमादित्यके नामसे चलनेवाला सवत्। यह अीस्वी सन्से ५६ साल पूर्व शुरू हुआ था।

शालिवाहन शक : शालि = सिंह। सिंह जिसका वाहन है वह। दतकथा अैसी है कि अिस नामका अेक मशहूर राजा बचपनमें सिंहके आकारके अेक यक्षका वाहन बनाकर सर्वत्र घूमता था। अिसीलिअे वह शालिवाहन कहलाया। अुसके नामसे चलनेवाली वर्षगणनाको 'शक' कहते है। अिसके अनुसार वर्षका आरंभ चैत्र माससे शुरू होता है। विक्रम सवत्से वह १३४–३५ वर्ष और अीस्वी सन्से ७८ वर्ष पीछे है। भारत-सरकारने अब अिसको अपनाया है।

पृ० ९० कबीरवड़ : भडौचके पूर्वमे शुक्लतीर्थके पास नर्मदाके प्रवाहके बीचमे अेक टापू है, वहा यह प्रसिद्ध वड है। कहते हैं कि कबीरने दातुन करके जो टुकडा फेंक दिया था अुससे यह वटवृक्ष पैदा हुआ।

१७. सध्यारस

पृ० ९३ रसवती पृथ्वी और निःशब्द आकाश : यहा जान-बूझकर न्यायशास्त्रकी व्याख्या तोड दी गयी है। मूल व्याख्या है 'गधवती पृथ्वी' और 'शब्दगुणम् आकाशम्।'

वनेचर : सस्कृतमें 'वनचर' कहते हैं जगलमें रहने-घूमनेवाले जगली पशुओंको और 'वनेचर' कहते हैं जगलमें रहने-घूमनेवाले मनुष्योंको। यह भेद यहा कायम रखा गया है।

सुर-असुरोंके गुरु : बृहस्पति और शुक्राचार्य — यहा आकाशके गुरु और शुक्र नामक ग्रह।

१८. रेणुका का शाप

पृ० ९५ अंतःस्रोता : [अन्त (अदर) + स्रोता (प्रवाहवाली)] जिसका प्रवाह भूमिके अदर है अैसी नदी।

राणकदेवीका शाप : अेक लोककथा कहती है कि गुजरातके राजा सिद्धराज जयसिहने सोरठ पर चढाअी की और जूनागढको घेर लिया। वहाके राणा रा' खेगारके भानजे ही विपक्षीसे जा मिले। परिणामस्वरूप जूनागढका पतन हुआ, खेगार परास्त हुआ और मारा गया। सिद्धराजने अुसकी रानी राणकदेवी पर अधिकार कर लिया। रानीको लेकर वह पाटण जा रहा था। बीचमे वढवाणके पास रानी सती हो गअी। अितिहासमे अिसके लिअे कोअी समर्थन नही है। सिद्धराजने खेगारको हरा कर कैद कर लिया था, अितना तो निश्चित कहा जा सकता है। यह सभव है कि बादमे अुसने सिद्धराजकी सत्ता स्वीकार की हो, अिसलिअे सिद्धराजने अुसे छोड दिया हो और सोरठकी ओर आते समय वढवाणके पास किसी कारणसे अुसकी मौत हो गअी हो और वहा अुसकी रानी सती हुअी हो।

यहा 'राणक' का अर्थ रेणुका नही है। 'गयाकी फलगु' नामक प्रकरणमें 'सीताका शाप' और 'सिकताका शाप' से अिसकी तुलना कीजिये।

योमा : ब्रह्मी भाषामे पहाडको 'योमा' कहते है। जैसे, आराकान योमा, पेगु योमा।

अलस-लुलित : [अलस (आलस्यसे भरा हुआ) + लुलित (थका हुआ) जब 'ललित' पाठ हो तब 'सुन्दर'] धीर गतिसे और थकी-मादी चालसे चलनेवाली। यह शब्द 'अुत्तररामचरित' के अक १, श्लोक २४ मे आता है

> अलस–लुलित–मुग्धानि अध्व-सजात-खेदात्
> अशिथिल–परिरभैर् दत्त-सवाहनानि।
> परिमृदित–मृणाली–दुर्बलानि अगकानि
> त्वम् अुरसि मम कृत्वा यत्र निद्राम् अवाप्ता॥

अन्त्यजोका शाप लेकर : अुन्हें पानीकी सुविधा न देकर।

पृ० ९६ खंडिता : काव्यशास्त्रमें बताअी गयी मुख्य आठ नायिकाओंमे से अेक। 'अीर्प्याकषायिता' — अीर्प्यासे भरी हुअी स्त्री।

यहा खडिताका यह अर्थ भी है जिसका प्रवाह खंडित हुआ हो।

१९. अबा-अंबिका

पृ० ९७ अबा-अंबिका : महाभारतमे यह कथा है भीष्म किसी समय काशीराजकी कन्याओंके स्वयवरमे से अुसकी तीनो पुत्रियोका — अबा, अंबिका और अबालिकाका अपहरण कर लाये। अिसके लिअे जो युद्ध हुआ अुसमे अुन्होने शाल्वराजको परास्त किया। किन्तु जब कन्याओंका राजा विचित्रवीर्यके साथ विवाह करनेकी बात निकली, तब अिन कन्याओमे से केवल अेकने — बडी कन्या अबाने — कहा, 'मै तो मनसे शाल्वराजसे विवाह कर चुकी हू।' अत अुसे शाल्वराजके यहा भेज दिया गया। किन्तु शाल्वने अुसे स्वीकार नही किया, अिसलिअे अुसने भीष्मके गुरु परशुरामकी शरण ली। किन्तु गुरुके कहने पर भी भीष्म अबाको स्वीकार करनेके लिअे तैयार नही हुअे। अिससे गुरु-शिष्यके बीच दारुण युद्ध छिडा, जिसमें गुरु परास्त हुअे और अबाने वनमें जाकर भीष्मवधके सकल्पसे तपस्या करके अग्नि-प्रवेश किया और शरीर छोडा। वही बादमें द्रुपद राजाके यहा शिखडीके रूपमें पैदा हुअी और भीष्मवधका कारण बनी।

यहा लेखकने पौराणिक कथामे मनमाना फेरफार किया है।

राजा कर्णके दो आसू : गुजरातके बाघेला वशका आखिरी राजपूत राजा कर्णदेव अत्यत क्रोधी और विलासी था। अुसने अपने मत्री माधवके भाअी केशवको मरवा कर अुसकी पत्नीको अपने अत पुरमें रख लिया था। अपमान और अत्याचारसे क्रुद्ध होकर माधवने दिल्ली जाकर अल्लाअुद्दीनको गुजरात पर चढाअी करनेके लिअे प्रेरित किया। अुसने अपने दो सरदारोको गुजरात पर चढाअी करनेके लिअे भेजा। अुन्होने गुजरातको जीता, राजधानी पाटणको लूटा और राजा कर्णकी रानियो और बच्चोंको पकड कर दिल्ली पहुचा दिया। कर्ण देवको

राजाके आश्रयमें गया। कहते हैं कि अुसने अपने अंतिम दिन अज्ञात-वासमें, आवूके जंगलोंमें अिन नदियोंके आसपासके प्रदेशमें, भटककर शोक-विह्वल दशामें विताये थे। यहां अुसीका सूचन है।

गुजराती भाषाका पहला अुपन्यास सन् १८६७ में अिसी वृत्तांतके आधार पर लिखा गया था।

२०. लावण्यफला लूनी

पृ० ९८ **लावण्यफला:** लवण = नमक, लवण-प्रधान, लवण-समृद्ध होनेसे यह नाम दिया गया है।

२१. अुंचळ्ळीका प्रपात

पृ० १०० **'नागमोड़ी':** यह मराठी शब्द है। अर्थ है नागकी तरह टेढामेढा, सर्प-सदृश।

पृ० १०१ **'कोयता':** हंसिया।

पृ० १०२ **घनघोर:** [घन = गाढा + घोर = भयावना] गाढा और भयावना।

पृ० १०४ **अितने शुभ्र पानीमें:** नदीके नाम परसे यह सूझा है।

पदक्रम: तुलना कीजिये

भयो त्रिविक्रम, कियो पदक्रम
अेक मही पर, वीजेको अवर, वैजुके प्रभु
त्रीजेको सिर पर।

जीवनावतार: पानीका नीचे अुतरना।

पृ० १०५ **कटक:** संस्कृतमें 'कटक' का अर्थ है कंकण। अिस परसे आभूषण, गहनेका अर्थ करके श्लेष बनाया गया है।

सोनेके ढक्कनसे: तुलना कीजिये:

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्। अीशावास्य, १५

अिस जगतको....ढंकना ही चाहिये: मूल मंत्र अिस प्रकार है

अीशावास्यम् अिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।

हरी नीलिमा : नीलका अर्थ काला, आसमानी, हरा, चमकीला आदि किया जाता है। यहांकी नीलिमा हरे रंगकी थी। अजीर या मखमलमें जिस प्रकार दो रंगोंकी छटायें दिखाओ देती हैं, अुसी तरहकी छटायें पानीमें भी कओ बार दिखाओ देती हैं—अैसा भी यहां सूचन है।

पृ० १०६ युयोधि अस्मत्० यह अीशावास्य अुपनिषद्का अंतिम मंत्र है।

२२. गोकर्णकी यात्रा

पृ० १०८ कपिलाषष्ठी : भादों वदी छठ, हस्त नक्षत्र, व्यतिपात और मंगलवार—अिनके योगका दिन। यह अेक दुर्लभ दिन है, जो हर ६० सालके बाद आता है।

पृ० ११० कृतार्थ कर दिया : नहला दिया।

२३. भरतकी आंखोंसे

पृ० ११७ अद्य मे सफला० आज मेरी यात्रा सफल हुअी। मैं पानीके प्रसादसे धन्य हुआ। मूलमें 'त्वत् प्रसादत' था, जो यहां बदल दिया गया है।

पृ० ११८ श्री रामचंद्रजीके प्रबंधक : रामके बदले भरत अयोध्याका राज्य संभालते थे अिसलिअे। 'भरणात् भरत'।

२४. वेळगंगा—सीताका स्नान-स्थान

पृ० ११९ वेरूळग्रामका हरा कुंड : अंग्रेजीमें वेरूळको 'अिलोरा' कहते हैं। अिसलिअे वह अिसी नामसे अधिक प्रख्यात है। यह गांव शिवाजीके पुरखोंका है। यहां अेक सुन्दर कुंड है। अिस कुंडके विषयमें अैसी दंतकथा प्रचलित है कि अिलिचपुरके येलु नामक राजाको कोअी अैसा रोग हुआ था, जिसके कारण अुसके शरीरमें कीड़े पड़ गये थे। कअी अुपाय किये गये, किन्तु सब व्यर्थ गये। रोग वैसा ही रहा। अंतमें अुसे अिस कुंडके बारेमें आकाशवाणी सुनायी दी : "तुम जाकर अुस तीर्थमें स्नान करो। तुम्हारा शरीर अच्छा हो जायगा।"

राजाने स्नान किया और अुसका रोग मिट गया।

कहते है कि अुसी राजाने बादमे वेरूळकी गुफाये खुदवानेका काम शुरू किया। जाडोमे हरी काअीके कारण कुडका पानी भी हरा मालूम होता है। कुडके चारो ओर सुन्दर सीढिया वनी हुअी है।

पृ० १२० प्राकृतिक सौंदर्यके प्रति सीताका पक्षपात: सीताको राजमहलमे रखकर राम जब वनवास जानेकी बाते करते है, तब सीताजी भी वनमे जानेके लिअे और वहाके कष्ट सेहनेके लिअे तैयार हो जाती है। वे कहती है.

फलमूलाशना नित्य भविष्यामि न मशय ।
न ते दु ख करिष्यामि निवसन्ती त्वया सह ।।१६।।
अग्रतस्ते गमिष्यामि भोक्ष्ये भुक्तवति त्वयि।
अिच्छामि परत शैलान्पल्वलानि सरासि च ।।१७।।
द्रष्टु सर्वत्र निर्भीता त्वया नाथेन धीमता।
हसकारण्डवाकीर्णा पद्मिनी साधुपुष्पिता ।।१८।।
अिच्छेय सुखिनी द्रष्टु त्वया वीरेण सगता।
अभिपेक करिष्यामि तासु नित्यमनुव्रता ।।१९।।
सह त्वया विशालाक्ष रस्ये परमनदिनी।
अेव वर्षसहस्राणि शत वापि त्वया सह ।।२०।।

अयोध्याकाड — २७ १६–२०

[मैं हमेशा फलमूल खाकर ही रहूगी। आपके साथमे रहकर मैं आपको कभी कष्ट नही दूगी। मैं आपके आगे-आगे चलूगी और आपके खानेके बाद ही खाअूगी। आपके साथ निर्भयतासे सर्वत्र घूमकर पर्वत, सर और सरोवरोको देखनेकी मेरी वडी अिच्छा है। आपके साथ रहकर हस और कारडवोसे भरे हुअे सुन्दर पुष्पोवाले सरोवर देखनेकी और आनद मनानेकी मेरी अिच्छा है। अुन पद्मपूर्ण सरोवरोमे मैं स्नान करूगी और आपके साथ अुनमे रोज खेलूगी। अिस तरहके सैकडो नही, वल्कि हजारो वर्ष भी मुझे आपके साथ क्षणके समान मालूम होगे।]

'अुत्तररामचरित' में चित्र-दर्शनके बाद सीता अपना दोहद कहती है 'मन करता है कि प्रसन्न और गभीर वनराजियोमें विहार

करूं और जिसका जल पावनकारी, आनददायक और शीतल है अुस भगवती भागीरथीमे स्नान करूं।'

दूसरे अकमे राम जनस्थान आदि प्रदेशोको देखकर कहते है. 'सचमुच वैदेहीको वन पसन्द थे। ये वे ही अरण्य है। अिनसे अधिक भयानक और क्या होगा?'

तीसरे अकमें भी सीताके पाले हुअे हाथी, मोर, कदम्ब और हिरनोका वर्णन आता है। देखिये

सीतादेव्या स्वकर-कलितै सल्लकीपल्लवाग्रैर्–
अग्रे लोल करि-कलभको य पुरा वर्धितोऽभूत्।
वध्वा सार्ध पयसि विहरन्सोऽयमन्येन दर्पाद्
अुद्दामेन द्विरदपतिना सनिपत्याभियुक्त ॥१६॥

अनुदिवसम् अवर्धयत् प्रिया ते
यमचिरनिर्गतमुग्धलोलबर्हम्।
मणिमुकुट अिवोच्छिख कदम्बे
नदति स अेष वधूसख शिखण्डी ॥१८॥

भ्रमिषु कृतपुटान्तर्मण्डलावृत्तिचक्षु
प्रचलित-चटुल-भ्रू-ताण्डवैर्मण्डयन्त्या।
कर-किसलय-तालैर्मुग्धया नर्त्यमान
सुतमिव मनसा त्वा वत्सलेन स्मरामि ॥१९॥

कतिपयकुसुमोद्गम कदम्ब
प्रियतमया परिवर्धितो य आसीत्।
स्मरति गिरिमयूर अेष देव्या:
स्वजन अिवात्र यत प्रमोदमेति ॥२०॥

नीरन्ध्र-बाल-कदली-वन-मध्यवर्ति
कान्तासखस्य शयनीय-शिलातल ते।
अत्र स्थिता तृणमदाद् बहुशो यदेभ्य
सीता ततो हरिणकैर् न विमुच्यते स्म ॥२१॥

करकमल-वितीर्णैर् अम्बु-नीवार-शप्पैस्
तरु-शकुनि-कुरंगान् मैथिली यान् अपुष्यत्।
भवति मम विकारस् तेषु दृष्टेषु कोऽपि।
द्रव अिव हृदयस्य प्रस्तरोद्भेदयोग्य ॥२५॥

सुवर्णमय बना देती है: फसलकी समृद्धि और अुसका पीला रंग, दोनोका यहा सूचन है।

पृ० १२२. जीवनमय: 'जीवन' का अर्थ पानी भी होता है।

पृ० १२३ रामरक्षा-स्तोत्र: वुध कौशिक ऋषि द्वारा रचित अत्यत मनोहर और लोकप्रिय स्तोत्र।

शिरो मे राघव पातु, **भालं** दशरथात्मज ॥४॥
कौसल्येयो **दृशौ** पातु, विश्वामित्रप्रिय **श्रुती** ।
घ्राणं पातु मखत्राता, **मुखं** सौमित्रिवत्सल ॥५॥
जिह्वा विद्यानिधि पातु, **कंठं** भरतवन्दित ।
स्कन्धौ दिव्यायुध पातु, **भुजौ** भग्नेशकार्मुक ॥६॥
करौ सीतापति पातु, **हृदयं** जामदग्न्यजित् ।
मध्यं पातु खरध्वसी, **नाभिं** जाम्ववदाश्रय ॥७॥
सुग्रीवेश **कटिं** पातु **सक्थिनी** हनुमत्प्रभु ।
अुरू रघूत्तम पातु, रक्ष कुल-विनाशकृत् ॥८॥
जानुनी सेतुकृत् पातु, **जङ्घे** दशमुखान्तक ।
पादौ विभीषणश्रीद, पातु रामोऽखिलं **वपुः** ॥९॥

२५. कृषक नदी घटप्रभा

पृ० १२४ हमारी ओरके: दक्षिण महाराष्ट्रको छूनेवाले।

वालकोका: किसानोका।

२६. कश्मीरकी दूधगंगा

सरोवरको तोडकर: "आज जहा कश्मीरका रमणीय प्रदेश है, वही पुराणकालमे सतीसर नामक अेक सुदीर्घ सरोवर था, जो हर-मुख पर्वत और पीरपुजालके वीच फैला हुआ था। स्वय पार्वती अिस सरोवरमे विहार करती थी। किन्तु वादमे अुसमे कअी राक्षस आ

घुने। अिसलिअे देवताओंने सतीसरका नाम करनेकी बात सोची। भगवान कश्यपने वराहकी अुपासना की। वराहने संतुष्ट होकर अपने हसियेसे पहाड़में घाटी बना दी और सतीसरका पानी 'वराहमूलम्' की घाटीमें से वितस्ता नदीके रूपमें बहने लगा। वितस्ता ही झेलम है और 'वराहमूलम्' आजका बारामुल्ला है।"

—लेखककी गुजराती पुस्तक 'जीवननो आनंद' में से।

अुपत्यका: घाटी। (अिसी प्रकार अधित्यका का अर्थ है अूंचा प्रदेश — tableland।)

पृ० १२५ सती-कन्या: सतीके प्रदेशमें पैदा हुअी जिनसिअे।

२७. स्वर्धुनी वितस्ता

पृ० १२६. 'संसारमें अगर . . . यहीं है': मूल फारसी पंक्तियां अिस प्रकार हैं

अगर फिरदौस बर्‌रुअे जमीनस्त,
हमीनस्तो, हमीनस्तो, हमीनस्त।

पृ० १२७ अुसके किनारे अेक बड़ी वैभवशाली संस्कृति . . . हुआ: अनतपुरके समीप अेक पहाड़ीके नीचे अेक प्राचीन शहरके अवशेष दबे हुअे थे, जो अभी अभी खोदे गये हैं।

चिनार: ये महावृक्ष सिर्फ कश्मीरमें ही होते हैं।

बुतशिकन: [बुत = मूर्ति + शिकन = तोड़नेवाला] मूर्तिभंजक।

गाजी: धर्मके लिअे युद्ध करनेवाला मुसलमान। यह शब्द अरबी है।

पृ० १२८ सर्वत. संप्लुतोदके: चारों ओर पानीकी बाढ़ आयी हो तब। गीता, २–४६

सूअरके दांतके जैसा: मालूम होता है 'वराहमूलम्' परसे यह अुपमा सूझी है।

पृ० १२९ निर्माल्य: देवताको चढ़ानेके बाद जो फेंक दिये जाते हैं।

पृ० १३० स्वर्धुनी: [स्वर् = स्वर्ग + धुनी = नदी] स्वर्गकी नदी।

२८. सेवाव्रता रावी

पृ० १३१ स्वामी रामतीर्थ: आधुनिक भारतके निर्माणमें स्वामी रामतीर्थका महत्त्वका हाथ है। श्री काकासाहबने मराठीमे स्वामीजीकी जीवनी लिखी थी तथा अुनके कुछ लेखोका अनुवाद करके मराठीमें अेक सग्रह प्रकाशित किया था। यह अुनकी पहली साहित्य-कृति थी। अिसीसे काकासाहबके लेखक-जीवनका आजसे तीस वर्ष पहले आरभ हुआ था।

अर्जुनदेव: (१५६३–१६०६) सिखोके पाचवे गुरु। आदिग्रथके रचयिता। अिसमे अुन्होने पहलेके गुरुओकी और अन्य सतोकी वाणी सगृहीत की है। कहते हे कि अुनके दुश्मनोने अकवर वादशाहके पास जाकर अुनके खिलाफ शिकायत की थी कि अर्जुनदेवने अिस ग्रथमे हिन्दूधर्म तथा अिस्लामकी निन्दा की है। किन्तु अकवरने अुनका ग्रथ देखकर अुनको छोड दिया और अुनका वडा सम्मान किया। जहागीरके समयमें अुनके दुश्मनोने फिरसे शिकायत की। जहागीर अपने लडके खुसरोको कैद करना चाहता था। खुसरो भागता हुआ अर्जुन-देवके पास आश्रय मागने आया। अर्जुनदेवने अुसको आश्रय दिया। बादशाहने अिसको राजद्रोह मानकर अुन पर दो लाख रुपयोका जुर्माना किया। अर्जुनदेवने न खुद जुर्माना दिया, न दूसरोको देने दिया। अिसलिअे बादशाहने जेलमे अुन पर वहुत अत्याचार करवाये और आखिर अुनकी हत्या करवा डाली। यो मानकर कि तलवारके बिना अपना पथ कायम रहना असभव है, अुन्होने अपने पुत्रको सशस्त्र बन कर गद्दी पर बैठनेका और पर्याप्त फौज रखनेका आदेश भेज दिया था। अिससे सिखोके अितिहासको नयी ही दिशा प्राप्त हुअी।

रणजितसिह: (१७८०–१८३९) सिखोके राजा। अहमदशाह अब्दालीके बाद पजावका सूबा फिरसे सिखोके हाथमे आया था। किन्तु अुसके छोटे-छोटे टुकडे हो गये और वे आपसमे लडने लगे। रणजित-सिह तेरह सालकी अुम्रमें गद्दी पर बैठे। और १९ सालकी अुम्रमे अुन्होने सिखोके सभी राज्योका आधिपत्य अपने हाथमे ले लिया।

अंग्रेज भी अुनसे डरते थे। जब सन् १८२३ में अुन्होंने पेशावर प्रान्त जीत लिया, तब अुसे वापस दिलवानेके लिअे दोस्त महमदने अंग्रेजोंसे बहुत कहा। किन्तु अंग्रेजोंने कुछ भी नहीं किया। ४० साल तक सतत परिश्रम करके रणजितसिंहने सिखोंमे फौजी ताकत पैदा की। कहते हैं कि जब वे अटक नदीको पार करना चाहते थे, तब अुनके गुरुने अुनसे कहा कि हिन्दुओंको अटक पार करनेकी आज्ञा नहीं है। अुन्होंने जवाबमें कहा :

सबै भूमि गोपालकी, तामें अटक कहा?
जाके मनमें अटक है, वो ही अटक रहा।

और सारा अफगानिस्तान जीत लिया।

पृ० १३३ अप्सरा : [अप् = पानी + सृ = आगे जाना = पानीमें तैरनेवाली, विहार करनेवाली।] गंधर्वोंकी स्त्री। अप्सराओंको पानीमें खेलना बहुत पसन्द है, अिसलिअे अुनको यह नाम दिया गया है। रामायणमें अुनकी अुत्पत्तिके बारेमें अिस प्रकार लिखा है :

अप्सु निर्मंथनाद् अेव रसात् तस्माद् वरस्त्रियः।
अुत्पेतुर्मनुजश्रेष्ठ। तस्माद् अप्सरसोऽभवन्॥

परोपकाराय० यह शरीर परोपकारके लिअे है।

२९. स्तन्यदायिनी चिनाव

पृ० १३५ मेरी जीवन-स्मृति : सन् १८९१-९२ में।

३०. जम्मूकी तवी अथवा तावी

पृ० १३६ विग्रह : युद्ध। अलग करना।

संधि : सुलह। मिलाना।

राजनीतिमें कार्यसिद्धिके छह मार्ग बताये गये हैं

(१) संधि, (२) विग्रह, (३) यान (चढ़ाओ), (४) स्थान अथवा आसन (मुकाम करना), (५) संश्रय (आश्रय लेना), (६) द्वैध या द्वैधीभाव—फूट डालना।

'आत्मरति, आत्मक्रीड़'० श्रेष्ठ ब्रह्मज्ञका वर्णन करते हुअे मुडकोपनिषद्में कहा गया है

आत्मक्रीड आत्मरति क्रियावान् अेप ब्रह्मविदा वरिष्ठ ॥

मुण्डक, ३-१-४

आत्मामे खेलनेवाला, आत्मामे रमनेवाला, क्रियावान पुरुप ब्रह्मज्ञोमें श्रेष्ठ है।

आत्मन्येव० देखिये गीता, ३-१७

यस्त्वात्मरतिरेव स्यात् आत्मतृप्तश्च मानव ।
आत्मन्येव च सतुष्ट तस्य कार्य न विद्यते ॥

[जो मनुष्य आत्मामे ही रमा रहता है, जो अुसीसे तृप्त रहता है और अुसीमे सतोष मानता है, अुसे कुछ करनेको वाकी नही रहता।]

३१. सिधुका विषाद

पृ० १३७ मानदण्ड: नापनेका दण्ड। महाकवि कालिदासके 'कुमारसंभव' के पहले श्लोकमें हिमालयके लिअे अिस शव्दका प्रयोग किया गया है

अस्त्युत्तरस्या दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराज ।
पूर्वापरौ तोयनिधीवगाह्य स्थित पृथिव्या अिव मानदण्ड ।

[अुत्तर दिशामें जिस पर देवोका वास है अैसा हिमालय नामक पर्वतराज पृथ्वीको नापनेके गजकी तरह पूर्व और पश्चिम सागरमें स्नान करता हुआ खडा है।]

पंजाबकी पांच नदियां: झेलम, चिनाव, रावी, व्यास और सतलज ।

युक्तप्रांतकी पांच नदियां: गगा, यमुना, गोमती, सरयू, चवल।

अति-भारतीय: केवल भारतमें ही नही, वल्कि भारतकी सीमाके वाहर भी वहनेवाली ये दोनो नदियां भारतवर्षके वाहरसे भारतमे आती है, यानी भारतवर्पकी सीमाका अतिक्रमण करके वहती है, अिसलिअे अिन्हें अति-भारतीय कहा गया है।

पृ० १३८ वैदिक . . . सप्तसिंधु : वेदोंमें जिनका जिक्र है, वे सात नदियां वितस्ता (झेलम), असिक्नी या चन्द्रभागा (चिनाब), परुष्णी या अिरावती (रावी), शतद्रु (सतलज), विपाशा (बियास, व्यास), सिंधु और सरस्वती। क्रुमु या कुर्रम जिनमें नहीं गिनी गअी है।

प्राचीन आर्य . . . खतरेमें आ पड़े : भारत पर जितने आक्रमण हुअे, लगभग सभी अिसी ओरसे हुअे।

परोपनिसदी : अफगान। ग्रीक भाषामें अफगानिस्तानको 'परोपनिसद' कहते हैं।

यवन : Ionian Greeks के प्रथम शब्द परसे यह शब्द बना है।

बाल्हीक : बल्ख, बैक्ट्रिया। बाल्हीक शब्द वेदसे आया है।

रानी सेमीरामिस : [अी० स० पूर्व ८०० के आसपास] : असीरियाकी पुराण-प्रसिद्ध रानी। कहते हैं कि बेबिलोनकी स्थापना अिसीने की थी। और यह भी माना जाता है कि निनेवेहकी स्थापना करनेवाले अुसके पति नीनससे भी वह अधिक पराक्रमी थी। बचपनमें अुसकी माने अुसको छोड दिया था और कबूतरोंने अुसकी परवरिश की थी। प्रथम वह नीनसके अेक सेनापतिके साथ विवाह-बद्ध हुअी थी, किन्तु बादमें जब नीनसकी नजर अुस पर जमी तब अुसके पतिने आत्महत्या कर ली। अिसके बाद वह नीनससे विवाह-बद्ध हुअी और नीनसके पश्चात् गद्दी पर बैठी। अुत्तर-वयमें अुसने अपने पुत्रको गद्दी पर बिठाया था।

सुवर्ण-करभार : अी० स० पूर्व छठी सदीमें अीरानके बादशाह पहले दरायसने सिंध प्रदेश अपने कब्जेमें ले लिया था और अुससे सालाना १८५ हण्ड्रेडवेट (=५१५॥ मण) सुवर्ण-करभार लेना शुरू किया था। अुसीका यहां अुल्लेख है।

युअेची : अीस्वी सन् पूर्व पहली सदीके आसपास अुत्तर भारतसे शकोंको दक्षिणमें भगाकर वहां अपने साम्राज्यकी स्थापना करनेवाले मध्य अेशियाके कुशान लोग। अिनमें से कअियोंने बौद्ध और कुछ लोगोंने हिन्दूधर्म अपना लिया था। विख्यात बौद्ध सम्राट् कनिष्क कुशान

था। कुशान साम्राज्यके वैभवके दिनोमे अुसका विस्तार अितना था कि अुसमे पश्चिम अेशियाके बुखारा और अफगानिस्तान, मध्य अेशियाके काशगर, यारकद और खोतान, अुत्तर भारतके कश्मीर, पंजाब और बनारस तथा दक्षिणमे विन्ध्य तकके सारे प्रदेशका समावेश होता था।

हूण : अी० सन्की पाचवी या छठी सदीमें भारत पर लगातार आक्रमण करके मालवा, सिध और सीमाप्रातमें अपना राज्य जमानेवाले श्वेत हूण। युरोपमें भी अिन्ही लोगोने अेटिलाकी सरदारीके नीचे रहकर बडे अत्याचार किये थे। यहा पर भी अुनके अत्याचारोसे अूबकर अतमें आर्यावर्तके सभी राजाओने बालादित्य और यशोधर्माके नेतृत्वमें अिकट्ठे होकर हूण राजा मिहिरगुलको हराया और अुसे गिरफ्तार किया था। अिसके बाद अुनका आक्रमण फिर नही हुआ। भारतमें हूणोंका राज्य आधी सदी तक रहा।

गिलगिट : श्रीनगरकी वायव्य दिशामें १२५ मील दूर ४८९० फुटकी अूचाअी पर अिसी नामके जिलेका मुख्य केन्द्र। अिसके आस-पास बौद्ध अवशेष फैले हुअे है।

पृ० १३९ चित्राल : वायव्य सरहद प्रातके अिसी नामके अेक राज्यका मुख्य शहर।

स्वात : पजकोरासे मिलनेवाली अेक छोटीसी नदी।

सफेद कोह : पहाडका नाम। कोह=पहाड। तुलना कीजिये कोह-अि-नूर=तेजका पहाड़।

बेक्ट्रिया : बल्ख

कर्नल यंगहसबंड : सर फ्रासिस अेडवर्ड यगहसबंड १८६३ में पंजाबमे पैदा हुअे। जातिसे अेंग्लो-अिडियन। १८८२ में फौजमें भरती हुअे। १८९० में पोलिटिकल डिपार्टमेंटमे बदली हुअी। १८८६ में मंचूरियामें खोज की। १८८७ मे चीनी तुर्किस्तानके रास्ते पेकिंगसे भारत तककी यात्रा की। १८९३–९४ में चित्रालमें पोलिटिकल अेजटके तौर पर रहे। १८९५ में चित्रालकी लड़ाअी हुअी, तब 'टाअिम्स' के संवाददाताके तौर पर काम किया। १९०३–४ में ब्रिटिश-मडलके

साथ ल्हासा गये। पूर्वके देशोंके बारेमें आपने अनेक पुस्तकें लिखी हैं। रॉयल ज्यॉग्राफिकल सोसायटीके प्रमुख १९१९। विस्तृत जीवनीके लिअे पढ़िये 'फ्रांसिस यगहसबंड — अेक्स्प्लोरर अेंड मिस्टिक' — लेखक जॉर्ज स्वीवर।

अमीर अमानुल्ला : भारतमें रौलेट बिलके खिलाफ जब प्रचंड आंदोलन चला, अुसी समय १९१९ के अप्रैलमें अफगानिस्तानके अमीरने भारत पर आक्रमण किया था। दस दिनोंके अंदर ही अफगान परास्त हो गये थे। लम्बी बातचीतके पश्चात् ८ अगस्तको रावलपिंडीमें संधिपत्र पर दस्तखत किये गये थे।

गरमीका पागलपन : अुस समय गरमीके दिन थे और काम अविचारी था अिसलिअे। अमीरका खयाल था कि गरमीके दिनोंमें अगर आक्रमण करेंगे तो अंग्रेज परास्त हो जायेंगे। किन्तु यह गलत खयाल था। अंग्रेजोंने अिस साहसको 'मिड-समर मैडनेस' का नाम दिया था।

परसों : यह मराठी प्रयोग है।

कोहाटकी क्रूरता : सन् १९२४ में ९–१० सितम्बरको कोहाटमें घटी हुअी घटनाका यहां जिक्र है। धर्मान्तर तथा अपहरणोंके कारण वहांका वातावरण पहले ही गरम हो चुका था। अितनेमें वहांकी सनातन धर्मसभाके मंत्रीने अेक पुस्तिका प्रसिद्ध की, जिससे मुसलमानोंकी भावनायें अुत्तेजित हो अुठीं। हिन्दुओंने फौरन दुःख प्रगट किया और पुस्तिकाकी बाकी रही नकलें सार्वजनिक रूपसे जला दीं। फिर भी मुसलमानोंको संतोष नहीं हुआ और अुन्होंने हिन्दुओंके खिलाफ सख्त कार्रवाअी करनेकी मांग सरकारके सामने पेश की। सारे मसजिदमें जमा होकर अुन्होंने बदला लेनेकी प्रतिज्ञा की। ९ सितम्बरको सनातन धर्मसभाके मंत्री जमानत पर रिहा किये गये और दंगे शुरू हुअे। ये दंगे कैसे शुरू हुअे, अिस बारेमें मतभेद है, किन्तु शुरू होनेके बाद दो पक्षोंमें आमने-सामने गोलियां चलीं। सारे हिन्दू मोहल्लोंको आग लगा दी गयी। पुलिस और फौजने भी गोली चलाअी। परिणाम-स्वरूप अपार हानि हुअी। सभी हिन्दुओंको सरकारी रक्षाके नीचे

केन्टोनमेन्टमे रखा गया। वहासे अुनकी मागके अनुसार अुन्हें रावलपिंडी भेज दिया गया। वेलगाव काग्रेसमे अिस संवधमें जो प्रस्ताव पास किया गया था, अुसमे हिन्दुओको यह सलाह दी गयी थी कि कोहाटके मुसलमान अुन्हे सम्मानपूर्वक वापस न वुलाये और जानमालकी सलामतीका विश्वास न दिलाये, तव तक वे वापस न लौटें।

कुरम : सुलेमान पर्वतसे निकल कर सिन्धुसे मिलनेवाली नदी। अिसका वैदिक नाम है क्रुमु।

डेरा अिस्माअिलखां : लाहौरके पश्चिममे १२५ मीलकी दूरी पर स्थित सीमाप्रान्तका अेक शहर। यहासे गोमलघाटके द्वारा अफगानिस्तानके साथ तिजारत चलती है। सूती कपड़े और वेल्वूटेके कामके लिअे प्रसिद्ध है।

डेरा गाजीखां : भावलपुरकी वायव्य दिशामे ७० मीलकी दूरी पर स्थित पजावका अेक शहर। सिंधुकी वाढसे अिसकी काफी हानि हुआ करती थी, अिसलिअे १८९१ मे यहा पत्थरका अेक वाध वाधा गया था। यहाकी कुछ मसजिदे मशहूर हैं।

लाहौरका वैभव : अकवर और अुसके वशजोके जमानेमे लाहौरका वैभव वहुत वडा था। वजीरखाकी मसजिद, जामा मसजिद, शीशमहल, रणजितसिहके महल और शहरके वाहर शाहदरेमें स्थित वादशाह जहागीरकी कब्र और शालीमार वाग आज भी अुसके वैभवके साक्षी है।

व्यास : वियास, विपाशा। वसिष्ठ मुनिके सौ पुत्रोको राक्षस खा गये तव पुत्रशोकसे विह्वल होकर वे देहत्याग करनेके अिरादेसे अिस नदीमे कूद पडे थे। किन्तु नदीने अुन्हे विपाश यानी पाशमुक्त किया, अिसलिअे यह ‘विपाशा’ कहलाअी।

त्यागाय संभृतार्थानाम् : ‘रघुवश’ के प्रारंभमे महाकवि कालिदास रघुओका वर्णन करते समय अुनकी अनेक विशेषताये वताते हैं। अुनमे अेक विशेषता यह है। जो त्याग = दानके लिअे सभृत अर्थ = धन अिकट्ठा करनेवाले हैं, अुन रघुओके वशकी कीर्ति मैं गाना चाहता हू।

पृ० १४० अुसमें से मनमाना . . . चाहे । नहरके रूपमें।

अुदारता : चौडाअी ?

जयद्रथके समयमें : महाभारतके समयमें। जयद्रथ सिन्धु देशका राजा था।

दाहिर : [६४५–७१२] सिन्धका अेक ब्राह्मण राजा। जच्चका पुत्र। सिन्ध प्रान्तको छूनेवाले खिलाफतके प्रान्तके सूबेदार हज्जाजको अुसने कओी बार हराया था। अिसके पश्चात् मुहम्मद बिन कासिम नामक सत्रह वर्षकी अुम्रके सेनापतिको अुसके खिलाफ युद्ध करनेके लिअे भेजा गया, अिस युद्धमें दाहिरका हाथी भडक अुठा, जिसकी वजहसे वह मारा गया। अुसकी फौज भाग गअी। तबसे मुसलमानोंको हिन्दुस्तानमें प्रवेश मिला। मुहम्मदने अुसकी रानीके साथ शादी की और अुसकी दो लडकियोंको नजरानेके तौर पर खलीफाके पास भेज दिया।

जच्च : [४९७–६३७] दाहिरका पिता। अिसका अितिहास फारसीमें 'चचनामा' नामक किताबमें दिया गया है। वह बडा शूर था। अुसने अपने राज्यकी सीमा ठेठ काश्मीर तक फैलायी थी। वह सिन्धके आरोर नामक गावके अग्निहोत्री ब्राह्मण शैलजका पुत्र था। प्रथम वह सिंधके राजाके मन्त्रीका कारकुन था, बादमें प्रधान मंत्री बना; आखिर राजा बना और रानीके साथ अुसने शादी की। ब्राह्मणाबादके बौद्ध-धर्मी लोगों पर अुसने काफी जुल्म ढाये थे।

पृ० १४१ अनाचार : सिन्धके अेक ब्राह्मण राजाको अेक ज्योतिषीने कहा था कि तुम्हारी बहनका लडका तुम्हारा राज्य छीन लेगा। अिसके अिलाजके तौर पर राजाने अपनी बहनके साथ ही शादी कर ली। दूसरे अेक राजाने अेक सती पर अत्याचार किये थे। अिन ब्राह्मण राजाओंके अत्याचारोंसे लोग अितने परेशान हो गये थे कि मुहम्मद बिन कासिमको जाट और मेड लोगोंने ही सबसे अधिक मदद की थी।

मुहम्मद बिन कासिम : सिन्ध प्रान्तको जीतकर खिलाफतमें शामिल करनेवाला किशोर सेनापति। दाहिरके खिलाफ युद्ध करनेके बाद अुसने

दाहिरकी दो लडकियोको खलीफाके पास नजरानेके तौर पर भेज दिया था। जब खलीफाने अिनमे से अेक लडकीके साथ शादी करनेकी अिच्छा व्यक्त की, तब अिन लडकियोने कहा कि मुहम्मदने अुन्हे भ्रष्ट कर दिया है, अिसलिअे वे अिस सम्मानके लायक नही है। अिस पर खलीफाने गुस्सा होकर मुहम्मदको हुक्म दिया कि गायके चमड़ेमे अपनेको सीकर वह खलीफाके सामने हाजिर हो। मुहम्मदने खलीफाकी आज्ञाका पालन किया, जिससे दूसरे ही दिन अुसकी मृत्यु हो गअी। जब मुहम्मदका शव अिस हालतमें हाजिर किया गया, तब लडकियोने खलीफाको सत्य कह डाला कि अुन्होने बदला लेनेकी दृष्टिसे झूठ बात कही थी। खलीफाने अिन दोनो लडकियोकी गरदन अुड़ा दी।

सर चार्ल्स नेपियर : [१७८२–१८५३] १८०८ मे स्पेनमें मूर लोगोके खिलाफ अिसने लडाअी की, और कोरूनामें गिरफ्तार हुआ। १८१३ मे अमरीकाके खिलाफ युद्ध किया। १८१५ मे नेपोलियनके खिलाफ युद्ध किया। वह कवि बायरनका मित्र था। १८४१ मे भारत आया। १८४२ मे सिन्धकी फौजका नेतृत्व किया और अिसी वर्षके अन्तमे अिमामगढका किला कब्जेमें लिया। १८५४ के मियाणीके युद्धमें विजयी हुआ। मीरपुरके शेरमुहम्मदको परास्त करके भगा दिया। १८४४–४५ में सिन्धकी पहाडी जातियों पर विजय प्राप्त की। डलहाअुजीके साथ मतभेद होने पर अिस्तीफा देकर घर लौट गया। १८५३ में मृत्यु। अन्यायसे सिन्ध पर अधिकार करनेके बाद अिसने रिपोर्ट दी: "**I have sinned (sind)**"—मैने सिन्ध पर कब्जा कर लिया है।

सुहिणी : अेक धनवान कुम्हारकी लड़की। बुखाराका अेक खानदानी मुगल नौजवान मेहार अुसकी मुहब्बतमें फस गया था और अुससे मिलनेमें कोअी कठिनाअी न हो अिसलिअे वेश बदलकर अुसके पिताके घर नौकर बन कर रहा था। दोनोके बीच प्रेमका नाता दृढ़ होने लगा। किन्तु लडकीके पिताको वह पसंद नही आया। अिसलिअे अुसने मेहारको नौकरीसे हटा दिया। वह सिन्धुके अुस पार जाकर रहा। सुहिणी हमेशा रातके समय मिट्टीके अेक बरतनका

सहारा लेकर सिन्धु नदी पार करती थी और मेहारसे मिलने जाती थी। जब अिस बातका पता अुसके पिताको चला, तब अुसने पक्के घड़ेके बदलेमें कच्चा घड़ा वहां रख दिया। सुहिणी तो प्रेमकी मस्तीमें थी। वह कच्चा घड़ा लेकर ही नदीमें कूद पड़ी। जरा आगे गयी कि घड़ा पिघलने लगा। अुसने मेहारको पुकारा। मेहारने किनारेसे वह अुसे बचानेके लिअे दौड़ा, किन्तु बचा नहीं सका। अन्तमें दोनोंने साथ ही जल-समाधि ली।

३२. मचरको जीवन-विभूति

पृ० १४२ दिशो न जाने० न मैं दिशा जानता हूं, न शान्ति प्राप्त करता हूं। गीता, ११–२५

अिदानीम्० अब मैं शांत हो गया हूं और स्वस्थ बन गया हूं। गीता, ११–५१

पृ० १४४ स्वप्नसृष्टि पर राज्य किया: लोक-कथाओंमें 'खाया, पिया और राज्य किया' कहनेका प्रयोग चलता है। यहां पर 'स्वप्न-सृष्टि पर राज्य किया' का मतलब है 'नींद ली।'

अजगरोंकी अुपासना कर रहे थे: अजगर बड़े आलसी होते हैं। अिसलिअे यहां अर्थ होगा आलस्यकी अुपासना करते थे।

रैहानाबहन: श्री अब्बास तैयबजीकी पुत्री। भक्त-हृदय और सुकण्ठ गायिका। अिनकी 'Heart of a Gopi' नामक किताब बड़ी मशहूर है। अिस किताबके फ्रेंच तथा पोलिश भाषामें भी अनुवाद प्रकाशित हुअे हैं। हिन्दीमें 'गोपी-हृदय' नामसे अनुवाद प्रकाशित हुआ है। अिनकी कुछ मौलिक हिन्दी किताबें भी हैं 'सुनिये काकासाहब!', 'नाश्तेसे पहले', 'कृपा-किरन' वगैरा। अिनकी हिन्दी या हिन्दुस्तानी शैली अपने ढंगकी निराली है।

पृ० १४७ मंघ: मकानमें हवा आनेके लिअे छत पर जो मोखा आकारकी चिमनी जैसी रचना होती है अुसको मंघ कहते हैं।

'ढंढ': यह सिन्धी शब्द है।

३३. लहरोंका तांडवयोग

पृ० १४९ वप्रक्रीडा : सीग या लम्बे दातोंके सहारे जमीन खोदनेका खेल। 'मेघदूत' मे अिसका प्रयोग किया गया है :

तस्मिन्नद्रौ कतिचिद् अवला-विप्रयुक्त स कामी
नीत्वा मासान् कनक-वलय-भ्रंश-रिक्त-प्रकोष्ठ ।
आपाढस्य प्रथमदिवसे मेघमाश्लिष्टसानु
वप्रक्रीडापरिणतगजप्रेक्षणीय ददर्श ।।

पृ० १५० अमर्ष : तिरस्कार या अपमानसे पैदा हुआ स्थिर क्रोध। काव्यशास्त्रमे अुसकी व्याख्या अिस प्रकार की गअी है 'अधिक्षेपापमाना-देरमर्षोऽभिनिविष्टता।' भारवि कविके 'किरातार्जुनीय' काव्यमें दुर्योधनकी राजनीतिकी प्रशसा सुनकर द्रौपदी नाराज होती है और युधिष्ठिरसे कहती है "अमर्षशून्येन जनस्य जन्तुना न जातहार्देन न विद्विषादर ।। १,३३ [जिसमे अमर्ष नही है अुसका न स्नेहीजन आदर करते, न शत्रु आदर करते]

शिव-तांडव-स्तोत्र : कवि रावणका लिखा प्रसिद्ध स्तोत्र। देखिये, 'जोगका प्रपात' की टिप्पणिया।

प्रमाणिका और पचचामर : ये दो सस्कृतके लोकप्रिय और अत्यत सरल छद है। प्रमाणिकाके दो पद मिलने पर अेक पचचामर वनता है। अुसको नाराच भी कहते है।

प्रमाणिकापदद्वयम् वदेत पचचामरम्।

पुष्पदंत : अेक गधर्व और शिवगण। शिवमहिम्न-स्तोत्रका रचयिता। वायव्य दिशाके दिग्गजका नाम भी पुष्पदत है। पुष्पदतकी कथा 'कथासरित्सागर' मे है।

गोमूत्रिकाबंध : चित्रकाव्यका अेक प्रकार।

श्रावण-भादोकी धारायें : राजमहलमे जव पानीका प्रवाह वहाया जाता है और वीचमे छोटेसे पत्थर परसे वहता अुसका प्रपात वनाया जाता है, तव अिस प्रपातको श्रावण-भादोकी धाराये कहते है।

३४. सिंधुके बाद गंगा

पृ० १५३ सौवीर देश : सिन्ध और मारवाड़की सीमाका प्रदेश।

पृ० १५५ सदाकत आश्रम : [सदाकत = सत्य + आश्रम] बिहारके प्रसिद्ध देशभक्त मजहरुल हकने अिसकी स्थापना सन् १९२०-२१ के अर्सेमें की थी।

पृ० १५८ 'रसो वै सः' : निश्चय ही वह रस है। तैत्तिरीयोपनिषद्‌में ब्रह्मका वर्णन करते समय यह वचन कहा गया है। देखिये तैत्तिरीय० २-७।

पृ० १५९ कैंकर्य : [किंकर (= नौकर) + य] नौकरपन, नौकरी।

पृ० १६० ॐ पूर्णम् अदः ० यह (जगत्) पूर्ण है, वह (ब्रह्म) भी पूर्ण है। पूर्णमें से पूर्ण ही प्रकट होता है। पूर्णमें से यदि पूर्णको निकाल लें तो पूर्ण ही शेष रहता है।

अीशावास्योपनिषद्‌के प्रारंभ तथा अंतमें यह शान्तिमंत्र है।

३५. नदी पर नहर

पृ० १६१ कलौ आद्यन्तयोः स्थिति : दक्षिणमें यह बात फैलायी गयी है कि कलिकालमें सिर्फ दो ही वर्णोंका अस्तित्व है – ब्राह्मण और शूद्र; क्योंकि संस्कार-लोपके कारण क्षत्रिय और वैश्य भी अब शूद्र जैसे बन गये हैं।

द्विजत्व : जिन्हें जनेअू लेकर अिसी जन्ममें दूसरा जन्म लेनेका अधिकार है, अुन ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य तीनों वर्णोंको द्विज कहते हैं।

जन्मना जायते शूद्रः संस्कारात् द्विज अुच्यते।

भगीरथ : भगीरथने हिमालयसे गंगाको अुतारकर बंगालके अुप-सागर तकके प्रदेशको अुपजाअू बनाया था। अुन परसे कुशल-सिंचनकी विद्यामें कुशल।

पृ० १६२ निम्नगा : नीचेकी ओर बहनेवाली।

परिवाह : अतिरिक्त जलके बहनेके लिअे रखा गया मार्ग। overflow.

३६. नेपालकी बाघमती

पृ० १६३ अतिमानुषी: अलौकिक। अंग्रेजी superhuman.

भगिनी निवेदिता:- स्वामी विवेकानंदकी अंग्रेज शिष्या मिस मार्गरेट नोबल। निवेदिता नाम गुरुका दिया हुआ था।

पृ० १६५ गोरक्षनाथ: अयोध्याके समीप जयश्री नामक नगरीमें सद्बोध नामके किसी ब्राह्मणकी सद्वृत्ति नामक अेक स्त्री थी। अेक बार भिक्षा मागते हुअे मत्स्येन्द्रनाथ वहा आ पहुचे। साधु पुन्प जानकर अुनको अुस स्त्रीने सतान न होनेकी बात बताअी। मत्स्येन्द्रनाथने भस्म दी, किन्तु अुसका प्रसादके तौर पर स्वीकार करनेके बदले अुसने अुसे घूरे पर फेंक दिया। ठीक बारह सालके बाद मत्स्येन्द्रनाथ फिर पधारे और अुन्होने पूछा, "लडका कहा है?" सद्वृत्तिने सच बात बता दी। अिस पर मत्स्येन्द्रनाथने घूरेके पास जाकर पुकारा 'अलख'। तुरन्त सामनेसे 'आदेश' कहकर गोरक्षनाथकी बालमूर्ति खडी हो गअी। अिसी कारणसे गोरक्षनाथको अयोनिज कहते है। गुरुके पास रहकर गोरक्षनाथने सब विद्या प्राप्त की। मत्स्येन्द्रनाथ योगी भी थे और भोगी भी थे। किन्तु गोरक्षनाथका वैराग्य अग्निके समान प्रखर था। मत्स्येन्द्र-नाथको सिहल द्वीपकी प्रमिलारानीके मोहपाशसे गोरक्षनाथने ही मुक्त किया था। वे योगी, शिवोपासक, अद्वैतवादी और कीमियागरके रूपमें प्रसिद्ध है। बगाल, पजाब, नेपाल, सौराष्ट्र, महाराष्ट्र, सिंहल द्वीप आदि सभी स्थानोमें अुनके मठ है।

मत्स्येन्द्रनाथ और गोरक्षनाथ नेपालके गुरखा लोगोके देवता है। गोरक्षनाथ परसे ही अिनको 'गुरखा' कहते है। नेपालमे बौद्धोका महायान पथ चलता था। अुसकी पराजय करके गोरक्षनाथने वहांके लोगोमें शिवकी अुपासना प्रचलित की थी। गोरक्षनाथका समय अब तक निश्चित नही हो सका है।

३७. बिहारकी गंडकी

पृ० १६५ गंडकी: बिहारमें दो नदियोका नाम गडकी है। लेखकने मुजफ्फरपुरके पास जो गडकी देखी थी वह है वृद्ध या छोटी गंडकी। दूसरी गडकी बड़ी है।

पृ० १६६ बौद्ध जगतके दो छोर: नर्मदा और गङ्गाके बीच बौद्ध जगत समाया हुआ था।

मांडलिक नदिया: पानी-रूपी करभार देनेवाली नदिया, अुनमें मिलनेवाली नदिया।

अष्टांगिक मार्ग: भगवान बुद्धके बताये हुये आर्य अष्टांगिक मार्गके आठ अंग अिस प्रकार है: (१) सम्यक् दृष्टि, (२) सम्यक् संकल्प, (३) सम्यक् वाचा, (४) सम्यक् कर्मान्त, (५) सम्यक् आजीव, (६) सम्यक् व्यायाम, (७) सम्यक् स्मृति; और (८) सम्यक् समाधि।

मार: मनुष्यकी सद्वासनाओंका नाश करनेवाला। बौद्धोंमें आसुरी संपत्तिके अधिष्ठाता व्यक्तिको 'मार' कहते है।

३८. गयाकी फल्गु

पृ० १६७ सीताका शाप: कहते है कि अेक समय राम, सीता और लक्ष्मण घूमते-घूमते फल्गुके किनारे आ पहुंचे। वहां पहुंचने पर रामको स्मरण हुआ कि आज मेरे पिताजीके श्राद्धका दिन है। अिसलिअे सामान लानेके लिअे अुन्होंने लक्ष्मणको शहरमें भेजा। लक्ष्मण गये, किन्तु बड़ी देर तक वापस नहीं लौटे। अिससे रामको चिन्ता हुअी और वे स्वयं अुन्हें ढूंढनेके लिअे निकल पड़े। अिधर श्राद्धका मुहूर्त बीतने लगा, अिसलिअे सीताजीने नहा-धोकर जो कुछ था अुसीसे अपने पतिके बदले स्वयं अुनके पितरोंको पिंडदान दिया। पितरोंने संतोषपूर्वक पिंडका स्वीकार किया। वे पिंड लेकर जाने लगे, तब सीताजीने अुनसे पूछा 'आप स्वयं आकर पिंड ले गये है, यह मेरे पतिको कैसे मालूम होगा?' तब आकाशवाणी हुअी: 'तुम साक्षी रखो।' सीताजीने फल्गु नदी, गाय, अग्नि और केवड़ेको साक्षी रखा।

राम-लक्ष्मण सारी सामग्री लेकर आये और अुन्होंने सीतासे चरु (पिंडका भात) तैयार करनेको कहा। किन्तु सीताने न तो कोअी अुत्तर दिया, न चरु तैयार किया। अंतमें रामने पूछा, तब सीताने सारी बात बता दी। किन्तु राम-लक्ष्मणको विश्वास नहीं हुआ। अिसलिअे सीताने

फल्गु आदि सब साक्षियोसे पूछनेके लिअे कहा। मगर अिन सबने कहा, 'हमें कुछ माल्रूम नही है।' अत सीताने लाचारीसे दुबारा चरु तैयार किया और रामने पिडके लिअे पितरोका आवाहन किया। तब आकाशवाणी हुअी कि जानकीने हमे तृप्त किया है। किन्तु रामको विश्वास नही हुआ। अिसलिअे फिरसे आकाशवाणी हुअी। अिससे भी रामको सतोष नही हुआ। अिस पर स्वय सूर्यने आकर साक्षी दी, तब रामको विश्वास हुआ।

साक्षी होते हुअे भी अुन्होने बात नही बताअी, अिसलिअे सीताने अुन चारोको शाप दिया। फल्गुको कहा, 'तुम पातालमे रहोगी।' केवडेको कहा, 'तुम शिवजीको अग्राह्य होगे।' गायको कहा, 'तेरा मुह अपवित्र माना जायगा और पूछ पवित्र मानी जायगी।' अग्निको कहा, 'तुम सर्वभक्षक होगे'।——शिवपुराण, अध्याय ३०।

३९. गरजता हुआ शोणभद्र

पृ० १६८ अयं शोणः ० "स्वच्छ जलवाला, अगाध, पुलिन-मडित, अैसा यह शोण है। हे ब्रह्मन्, हम किस रास्तेसे पार अुतरेगे?" श्री रामचद्रके पूछने पर विश्वामित्रने जवाब दिया, "जिस रास्तेसे महर्पि जाते है, वह मेरे द्वारा बताया हुआ मार्ग यह है।"

क्षत्रिय गुरुशिष्य : क्षत्रियोके गुरु अक्सर ब्राह्मण ही होते है। किन्तु यहा गुरु विश्वामित्र भी मूलत क्षत्रिय थे।

पीवरकाय : पुष्ट शरीरवाला।

गजेन्द्र और ग्राह : हाहा और हुहु नामक दो गधर्व थे। किसी दिन अिन दोनोके बीच विवाद चला——'सगीत-विद्यामे हममे कौन बडा है?' वे अिन्द्रके पास गये और अुसके सामने अपनी कला दिखाअी। अिन्द्रने कहा, 'तुम दोनोमे कौन बडा है, यह तो देवल अृषिके सिवा और कोअी नही बता सकेगा।' अिसलिअे वे देवल अृषिके पास गये और गाने लगे। अृषि अुस समय ध्यानमग्न थे। वे कुछ बोले नही। अिसलिअे यह मानकर कि वे जड है, कुछ समझते नही है, गधर्वोने अुनका अपमान किया। अिससे अृषिने अुनको शाप दिया कि 'तुम अब

मृत्युलोकमें जन्म लोगे।' किन्तु बादमें अुनकी प्रार्थना सुनकर शापके निवारणके लिअे कहा कि 'हरि तुम्हारा अुद्धार करेंगे।'

अिस प्रकार वे दोनों मृत्युलोकमें गजेन्द्र और ग्राहके रूपमें पैदा हुअे। अेक बार गजेन्द्र जलक्रीडाके लिअे पानीमें अुतरा, तब ग्राहने अुसका पाव पकड लिया और अुसे अंदर खींचने लगा। बाहर आनेके लिअे गजेन्द्रने काफी प्रयत्न किया, किन्तु कुछ नहीं हुआ। और वह ग्राहसे पानीमें खिंचता चला गया। जब वह पूराका पूरा पानीमें समा गया, सिर्फ सूंड ही बाकी रही, तब अुसने अीश्वरकी स्तुति की। स्तुति सुनकर अीश्वरने आकर अुसे बचाया और दोनोंका अुद्धार किया।

यह कथा पंचरत्न-गीताके 'गजेन्द्र-मोक्ष' में है।

[बरसों पहले Tug of War के लिअे श्री काकासाहबने गुजरातीमें 'गजग्राह' शब्द प्रचलित किया था।]

ब्रह्मपुत्र: ब्रह्मपुत्राका सही नाम है 'ब्रह्मपुत्र'। शायद रोमन लिपिके कारण गडबड हुअी है। लेखकने अिस पुस्तकमें दोनों रूपोंका प्रयोग किया है।

पृ० १६९ कहा जाअूं० महाकवि कालिदासने शोणका यह भाव बहुत सुन्दर ढंगसे व्यक्त किया है। अिन्दुमतीके स्वयंवरके बाद निराश हुअे राजा लोग अजका मार्ग रोकते हैं, तब अज अुनकी सेना पर टूट पडता है। कालिदासने अिसकी तुलना भागीरथी पर अपनी अुत्ताल तरंगोंसे टूट पडनेवाले शोणसे की है।

तस्याः स रक्षार्थम् अनल्पयोधम्
आदिश्य पित्र्यं सचिवं कुमारः।
प्रत्यग्रहीत् पार्थिव-वाहिनीं तां
भागीरथीं शोण अिवोत्तरंगः।

— रघुवंश ७-३६

नाल्पे सुखमस्ति . . . तत् सुखम्: 'अल्पमें सुख नहीं है। जो भूमा है — सारे विश्वको समा ले अितना विशाल है, वही सुखरूप है।' (छांदोग्य, ७-२३)

४०. तेरदालका मृगजल

जमखंडी : दक्षिण महाराष्ट्रका अेक शहर।

४१. चर्मण्वती चंबल

पृ० १७२ रंतिदेव : भरतकी छठी पीढीमें हुआ सूर्यवशी राजा। महाभारतमे असकी कथा दो बार आयी है। मेघदूतमें भी असका जिक्र आता है।

हॅकॅटॉम : [शत अुक्ष यज्ञ] ग्रीक (यूनानी) लोगोका अेक यज्ञ जिसमे सौ वैलोकी आहुति दी जाती थी।

भूदेव : ब्राह्मण। अग्नि और ब्राह्मण देवताओके मुख माने जाते हैं। वे जो खाते है वह सीधा देवताओको मिल जाता है।

४२. नदीका सरोवर

पृ० १७३ बेलाताल : ताल = तालाव। जैसे नैनीताल, भीमताल।

पृ० १७४ हिमालयसे मांफी मांगकर : हिमालयमे केदारनाथके पास मदाकिनी नामक अेक नदी है, असलिअे।

महाराज पुलकेशी : वातापी वशका राजा। छठी सदीके मध्य भागमे अुसने महाराष्ट्रके छोटे छोटे सब राज्योको अेकत्र करके अेक साम्राज्यकी स्थापना की थी और अश्वमेध यज्ञ भी किया था। अुसके पुत्र कीर्तिवर्मानि पिताके साम्राज्यका विस्तार किया और अुसमें अग-वग और मगधका भी समावेश किया। सन् ६०९ मे जब दूसरा पुलकेशी गद्दी पर बैठा तब यह चालुक्य साम्राज्य विन्ध्यसे लेकर दक्षिणमें पल्लव साम्राज्य तक फैला हुआ था। अुसने मालव, गुर्जर, और कलिगोको भी अधीन कर लिया था। अुसका सबसे बडा पराक्रम तो यह था कि महाराज हर्षने जब दक्षिण पर आक्रमण किया, तब पुलकेशीने अुनको रोका और पराजित किया (औ० स० ६३६)। पुलकेशी = पुलिकेशी। दक्षिणकी भाषामें पुलि = हुलि = बाघ। जिसके बाल (केश) बाघकी अयालके जैसे हो, वह है पुलकेशी।

पृ० १७५ अनाविला : जिसमें कीचड़ नही है, अैसी। स्वच्छ।

पृ० १७६ दशार्ण : विन्ध्याचलके दक्षिण-पूर्वमें स्थित प्रदेश। दश +ऋण (दुर्ग) जिसमें है वह। नदीका नाम है 'दशार्णा'। मेघदूतमें असका अुल्लेख अिस प्रकार आता है :

पाण्डुच्छायोपवनवृतयः केतकैः सूचिभिन्नैर्-
नीडारम्भैर् गृहबलिभुजाम् आकुलग्रामचैत्याः।
त्वय्यासन्ने परिणतफलश्याम-जम्बूवनान्ताः
संपत्स्यन्ते कतिपयदिनस्थायिहंसा दशार्णाः ॥२३॥

वेत्रवती : मालवाकी अेक नदी, बेतवा। मेघदूतमें असका भी अुल्लेख है :

तेषां दिक्षु प्रथित-विदिशा-लक्षणां राजधानीं
गत्वा सद्यः फलम् अविकलम् कामुकत्वस्य लब्ध्वा।
तीरोपान्त-स्तनित-सुभगं पास्यसि स्वादु यस्मात्।
सभ्रूभंगं मुखम् अिव पयो वेत्रवत्याश् चलोर्मि ॥२४॥

४३. निशीथ-यात्रा

पृ० १७७ सबिन्दु-सिन्धु० श्री शंकराचार्य विरचित 'नर्मदास्तोत्र' में ये वचन हैं। असी स्तोत्रमें निम्नलिखित श्लोक है, जिसमें नर्मदाको 'शर्मदा' कहा गया है :

त्वदम्बुलीन दीनमीन दिव्य संप्रदायकं
कलौ मलौघभारहारि सर्वतीर्थनायकम्।
सुमत्स्य-कच्छ-नक्र-चक्र-चक्रवाक-शर्मदे
त्वदीयपादपंकजं नमामि देवि नर्मदे॥

पृ० १७९ मेरी जाति है कौवेकी : कौवा कभी अकेला नहीं खाता। दूसरे कौवोंको पुकार कर ही खाता है।

मेरा कका नाम 'काका' है, यह भी नहीं भूलना चाहिये।

पृ० १८६ नान्तःप्रज्ञं० माण्डूक्योपनिषद्में तुरीय अवस्थाके वर्णनमें ये शब्द आते हैं। जिनका अर्थ है— 'वह न अन्तःप्रज्ञ है, न बहिष्प्रज्ञ है। वह न अुभयतःप्रज्ञ है, न प्रज्ञानघन है। वह न प्रज्ञ है, न अप्रज्ञ है।'

४८. धुवांधार

पृ० १९३ पूषन्नेकर्षे० और ॐ क्रतो स्मर, कृतं स्मर: ये ईशावास्योपनिषद्के श्लोक हैं। ये श्लोक अिस प्रकार हैं:

पूषन्नेकर्षे यम सूर्य प्राजापत्य! व्यूह रश्मीन्, समूह।
तेजो, यत्ते रूपं कल्याणतमं तत्ते पश्यामि
योऽसावसौ पुरुषः सोऽहमस्मि ॥ १६ ॥
वायुर् अनिलम् अमृतम् अथेदं भस्मान्तं शरीरम्।
ॐ क्रतो स्मर कृतं स्मर, क्रतो स्मर कृतं स्मर ॥ १७ ॥

[हे जगत्पोषक सूर्य हे अेकाकी गमन करनेवाले, हे यम (संसारका नियमन करनेवाले), हे सूर्य (प्राण और रसका शोषण करनेवाले), हे प्रजापतिनंदन, तू अपनी रश्मियां समेट ले। तेज अेकत्र कर ले। तेरा जो अत्यन्त कल्याणमय रूप है, अुसे मैं देखता हूं। सूर्यमंडलमें रहनेवाला वह जो परात्पर पुरुष है, वह मैं ही हूं।

अब मेरे प्राण सर्वात्मक वायुरूप सूत्रात्माको प्राप्त हों और यह शरीर भस्मीभूत हो जाय। हे मेरे संकल्पात्मक मन, अब तू स्मरण कर, अपने किये हुअे कर्मोंका स्मरण कर; अब तू स्मरण कर, अपने किये हुअे कर्मोंका स्मरण कर।]

पृ० १९४ चन्द्रगुप्त और समुद्रगुप्त: चंद्रगुप्तकी पुत्री प्रभावतीका विवाह वाकाटक वंशमें हुआ था। अुसने कअी बरस तक शासन-तंत्र संभाला था। चंद्रगुप्तने अुस समय खास लोग वहां भेज दिये थे, अिस बातका यहां अुल्लेख है। समुद्रगुप्तकी विजय-यात्रामें अिस प्रदेशका भी समावेश होता था।

कलचुरी: वाकाटक साम्राज्यके पतनके बाद अनेक छोटे छोटे स्वतंत्र राज्य पैदा हुअे थे। अुनमें अुत्तर महाराष्ट्रके कलचुरी लोगोंका भी अेक राज्य था। अुनकी राजधानी थी त्रिपुरी, जहां सन् १९३९ में कांग्रेसका अधिवेशन हुआ था।

वाकाटक: सन् २२५ से ५४० के आसपास मध्यप्रान्तके बरार प्रदेशमें वाकाटकोंका साम्राज्य था। छठी सदीके पहले दस वर्षोंका समय अिनके

सर्वोच्च वैभवका काल था। अिनमें आज हैदराबाद, बम्बअीका महा-
राष्ट्र, बरार और मध्यप्रान्तका बहुतसा हिस्सा गिना जाता था।
अिसके अलावा, अुत्तर कोंकण, गुजरात, मालवा, छत्तीसगढ़ और आंध्र
प्रदेश पर भी अिसका प्रभुत्व था। अुस समय अितना विशाल और
अितना बलवान साम्राज्य भारतमें दूसरा कोअी नहीं था।

४५. शिवनाथ और शैव

पृ० १९४ मलिक काफूर: अलाअुद्दीन खिलजीका प्रीतिपात्र
खोजा। अिसने दक्षिणके राज्य जीतकर वहांकी प्रजा पर बड़ा
अत्याचार किया था।

काला पहाड़: बंगालके नवाब सुलेमान किरानीका तथा बादमें
अुसके पुत्र दाअूदका सेनापति। असम, काशी और अुड़ीसामें जितने हिन्दू
देवालय थे, अुनमें से अेक भी अिसके हाथसे नहीं बचा था। किसीको
अिसने तोड़ डाला, किसीको खंडित कर दिया, तो किसीको जमींदोज कर
दिया। जगन्नाथकी मूर्तिको अुसने जलाकर समुद्रमें फेंक दिया था।
हिन्दुओं पर अुसने बहुत जुल्म ढाये थे। कुछ लोग कहते हैं कि वह
पहले ब्राह्मण था, किन्तु किसी नवाबकी कन्याकी मुहब्बतमें फंसकर
मुसलमान बन गया था। मुसलमानोंके अितिहासमें अुसको पठान
जातिका बताया गया है। १५६५ में अुसने अुड़ीसा जीता था।
१५८० में अुसकी मृत्यु हुअी थी।

पृ० १९७ नामरूपका त्याग करनेसे ही: मुण्डकोपनिषद्में
निम्नलिखित श्लोक (३–२–८) है:

यथा नद्यः स्यन्दमानाः समुद्रेऽस्तं गच्छन्ति नामरूपे विहाय।
तथा विद्वान् नामरूपाद् विमुक्तः परात्परं पुरुषमुपैति दिव्यम्।

[जिस प्रकार निरंतर बहनेवाली नदियां अपना नामरूप छोड़-
कर समुद्रमें जा मिलती हैं, अुसी प्रकार विद्वान भी नामरूपसे मुक्त
होकर परात्पर दिव्य पुरुषको प्राप्त कर लेता है।]

सर्वे महत्त्वम् अिच्छन्ति० जिस कुलमें सभी लोग महत्त्व चाहते
हैं, अुस कुलका नाश होता है; अुसी प्रकार जिस देशमें सभी लोग
नेता बन जाते हैं, अुस देशका भी नाश निश्चित है।

४६. दुर्दैवी शिवनाथ

पृ० १९९ राक्षस-पद्धतिका विवाह: विवाहके आठ प्रकार बताये गये है: (१) ब्राह्म, (२) दैव, (३) आर्ष, (४) प्राजापत्य, (५) गांधर्व, (६) आसुर, (७) राक्षस और (८) पिशाच। अिनमें से जिस विवाहमें लडकीके रिश्तेदारोको मारकर या परास्त करके जबरन् लडकीसे विवाह किया जाता है, अुसको राक्षस-पद्धतिका विवाह कहते हैं।

४७. सूर्याका स्रोत

पृ० २०० कासा: बम्बअी राज्यके थाना जिलेका अेक गाव। आचार्य शंकरराव भिसेके मार्गदर्शनमें यहा अेक सर्वोदय-केंद्र चलता है, जिसके कार्यकर्ता यहाके आदिम निवासी 'वार्ली' लोगोके बीच बहुत अच्छा काम करते हैं।

४८. अबरी औब

पृ० २०५ कवियोंको जितना . . . देता था: बहुत कम और अस्पष्ट।

४९. तेंदुला और सुखा

पृ० २०७ व्यंजन: शाक, चटनी।

पृ० २०९ यद् भावि० जो कुछ होनेवाला हो, सो होने दो।

५०. अृषिकुल्याका क्षमापन

पृ० २११ सरित्पिता: पर्वत।

सरित्पति: समुद्र।

पृ० २१३ अचलोंका अुपस्थान . . . देगी: श्री काकासाहबने अब पहाड़ोके वर्णन लिखना शुरू कर दिया है, अिस बातका यहा अुल्लेख है।

५१. सहस्रधारा

पृ० २१४ आचार्य रामदेवजी: स्वामी श्रद्धानदजीके सहायक। हरिद्वार गुरुकुलके आचार्य।

पृ० २१६ घवघवाता हुआ: घव्-घव् आवाज करता हुआ। लेखकका वनाया हुआ यह नाम-क्रियापद है।

५२. गुच्छपानी

पृ० २२२ चंदन: श्री काकासाहवकी पुत्रवधू सौ० चंदन कालेलकर।

५३. नागिनी नदी तीस्ता

पृ० २३० यंत्रका जीन कसकर: पावर हाअुस खड़ा करके।

५४. परशुराम कुंड

पृ० २३२ नहि वेरेन वेरानि ० धम्मपदका यह पूरा श्लोक अिस प्रकार है:

नहि वेरेन वेरानि सम्मन्तीध कुदाचनं।
अवेरेन च सम्मन्ति अेस धम्मो सनन्तनो॥ ५॥

[वैर वैरसे कभी शांत नहीं होता; अवैरसे ही वैर शांत होता है — यही संसारका सनातन नियम (धर्म) है।]

५५. दो मद्रासी बहनें

पृ० २३६: नागमोडी: नागकी तरह जिसके मोड़ हों। सर्प-सदृश। यह शब्द मराठीका है।

५६. प्रथम समुद्र-दर्शन

पृ० २३९ मुरगांव: गोवाका अेक शहर जिसको अंग्रेजीमें 'मार्मागोवा' कहते हैं। यह पश्चिमी किनारेका अेक सुन्दर बन्दरगाह है। फौजी दृष्टिसे अिसका बड़ा महत्त्व है।

पृ० २४० दूध-सागर: पानी पहाड़की चोटी परसे नीचे अिस तरह कूदता है कि अुसका दूधके समान चमकता सफेद प्रपात बन जाता है। अिसलिअे अुसका नाम ही 'दूध-सागर' पड़ गया है।

केशू: = केशव, श्री काकासाहबके भाअी।

पृ० २४१ दत्तू: श्री काकासाहबका पूरा नाम दत्तात्रेय बालकृष्ण कालेलकर है। दत्तात्रेयका छोटा रूप है दत्तू।

गोंदू: = गोविंद, काकासाहबके दूसरे भाअी।

५७. छप्पन सालकी भूख

पृ० २४७ सरोके पेड़ : कारवारमे सरोका अेक सुन्दर वन है। अिसका वर्णन पढ़िये 'स्मरण-यात्रा' के 'सरोपार्क' नामक लेखमें — पृ० २०१।

५८. मरुस्थल या सरोवर

पृ० २५४ मरजाद-वेल : समुद्रका पानी ज्वारके समय अधिकसे अधिक जहा तक पहुचता है, वहां अेक तरहकी वेल अुगती है। समुद्र कितना भी तूफानी क्यो न हो, वह कभी अपनी अिस मर्यादाका अुल्लघन नही करता। अिसलिअे अिस वेलको मरजाद-वेल कहते है। खलासी लोगोके अनुसार वह समुद्रकी मौसी है। अतः समुद्र अुसका भानजा हुआ।

पृ० २५५ सर्वं समाप्नोषि ० 'आप सारे संसारको व्याप्त किये हुअे है; अतः आप सर्व है।' गीता, ११–४०

५९. चांदीपुर

पृ० २५७ महाश्वेता : बाणकी विख्यात कथा 'कादम्बरी' की नायिका कादम्बरीकी सखी।

कादंबरी : बाणकी कथाकी नायिका। कादम्बरीका मूल अर्थ है : मद्य, सुरा।

पृ० २५९ मदालसा : श्री जमनालाल बजाजकी पुत्री।

आपो नारा ० पानीको 'नारा' कहा है। और वह नर अर्थात् परमात्मासे पैदा हुआ है। यह पानी पहले अुसका (परमात्माका) अयन (निवासस्थान) था। अिसीलिअे परमात्माको नारायण (पानीमें जिसका निवासस्थान है अैसा) कहा है। मनुस्मृति, १–१०

पृ० २६० प्रथम प्रभात : रवीद्रनाथका विख्यात राष्ट्रगीत 'अयि भुवन-मनोमोहिनि' में से ये पक्तिया ली गअी है। पूरा गीत अिस प्रकार है :

अयि भुवन-मनोमोहिनि
अयि निर्मल-सूर्य-करोज्ज्वल-धरणि
जनक-जननी-जननि — अयि०

नील-सिंधु-जल-धौत-चरणतल
अनिल-विकंपित-श्यामल-अंचल
अंबर-चुंबित-भाल-हिमाचल
शुभ्र-तुषार-किरीटिनि — अयि०

प्रथम प्रभात-अुदय तव गगने
प्रथम साम-रव तव तपोवने
प्रथम प्रचारित तव वन-भवने
ज्ञान-धर्मकत काव्य-काहिनि — अयि०

चिर कल्याणमयी तुमि धन्य,
देशविदेशे वितरिछ अन्न,
जाह्नवी-जमुना-विगलित-करुणा
पुण्य-पीयूष-स्तन्य-वाहिनि — अयि०

६०. सार्वभौम ज्वार-भाटा

पृ० २६३ सु-गत : भगवान बुद्धका अेक नाम। अेक खास 'मिशन' लेकर जो आये वे तथागत। सब संकल्पों और संस्कारोंका नाश करके जो निर्वाण तक पहुंचे वे सु-गत।

६१. अर्णवका आमंत्रण

पृ० २६३ अर्णव : अर्णव शब्दमें धातु 'ऋ' है। जिसका अर्थ है अुथल-पुथल होना, फेनसे भर आना। जिस परसे जिसमें अुथल-पुथल होती है, जो फेनसे भर आता है, जो अशान्त है, अुसको अर्ण = पानी कहते हैं। और जिसमें जिस तरहका पानी है अुसको अर्णव कहते हैं। 'ऋणोतेरर्णः। अर्णांसि बुद्बुदानि अस्य सन्ति इति अर्णवः'।

अघमर्षण सूक्त : ऋग्वेदके १० वें मण्डलका १९० वां सूक्त। अुसके ऋषिका नाम भी अघमर्षण ही है। सन्ध्यावन्दनके समय सुबह-शाम यह सूक्त बोला जाता है। सायणाचार्य लिखते हैं : "अघमर्षण

अर्थ है पापको धो डालना। किन्तु अिस सूक्तमें पापका अुल्लेख तक नही है। अुसमे अृषि कहता है: बाह्य विश्वकी विशालताका अनुभव करो, हृदयकी गहराअीकी जाच करो। यह सारी आतर-बाह्य सृष्टि किसके सहारे टिकी हुअी है, यह देख लो। काल और सृष्टिकी अनन्तताका खयाल करो। अिससे तुम्हारा मन अपने-आप विशाल हो जायगा। विशाल मनमे पापके लिअे स्थान नही होता।

"अिस अनादि अनंत सृष्टिमे 'अृतम्' और 'सत्यम्' ही स्थायी है। 'अृतम्' का अर्थ है विश्वका सार्वभौम नियम; चराचर सृष्टिका सनातन धर्म। अिसीके सहारे अनादि अनत सृष्टि चलती है (अृ = चलना)। अिस 'अृतम्' के अदर जो परम तत्त्व है, जो शाश्वत है और जिसका नाश कभी नही होता, अुसको सत्य कहते है। यह सत्य सर्वव्यापी है। अतः अिसे विष्णु (सर्वत्र प्रवेश पानेवाला, फैलनेवाला) भी कहते है। 'सत्यम्' और 'अृतम्' के द्वारा ही यह ससार अुत्पन्न होता है, विलीन होता है और फिरसे अुत्पन्न होता है। विश्वचक्र तपसे चलता है। यह विश्व तो परमात्माकी केवल महिमा है। परमात्मा अिससे भी बड़ा है। वह सुखका धाम है, आनंदका निधान है। अुसकी कल्पना ज्यो ज्यो हृदयमें फैलती जायगी, त्यो त्यो हृदय स्वच्छ होता जायगा। जैसे जैसे तुम हृदयसे बड़े होते जाओगे, वैसे वैसे पापसे तुम्हे घृणा होती जायगी। पापके लिअे स्थान ही नही होगा। 'यो वै भूमा तत् सुखम्। नाल्पे सुखम् अस्ति।' अितना समझ लो। यही पाप-नाशक मत्र है।"

वरुण: वेदोमे वरुणको पश्चिम दिशाका और सागरका अधीश्वर कहा गया है। वृ (घेर लेना) + अुन (कृतार्थे प्रत्यय)। जिसने पृथ्वीको घेर लिया है।

भुज्यु: अृग्वेदमे अिसकी कथा है। कहते है कि भुज्यु अपने पुत्र तुग्र पर अेक बार गुस्सा हुअे। अिससे अुन्होने तुग्रको दूसरे टापू पर बसे हुअे दुश्मनोके खिलाफ लडनेके लिअे भेज दिया। रास्तेमे अुसके जहाजमें सुराख हो गया, जिससे वह बड़ी कठिन परिस्थितिमे आ पड़ा। किन्तु अश्विनीकुमारोने सौ पतवारोवाली नौकामें आकर अुसे सुरक्षित किनारे पर पहुचा दिया।

पृ० २६४ जलोदर: अेक रोग, जिसमें पेटमें पानी भर जाता है। लेखकने यहां अिस शब्दका प्रयोग जलरूपी अुदरके अर्थमें किया है।

पृ० २६५ सिंदबाद: 'अरेबियन नाअिट्स' में जिसकी सात यात्राओंकी रोचक कथा है।

पृ० २६६ सिंहपुत्र विजय: सिलोनकी प्राचीनतम परंपराके अनुसार अि० स० पूर्व छठी शताब्दीके मध्यमें सौराष्ट्रके सिंहपुरका राजकुमार विजय साहसपूर्ण यात्रा करके सिलोन पहुंचा था। विद्वानोंके कथनानुसार वह पौराणिक नहीं, बल्कि अैतिहासिक व्यक्ति है। देखिये: ('भारतीय आर्यभाषा और हिंदी'—लेखक: श्री सुनीतिकुमार चट्टोपाध्याय।)

भृगुकच्छ: आजका भडौंच।

सोपारा: प्राचीन शूर्पारक।

दाभोळ: पश्चिम तट पर स्थित अेक अतीव मनोहर और बड़े महत्त्वका बंदरगाह।

मंगलापुरी: आजका मंगळूर या मंगलोर।

ताम्रद्वीप: सिलोन, लंका।

जावा और बालिद्वीप: सिंगापुरके दक्षिणमें ये दो द्वीप हैं। वहांका धर्म अिस्लाम है, लेकिन हिन्दू संस्कृतिका असर आज भी वहां निश्चित मालूम होता है।

ताम्रलिप्ति: आजका तामलुक।

दसों दिशाओंमें: महावंशमें लिखा है कि "बौद्ध धर्मका प्रचार करनेवाले मोग्गलीपुत्त (तिस्स) स्थविरने संगीतिका कार्य पूरा करनेके बाद भविष्यत् कालके बारेमें सोचकर और यह ध्यानमें रखकर कि मध्य देशके बाहर बौद्ध धर्मकी स्थापना होनेवाली है, कार्तिक मासमें कुछ स्थविरोंको अलग अलग स्थानोंमें भेज दिया: कश्मीर और गांधारमें मज्झंतिकको, महिष मंडलमें महादेव स्थविरको, वनवासीमें रक्खितको, महाराष्ट्रमें महाधम्म रक्खितको और योन (यवन) लोगोंके देशमें महारक्खित स्थविरको भेजा।

"'मज्झिम स्थविरको हिमवत (हिमालय) प्रदेशमे तथा सोण और अुत्तर अिन दो स्थविरोको सुवर्णभूमि (ब्रह्मदेश) मे भेजा। महा-महिन्द, अिष्ठिय, अुत्तिय, सवल और भद्दसाल अिन पाच स्थविर शिष्योको 'तुम सुदर लकाद्वीपमे जाकर मनोरम वुद्धधर्मकी स्थापना करो' कहकर अुस द्वीपमे भेज दिया।" १-८

पृ० २६७ धर्म-विजय : कलिंगकी विजयके वाद मनमे अुत्पन्न हुअे पश्चात्तापका वर्णन करनेवाला जो शिलालेख अशोकने खुदवाया, अुसमे अुसने कहा है कि "महाराजके मतके अनुसार धर्मके द्वारा प्राप्त हुअी विजय ही श्रेष्ठ विजय है।"

गैडेकी तरह अकुतोभय : मूल वौद्ध ग्रंथोमें गैडेकी नही वल्कि गैडेके अकेले सीगकी अुपमा है। सव प्राणियोके दो शीग होते हैं, किन्तु गैडेकी नाक पर सिर्फ अेक ही सीग होता है।

धम्मपदमे अिसी संदर्भमे अकेले हाथीकी अुपमा दी गअी है

नो चे लभेथ निपकं सहाय सद्धिचर साधु विहारिधीर।
राजा व रट्ठं विजित पहाय अेको चरे मातगरञ्ञे व नागो॥

[यदि निपुण, साथ चलनेवाला, साधु विहारवाला वीर पुरुष मित्रके रूपमें न मिले, तो जैसे हारे हुअे राज्यको छोडकर राजा अकेला चला जाता है, या मातग अरण्यमे हाथी अकेला घूमता है, वैसे अकेले ही घूमना चाहिये।]

अेकस्स चरित सेय्यो नत्थि वाले सहायता।
अेको चरे न च पापानि कयिरा अप्पोस्सुक्को मातगरञ्ञे व नागो॥

[अेकाकी चर्या श्रेय है, वालक (अज्ञानी) से कोअी सहायता नही मिलती। मातंग अरण्यमे अेकाकी हाथीकी तरह अल्पोत्सुक होकर अेकाकी चर्या करना चाहिये; पाप नही करना चाहिये।]

सोपारा, कान्हेरी, घारापुरी : वम्वअीके आसपासकी वौद्ध गुफायें।

खंड-गिरि, अुदय-गिरि : अुडीसाके दो पहाड। यहां वौद्ध गुफाये हैं। सम्राट् खारवेलका प्रख्यात शिलालेख भी यही है।

महिन्द और संघमित्ता: अशोकने अपने पुत्र महेन्द्र तथा पुत्री संघमित्राको बौद्ध धर्मका प्रचार करनेके लिअे लंका भेजा था।

पृ० २६८ वाअिकिंग: यूरोपके अुत्तर समुद्रमें ८ वीं से १० वीं शताब्दी तक लूट मचानेवाले अिस नामके डाकू।

लक्ष्मीका पिता: लक्ष्मी समुद्रमें पैदा हुअी, अिसलिअे पुराणोंमें समुद्रको लक्ष्मीका पिता कहा गया है। यहां पर लेखकने अिस कल्पनासे फायदा अुठाकर समुद्रमें यात्रा करनेसे प्राप्त होनेवाली लक्ष्मीके अर्थमें अिन शब्दोंका प्रयोग किया है।

पृ० २६९ सर्वे सन्तु निरामयाः ० पूरा श्लोक अिस प्रकार है:

सर्वेऽत्र सुखिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखम् आप्नुयात्॥

[सब सुखी रहें, सब निरामय = नीरोग रहें। सब भद्र देखें। किसीको दुःख प्राप्त न हो।]

६२. दक्षिणके छोर पर

पृ० २७१ धनुष्कोटी: धनुष्कोटीमें दो समुद्रोंके बीच भूमिका जो हिस्सा फैला हुआ है, वह धनुषकी कोटी जैसा लगता है। अिस परसे अिस स्थानका नाम धनुष्कोटी पड़ा है।

रत्नाकर और महोदधि: दोनोंका अर्थ तो अेक ही है — समुद्र।

प्रशस्त: मूल अर्थ है कल्याणमय, शुभ, कुशल। प्रशंसापात्र भी हो सकता है। यहां दोनों अर्थोंमें अिसका प्रयोग किया गया है। बंगला और मराठीमें अिस शब्दका दूसरा भी अेक अर्थ है: चौड़ा, विशाल। यहां पर अिस अर्थमें भी लिया जा सकता है।

'रघुवंशमें' लिखा हुआ वर्णन: १३ वे सर्गमें रावण-वधके पश्चात् सीताको लेकर राम पुष्पक विमानमें बैठकर अयोध्या वापस लौटते हैं, तब लंकासे निकल कर सागर पार करते हुअे कुछ श्लोकोमें सागरका वर्णन करते हैं:

वैदेहि पश्यामलयाद्विभक्त मत्सेतुना फेनिलमम्वुराशिम्।
छायापथेनेव शरत्प्रसन्नम् आकाशमाविष्कृतचारुतारम्॥२॥
गर्भं दधत्यर्कमरीचयोऽस्माद् विवृद्धिमत्राश्नुवते वसूनि।
अबिन्धन वह्निमसौ विभर्ति प्रह्लादन ज्योतिरजन्यनेन॥४॥
ता तामवस्था प्रतिपद्यमानं स्थित दश व्याप्य दिशो महिम्ना।
विष्णोरिवास्यानवधारणीयम् ईदृक्तया रूपमियत्तया वा॥५॥
ससत्वमादाय नदीमुखाम्भ· संमीलयन्तो विवृताननत्वात्।
अमी शिरोभिस्तिमय. सरन्ध्रैरूर्ध्वं वितन्वन्ति जलप्रवाहान्॥१०॥
मातङ्गनक्रैं सहसोत्पतद्भिर्भिन्नान्द्विधा पश्य समुद्रफेनान्।
कपोलसर्सपितया य येषा व्रजन्ति कर्णक्षणचामरत्वम्॥११॥
वेलानिलाय प्रसृता भुजंगा महोर्मिविस्फूर्जथुनिर्विशेपा।
सूर्यांशुसपर्क-समृद्धरागैर्व्यज्यन्त अेते मणिभि. फणस्थैः॥१२॥
तवाधरस्पर्धिषु विद्रुमेषु पर्यस्तमेतत्सरसोर्मिवेगात्।
अूर्ध्वांकुरप्रोतमुखं कथचित् क्लेशादपक्रामति शखयूथम्॥१३॥
प्रवृत्तमात्रेण पयासि पातुम् आवर्तवेगभ्रमता घनेन।
आभाति भूयिष्ठमय समुद्रः प्रमथ्यमानो गिरिणेव भूय.॥१४॥
दूरादयश्चक्रनिभस्य तन्वी तमालतालीवनराजिनीला।
आभाति वेला लवणाम्वुराशेर्धारानिवद्धेव कलङ्करेखा॥१५॥
वेलानिल. केतकरेणुभिस्ते सभावयत्याननमायताक्षि।
मामक्षमं मण्डनकालहानेर्वेत्तीव विम्बाधरबद्धतृष्णम्॥१६॥
अेते वय सैकतभिन्नशुक्ति-पर्यस्तमुक्तापटल पयोधे।
प्राप्ता मुहूर्तेन विमानवेगात् कूलं फलावर्जितपूगमालम्॥१७॥

पृ० २७४ पर्वते परमाणौ च० अिसका पूर्वपद अिस प्रकार है' कवय कालिदासाद्या कवयो वयमप्यमी।' पूरे श्लोकका अर्थ अिस

प्रकार है: "कालिदास आदि भी कवि है, हम भी कवि है। पर्वत और परमाणुमें पदार्थत्व समान है।"

वानर-यूथ-मुख्य : रामरक्षा-स्तोत्रमें हनुमानकी स्तुतिका श्लोक अिस प्रकार है

> मनोजवं मारुत-तुल्य-वेगं
> जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठं।
> वातात्मजं वानर-यूथ-मुख्यं
> श्रीराम-दूतं मनसा स्मरामि॥

साम्पराय : मृत्युके बादकी स्थिति। कठोपनिषद्में नचिकेताने यमराजसे साम्परायके बारेमें पूछा था।

पृ० २७७ अुदये सविता० अुदयके समय सूर्य लाल होता है और अस्तके समय भी लाल होता है। बड़े लोग संपत्ति और विपत्तिके समय अेकरूप रहते है।

पृ० २७८ अब अिस त्रिविध पूर्णतामें से . . . होगी : याद कीजिये :

> पूर्णम् अदः पूर्णम् अिदं पूर्णात् पूर्णम् अुदच्यते।
> पूर्णस्य पूर्णम् आदाय पूर्णम् अेवावशिष्यते॥

पृ० २८० ब्राह्म-मुहूर्त : सुबह करीब साढ़े तीन बजेका समय। आत्म-चिन्तनके लिअे यह समय अच्छा माना गया है। 'ब्राह्मे मुहूर्ते चोत्थाय चिन्तयेत् हितम् आत्मन।'

पृ० २८१ अुदर-भरण नामक यज्ञकर्म : तुलना कीजिये :

> वदनी कवळ घेता नाम घ्या श्रीहरिचे
> सहज हवन होते नाम घेता फुकाचें।
> जीवन करि जिवित्वा अन्न हे पूर्णब्रह्म
> अुदरभरण नोहे जाणिजे यज्ञकर्म॥

[मुहमें कौर लेते हुअे हरिका नाम लो। अिससे सहज ही हवन होता है। अन्न पूर्ण ब्रह्म है और यह जीवन

कहते ही आयुको जीवन बनाता है। यह अुदर-भरण नही है, परन्तु अिसे यज्ञकर्म जानना चाहिये।]

कन्याकुमारीकी कथा: वडासुर नामक अेक दानवने शंकरजीकी आराधना की और हिरण्यकशिपुकी तरह 'मै अिससे न मरने पाअू, अुससे न मरने पाअू' आदि वरदान माग लिये। किन्तु अिस लबी-चौडी सूचीमे कुमारी कन्याका नाम दर्ज करनेकी वात अुसको नही सूझी। वरदानसे निर्भय वना हुआ यह दानव ससार पर भारी जुल्म ढाने लगा। सारा ससार त्रस्त हो गया। अत. शिवजीने पार्वतीको कुमारी कन्याका रूप लेकर ससारमे जानेकी वात कही। पार्वतीने ललिता देवीका अवतार लिया और दानवको मार डाला। फिर हाथमें कुकुम और अक्षत लेकर विवाहके लिअे शिवजीकी राह देखने लगी, क्योकि पहलेसे वैसा तय हुआ था। शिवजी निकले तो सही, किन्तु रास्तेमें क्रोधमूर्ति दुर्वासासे अुनकी भेट हो गअी। अुनके स्वागतमे कुछ देर लग गअी। अितनेमे कलियुग वैठ गया! और कलियुगमें विवाह नही हो सकता था।

अत पार्वतीने हाथके कुकुम-अक्षत फेंक दिये और कलियुगकी समाप्तिकी राह देखती हुअी वही खड़ी रही।

पार्वतीके फेंके हुअे अक्षत अब भी समुद्र-तट पर रेतीके रूपमें पाये जाते है। श्रद्धालु लोग मानते है कि ये चावल मुहमें डालनेसे खानेसे प्रसूतिकी वेदना कम होती है। कुंकुमके समान लाल रेतका तो वहा पार ही नही है।

६३. कराची जाते समय

पृ० २८३ **अनुराधा, कृष्णचंद्र:** अनुराधा नक्षत्र। कृष्णचद्र = कृष्णपक्षका चाद। राधा और कृष्ण अिन दो शब्दोका लेखकने यहा अच्छा लाभ अुठाया है।

६४. समुद्रकी पीठ पर

पृ० २८५ **गिरधारी:** आचार्य कृपालानीजीका भतीजा। अुस समय लेखकके साथ शातिनिकेतनमे रहता था।

आगुनेर परशमणि छोंआओ प्राणे: पूरा गीत अिस प्रकार है:

आगुनेर परशमणि छोंआओ प्राणे
अे जीवन पुण्य करो दहन-दाने।
आमार अेअि देहखानि तुले धरो,
तोमार अै देवालयेर प्रदीप करो,
निशिदिन आलोक-शिखा ज्वलुक गाने।
आधारेर गाये गाये परश तव
सारा रात फोटाक तारा नव नव
नयनेर दृष्टि हते घुचबे कालो
जेखाने पडबे सेथाय देखबे आलो
व्यथा मोर, अुठबे ज्वले अूर्ध्व पाने।

आकाशमें जिस प्रकार चांद चलता है: रवीन्द्रनाथके दूसरे अेक गीतमें अिसी तरहका चित्र है:

आजि शुक्ला अेकादशी, हेरो निद्राहारा शशी
अै स्वप्न पारावारेर खेया अेकला चालाय बसि।

पृ० २८७ ध्येयः सदा० सूर्यमंडलके मध्यमें स्थित, कमलासन पर विराजमान तथा केयूर, मकरकुंडल, किरीट और हार धारण करनेवाले, सुवर्णमय शरीरवाले, शंख-चक्रधारी नारायणका सदा ध्यान करना चाहिये।

जीवतराम: आचार्य कृपालानी।

भयंकर दिव्य: दिव्य=कसौटी, परीक्षा। मराठीमें 'भयंकर दिव्य' नामक अेक अुपन्यास काफी मशहूर है।

पृ० २९० आत्मन्येव संतुष्ट: आत्मामें ही संतुष्ट। गीता, ३–१७
पूरा श्लोक अिस प्रकार है —

यस्त्वात्म-रतिर् अेव स्याद् आत्म-तृप्तश् च मानवः।
आत्मन्येव च संतुष्टस् तस्य कार्यं न विद्यते॥

६५. सरोविहार

पृ० २९२ अुसका काव्य तो दूरसे ही निकलता है: 'Tis distance lends enchantment to the view.

शकुंतलाकी तरह : शाकुतलके तीसरे अकके अंतमें शकुंतला दुष्यन्तके साथ विश्रंभालाप करती है, अितनेमें वहां आर्या गौतमी पहुचती है। अिसलिअे शकुतला राजासे लताओके पीछे जानेको कहती है और जाते समय लताओसे कहती है :

'लतावलय, सतापहारक, आमत्रये त्वां भूयोऽपि परिभोगाय।'
और अिस प्रकार लतामडपके वहाने राजासे अिजाजत लेकर जाती है।

पृ० २९३ ययातिको भी जीवनका आनन्द छोड़ना पड़ा : राजा ययाति भोग-विलासमें फसा रहता था। अिसके लिअे अुसने अपने लड़कोका यौवन भी ले लिया था। किन्तु वादमे अुसे विरति पैदा हुअी और समझमें आया कि :

न जातु कामः कामानाम् अुपभोगेन शाम्यति।
हविषा कृष्णवर्त्मेव पुनरेवाभिवर्धते ॥

[भोगोके अुपभोगसे कामनाओका शमन नही होता। वल्कि वलिसे वढनेवाली अग्निकी तरह वे वढती ही जाती है।]

अनन्नासोंके फव्वारे : अुसके पेडका आकार अैसा होता है मानो फव्वारा अुडता हो।

६६. सुवर्ण देशकी माता अैरावती

पृ० २९७ कृपाका अुत्पात : बाढ। दूसरा भी अेक अर्थ है। नील नदीमे जव वाढ आती है, तव वह अपने साथ मिट्टी वहाकर लाती है, जिससे खेतोमे फसल अच्छी होती है। अिजिप्शियन लोग अिसे 'नीलकी कृपा' कहते हैं।

शतरंज खेलनेवाले कालिदास : कहते है कि भवभूतिने 'अुत्तर-रामचरित' लिखनेके वाद पूरा ग्रंथ कालिदासको पढ कर सुनाया था। कालिदास शतरजके वडे शौकीन थे। वे शतरज खेलते-खेलते पुस्तक सुन रहे थे। कालिदास ध्यानपूर्वक नही सुन रहे हैं, यह देखकर भवभूतिको वुरा लगा। किन्तु अन्तमें जव कालिदासने अेक सूक्ष्म और रसिक सुधार सुझाया, तव भवभूति आश्चर्यचकित हो गये। पूरा ग्रथ सुननेके वाद कालिदासने कहा, 'नाटक अच्छा है; सिर्फ अेक अनुस्वार अधिक है।'

राम और सीताकी गपशपका वर्णन करते हुअे भवभूतिने लिखा था :

अविदित-गत-यामा रात्रिरेवं व्यरंसीत् ॥

[जिस प्रकार (अेवं) (अिधर-अुधरकी गपशप करते करते) प्रहर कैसे बीतते गये यह मालूम ही नहीं हुआ और सारी रात बीत गअी।]

कालिदासने अनुस्वार निकालनेकी बात कही और पूरा अर्थ बदल गया। अुसमें चमत्कृति पैदा हो गअी :

अविदित-गत-यामा रात्रिरेव व्यरंसीत् ॥

[(अिधर-अुधरकी गपशप करते करते) प्रहर कैसे बीते गये अिसका पता चले बिना सारी रात्रि ही पूरी हो गअी (हमारी बातें पूरी नहीं हुअी)।]

यह अेक दंतकथा ही है, क्योंकि कालिदास और भवभूति समकालीन नहीं थे।

शान-राज्य : ब्रह्मदेशके चीनकी सीमाके पासके आगे [illegible] राज्य। शान लोग ब्रह्मदेश, आसाम, सियाम और दक्षिण चीनमें रहते हैं। वर्णसे गोर तथा धर्मसे बौद्ध। बड़े मेहनती। अुनमें बहुपती-प्रथा चलती है।

जहाजका पक्षी : 'जैसे अुड़ि जहाजको पछी, फिरि जहाज पै आवे।' — सूरदास।

अनित्या वत० 'अनित्या वत संस्काराः अुत्पत्ति-व्यय-धर्मिणः।'

[अुत्पत्ति और नाश यही जिनका धर्म है, अैसे संस्कार (मूर्त पदार्थ) अनित्य ही हैं।]

थ्रांत : [illegible] लोगोंका तत्त्वज्ञान।

चिरन्तन : चिरकाल तक टिकनेवाला। सम्पूर्ण भारतके लोगोंका तत्त्वज्ञान।

सुवर्ण देश : ब्रह्मदेशका बौद्धकालीन नाम।

६७. समुद्रके सहवासमें

पृ० २९९ कच्ची छींककी तरह : अुपमाकी नवीनता और औचित्य ध्यानमे लीजिये।

पृ० ३०१ त्रिकांड : तीन काड यानी तीन भागवाला। श्रवणके तीन तारे होते है। मृग नक्षत्रके पेटमे तीन तारोका अिपु त्रिकाड नक्षत्र होता है। अुसीके जैसा श्रवण होता है, अत अुसे त्रिकाड कहा गया है।

खस्वस्तिक : हम जहा कही खड़े रहते है वहाका सिर परका आकाशका भाग या बिन्दु। अग्रेजीमे अिसको 'झेनिथ' कहते है।

पृ० ३०२ प्रकाश चमकाकर : जिस प्रकार तार-विभागमें 'कट्ट' और 'कड़' अिन दो ध्वनियोसे सारी लिपि तैयार की गयी है, अुसी प्रकार रातमें प्रकाश चमकाकर दूर तक सदेश भेजे जाते है। दिनमें सूर्यप्रकाशसे भी अैसे सदेश भेजे जाते है। अुसे 'हेलियोग्राफ' कहते है।

पृ० ३०५ त्रिखंड सहकार : अफ्रीकामे मूल काले बाशिदोंके अलावा (जो गुलाम या मजदूर होते है), राज्य करनेवाले गोरे युरोपियन लोग भी हैं और तिजारतके लिअे पूर्वसे आये हुअे गेहुअे रग या पीले रगके अरब, हिंदुस्तानी और चीनी लोग भी है। तीनो खंडोके अिन लोगोके बीच जो सहयोग चलता है, अुसको त्रिखड सहकार कहा गया है। अलबत्ता, यह सहयोग विषम है।

६८. रेखोल्लंघन

पृ० ३०६ रेखोल्लंघन : भूमध्य-रेखाका अुल्लघन।

शांतादुर्गा : शुभंकरी शाता और भयकरी दुर्गा। शांतादुर्गाका देवालय गोवामें है।

६९. नीलोत्री

पृ० ३०८ श्री अप्पासाहब : औंधके अतिम राजाके दूसरे पुत्र श्री अप्पासाहब पत। आप भारत-सरकारके कमिश्नरके नाते अफ्रीकामें थे, तब वहाके लोगो पर आपका अच्छा असर हुआ था।

पृ० ३१० ओशोपनिषद् : अठारह मंत्रोका अेक छोटासा अुप-निषद्। श्री विनोवाने अिसको वेदोका सार और गीताका बीज कहा

है। गांधीजी कहते थे कि अिसमें हिन्दूधर्मका सारा निचोड़ आ जाता है। अिसका पहला मंत्र अुन्हें विशेष प्रिय था और अस पर अुन्होंने कअी बार विवेचन किया था। अीशोपनिषद्‌का पहला मंत्र यह है :

अीशावास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुंजीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्॥

अिस अुपनिषद्‌को अीशावास्योपनिषद् भी कहते हैं।

मांडुक्य अुपनिषद् : अीशोपनिषद्‌से भी छोटा है। अिसमें सिर्फ बारह मंत्र हैं। अिसमें ॐकारके द्वारा सारे अद्वैत सिद्धान्तका विवेचन किया गया है। गौडपादाचार्यने अिस पर जो कारिका लिखी है, वह अद्वैत सिद्धान्तका प्रथम निबंध मानी जाती है। अिसीकी बुनियाद पर श्री शंकराचार्यने अपने मतकी स्थापना की है।

अघमर्षण सूक्त : अिसकी जानकारी 'अर्णवका आमंत्रण' नामक प्रकरणकी टिप्पणियोंमें दी जा चुकी है।

मैं यदि संस्कृतका कवि होता : संस्कृत कवि वाल्मीकिने गंगाष्टकमें कहा है :

त्वत् तीरे तरुकोटरान्तरगतो गंगे! विहंगो वरं
त्वन्नीरे नरकान्तकारिणि! वरं मत्स्योऽथवा कच्छपः।
नैवान्यत्र मदान्ध-सिन्धुर-घटा-संघट्ट-घंटा-रणत्-
कार-त्रस्त-समस्त-वैरि-वनिता-लब्ध-स्तुतिर् भूपतिः॥

पृ० ३१२ मि० स्पीक : (Speke) जॉन हॅनिंग (१८२७–१८६४) नील नदीका अुद्गम खोजनेवाला। हिन्दुस्तानी फौजमें भरती हुआ। पंजाबकी लड़ाअीमें मशहूर हुआ। अुसे छुट्टियोंमें हिमालय, तिब्बत आदि प्रदेशोंमें घूमनेका शौक था। अफ्रीकाके भूगोलमें रस पैदा होते ही १८५४ में बर्टनके साथ वह अफ्रीका गया। सोमालीलैंड घूमा। अुसका वर्णन अुसने अपनी 'What led to the Discovery of the Source of the Nile' (१८५४) नामक पुस्तकमें लिखा है। अिसके बाद वह अफ्रीकाके मध्यमें स्थित सरोवरोंकी खोज करने निकला। अुसकी मान्यता थी कि अिनमें से कुछकी

ओरके विक्टोरिया न्याज़ा सरोवरमे ही नीलका अुद्गम है। अुसने अपनी यह मान्यता सप्रमाण 'The Journal of the Discovery of the Source of the Nile' नामक पुस्तकमें सिद्ध की। वर्टनने अुसका विरोध किया। वर्टनके अनुसार टागानिका सरोवरमे नीलका अुद्गम था। दोनोंके वीच सार्वजनिक चर्चा रखी गओ। चर्चाके पहले ही दिन स्पीक शिकार खेलने गया था, जहां वह अपनी ही वंदूककी गोलीका शिकार हो गया।

पृ० ३१३ चंद्रगिरि: रामायणके अनुसार सिन्धु और सागरके संगम-स्थान पर स्थित शतशृंग पर्वत। यहा 'रुवेन ज़ोरी' पर्वत।

मेरु पर्वत: भागवतके अनुसार जवुद्वीपमे अिलावृत्तके मध्यमे स्थित सोनेका पर्वत। यहा मध्य अफ्रीकाका अुमी नामका अेक पर्वत, किलीमाजारोका पडोसी।

अच्छोद सरोवर: वाणभट्टकी कादंवरीसे यह नाम लिया गया है।

'शुभ-संदेश': सुवार्ता। अग्रेजी 'गॉस्पेल'।

पृ० ३१४ स्टेन्ली: सर हेनरी मार्टन (१८४०–१९०४) अेक मामूली किसानका लडका। मूल नाम जॉन रोलाड। वचपन वडी कठिनाओमे वीता। मदरसेमे शिक्षकको पीटकर भाग गया था। सुओ-धागा वेचनेवालेके यहा काम किया। कसाओके यहा भी काम किया। वादमे न्यू ऑर्लियन्स (अमेरिका) जानेवाले अेक जहाजमे केबिन वॉयकी हैसियतसे काम किया। वहाके स्टेन्ली नामक अेक व्यापारीने अुसकी मदद की। वादमें अुसको गोद लिया। तवसे वह स्टेन्लीके नामसे पुकारा जाने लगा। पालक पिताके अवसानके वाद फौजमें भर्ती हुआ। युद्धके दरमियान गिरफ्तार हुआ। मुक्त होनेके वाद जव वापस घर लौटा, तव माने घरमें रखनेसे अिनकार किया। अिससे अुसके दिलको वडी चोट लगी। रोटीके लिअे अुसने खलासीका जीवन स्वीकार किया। अमेरिकाके नौकादलमे भर्ती हुआ। वादमें अखवारोमे लेख लिखने लगा। अुसकी वर्णन-शक्ति अच्छी थी। कओ युद्धोमें संवाददाताके तौर पर काम किया। १८६९ में 'न्यूयॉर्क हेरल्ड' के संचालकने अुसको

की। स्टेन्लीने तब तक अंग्रेज व्यापारियोमे कांगोके बारेमें दिलचस्पी पैदा करनेकी काफी कोशिश की। किन्तु अिसमें अुसको सफलता नही मिली। अिसलिअे ब्रुसेल्स जाकर लियोपोल्डकी सूचना और योजनाका अुसने स्वीकार किया। वह फिरसे कांगो गया। पाच वर्षकी मेहनतके बाद अुसने लियोपोल्डके आधिपत्यके नीचे कांगोके स्वतंत्र राज्यकी स्थापना की। अिसका वर्णन अुसने अपनी 'The Congo and the Founding of its Free State' (१८८५) नामक पुस्तकमें किया है।

१८८४ में वह फिरसे युरोप लौटा। अुसके भाषणोकी वजहसे जर्मनीमें अफ्रीकाके बारेमे रस अुत्पन्न हुआ। युरोपके राष्ट्रोमें अफ्रीकाको कब्जेमें लेनेके लिअे होड़ शुरू हुअी। स्टेन्ली अिंग्लैंडमे रहा, किन्तु बेल्जियमके राजाके प्रति अुसकी निष्ठा भी अुसे खीचती थी। दोनोका हित सिद्ध करनेके लिअे वह फिरसे अफ्रीका गया। भूमध्य-रेखाके आस-पासके प्रदेशोमे घूमते हुअे अुसके करीब दो-तिहाअी साथी मर गये, कुछ साथी मारे गये। किन्तु वह हिम्मत नही हारा। अुसने अपना काम जारी रखा, और अंग्रजोके लिअे अुसने वहाके अमीनसे काफी रिआयतें प्राप्त कर ली। अिस भयानक यात्राका वर्णन अुसने 'In Darkest Africa' नामक ग्रंथमे (१८९०) किया है।

अिस यात्राके बाद जब वह वापस अिंग्लैंड लौटा, तब अुस पर विविध सन्मान बरसाये गये। ऑक्सफोर्ड और कैम्ब्रिज विश्वविद्यालयोंने अुसको ऑनरेरी डिग्रिया प्रदान की। अुसने अेक कलाकार स्त्रीसे शादी की। अुसके आग्रहके कारण वह पार्लियामेण्टमे चुना गया। किन्तु अिसमें अुसको कोअी दिलचस्पी नही मालूम हुअी। अपनी जवानीके समयके यात्रा-वर्णन अुसने 'My Early Travels and Adventures' नामक ग्रथमे दिये है। सन् १८९७ में वह आखिरी बार अफ्रीका गया। अुसका वर्णन अुसने 'Through South Africa' नामक ग्रथमे किया है (१८९८)। सन् १८९९ मे अिंग्लैंडके राजाने अुसे 'नाअिट' का खिताब दिया। जीवनके अंतिम दिन निवृत्तिमे बिताकर सन् १९०४ में अुसकी मृत्यु हुअी।

मिस्र संस्कृति : मिस्रमें पुरोहित, राज्यकर्ता वर्ग, किसान और कारीगर, मजदूर या गुलाम अिन चार वर्णोंकी समाज-व्यवस्था चलती थी।

पृ० ३१५ अफलातूनकी 'समाज-रचना : अफलातूनने 'रिपब्लिक' नामक अपने ग्रंथमें आदर्श नगर-राज्यका चित्र खींचा है, जिसमें अुसने लोगोंको चार वर्णोंमें बांटा है : (१) राज्यकर्ता तत्त्वज्ञ, (२) लड़नेवाले, (३) किसान, कारीगर और व्यापारी तथा (४) गुलाम।

पृ० ३१६ अश्वत्थामा : अश्व+स्थामन्। स्थामन् = बल। यहां 'स्थामन्' के 'स' का लोप होता है।

७०. वर्षा-गान

पृ० ३१६ कालिदासका श्लोक : यह है वह श्लोक —

नवजलधर सन्नद्धोऽयं न दृप्तनिशाचरः।
सुरधनुर् अिदं दूराकृष्टं न नाम शरासनम्॥
अयम् अपि पटुर् धारासारो न बाण-परंपरा।
कनक-निकष-स्निग्धा विद्युत् प्रिया न ममोर्वशी॥
— विक्रमोर्वशीयम्, अंक ४, श्लोक ७

यह निश्चय अलंकारका अुदाहरण है। श्लोकका अर्थ मूलमें दिया ही है।

पृ० ३१७ चिर-प्रवासी : हमारे लोग चिर-प्रवासको मरणतुल्य मानते थे। 'रोगी, चिर-प्रवासी . . . यज्जीवति तन्मरणम्।'

जीवन-प्रवाहको परास्त करनेवाले पुल : जीवन-प्रवाह, पानीका प्रवाह। पानीका प्रवाह मनुष्यको आगे अुस पार जानेसे रोकता है। नदी पर पुल बननेसे नदीकी यह रोकनेकी शक्ति समाप्त होती है।

सेतु : सेतुका अर्थ है बांध।

पृ० ३१८ छोटेसे घोंसलेका रूप : यह अुपमा अुपनिषदके अेक वचनमें सूझी है।

यत्र भवति विश्वम् अेकनीडम्।

यहां सारा विश्व अेक छोटासा घोंसला बन जाता है। [illegible] ही अैसे घोंसलेमें रहनेवाले जीवोंको [illegible] किया [illegible] है।

कारवार: बम्बअी राज्यके पश्चिमी समुद्र-तटका अतीव सुन्दर बन्दरगाह, जहा लेखकने अपने बचपनके कअी वर्ष व्यतीत किये थे। लेखककी पुस्तक 'स्मरण-यात्रा' मे कारवारका जिक्र कअी बार आता है।

पृ० ३१९ **जीवनचक्र:** गीतामे अध्याय ३, श्लोक १६ में अिस प्रवर्तित जीवन-चक्रका जिक्र आता है। लेखकका 'जीवन-चक्र' नामक निबंध अिस सिलसिलेमे खास पढने लायक है।

परस्परावलंबन द्वारा सधा हुआ स्वाश्रय: व्यक्तिगत जीवनके लिअे स्वाश्रय अच्छा है। सामाजिक जीवनकी बुनियादमें परस्परावलंबन ही प्रधान है। अैसे परस्परावलम्बनमे जब आदान-प्रदान सम-समान या तुल्यबल होता है, तब जीवनका बोझ किसी पर न बढनेसे अुसमें स्वाश्रयकी निष्पापता आती है।

यज्ञ-चक्र: जीवन-चक्रको ही गीताने यज्ञ-चक्र कहा है। देखिये, 'सहयज्ञा. प्रजा सृष्ट्वा अि०' गीता—अध्याय ३, श्लोक १० से १६।

अवतार-कृत्य: अवतारका शब्दार्थ है नीचे अुतरना। बारिशका पानी अूपरसे नीचे अुतरता है। भगवान भी जब नीचे अुतरकर मनुष्यरूप धारण करते है, तब अुसे अवतार कहते है।

कुरुक्षेत्र: भारतीय युद्धकी रणभूमि।

मखमलके कीड़े: अिन्हे अिन्द्रगोप कहते है।

दोहरी शोभा: मखमलके कपडेमे जैसी शोभा होती है वैसी। अेक ओरसे देखनेसे गहरा रग मालूम होता है दूसरी ओरसे वही फीका या दूसरे रंगका मालूम होता है। अंग्रेजीमे अिसे 'Shot' कहते है।

पृ० ३२१ **आकाशके देव:** सितारे।

'मधुरेण समापयेत्': भोजनमे आखिरी चीज मीठी हो।

'अृतु-संहार': कालिदासका अेक नितात सुन्दर काव्य, जिसमे छहो अृतुओंका वर्णन आता है।

'अृतुभ्य:': विवाहके समय सप्तपदी द्वारा गृहस्थाश्रमके लिअे जो जीवन-दीक्षा ली जाती है, अुसमे से छठी प्रतिज्ञा है 'अृतुभ्य'। 'जीवनमे हम दोनो अृतु-परिवर्तनके साथ साथ जीवन-परिवर्तन भी करेंगे'— यह है अुस प्रतिज्ञाका भाव।

सूची

अ

ख

ग

घ

च

छ

ज

ध

न

फ

ब

भ

म

य

र

ल